श्रीव्रजमण्डल
परिक्रमा
श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरा

।। श्रीश्रीगुरु–गौराङ्गौ जयतः ।।

श्रीब्रजमण्डल–परिक्रमा

श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति एवं तदन्तर्गत भारतव्यापी श्रीगौड़ीय मठोंके प्रतिष्ठाता, श्रीकृष्णचैतन्याम्नाय दशमाधस्तनवर श्रीगौड़ीयाचार्यकेशरी नित्यलीलाप्रविष्ट

ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री

श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीके अनुगृहीत

त्रिदण्डिस्वामी

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

द्वारा सम्पादित

प्रकाशक—

श्रीपाद भक्तिवेदान्त माधव महाराज

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरा

द्वितीय संस्करण—

श्रीगौर पूर्णिमा, ६ मार्च २००४

प्राप्ति स्थान—

१. श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरा (उ. प्र.) ✆ २५०२३३४

२. श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठ, वृन्दावन (उ. प्र.) ✆ २४४३२७०

३. श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ, राधाकुण्ड रोड़, गोवर्धन (उ. प्र.) ✆ २८१५६६८

४. श्रीरमणविहारी गौड़ीय मठ, बी ३/ए, जनकपुरी, नई दिल्ली ✆२५५३३५६८

५. श्रीदुर्वासा ऋषि गौड़ीय आश्रम, यमुनापार, मथुरा (उ. प्र.)

६. श्रीखण्डेलवाल एण्ड संस, अठखम्बा बाजार, वृन्दावन (मथुरा)

मुद्रक का नाम—

प्रस्तावना

परमाराध्य ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके चरणाश्रित होनेपर उनकी अहैतुकी कृपासे सन् १९४७ ई. से ही उनके साथ श्रीगौर-जन्मस्थली मायापुर योगपीठ, श्रीधाम नवद्वीपके नौ द्वीपसमूह, गौड़-मण्डलकी लीलास्थलियाँ और तीर्थसमूह, वैद्यनाथ देवघर, मन्दार मधुसूदन, गया, काशी, प्रयाग, अयोध्या, नैमिषारण्य, दक्षिण भारतके गौरपदाङ्कित तीर्थसमूह, पश्चिम भारतके द्वारकादि तीर्थ, मध्य-भारतके अजन्ता-एलोरा, राजस्थानके जयपुर, पुष्कर, नाथद्वारा आदि तीर्थसमूह, ब्रजमण्डलकी समस्त लीलास्थलियाँ तथा तीर्थोंकी परिक्रमा और दर्शनोंका अनेकों बार सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके अप्रकट-लीलामें प्रवेशके पश्चात् भी श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके आनुगत्यमें अनेक बार उपरोक्त लीलास्थलियाँ एवं तीर्थोंकी परिक्रमा और दर्शनोंका सौभाग्य प्राप्त हुआ। विशेषतः परमाराध्यतम श्रीगुरुदेवके समय पाँच सौ श्रद्धालु यात्रियोंके साथ पैदल ब्रजमण्डल परिक्रमा करनेका भी सुअवसर प्राप्त हुआ है। परमाराध्य श्रीगुरुदेवने १९५४ ई.में मुझे श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुराका सेवाभार—दायित्व प्रदान किया था। तबसे मैं श्रीकेशवजी गौड़ीय मठके ब्रह्मचारियों एवं मथुराके कुछ श्रद्धालु भक्तोंको साथ लेकर प्रतिवर्ष ब्रजमण्डलकी परिक्रमा करता आ रहा हूँ। इस प्रकार मुझे लगभग पचास वर्षोंमें पचास बार ब्रजमण्डल-परिक्रमा करनेका सौभाग्य मिला है।

श्रीलगुरुपादपद्मके अप्रकट होनेपर मैंने श्रीब्रजमण्डल परिक्रमाके समय विभिन्न लीलास्थलियोंमें लीला-प्रसङ्ग तथा उनके महात्म्यके सम्बंधमें जो भाषण दिये थे, उनका सङ्कलन कर संक्षेपमें ब्रजमण्डल परिक्रमाके नामसे एक ग्रन्थ कुछ वर्ष पूर्व अंग्रेजी भाषामें प्रकाशित हुआ है। देश-विदेशके श्रद्धालु लोगोंने इस ग्रन्थका बहुत ही आदर किया। शीघ्र ही वह प्रतिक्षा समाप्त हो गईं। विभिन्न देशोंके श्रद्धालु सज्जन उस पुस्तककी माँग कर रहे हैं। बहुतसे श्रद्धालु सम्पूर्ण ब्रजमण्डलकी लीला स्थलियोंके लीला-प्रसङ्गों तथा उनकी महिमाके साथ ब्रजमण्डल-परिक्रमा ग्रन्थके पुनः प्रकाशनके लिए पुनः-पुनः अनुरोध कर रहे हैं। मैं उनके अनुरोधकी अवहेलन नहीं

कर सका और इसके लिए प्रयास आरम्भ किया। किन्तु विश्वके छोटे-बड़े देशोंमें श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा आचरित और प्रचारित शुद्ध भक्तिके प्रचारमें तथा ग्रन्थोंके लेखनमें व्यस्त रहने और बीच-बीचमें शारीरिक अस्वस्थताके कारण इस कार्यको पूरा नहीं कर सका। इस बार सन् १९९९ ई. जुलाई माहमें विदेश प्रचारसे लौटनेपर इस कार्यको पूरा करना चाहता था, किन्तु हठात् अस्वस्थ हो जानेके कारण इसे पूरा नहीं कर सका।

तब ऐसी दशामें मैंने श्रीजगन्नाथ पुरी स्थित गंभीरामें श्रीशचीनन्दन गौरहरि, सिद्धबकुलमें श्रीहरिदास ठाकुर तथा टोटा गोपीनाथमें श्रीगौरशक्ति गदाधर प्रभुके श्रीचरणोंमें उपस्थित होकर, वहीं उनकी कृपासे इस ग्रन्थको पूर्ण करनेका सङ्कल्प ग्रहण किया। इस सङ्कल्पके अनुसार मैंने पुरी धाममें कुछ दिनों तक निवास किया और वहीं मैंने विश्वरूप महोत्सवके दिन २५ सितम्बर, १९९९ ई.में ब्रजमण्डल परिक्रमाका सङ्कलन कार्य पूर्ण किया।

मैंने इस ग्रन्थके सङ्कलनमें श्रीचैतन्यभागवत, श्रीचैतन्यचरितामृत, श्रीनरहरि चक्रवर्तीकृत भक्तिरत्नाकर, श्रीनारायणभट्ट विरचित ब्रजभक्तिविलास और विशेषतः कुसुम सरोवरवाले कृष्णदास बाबाजी महाराज द्वारा संग्रहित ब्रजमण्डल दर्शन (परिक्रमा) का आधार लिया है। इसके अतिरिक्त श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामीकृत गोविन्दलीलामृत, ब्रजरस रसिक श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर रचित कृष्णभावनामृत तथा अन्यान्य गोस्वामियों द्वारा रचित ग्रन्थोंसे विभिन्न लीला प्रसङ्गोंको संग्रहित किया है। इस विषयमें मैं अपने परमाराध्यतम गुरुपादपद्म अष्टोरतशत श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजको स्मरण करता हूँ, जिनकी कृपासे मुझे ब्रजमण्डल परिक्रमा तथा विभिन्न लीलास्थलियोंके प्रसङ्ग-समूह मिले। मैंने विभिन्न लीलास्थलियोंके प्रसङ्गोंमें इन संस्मरणोंको भी स्थान-स्थानपर ग्रथित किया है। उनकी अहैतुकी कृपाके बिना मेरा जीवन शून्य था।

इस संस्करणकी प्रतिलिपि प्रस्तुत करने, प्रूफ संशोधन आदि विविध सेवा कार्योंके लिए श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज, श्रीमद्भक्तिवेदान्त तीर्थ महाराज, श्रीमान ओमप्रकाश ब्रजवासी एम. ए. एल. एल. बी., 'साहित्यरत्न'

श्रीमान पुरन्दर ब्रह्मचारी 'सेवाविग्रह', श्रीमान वक्रेश्वर ब्रह्मचारी, श्रीमान परमेश्वरी दास ब्रह्मचारी एवं श्रीमान कृष्णकारुण्य ब्रह्मचारी आदिकी सेवा प्रचेष्टा सराहनीय एवं उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त श्रीमान प्रेमानन्द ब्रह्मचारीने प्रकाशनका व्यय-भार संग्रह कर सराहनीय सेवा की है। श्रीश्रीगुरु-गौराङ्ग-गान्धर्विकागिरिधारी इन पर प्रचुर कृपा आशीर्वाद वर्षण करें। यही प्रार्थना है।

श्रीगुरुकृपालेश पार्थी
श्रीभक्तिवेदान्त नारायण

श्रीशरद्-पूर्णिमा
परमाराध्यतम ॐ विष्णुपाद
श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी
महाराजकी तिरोभाव-तिथि
२६ आश्विन, संवत् २०५७, १३ अक्टूबर, २००० ई.

विषय–सूची

पृष्ठ संख्या

मथुराकी परिक्रमा

मधुवन

तालवन

कुमुदवन

बहुलावन

श्रीराधाकुण्ड–श्रीश्यामकुण्ड

श्रीगोवर्धन

श्रीकाम्यवन

बरसाना

नन्दगाँव

जावट

कोकिलावन

श्रीभद्रवन

भाण्डीरवन

माटवन

बेलवन

लोहवन

महावन

श्रीवृन्दावन

श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ-जयतः

श्रीब्रजमण्डल-परिक्रमा

ब्रजका स्वरूप

ब्रज शब्दका व्युत्पत्तिगत अर्थ है—ब्रजति गच्छति इति ब्रजः अर्थात् जो चलता फिरता है—वही ब्रज है। नन्दबाबा अपनी गऊओं, बछड़ों, परिवार और परिकरोंके साथ जिन-जिन स्थानों पर निवास करते थे, वह स्थान 'ब्रज' कहलाता है।

'ब्रजन्ति गावः यस्मिन्निति ब्रजः' अर्थात् जहाँ गो, गोपाल, गोप और गोपियाँ विचरण करती हैं, उसे ब्रज कहते हैं। विशेष रूपसे स्वयं-भगवान् ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णकी विहार-भूमिको ही ब्रज कहते हैं। इस ब्रजमें अखिल-रसामृतमूर्ति ब्रजविहारी श्रीकृष्ण अपनी ह्लादिनी-शक्तिकी सार महाभावस्वरूपा श्रीमती राधिका एवं स्वपरिकरोंके साथ नित्य विहार करते हैं। यहाँ उनकी परम रसमयी रास एवं अन्यान्य क्रीड़ाएँ—नित्यलीला सदैव गतिमान रहती हैं। यह ब्रज रसपूर्ण संकेतों और संदेशोंकी स्थली है। यही नहीं, यहाँ आदि-पुरुष श्रीगोविन्दका अपनी स्वरूपभूता गोपाङ्गनाओंके साथ सरस विहार विलास सदा-सर्वदा गतिमान रहता है। जहाँ उस विहारका न आदि है और न अन्त। जहाँ केवल प्रेम ही प्रेम बिखरा पड़ा है और उस प्रेम-समुद्रमें उन्नत उज्ज्वल प्रणयरस सदा उच्छ्वलित होता रहता है, वही ब्रज है। जिसमें रस ही रस है तथा रसिक एवं भावुकजन जिस रसका निरन्तर आस्वादन करते हैं, वही ब्रज है।

श्रीमद्भागवतमें ब्रजका अत्यन्त मर्मस्पर्शी वर्णन करते हुए कहते हैं—

पुण्या बत ब्रजभुवो यदयं नृलिङ्गगूढ़ः पुराणपुरुषो वनचित्रमाल्यः।
गाः पालयन् सहबलः क्वणयंश्च वेणुं विक्रीडयाञ्चति गिरित्ररमार्चिताङ्घ्रिः॥

(श्रीमद्भा. १०/४४/१३)

सखि! सच पूछो तो, ब्रजभूमि ही परम पवित्र और धन्य है, क्योंकि यहाँ ये पुरुषोत्तम मनुष्यके वेशमें छिपकर रहते हैं। स्वयं देवादिदेव महादेव शंकर और श्रीरमादेवी जिनके श्रीचरणोंकी पूजा करती हैं, वे ही प्रभु यहाँ रंग-बिरंगे पुष्पोंकी माला धारण किये हुए भैया बलरामजी तथा गोपसखाओंके

साथ मधुर वंशी बजाते और गऊओंको चराते हुए विभिन्न प्रकारकी क्रीड़ाओंमें मग्न होकर आनन्दसे विहार करते हैं। उनके श्रीचरणोंके स्पर्शसे यह ब्रजभूमि धन्य एवं कृत–कृत्य हो रही है। स्कन्दपुराणमें ब्रज शब्दकी सुन्दर परिभाषा दी गई है—

गुणातीतं परं ब्रह्म व्यापकं ब्रज उच्यते ।
सदानन्दं परं ज्योति मुक्तानां पदव्ययम् ।।

सत्त्व, रज, तम इन तीनों गुणोंसे अतीत जो परब्रह्म है, वह विश्वके कण–कणमें सर्वत्र व्याप्त है। इसलिए उसे ही ब्रज कहते हैं। यह सच्चिदानन्द स्वरूप, परम ज्योतिर्मय और अविनाशी है। जीवन्मुक्त परम रसिक ही इसमें निवास करते हैं।

श्रीचैतन्य–चरितामृतमें कहा गया है—

सर्वोपरि श्रीगोकुल, ब्रजलोक धाम ।
श्रीगोलोक, श्वेतद्वीप, वृन्दावन नाम ।।

अतः गोकुल, ब्रज, गोलोक तथा वृन्दावनको पर्यायवाची माना गया है। श्रीमन्महाप्रभुके अन्तरंग निजजन श्रील रूपगोस्वामीने श्रीभागवतामृत नामक ग्रन्थमें गोकुल, गोलोकके सम्बन्धमें सब प्रकारकी शंकाओंका समाधान करते हुए लिखा है—"यत्तु गोलोकनाम स्यात्तच्च गोकुलवैभवम्; तादात्म्यवैभवत्वञ्च तस्य तन्महिमोन्नतेः" अर्थात् गोकुलका तादात्मवैभव ही गोलोक है। गोलोक गोकुलका वैभवमात्र है। इस प्रकार ब्रजका नामान्तर ही वृन्दावन और गोकुल भी है। उस गोकुल धामके सम्बन्धमें ब्रह्मसंहितामें इस प्रकार वर्णन प्राप्त होता है—

सहस्र–पत्र–कमलं गोकुलाख्यं महत्पदम् ।
तत् कर्णिकार–तद्धाम तदनन्तांशसम्भवम् ।।

श्रील भक्तिविनोद ठाकुरने इस श्लोकका तात्पर्य इन शब्दोंमें व्यक्त किया है—विरजाके उस पार अशोक, अमृत और अभयरूप त्रिपाद विभूति स्वरूप महावैकुण्ठ या परव्योम धाम नित्य अवस्थित है। उसके ऊपर अनन्त चिद्–विभूतियोंसे सम्पन्न परम माधुर्यमय गोकुल और गोलोकको अभिन्न मानकर कभी–कभी गोलोकको भी गोकुल कहा जाता है। किन्तु गोलोक गोकुलका वैभव या प्रकाश है। क्योंकि गोकुल माधुर्यमय लीलाओंका स्थान है। वही धाम वैकुण्ठके ऊपरी भागमें गोलोक या गोकुल और नीचे पृथ्वीलोकमें

गोकुलके रूपमें देदीप्यमान है। श्रीसनातन गोस्वामीने सर्वशास्त्र मीमांसा स्वरूप श्रीबृहद्भागवतामृत-ग्रन्थमें लिखा है कि—

यथा क्रीडति तदभुमौ गोलोकेऽपि तथैव सः।
अध ऊर्ध्वतया भेदोऽनयोः कल्प्येत केवलम्।।

अर्थात् प्रपञ्च स्थित गोकुलमें श्रीकृष्ण जैसी लीलाएँ करते हैं, गोलोकमें भी वैसी ही क्रीड़ाएँ करते हैं। गोलोक और गोकुलमें कोई भेद नहीं है। भेद केवल इतना ही है कि एक सर्वोद्ध्व गोलोकके रूपमें विराजित है, दूसरा भूलोकमें गोकुलके रूपमें प्रकटित है। श्रील जीव गोस्वामीने कृष्ण-सन्दर्भमें गोलोकको वृन्दावनका प्रकाश माना है—

श्रीवृन्दावनस्य प्रकाशविशेषो गोलोकत्वम् तत्र प्रापञ्चिकलोकप्रकट-लीलावकाशत्वेनावभासमानः प्रकाशो गोलोक इति समर्थनीयम्

श्रीभक्तिविनोद ठाकुर श्रीचैतन्य चरितामृतके आदि लीला चतुर्थ परिच्छेदके ४७वें पयार—

परकीयाभावे अति रसेर उल्लास।
ब्रज बिना इहार अन्यत्र नाहि वास।।

इसके अपने अमृतप्रवाह भाष्यमें लिखते हैं कि बहुतसे लोग ऐसा समझते हैं कि श्रीकृष्ण गोलोकमें नित्य विहार करते हैं। कुछ अल्प समयके लिए ब्रजमें प्रकटित होकर उन्होंने परकीया भावसे लीलाएँ की हैं, किन्तु हमारे गौड़ीय गोस्वामियोंका मत ऐसा नहीं है। श्रीगोस्वामियोंने ब्रज-विहारको भी नित्य माना है। नित्य चिन्मय धाम गोलोकके नितान्त अन्तरंग प्रकोष्ठका नाम ही 'ब्रज' है। जिस प्रकारसे प्रपञ्चावतारमें (भौम वृन्दावनमें) कृष्णकी लीलाएँ हुई हैं, सर्वोद्ध्व नित्य धाम ब्रजमें भी उसी प्रकारकी लीलाएँ नित्य विराजमान हैं। ब्रजमें ही परकीया रसकी नित्य स्थिति है। श्रील कविराज गोस्वामीने श्रीचैतन्य-चरितामृत आदि-लीलाके तृतीय परिच्छेदमें कहा है—

अष्टाविशं चतुर्युगे द्वापरेर शेषे।
ब्रजेर सहित हय कृष्णेर प्रकाशे।।

यहाँ 'ब्रजेर सहित' इस पदसे यह सुस्पष्ट है कि चिन्मय गोलोक धाममें भी ब्रज नामक एक अचिन्त्य मधुर पीठ है। उस पीठके साथ श्रीकृष्ण अपनी अचिन्त्यशक्तिके बलसे इस प्रपञ्च धाममें अवतीर्ण हुये थे। उक्त गोलोकके अन्तःपुरमें स्थित नित्य ब्रजको छोड़कर परकीया रसकी स्थिति अन्यत्र कहीं भी नहीं है, क्योंकि उक्त ब्रजमें गोलोककी अपेक्षा भी अनन्त

गुण अधिकरूपमें उत्कृष्ट रसका (परकीया रस) अवस्थान है। प्रकट ब्रजमें (भौम वृन्दावन) अप्रकट ब्रजकी विचित्रता जीवोंकी आखोंसे भी लक्षित हुई है। केवल यही रहस्य है। प्रपञ्च जगत्में प्रकट–प्रकाश और अप्रकट–प्रकाशके अतिरिक्त एक दृश्यमान प्रकाश भी होता है। जैसे वर्तमान समयमें जब कि लीला प्रकट नहीं है, वृन्दावन आदि धामोंमें साधारण लोगोंको जो कुछ दिखाई देता है उसे दृश्यमान प्रकाश कहते हैं।

ब्रह्मसंहितामें वृन्दावनधाम या गोलोकके सम्बन्धमें कहा गया है—

श्रियः कान्ताः कान्तः परमपुरुषः कल्पतरवो
द्रुमा भुमिश्चिन्तामणिगणमयी तोयममृतम्।
कथा गानं नाट्यं गमनमपि वंशी प्रियसखी
चिदानन्दं ज्योतिः परमपि तदास्वाद्यमपि च।।
स यत्र क्षीराब्धिः स्रवति सुरभीभ्यश्च सुमहान्
निमिषार्द्धाख्यो वा व्रजति न हि यत्रापि समयः।
भजे श्वेतद्वीपं तमहमिह गोलोकमिति यं
विदन्तस्ते सन्तः क्षितिविरलचाराः कतिपये।।

जहाँ परमपुरुष ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण ही एकमात्र कान्त हैं, उन्हींकी स्वरूपभूता सर्वलक्ष्मी स्वरूपा ब्रजगोपियाँ कान्ता स्वरूपा हैं, जहाँकी प्रत्येक तरु–लता चिन्मय कल्पतरु है, भूमि चिन्तामणि स्वरूप है, जलमात्र ही अमृत है, जहाँकी बोली ही संगीत है, चलना ही नृत्य है, वंशी प्रिय सखी है, प्रकाश चिदानन्दमय है, परम चिद् पदार्थमात्र ही आस्वादनीय या भोग्य हैं; जहाँ करोड़ों–करोड़ों सुरभियोंके स्तनसे चिन्मय क्षीरका महासमुद्र सर्वदा प्रवाहित होता रहता है तथा भूत–भविष्यरूप खण्ड–रहित अखण्ड चिन्मयकाल जहाँ नित्य वर्तमान रहनेके कारण निमेषका अर्द्ध समय भी भूतकालको प्राप्त नहीं होता, उसी श्वेतद्वीपरूप परम पीठका मैं भजन करता हूँ। इस जड़ जगत्में विरले साधु व्यक्ति ही उस धामको गोलोकके रूपमें दर्शन करते हैं। केवल गोकुलपति श्रीकृष्णके कृपापात्र ही ऐसा जान सकते हैं। ऋग्वेदमें भी ब्रजधामका वर्णन पाया जाता है—

ता वां वास्तून्युश्मसि गमध्यै यत्र गावो भूरिश्रृंगा अयासः।
अत्राह तदुरूगायस्य वृष्णाः परमं पदमवभाति भूरि ।।

(ऋग्वेद १म मण्डल १५४ सूक्त)

अर्थात् जहाँ बड़ी ही सुन्दर सींगोंवाली तथा बहुतसे गुणों वाली गायें विचरण करती हैं, वेद प्रतिपाद्य परमपुरुष श्रीकृष्ण मधुर मुरली बजाते हुए उन गऊओंका पालन करते हैं, वही ब्रजवृन्दावन भगवानका श्रेष्ठतम धाम है।

श्रीमद्भागवतमें स्वयं गोपियाँ वृन्दावनकी महिमाका गान कर रही हैं—

वृन्दावनं सखि भुवो वितनोति कीर्तिं यद्देवकीसुतपदाम्बुजलब्धलक्ष्मि ।
गोविन्दवेणुमनुमत्तमयूरनृत्यं प्रेक्ष्याद्रिसान्ववरतान्यसमस्तसत्त्वम् ।।

(श्रीमद्भा. १०/२१/१०)

अर्थात् हे सखि! यह पृथ्वी श्रीकृष्णके पादपद्मोंके चिह्नोंसे सुशोभित होकर अपनी सर्वश्रेष्ठ कीर्तिका विस्तार कर रही है। यहाँ मयूरगण श्रीकृष्णकी वेणुध्वनिको सुनकर मानो मेघगर्जन हो रहा है, इस भावमें मत्त होकर नृत्य करते हैं और गोवर्धनके सानुदेशमें अन्यान्य प्राणी भी इसे देखकर आनन्दसे जड़वत् हो जाते हैं। अतएव वृन्दावन इस समय तो वैकुण्ठसे भी अधिक पृथ्वीकी कीर्तिका विस्तार कर रहा है। सखि री! इस वृन्दावनमें यत्र-तत्र-सर्वत्र बेली, जूही, चमेली, चम्पक, कदम्ब आदि षड्ऋतुओंके विविध प्रकारके पुष्प विकसित हो रहे हैं। उनका सौरभ दूर-दूर तक भौरोंको मधुपान करनेके लिए आमंत्रित कर रहा है। झुण्डके झुण्ड भँवरे इन पुष्पोंका मधु आकण्ठ पान कर प्रमत्त होकर गुँजार करने लगते हैं। उनका यह गुञ्जार ऐसा प्रतीत होता है मानो वनदेवी मधुपति कृष्णका आगमन जानकर उनका अभिनन्दन कर रही है। भ्रमर और भ्रमरियोंका मधुर गुञ्जार सुनकर शुक, पिक, पपीहे आदि कलकण्ठी विहगगण भला कैसे चुप रह सकते हैं? वे भी आनन्दमें विभोर होकर एक वृक्षसे दूसरे वृक्षपर तथा एक शाखासे दूसरी शाखापर गमनागमन करने लगे। उनके सुमधुर कलरवसे सारा वृन्दावन मुखरित हो उठा। जिसकी प्रतिध्वनि वृन्दावनके सरोवरों, नदियों और पर्वतोंमें भी सर्वत्र गूँज उठी। अहा! वृन्दावन एक ऐसा अलौकिक और अद्भुत धाम है जहाँ ऋतुराज वसंतकी कुछ मधुर-मधुर अनोखीसी छटा सदा-सर्वदा छायी रहती है, धरापर मखमली हरीतिमासे युक्त गलीचा सा बिछ जाता है। सम्पूर्ण वातावरणमें अलौकिक आनन्दमय, उन्मादमय यौवनकी मादकता और प्रमादकताका अभिवर्धित साम्राज्य तन मनको मुग्ध कर देता है। एक ओर जलाशयोंमें रंग-बिरंगे कमलके पुष्प विकसित हो रहे हैं, तो दूसरी ओर वृक्षोंकी डालियाँ चम्पा-चमेली, बेली-जूही जैसे सुगन्धित सुप्रफुल्लित

सुविकसित पुष्पोंसे समलंकृत हो रहीं हैं। भँवरे मदमत्त होकर इन पुष्पोंके मकरन्दामृतका आस्वादन कर रहे हैं।

ऐसी ब्रजभूमिमें ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण अपने अनगिणत गोप सखाओं एवं दाऊ भैयाके साथ मधुर–मधुर बंशी बजाते हुए असंख्य गौओंके साथ सर्वत्र विचरण करते हैं। धन्य है यह ब्रजभूमि, जहाँ इस सृष्टिके रचयिता श्रीब्रह्माजी श्रीराधाकृष्ण युगलकी श्रीचरणरजको अपने सिरपर धारण करनेके लिए बरसानामें पर्वतश्रेणीके रूपमें, पालनकर्ता श्रीविष्णु गोवर्धन और विष्णु पर्वतके रूपमें तथा चन्द्रमौली महादेव नन्दग्राममें नन्दीश्वर पर्वतके रूपमें, हरिदासवर श्रीउद्धवजी कुसुम सरोवरके तटपर तृण, गुल्म, लताके रूपमें निवास करते हैं। जहाँ स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण वत्सरूपमें ब्रजभूमिके सुकोमल और सुस्वादु तृणादिका आस्वादन करते हैं। जहाँके पनघटोंपर घट भरनेके बहाने ब्रज बालाएँ अपने हृदयघटमें कृष्णप्रेमरस भरनेके लिए नित जाती हैं। "पनघट जान दे री, पनघट जात है।" सखि री! मुझे पनघटपर जाने दे, नहीं तो प्रियतमसे मिलनेका पन घट जायेगा। इस पनकी रक्षाके लिए घट लिये ब्रज बालाओंकी पनघटपर भीड़ लग जाती है। इस रसीले स्थलपर प्रियतमकी तिरछी रसीली चितवनसे ब्रज–बालाएँ जब जल भरनेके बहाने जलमें गागर डुबोने लगती हैं, उसी समय बज उठती है रसिक शिरोमणिकी रसीली बाँसुरी। फिर ये ब्रज–बालाएँ घट भरकर ले आती हैं या घट खाली लौटाकर ले आती हैं, भला किसे यह सुध रहती है? सखि! यह सब उस पनघटका ही तो चमत्कार है।

कालिन्दीके कल–कल करते हुए तटोंपर मधुर निकुञ्जोंमें, टेढ़ी–मेढ़ी सँकरी रसीली बीथियोंमें इन रसीली ब्रज–बालाओंसे रसीली छेड़–छाड़से, राग–तकरारसे, ऐंठ–उमेठसे, मधुर चितवनसे, मधुर–मधुर बोलियोंसे जलकेलिका रसास्वादन कर रसिक शेखर ब्रजेन्द्रनन्दन उत्तरोत्तर रसमें विभोर हो जाते हैं। ब्रजकी महिमा भला कौन वर्णन कर सकता है?

श्रीसनातन गोस्वामीने 'वृन्दावनका' अर्थ इस प्रकार लिखा है—"वृन्दस्य समूहस्य, अवनं रक्षणं पालनं यस्मात् तत् वृन्दावनं"—जो सबका पालन पोषण तथा रक्षण करता है, उसे वृन्दावन कहते हैं। वह अपने भगवद्भावको छिपाकर प्रेमके द्वारा गऊओंके समूहका, बछड़ोंके समूहका, गोपोंके समूहका, गोपियोंके समूहका पालन करता है। उसके प्रेमके द्वारा वशीभूत होकर स्वयं–भगवान् श्रीकृष्ण क्षणभरके लिए भी वृन्दावनका परित्याग नहीं करते—

वृन्दावनं परित्यज्य स क्वचिन्नैव गच्छति

(लघुभागवतामृत अन्त्य १/६७)

श्रीभट्टजीने ब्रजभूमिको मोहिनी बतलाते हुए बड़ी सुन्दर भावना व्यक्तकी है—

ब्रजभूमि मोहिनी मैं जानी ।
मोहिनी कुञ्ज, मोहन श्रीवृन्दावन मोहन जमुना पानी ।।
मोहिनी नारि सकल गोकुलकी, बोलति मोहिनि बानी ।
श्रीभट्टके प्रभु मोहन नागर, मोहिनी राधा रानी ।।

ब्रजकी सीमा

ब्रजमण्डल चौरासी कोसमें विस्तृत है। गर्ग संहितामें कहा गया है—

प्रागुदीच्यां बर्हिर्षदो दक्षिणस्यां यदोः पुरात् ।
पश्चिमायां शोणितपुरान्माथुरं मण्डलं विदुः ।।

(भ.सं.ख. २)

बर्हिषद् (बरहद) से पूर्वोत्तर, यदुपुर (शूरसेनके गाँव बटेश्वर) से दक्षिण और शोणितपुर (सोनहद) से पश्चिममें चौरासी कोस भूमिको विद्वज्जनोंने 'माथुर मण्डल या ब्रज' कहा है।

श्रीग्राऊस महोदयने स्वलिखित 'मथुरा मैमोअर' में निम्नलिखित दोहेका उल्लेख किया है

"इत बरहद इत सोनहद, उत सूरसेनको गाँव ।
ब्रज चौरासी कोसमें, मथुरा मण्डल माँह ।।"

उक्त दोहेसे स्पष्ट है कि ब्रजकी सीमा एक ओर 'बर' दूसरी ओर 'सोनहद' तथा तीसरी ओर सूरसेनका गाँव 'बटेश्वर' मानी गयी है। 'बर, नामक स्थान वर्तमान अलीगढ़ जिलेमें है, जो ब्रजमण्डलके पूर्वोत्तरमें स्थित है। सोनहद वर्तमान हरियाणा प्रदेशके गुड़गांव जिलेमें स्थित है, जो ब्रजमण्डलके उत्तर पश्चिम कोनेमें स्थित है। इसीका प्राचीन नाम शोणितपुर था। सूरसेनका ग्राम 'बाह' तहसीलका बटेश्वर नामक गाँव है। इन्हीं स्थलियोंके मध्यस्थ स्थलीको ब्रजमण्डल कहा गया है।

ब्रह्माण्ड पुराणमें भी ब्रजमण्डलकी सीमाका उल्लेख देखा जाता है। उसके अनुसार ब्रजमण्डलके पूर्वमें हास्यवन, दक्षिणमें जह्नुवन, पश्चिममें पर्वतवन तथा उत्तरमें सूर्यपत्तन वन स्थित है।[१]

इसके अनुसार पूर्वमें आगरा जिलेका हसनगढ़ हास्यवनके नामसे, पश्चिममें राजस्थानका काम्यवनके पासका 'बहाड़ी ग्राम' पर्वतवनके नामसे, दक्षिणमें धौलपुर तहसीलका जाजऊ ग्राम 'जह्नु' के नामसे प्रसिद्ध है, उत्तर भागमें अलीगढ़ जिलेके जेवर ग्रामके निकट सूर्यपत्तन वनकी स्थिति मानी गई है।

चौरासी कोस ब्रजमण्डलमें वन, उपवन, प्रतिवन और अधिवन कुल मिलाकर ४८ वन हैं। पद्म पुराणके अनुसार यमुनाजीके पूर्व और पश्चिममें महावन, काम्यवन, मधुवन, तालवन, कुमुदवन, भाण्डीरवन, वृन्दावन, खदीरवन, लोहवन, भद्रवन, बहुलावन और बेलवन—ये बारह मुख्य वन स्थित हैं। इनमेंसे मधुवन, तालवन, कुमुदवन, बहुलावन, काम्यवन, खदीरवन और वृन्दावन—ये सात वन यमुनाके पश्चिम भागमें हैं। भद्रवन, भाण्डीरवन, बेलवन, लोहवन तथा महावन ये पाँच वन यमुनाके पूर्वमें स्थित हैं।

वराह पुराणमें बारह उपवनोंका उल्लेख है—ब्रह्मवन, अप्सरावन, विह्वलवन, कदम्बवन, स्वर्णवन, सुरभिवन, प्रेमवन, मयूरवन, मानेङ्गितवन, शेषशायीवन, नारदवन और परमानन्दवन।

भविष्य पुराणमें बारह प्रतिवनोंका उल्लेख इस प्रकार है—रङ्कवन, वार्त्तावन, करहावन, कामवन, अञ्जनवन, कर्णवन, कृष्णाक्षिपनवन, नन्दप्रेक्षण कृष्णवन, इन्द्रवन, शिक्षावन, चन्द्रावलीवन, लोहवन।

विष्णु पुराणमें बारह अधिवनोंका वर्णन मिलता है—मथुरा, राधाकुण्ड, नन्दगांव, गढ़, ललिता ग्राम, वृषभानुपुर, गोकुल, बलभद्रवन, गोवर्द्धन, जावट, वृन्दावन और संकेत वन। ये कुल ४८ वन हैं।

---

(१) चतुर्दिक्ष प्रमाणेन पूर्वादिक्रमतोगणत् ।
पूर्वभागे स्थितं कोणं वनं हास्याभिधानक ।।
भागे च दक्षिणे कोणं शुभं जन्हुवनं स्थितं ।
भागे च पश्चिमे कोणे पर्वताख्यवनं स्थितं ।।
भागे ह्युत्तरकोणस्यं सूर्य पतन संज्ञकं ।
इत्येता ब्रज मर्यादा चतुष्कोणाभिधायिनी ।।
(ब्रह्माण्ड पुराण)

ब्रजमण्डल–परिक्रमाके नियम

मथुराके विश्रामघाटपर ब्रजमण्डल परिक्रमाके लिए संकल्प ग्रहण करें। इसके लिए किसी सरल, शास्त्रज्ञ, सदाचारी, दयालु, निर्मत्सर, तत्त्वज्ञ, निर्लोभी एवं भजन परायण वैष्णव, भक्त, तीर्थगुरु या ब्रजवासी पुरोहितके द्वारा संकल्प ग्रहण कर परिक्रमा आरम्भ करें। परिक्रमाके समय निम्नलिखित विधि एवं निषेधोंका यथासाध्य पालन करना चाहिए—

विधि—सत्य बोलना, ब्रह्मचर्यपूर्वक रहना, पृथ्वीपर शयन करना, दूसरोंके अपराधोंको क्षमा करना, तीर्थोंमें स्नान करना, आचमन करना, भगवत निवेदित प्रसादका ही सेवन करना, तुलसीमालापर हरिनाम कीर्त्तन या वैष्णवोंके साथ हरिनाम सङ्कीर्त्तन करना चाहिए। परिक्रमाके समय मार्गमें स्थित ब्राह्मण, श्रीमूर्ति, तीर्थ और भगवद्लीला स्थलियोंका विधिपूर्वक सम्मान एवं पूजा करते हुए परिक्रमा करें।

निषेध—क्रोध नहीं करना, परिक्रमा पथमें वृक्ष, लता, गुल्म, गो आदिको नहीं छेड़ना; ब्राह्मण, वैष्णवादि तथा श्रीमूर्तियोंका अनादर नहीं करना, साबुन, तेल और क्षौर कार्यका वर्जन करना, चींटी इत्यादि जीव–हिंसासे बचना, परनिन्दा, परचर्चा और कलहसे सदा बचना—ये सब निषेध हैं।

परिक्रमाका समय

गौड़ीय वैष्णव, श्रीचैतन्य महाप्रभुके ब्रजभ्रमणका अनुसरण करते हैं। इसके अनुसार कुछ लोग आश्विन माहमें विजया दशमीके पश्चात् शरद् कालमें परिक्रमा आरम्भ करते हैं; क्योंकि श्रीचैतन्य–चरितामृतके अनुसार श्रीमन्महाप्रभु श्रीनीलाचल धामसे ब्रजमण्डलका दर्शन करनेके लिए इसी समय पधारे थे। कुछ गौड़ीय वैष्णवगण आश्विन शुक्ल एकादशीसे कार्तिक व्रत, नियम सेवाके दिनसे ब्रजमण्डल परिक्रमा आरम्भ करते हैं, तथा कार्तिक शुक्ल देवोत्थान एकादशीको व्रतका समापन करते हैं। अधिकांश गौड़ीय वैष्णव शारदीया पूर्णिमाके दिन क्षौर आदि कार्य सम्पन्न कर उसी दिनसे कार्तिक व्रत नियम सेवा या ऊर्जाव्रतका पालन एवं ब्रजमण्डल परिक्रमाका संकल्प ग्रहण करते हैं तथा देवोत्थान एकादशीके पश्चात् कार्तिक पूर्णिमाके दिन कार्तिक–व्रत एवं ब्रजमण्डल परिक्रमाका भी समापन करते हैं।

श्रीनिम्बार्क सम्प्रदायके वैष्णवगण श्रीकृष्ण–जन्माष्टमीके पश्चात् आनेवाली दशमीसे ब्रजमण्डल परिक्रमाका शुभारम्भ करते हैं। इनकी परिक्रमामें डेढ़ माहका समय लगता है। पुष्टीमार्गीय वैष्णवगण श्रीराधाष्टमीके पश्चात् दशमी या एकादशीसे ब्रजमण्डलकी परिक्रमा लगभग दो माहके समयमें समाप्त करते हैं।

ब्रजमण्डल परिक्रमामें निम्नलिखित स्थानोंका पर्यायके अनुसार दर्शन होता है—

श्रीमथुरा, मधुवन, तालवन, शान्तनुकुण्ड, गंधेश्वर, बहुलावन, राल, मघेरा, जैत, शकटीकरा (छट्टीकरा) गरुड़गोविन्द, बहुलावन, मरो, दतिहा, अडिग, माधुरीकुण्ड, जखीनगांव, तोष, जनती, वसति, मुखराई, श्रीराधाकुण्ड, श्रीश्यामकुण्ड, कुसुम सरोवर, नारद कुण्ड, ग्वाला पुष्करिणि, युगल कुण्ड, किल्लोलकुण्ड, मानसी गंगा, गोवर्धन, इन्द्रध्वजवेदी, जमुनावति, परासौली, पैंठागांव, बछगांव (वत्स वन), आन्यौर गांव, गौरीकुण्ड, सङ्कर्षणकुण्ड, गोविन्दकुण्ड, नवलकुण्ड, अप्सराकुण्ड, शक्रकुण्ड, पूछरी, श्यामढाक, राघव पण्डितकी गुफा, सुरभिकुण्ड, ऐरावतकुण्ड, हरजीकुण्ड, यतीपुरा, बिलछुकुण्ड, चकलेश्वर महादेव, सखी स्थली, नीमगांव, पाडर, कुञ्जेरा, पालि, डेरावलि, मान, साहार, सूर्यकुण्ड, पेरकु, भादार, कोनाई, वसति, श्रीराधाकुण्ड, गोवर्धन, जावककुण्ड, गुलालकुण्ड, गांठोली, वेहेज, देवशीर्ष, मुनिशीर्ष, परमादना, बद्रीनारायण, गोहाना, खों, आलीपुर, आदिबद्री, पशोपा, केदारनाथ, बिलंद, चरणपहाड़ी, भोजनथाली, काम्यवन, वजेरा, सुनहरा कदम्ब–खण्डी, ऊँचा गाँव, सखीगिरी पर्वत, बरसाना गाँव, गहवर वन, डभोरा, रासौली, प्रेमसरोवर, संकेत, रिठोरा, मेहरान, सत्वास, नन्देरा, भोजनथाली, नुनेरा, शृंगारवट, बिछोर वन, वनचरी, होड़ल, दहीगांव, लालपुर, कामेर, हरावली गांव, सांचुली, गैंड़ो, नन्दगांव, कदम्ब टेर, जावट, धनसिंगा, कोसी, पयगाँव, छत्रवन, सामरी, नरी, साँखी, आरबाड़ी, रणवाड़ी, भादावली, खाँपुर, ऊमराव, रहेया, कामाई, करेला, पेसाई, लुधौली, आंजनक, खदीरवन, बिजुआरी, श्रीनन्दगांव, कोकिलावन, छोटी बैठन, बड़ी बैठन, चरण पहाड़ी, रसौली, कोटवन, खामी, शेषशायी, रूपनगर, मझई, रामपुर, उजानी, खेलनवन, ओबे, श्रीरामघाट, काश्रट, अक्षय वट, गोपीघाट (तपोवन), चीरघाट, नन्दघाट, भयगांव, जैतपुर, हाजरा, बलीहारा, बाजना,

जेओलाई, सकरोया, आटास, श्रीवृन्दावन, देवीआटास, परखम, चौमा, अजई, सिंहाना, रेहाना, पसौली, वरली, तरौली, एई, सेई, माई, वसाई, श्रीनन्दघाट, भद्रवन, भाण्डीरवन, माट, बेलवन, मानसरोवर, आरा, पानीगांव, लौहवन, राबेल, गढुई, आयरो, कृष्णपुर, बाँदी, दाऊजी, हातौरा, ब्रह्माण्ड घाट, चिन्ताहरण घाट, महावन, गोकुल, कैलो, बादाई ग्राम, नौरंगाबाद, श्रीमथुरा, अक्रूर घाट, भातरौल, (अटल वन) क्यारीवन, बिहारवन, गोचारण वन, कालीय दमनवन, गोपालवन, निकुञ्जवन, (सेवाकुञ्ज) निधुवन, झूलनवन, गहवरवन, पपड़वन। इन बारह वनोंसे युक्त श्रीवृन्दावन।

श्रीमथुरा माहात्म्य

भूमण्डलमें अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, काञ्ची, अवन्ती, द्वारावती—ये मोक्षको प्रदान करनेवाली सप्त पुरियाँ हैं, किन्तु इनमेंसे स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी जन्मस्थली मथुरापुरी सर्वश्रेष्ठ है। यह केवल मोक्ष ही नहीं, अपितु भगवत् प्रेम प्रदान करने वाला, मायासे सम्पूर्ण रूपसे अतीत सच्चिदानन्दमय भगवद् धाम है। सुदर्शन चक्रके द्वारा सुरक्षित रहनेके कारण प्रलय आदि विकारोंका इसपर प्रभाव नहीं पड़ता है। वैकुण्ठकी तो बात ही क्या, पट्ट महीषियोंसे सुशोभित द्वारकापुरीकी अपेक्षा भी यह अधिक प्रशंसनीय है।[१]

इस मथुरापुरीका कभी भी विनाश नहीं है। सत्ययुगके प्रारम्भमें बालक ध्रुव एवं देवर्षि नारदका यहीं पर मिलन हुआ था। यहीं यमुनाके ध्रुव घाट पर यमुनामें स्नानकर बालक ध्रुवने नारदजीसे भगवद्मन्त्र ग्रहण किया और पास ही मधुवन महौलीमें भगवद् आराधनाकर सिद्धि प्राप्त की थी।

सत्ययुगमें महाराज अम्बरीष यहीं पर द्वादशी व्रतका पारण कर रहे थे। उसी समय दुर्वासा ऋषि वहाँ पधारे और यहीं पर दुर्वासा ऋषिने भक्त अम्बरीष महाराजजीकी महिमाकी उपलब्धि की। सुदर्शन चक्रसे कैसे इनकी रक्षा हुई—चक्रतीर्थ और अम्बरीष टीला आज भी इसके साक्षी हैं।

त्रेतायुगमें श्रीशत्रुघ्नजीने भगवान् श्रीरामचन्द्रजीका आदेशपाकर यहींपर मधुदैत्यके पुत्र लवणासुरका वध किया था। यह वृत्तान्त सर्वविदित है। द्वापरमें श्रीकृष्णकी जन्मादि विविधि लीलाओंकी स्थली होनेका गौरव इसे प्राप्त है। श्रीकृष्ण द्वैपायन वेदव्यासका यहीं यमुनाके द्वीपमें जन्म प्रसिद्ध है।

कलियुगमें श्रीराधाकान्ति एवं भावसे सुवलित स्वयं-भगवान् श्रीशचीनन्दन गौरहरि ब्रजधामके दर्शन हेतु सर्वप्रथम मथुरामें ही पधारे थे और यहीं विश्राम घाटमें स्नानकर उन्होंने चौरासी कोस ब्रजमण्डलकी लीला-स्थलियोंका दर्शन किया। इसके पूर्व श्रीअद्वैताचार्य, श्रीनित्यानन्दप्रभु, श्रीलोकनाथ गोस्वामी और

---

(१) भूगोल चक्रे सप्तपुर्यो भवन्ति तासां मध्ये साक्षात् ।
ब्रह्म गोपाल पुरीरीति चक्रेण रक्षिता हि वै मथुरेति ।।
(श्रीगोपालतापनी)

भूगर्भ गोस्वामीके भी आनेका वर्णन प्राप्त होता है। श्रीचैतन्य महाप्रभुके पश्चात् उनके अन्तरङ्ग परिकर श्रील रूप, सनातन आदि गोस्वामियोंने मथुरा एवं ब्रजमें सर्वत्र भ्रमण किया। इसके अनन्तर भी हमारे सभी गौड़ीय आचार्योंका मथुरा ब्रजमण्डलमें आनेका प्रसङ्ग श्रीचैतन्य-चरितामृत एवं भक्ति-रत्नाकर आदि ग्रन्थोंमें सर्वत्र उल्लिखित है।

पुराणोंमें मथुरापुरीका भूरि-भूरि माहात्म्य उल्लेख है। भगवान् श्रीकेशवदेवजी इस पुरीके मध्यमें कर्णिकाके रूपमें विराजमान हैं। उत्तरकी पंखुड़ीमें श्रीगोविन्द देवजी (वृन्दावनमें) विराजमान हैं, जिनके दर्शनसे मनुष्य संसार चक्रसे सदाके लिए मुक्त हो जाता है। पूर्वकी पंखुड़ीमें विश्राम घाटपर विश्राँति नामक भगवत् स्वरूप विराजमान हैं तथा दक्षिणकी पंखुड़ी पर सर्व सिद्धि प्रदान करनेवाले आदिवराहदेवजी विराजमान हैं।[१] मथुरामें जहाँ-तहाँ स्नान करनेसे जीवोंके समस्त पाप दूर हो जाते हैं और पग-पगपर अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है। भगवान् अपने श्रीमुखसे कह रहे हैं कि—हे वसुन्धरे! पाताल लोकमें, मनुष्य लोकमें या अन्तरीक्षमें कहीं भी निश्चित् रूपसे मथुरा जैसा और मेरा कोई भी प्रिय स्थान नहीं है।[२] हे वसुन्धरे! मेरे शयनकालमें (चातुर्मास्यमें) पृथ्वीके सारे तीर्थ, समुद्र, सरोवर, मथुरामें निवास करते हैं।[३]

स्कन्द पुराणमें ऐसा उल्लेख है कि जो फल भारतवर्षके किसी अन्य भागमें लाखों वर्षों तक वास करनेसे प्राप्त होता है, वही फल मथुरा नगरीके एक बार स्मरण मात्रसे ही प्राप्त हो जाता है।[४] श्रीमथुरामें जप, उपवास

---

(१) इदं पद्मं महाभागे सर्वेषां मुक्तिदायकम् ।
कर्णिकायां स्थितो देवः केशवः क्लेषनाशनः ।।
(आ.वा.पु)

(२) न विद्यते च पाताले नान्तरीक्षे न मानुषे ।
समस्त मथुरायां हि प्रियं मम वसुन्धरे ।।
(आ.वा.पु)

(३) पृथिव्यां यानि तीर्थानि आसमुद्रसरांसि च ।
मथुरायां गमिष्यन्ति मयि सुप्ते वसुन्धरे ।।
(आ.वा.पु.)

(४) त्रिशंद् वर्ष सहस्राणि त्रिशंद् वर्ष शतानि च ।
यत्फलं भारतेवर्षे तत्फलं मथुरा-स्मरन् ।।
(स्कन्दपुराण)

करने वाले मनुष्य श्रीकृष्णके जन्म स्थानका दर्शनकर समस्त पापोंसे विमुक्त हो जाते हैं।[१] ब्रह्मघाती, मद्यपायी, गोघाती तथा ब्रह्मचर्यसे भ्रष्ट पापी व्यक्ति भी मथुराकी परिक्रमा करने मात्रसे उक्त सभी पापोंसे मुक्त हो जाते हैं। अन्य दूर देशोंसे आकर जो लोग मथुरापुरीकी परिक्रमा करते हैं, लीलास्थलियोंके दर्शन मात्रसे वे सभी प्रकारके पापोंसे मुक्त हो जाते हैं। यहाँ तक कि यदि कोई व्यक्ति 'मैं मथुरामें वास करूँगा' ऐसा संकल्प करता है तो वह समस्त बंधनोंसे मुक्त हो जाता है।

पद्म पुराणमें तो यहाँ तक कहा गया है कि जहाँ कहींसे भी किसीने मथुरा दर्शन करनेकी अभिलाषा की, किन्तु दर्शन करनेसे पहले ही जहाँ कहीं भी उसकी मृत्यु क्यों न हो जाये, उसका निश्चय ही मथुरामें जन्म होता है।[२] इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। प्रकृतिसे अतीत इस मथुरापुरीमें केवल उन्हीं लोगोंकी रति होती है जिनकी भगवान् श्रीकृष्णमें अविचल भक्ति रहती है तथा जो श्रीकृष्णके प्रचुर कृपापात्र हैं।[३]

वायुपुराणमें बतलाया गया है कि मथुरा–मण्डल चौरासी कोसमें परिव्याप्त है। भगवान् श्रीहरि यहाँ सदा–सर्वदा स्वयं निवास करते हैं।[४] अहो! श्रीनारायणके धाम वैकुण्ठसे भी श्रेष्ठ यह मथुराधाम धन्य है, जहाँ केवल एक दिन निवास करनेसे ही श्रीहरिभक्ति प्राप्त हो जाती है। तीन रात्रि निवास करने

---

(१) जपोपवास निरतो मथुरायां षड़ानन।
जन्मस्थानं समासा सर्व पापैः प्रमुच्यते।।
(स्कन्दपुराण)

(२) न दृष्ट्वो मथुरा येन दिदृक्ष्वा यस्य जायते।
यत्र तत्र गतस्यास्य माथुरे जन्म जायते।।
(पद्मपुराण)

(३) हरौ येषां स्थिरा भक्तिर्भूयसी येषु तत्कृपा।
तेषामेवहि धन्यानां मथुरायां भवेद्रति।।
(पद्मपुराण)

(४) चत्वारिशंद योजनानां ततस्तु मथुरास्थिता।
तत्र देवो हरिः साक्षात् स्वयं तिष्ठति सर्वदा।।
(वायुपुराण)

वालेको परम दुर्लभ भगवत् प्रेम प्राप्त हो जाता है। यह मुक्त महापुरुषोंके लिए भी परम दुर्लभ है।[१]

श्रील रूप गोस्वामीने 'श्रीमथुरा-माहात्म्य' में ऐसा उल्लेख किया है 'हे अवन्ति! तुम अपने हाथोंमें पीकदानी लेकर प्रस्तुत हो जाओ, हे मायापुरी (हरिद्वार)! तुम चामर व्यजन करनेके लिए प्रस्तुत हो जाओ, हे काञ्चि! तुम अपने हाथोंमें छत्र ग्रहण करो, हे काशि! तुम हाथोंमें पादुका ग्रहण कर प्रस्तुत रहो, हे अयोध्या! तुम और न डरो, हे द्वारके! आज तुम स्तव स्तुति न करो; क्योंकि तुम किङ्करियोंसे प्रसन्न होकर ये मथुरा देवी आज महाराजाधिराज श्रीकृष्णकी राजमहिषी हुई हैं।[२]

---

(१) अहो मधुपुरी धन्या वैकुण्ठाच्च गरीयसी ।
दिनमेकं निवासेन हरौ भक्ति प्रजायते ।।
त्रिरात्रमपि ये तत्र वसन्ति मनुजामुने ।
हरिर्दृश्यति सुखं तेषां मुक्तानापि दुर्लभम् ।।
(वायुपुराण)

(२) अद्यावन्ति पतद् ग्रहं कुरु करे माये शनैर्वीजय,
छत्र काञ्चि गृहाण काशि पुरतः पादूयुगं धारय ।
नायोध्ये भज समभ्रं स्तुतिकथां नोदगारय द्वारके,
देवींय भवतीषु हन्त मथुरा दृष्टिप्रसादं दधे ।।
(मथुरा माहात्म्य)

चित्र सं.-1

जन्मस्थानका मन्दिर

मथुराकी परिक्रमा

श्रीकृष्ण–जन्मस्थान

आजसे लगभग ५२०४ वर्ष पहले वर्तमान द्वापरयुगके अन्तमें स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी महाअत्याचारी कंसके कारागारमें पिता श्रीवसुदेवजी एवं माता देवकीजीके पुत्रके रूपमें आविर्भूत हुये थे। उस समय वसुदेव एवं देवकीने चतुर्भुज स्वरूपमें उनका दर्शन किया। चारों हाथोंमें क्रमशः शंख, चक्र, गदा और पद्म धारण किये हुए, वक्षस्थलपर श्रीवत्स चिह्न, गलेमें कौस्तुभ मणि तथा मेघ श्यामल कान्तियुक्त अद्भुत दिव्य बालकको देखकर वे दोनों उनकी स्तुति करने लगे। उनकी स्तुति एवं प्रार्थनासे भगवानने शिशुरूप धारण कर लिया तथा भगवानकी प्रेरणासे ही वसुदेवजी नवजात शिशुको गोदीमें उठाकर गोकुल महावन स्थित नन्दभवनमें रखनेके लिए चल पड़े। कारागारसे निकलते समय उनके हाथोंकी हथकड़ियाँ, पैरोंकी बेड़ियाँ, लोहेके कपाट स्वतः ही खुल गये। प्रहरी सो गये। रिमझिम वर्षा भी होने लगी। सारा मार्ग साफ हो गया। उफनती यमुनाको पारकर वसुदेवजी गोकुल नन्दभवनमें पहुँचे। वहाँ नन्दभवनमें यशोदाजीके गर्भसे द्विभुज श्यामसुन्दर और कुछ क्षण पश्चात् ही एक बालिका भी (योगमाया) पैदा हुई थी। यशोदा प्रसव पीड़ासे कुछ अचेतन सी थी। वसुदेवजीके गृहमें प्रवेश करते ही द्विभुज कृष्णने वसुदेव पुत्रको आत्मसात् कर लिया। वसुदेवजी इस रहस्यको समझ नहीं पाये। कन्याको गोदमें लेकर चुपकेसे पुनः कंस कारागारमें लौट आये। पहलेकी भाँति कारागारके लौह कपाट बंद हो गये। वसुदेव और देवकीके हाथोंकी हथकड़ियाँ और पैरोंकी बेड़ियाँ पूर्ववत् लग गईं। उसी रातमें कंसको पता लगते ही वह पागल सा विक्षिप्त हुआ हाथमें तलवार लेकर कारागारमें उपस्थित हुआ। उसने बहन देवकीके हाथोंसे कन्याको छीन लिया और कन्याके दोनों पैरोंको पकड़कर पृथ्वीपर पटक कर मारना चाहा, किन्तु कन्या अष्टभुजावाली दुर्गाका रूप धारणकर कंसको दुत्कारते हुए आकाश मार्गमें अन्तर्ध्यान हो गई।

श्रीकृष्णकी इस जन्मभूमिपर सर्वप्रथम श्रीकृष्णके प्रपौत्र श्रीवज्रनाभजीने एक विशाल मंदिरकी स्थापना की थी। कालान्तरमें उसी स्थानपर भारतके धार्मिक राजाओंने बड़े विशाल–विशाल मंदिरोंका क्रमशः निर्माण कराया।

जिस समय श्रीचैतन्य महाप्रभु जन्म भूमिमें पधारे थे, उस समय वहाँ एक विशाल मंदिर था। श्रीमन् महाप्रभुके भावपूर्ण मधुर नृत्य और कीर्त्तनको देख सुनकर उस मंदिरमें लाखों लोगोंकी भीड़ एकत्र हो गई। नृत्य–कीर्त्तन करते हुए श्रीमन् महाप्रभुजीके भावोंको देख दर्शकगण भाव विभोर हो गये।

यहींपर श्रीचैतन्य महाप्रभुजीने बंगालके सुबुद्धिराय नामक राजाको आत्महत्यासे बचाकर उन्हें परम भगवद्भक्त बना दिया। सुबुद्धिरायको बंगालके धर्मान्ध मुस्लिम शासकके द्वारा बलपूर्वक जातिभ्रष्ट किया गया था। वह पुनः हिन्दू बनना चाहता था, किन्तु उस समयके कट्टर हिन्दू पुरोहितों एवं व्यवस्थापकोंके निर्देशानुसार मृत्युसे पूर्व हिन्दू धर्ममें पुनः प्रवेश करनेके लिए कोई भी मार्ग शेष नहीं था। परन्तु करुणासागर श्रीचैतन्य महाप्रभुने एक बार श्रीकृष्णनामका उच्चारण करा कर उसे शुद्ध कर दिया तथा जीवन भर हरिनाम सङ्कीर्तन एवं वैष्णवोंकी सेवा करते रहनेका उपदेश प्रदानकर उसे कृतार्थ कर दिया।

श्रीमन् महाप्रभुका ब्रज आगमन मुगल सम्राट हुमायूँके राजत्व कालमें हुआ। तत्पश्चात् यवनोंके द्वारा वह मंदिर ध्वंस कर दिये जानेके बाद ओरछाके महाराज वीरसिंह देवने १६१० ई. में तैंतीस लाख रुपया लगाकर आदिकेशवका बहुत विशाल श्रीमंदिर बनवाया। किन्तु, धर्मान्ध औरंगजेबने १६६९ ई. में उसे ध्वंस कर उसके बाहरी स्वरूपमें कुछ परिवर्तनकर उसे मस्जिदके रूपमें परिवर्तित कर दिया। श्रीआदिकेशवजीके पुजारियोंने प्राचीन विग्रहको जिला कानपुरमें स्थित राजधान नामक ग्राममें वर्तमान ईटावा शहरसे सतरह मील दूर छिपा दिया। आज भी वह विग्रह वहीं छोटेसे मंदिरमें स्थित है। किन्तु इनका विजय विग्रह वर्तमान जन्मस्थानके पीछे मल्लपुरा नामक स्थानमें आदिकेशवके मन्दिरमें आज भी सेवित हो रहा है। उस श्रीविग्रहकी विशेषता यह है कि उसमें भगवान्के चौब्बीस अवतारोंकी मूर्त्तियाँ अङ्कित हैं। आदिकेशव कहे जानेसे वैष्णव भक्त लोग इसी मन्दिरमें दर्शन करते हैं। आजकल प्राचीन जन्मस्थानपर श्रीमदनमोहन मालवीय द्वारा संग्रहीत केशव कटरेपर एक विशाल श्रीमंदिरका निर्माण हुआ है। गीताप्रेस गोरखपुरके स्वर्गीय श्रीहनुमान प्रसाद पोद्दारजीकी प्रेरणा और श्रीडालमियाजी आदि सेठोंके प्रयाससे इस मंदिरका निर्माण हुआ। जन्मभूमि मथुराके मल्लपुरा मौहल्लेमें स्थित है। महाराज कंसके चाणूर आदि मल्ल इसी स्थानके निकटमें ही रहते थे। पासमें पोतरा नामक विशाल कुण्ड है। यह पहले कंस कारागारके अंदर ही स्थित था, जिसमें

चित्र सं.–2

कंस कारागार

चित्र सं.–3

श्रीपवित्र (पौत्रा) कुण्ड

श्रीवसुदेव देवकीजी स्नान करते तथा अपने वस्त्रोंको धोते थे। कहा जाता है कि पुत्रोंके उत्पन्न होनेपर देवकीजीके वस्त्र इसीमें साफ किये जाते थे। पवित्रा कुण्डसे अपभ्रंश रूपमें इसका नाम पोतरा कुण्ड हुआ है।

चित्र सं.–4A

जन्मस्थानके पीछे श्रीआदिकेशवदेव

विश्राम घाट

विश्राम घाट मथुराका सर्वप्रधान एवं प्रसिद्ध घाट है। सौर पुराणके अनुसार विश्रान्ति तीर्थ नामकरणका कारण बतलाया गया है—

ततो विश्रान्ति तीर्थाख्यं तीर्थमहो विनाशनम् ।
संसारमरु संचार क्लेश विश्रान्तिदं नृणाम ।।

संसाररूपी मरुभूमिमें भटकते हुए, त्रितापोंसे प्रपीड़ित, सब प्रकारसे निराश्रित, नाना प्रकारके क्लेशोंसे क्लान्त होकर जीव श्रीकृष्णके पादपद्म धौत इस महातीर्थमें स्नान कर विश्राम अनुभव करते हैं। इसलिए इस महातीर्थका नाम विश्रान्ति या विश्राम घाट है। कहा जाता है कि भगवान् श्रीकृष्णने महाबलशाली कंसको मारकर ध्रुव घाटपर उसकी अन्त्येष्टि संस्कार करवाकर बन्धु-बान्धवोंके साथ यमुनाके इस पवित्र घाटपर स्नान कर विश्राम किया था। श्रीकृष्णकी नरलीलामें ऐसा सम्भव है; परन्तु षडैश्वर्यपूर्ण अघटन-घटन पटीयसी सर्वशक्तियोंसे सम्पन्न सच्चिदानन्द स्वयं-भगवान् श्रीकृष्णको विश्रामकी आवश्यकता नहीं होती है। किन्तु भगवानसे भूले-भटके जन्म मृत्युके अनन्त, अथाह सागरमें डूबते-उतराते हुए क्लान्त जीवोंके लिए यह अवश्य ही विश्रामका स्थान है।

इस महातीर्थमें स्नान एवं आचमनके पश्चात् प्रतिवर्ष लाखों श्रद्धालु लोग ब्रजमण्डलकी परिक्रमाका संकल्प लेते हैं और पुनः यहींपर परिक्रमाका समापन करते हैं।

कार्त्तिक माहकी यमद्वितीयाके दिन बहुत दूर-दूर प्रदेशोंके श्रद्धालुजन यहाँ स्नान करते हैं। पुराणोंके अनुसार यम (धर्मराज) एवं यमुना (यमी) ये दोनों जुड़वा भाई-बहन हैं। यमुनाजीका हृदय बड़ा कोमल है। जीवोंके नाना प्रकारके कष्टोंको वे सह न सकीं। उन्होंने अपने जन्म दिनपर भैया यमको निमन्त्रण दिया। उन्हें तरह-तरहके सुस्वादु व्यञ्जन और मिठाईयाँ खिलाकर सन्तुष्ट किया। भैया यमने प्रसन्न होकर कुछ माँगनेके लिए कहा। यमुनाजीने कहा—भैया! जो लोग श्रद्धापूर्वक आजके दिन इस स्थानपर मुझमें स्नान करेंगे, आप उन्हें जन्म-मृत्यु एवं नाना प्रकारके त्रितापोंसे मुक्त कर दें। ऐसा सुनकर यम महाराजने कहा—'ऐसा ही हो। यूँ तो कहीं भी श्रीयमुनामें स्नान करनेका प्रचुर माहात्म्य है, फिर भी ब्रजमें और विशेषकर विश्राम घाटपर भैयादूजके दिन स्नान करनेका विशेष महत्व है। विशेषकर लाखों भाई-बहन उस दिन यमुनामें इस स्थलपर स्नान करते हैं।

चित्र सं.–4

विश्राम घाट

यमुनाके चौब्बीस घाट

मथुरामें श्रीयमुना अर्द्धचन्द्राकार होकर बह रही हैं। बीचोंबीचमें विश्राम घाट अवस्थित है। उसके दक्षिण भागमें क्रमानुसार अविमुक्त तीर्थ, गुह्य तीर्थ, प्रयाग तीर्थ, कनखल तीर्थ, तिन्दुक तीर्थ, सूर्य तीर्थ, बट स्वामी तीर्थ, ध्रुव तीर्थ, बोधितीर्थ, ऋषि तीर्थ, मोक्षतीर्थ, कोटि तीर्थ—ये बारह घाट तथा उत्तरमें नवतीर्थ, (असी तीर्थ) संजमन तीर्थ, धारापत्तन तीर्थ, नागतीर्थ, घण्टा–भरणक तीर्थ, ब्रह्म तीर्थ, सोमतीर्थ, सरस्वती–पतन तीर्थ, चक्रतीर्थ, दसाश्वमेध तीर्थ, विहनराज तीर्थ, कोटि तीर्थ—ये बारह घाट अवस्थित हैं।

भारतके सारे प्रधान–प्रधान तीर्थ एवं स्वयं–तीर्थराज प्रयाग यमुनाके घाटोंपर श्रीयमुना महारानीकी छत्र–छायामें भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना करते हैं। चातुर्मास्य कालमें ये तीर्थसमूह विशेष रूपसे यहाँ आराधना करते हैं।

(१) अविमुक्ततीर्थ—यहाँपर स्वयं काशी विश्वनाथ महादेव भगवद् आराधना करते हैं। इस तीर्थमें स्नान करनेवाले या प्राण त्याग करने वाले सहज ही संसार रूप आवागमनसे मुक्त होकर भगवत् धामको प्राप्त करते हैं।[१]

(२) गुह्य तीर्थ—यहाँ स्नान करनेपर संसारके आवागमनसे मुक्त होकर भगवत् लोककी प्राप्ति होती है।[२]

(३) प्रयाग तीर्थ—यहाँ तीर्थराज प्रयाग भगवद् आराधना करते हैं। यहींपर प्रयागके वेणीमाधव नित्य अवस्थित रहते हैं। यहाँ स्नान करने वाले अग्निष्टोम आदिका फल प्राप्त कर वैकुण्ठ धामको प्राप्त होते हैं।[३]

(४) कनखल—इस तीर्थमें महादेव-पार्वती श्रीहरिकी आराधनामें सदैव तत्पर रहते हैं। जिस प्रकार महादेव शंकरने दक्ष प्रजापतिके ऊपर कृपा कर उसे संसार सागरसे मुक्त कर दिया था, उसी प्रकार इस तीर्थमें स्नान करनेसे ब्रह्मलोक प्राप्त होता है।[४]

(५) तिन्दुक—यह भी गुह्य तीर्थ है। यहाँ स्नान करनेपर भगवद् धामकी प्राप्ति होती है।[५] पास ही में दण्डी घाट है जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभुने स्नान

---

(१) अविमुक्तेः नरः स्नातो मुक्तिं प्राप्नोत्यसशंयम् ।
तत्राथ मुञ्चते प्राणान् मम् लोकं स गच्छति ।।
(आदिवाराह पुराण)

(२) अस्ति चान्यतरं गुह्यं सर्वसंसारमोक्षणम् ।
तस्मिन्स्नातो नरो देवि! मम लोके महीयते ।।
(आदिवाराह पुराण)

(३) प्रयागनामतीर्थं तु देवानामपि दुर्ल्लभम् ।
तस्मिन् स्नातो नरो देवि! अग्निष्टोमफलं लभेत ।।
(आदि पुराण)

(४) तथा कनखलं तीर्थं गुह्य तीर्थं परं मम ।
स्नानमात्रेण तत्रापि नाकपृष्ठे स मोदते ।।
(आदि पुराण)

(५) अस्ति क्षेत्रं परं गुह्यं तिन्दुकं नाम क्रमतः।
तस्मिन् स्नातो नरो देवि! मम लोके महीयते ।।
(आदिवाराह पुराण)

किया था और अपने नृत्य एवं सङ्कीर्तनसे सभीको मुग्ध कर दिया था। आजकल इसे बंगाली घाट भी कहते हैं।

(६) सूर्य तीर्थ—विरोचनके पुत्र महाराज बलिने यहाँ सूर्यदेवकी आराधना कर मनोवाञ्छित फलकी प्राप्ति की थी क्योंकि सूर्यदेव अपनी द्वादश कलाओंके साथ यहाँ अपने आराध्यदेव श्रीकृष्णकी आराधनामें तत्पर रहते हैं। यहाँ रविवार, संक्रान्ति, सूर्यग्रहण या चन्द्रग्रहणके योगमें स्नान करनेसे राजसूय यज्ञका फल प्राप्त होता है तथा मुक्ति होनेपर भगवद् धामकी प्राप्ति होती है।[१] पास ही में बलि महाराजका टीला है। जहाँ श्रीमन्दिरमें बलि महाराज और उनके आराध्य श्रीवामनदेवजीका दर्शन है।

(७) बटस्वामीतीर्थ—यहाँ भी सूर्यदेव भगवान् नारायणकी आराधना करते हैं। सूर्यदेवका ही एक नाम बटस्वामी भी है। रविवारके दिन इस तीर्थमें श्रद्धापूर्वक स्नान करनेसे मनुष्य आरोग्य एवं ऐश्वर्य लाभकर अन्तमें परम गतिको प्राप्त करता है।[२]

(८) ध्रुव तीर्थ—अपनी सौतेली माँके वाक्यबाणसे बिद्ध होनेपर अपनी माता सुनीतिके निर्देशानुसार पञ्चवर्षीय बालक ध्रुव देवर्षि नारदसे यहीं यमुना तटपर मिला था। देवर्षि नारदके आदेशानुसार ध्रुवने इसी घाटपर स्नान किया तथा देवर्षि नारदसे द्वादशाक्षर मन्त्र प्राप्त किया। पुनः यहींसे मधुवनके गंभीर निर्जन एवं उच्च भूमिपर कठोर रूपसे भगवदाराधनाकर भगवद्दर्शन प्राप्त किया था। यहाँ स्नान करनेपर मनुष्य ध्रुवलोकमें पूजित होते हैं।[१] यहाँ

---

(१) ततः परं सूर्यतीर्थं सर्वपापविमोचनम् ।
विरोचनेन बलिना सूर्य्यस्त्वाराधितः पुरा ।।
आदित्येऽहनि संक्रान्तौ ग्रहणे चन्द्रसूर्य्ययोः ।
तस्मिन् स्नातो नरो देवि! राजसूयफलं लभेत् ।।
(आदिवराह पुराण)

(२) ततः पर वटस्वामी तीर्थानां तीर्थमुत्तमम् ।
वटस्वामीति विख्यातो यत्र देवो दिवाकरः ।।
तत्तीर्थं चैव यो भक्त्या रविवारे निषेवते ।
प्राप्नोत्यारोग्यमैश्वर्य्यमन्ते च गतिमुत्तमाम् ।।
(सौर पुराण)

श्राद्ध करनेसे पितृगण प्रसन्न होते हैं। गयामें पिण्ड दान करनेका फल भी उसे यहाँ प्राप्त हो जाता है। यहाँ प्राचीन निम्बादित्य सम्प्रदायके बहुतसे महात्मा गुरुपरम्पराकी धारामें रहते आये हैं। प्राचीन निम्बादित्य सम्प्रदायका ब्रजमण्डलमें यही एक स्थान बचा हुआ है।

(९) ऋषितीर्थ—यहाँ बद्रीधामवाले नर-नारायण ऋषि भगवान् श्रीकृष्णकी आराधनामें तत्पर रहते हैं। यह ध्रुव तीर्थके दक्षिणमें स्थित है। यहाँ स्नान करनेपर मनुष्य भगवत् लोकको प्राप्त होता है।[२]

(१०) मोक्ष तीर्थ—दक्षिण भारतके मदुराई तीर्थ, कन्याकुमारी आदि सारे तीर्थ मथुरा पुरीमें इस घाटपर भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना करते हैं। इस मोक्ष तीर्थमें स्नान करनेसे सहज ही विष्णुके चरणोंकी सेवारूप मोक्षकी प्राप्ति होती है।[३]

(११) कोटितीर्थ—यहाँ कोटि-कोटि देववृन्द भगवद् आराधना करनेकी अभिलाषा करते हैं। इन देवताओंके लिए भी यह दुर्लभ स्थान है। यहाँ स्नान करनेसे भगवद्‌लोककी प्राप्ति होती है।[४]

(१२) बोधितीर्थ—यहाँ भगवान् बुद्ध जीवोंके स्वरूप धर्म भगवद् भक्तिका बोध कराते हैं, इसलिए इसका नाम बोधितीर्थ है।[५] कहा जाता है कि रावणने गुप्त रूपसे यहाँ तपस्या की थी। वह त्रेतायुगमें एक निर्विशेष ब्रह्मज्ञानी ऋषि था। उसने स्वरचित लङ्कावतार-सूत्र नामक ग्रन्थमें अपने निर्विशेष

---

(१) यत्र ध्रुवेन सन्तपृमिच्छया परमं तपः ।
तत्रैव स्नानमात्रेण ध्रुवलोके महीयते ।।
ध्रुवतीर्थे च वसुधे! यः श्राद्धं कुरुते नरः ।
पितृन सन्तारयेत् सर्वान् पितृपक्षे विशेषतः ।।
(आदि वराह पुराण)

(२) दक्षिणे ध्रुवतीर्थस्य ऋषितीर्थं प्रकीर्तितम ।
तत्र स्नातो नरो देवि! मम लोक महीयते ।।

(३) दक्षिणे ऋषितीर्थस्य मोक्षतीर्थं वसुन्धरे ।
स्नानमात्रेण वसुधे! मोक्षं प्राप्नोति मानवः ।।

(४) तत्रैव कोटितीर्थं तु देवानामपि दुर्ल्लभम् ।
तत्र स्नानेन दानेन मम लोके महीयते ।।

(५) तत्रैव बोधितीर्थन्तु पितृणामपि दुर्ल्लभम् ।
पिण्डं दत्वा तु वसुधे! पितृलोकं स गच्छति ।।

ब्रह्मज्ञान अथवा बौद्धवादका परिचय दिया है। निःशक्तिक और ब्रह्मवादी होनेके कारण वह सर्वशक्तिमान भगवान् श्रीरामचन्द्रजीसे उनकी शक्ति श्रीसीतादेवीका हरण करना चाहता था, किन्तु श्रीरामचन्द्रजीने उस निर्विशेष ब्रह्मवादीका वंश सहित बध कर दिया। यहाँ स्नान करनेसे पितृ–पुरुषोंका सहज ही उद्धार हो जाता है और वे स्वयं पितृ लोकोंको गमन कर सकते हैं। सौभाग्यवान जीव यहाँ यमुनामें स्नान कर भगवद् धामको प्राप्त होते हैं।

विश्राम घाटके दक्षिणमें भी बारह घाट हैं। ये घाट इस प्रकार हैं—विश्राम घाटके निकट प्रसिद्ध असिकुण्ड है, जहाँ स्नान करनेसे मनुष्योंके कायिक मानसिक और वाचिक सारे पाप दूर हो जाते हैं।

(१) नवतीर्थ—असिकुण्डके उत्तरमें नवतीर्थ है। यहाँ स्नान करनेसे भक्तिकी नवनवायमान रूपमें उत्तरोत्तर वृद्धि होती है। इससे बढ़कर तीर्थ न हुआ है, और न होगा।[१]

(२) संयमन तीर्थ—इसका वर्त्तमान नाम स्वामी घाट है। किसी–किसीका कहना है कि महाराज वसुदेवने नवजात शिशु कृष्णको गोदीमें लेकर यहींसे यमुना पार की थी। यहाँ स्नान करनेपर भगवद् धामकी प्राप्ति होती है।[२]

(३) धारापतन तीर्थ—यहाँ स्नान करनेपर मनुष्य सब प्रकारके सुखोंको भोग करता हुआ सहजही स्वर्गको प्राप्त कर लेता है तथा यहाँ प्राण त्याग करनेपर भगवद्धामको गमन करता है।[३]

(४) नागतीर्थ—यह उत्तमसे उत्तम तीर्थ है। यहाँ स्नान करनेसे पुनरागमन नहीं होता है। भगवान् शेष या अनन्त देव धामकी रक्षाके लिए यहाँ सब समय विराजमान रहते हैं। श्रीवसुदेव महाराज नवजात शिशु कृष्णको लेकर वर्षामें भीगते हुए जब यमुनाको पार कर रहे

---

(१) उत्तरे त्वसिकुण्डाञ्च तीर्थन्तु नवसंज्ञकम् ।
नवतीर्थात् परं तीर्थ न भूतं न भविष्यति ।।

(२) ततः संयमनं नाम तीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम् ।
तत्र स्नातो नरो देवि! मम लोकं स गच्छति ।।

(३) धारासम्पातने स्नात्वा नाकपृष्ठे स मोदते ।
अथात्र मुञ्चते प्राणान् मम लोकं स गच्छति ।।

थे, तब यहीं अनन्तदेवने अपने अनन्त फणोंको छत्र बनाकर वृष्टिसे उनकी रक्षा की थी।[१]

(५) घण्टाभरणक तीर्थ—यहाँ स्नान करनेसे मनुष्य सब प्रकारके पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकमें गमन करता है।[२]

(६) ब्रह्मतीर्थ—यमुनाके इस घाटपर अवस्थित होकर लोक पितामह ब्रह्माजी भगवद् आराधना करते हैं। यहाँ स्नान, आचमन, यमुनाजल पान और निवास करनेसे मनुष्य ब्रह्माजीके माध्यमसे विष्णुलोकको प्राप्त करता है। ब्रह्माके नामसे इसका नाम ब्रह्मतीर्थ पड़ा है।[३]

(७) सोमतीर्थ—सोमतीर्थका दूसरा नाम गौ घाट है। यहाँ यमुनाके पवित्र जलसे अभिषेक करने पर सारे मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं।[४]

(८) सरस्वती पतनतीर्थ—सरस्वती नदी इसी स्थान पर यमुनामें मिलती थी। सरस्वती नदीका दूसरा नाम श्रीकृष्णगङ्गा होनेके कारण इसे कृष्णगङ्गा घाट भी कहते हैं। समीप ही दाहिनी ओर गौ घाट या सोमतीर्थ है। इस घाटका सम्बन्ध श्रीकृष्ण-द्वैपायन वेदव्याससे है। यहीं पास ही यमुनाके एक द्वीपमें महर्षि पाराशर और मत्स्यगन्धा सरस्वतीसे व्यासका जन्म हुआ था। कहा जाता है कि देवर्षि नारदके उपदेशोंको श्रवणकर भक्तियोगके द्वारा पूर्णब्रह्म श्रीकृष्ण और श्रीकृष्णकी ब्रज, मथुरा और द्वारकाकी सारी लीलाओंका दर्शनकर यहींपर श्रीव्यासदेवने परमहंस संहिता श्रीमद्भागवतकी रचना की

---

(१) अतः परं नागतीर्थं तीर्थानामुत्तमोत्तमम् ।
यत्र स्नात्वा दिवं यान्ति ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः ।।

(२) घण्टाभरणकं तीर्थं सर्व्वपापप्रमोचनम् ।
यस्मिन स्नातो नरो देवि! सूर्य्यलोके महीयते ।।

(आदि वाराह पुराण)

(३) तीर्थानामुत्तमं तीर्थं ब्रह्मलोकेऽतिविश्रुतम् ।
तत्र स्नात्वा च पीत्वा च नियतो नियतासनः ।
ब्रह्मणा समनुज्ञातो विष्णुलोकं स गच्छति ।।

(आदि वाराह पुराण)

(४) सोमतीर्थं तु वसुधे! पवित्रे यमुनाम्भसि ।
तत्राभिषेकं कुर्वीत सर्वकर्मप्रतिष्ठितः ।
मोदते सोमलोके तु इदमेव न संशयः ।।

(आदि वाराह पुराण)

थी। ठीक ही है, इस मधुरातिमधुर ब्रजधाममें आराधना किये बिना श्रीकृष्णकी मधुरातिमधुर लीलाओंका दर्शन एवं वर्णन कैसे सम्भव हो सकता है? बहुतसे विद्वत् सारग्राही भक्तोंका ऐसा ही अभिमत है। यहाँ स्नान करनेपर मनुष्य सब प्रकारके पापोंसे मुक्त होकर भगवद् प्रेम प्राप्त करते हैं। निम्न जातिके व्यक्ति भी यहाँ स्नान करनेपर परमहंस जाति अर्थात् परम भक्त हो जाते हैं।[१]

(९) चक्रतीर्थ—मथुरा मण्डलमें यमुनातटपर स्थित यह तीर्थ सर्वत्र विख्यात है। निकट ही महाराज अम्बरीषका टीला है, जहाँ महाराज अम्बरीष यमुनाके किनारे निवासकर शुद्धभक्तिके अङ्गोंके द्वारा भगवद् आराधना करते थे। द्वादशी पारणके समय राजा अम्बरीषके प्रति महर्षि दुर्वासाके व्यवहारसे असन्तुष्ट होकर विष्णुचक्रने इनका पीछा किया। दुर्वासा एक वर्ष तक विश्व ब्रह्माण्डमें सर्वत्र यहाँ तक कि ब्रह्मलोक, शिवलोक एवं वैकुण्ठ लोकमें गये, परन्तु चक्रने उनका पीछा नहीं छोड़ा। अन्तमें भगवान् विष्णुके परामर्शसे भक्त अम्बरीषके निकट लौटनेपर उनकी प्रार्थनासे चक्र यहीं रुक गया। इस प्रकार ऋषिके प्राणोंकी रक्षा हुई। यहाँ स्नान करनेसे ब्रह्महत्या आदि पापोंसे भी मुक्ति हो जाती है। तथा स्नान करनेवाला सुदर्शन चक्रकी कृपासे भगवद् दर्शन प्राप्तकर कृतार्थ हो जाता है।[२]

(१०) दशाश्वमेध तीर्थ—यमुनाके इस पवित्र घाटपर ब्रह्माजीने दश अश्वमेध यज्ञ किये थे। यह स्थान देवर्षि नारद, चतुःसन आदि ऋषियोंके द्वारा सदा–सर्वदा पूजित है। यहाँ स्नान करनेसे मनुष्यको भगवद् धामकी प्राप्ति होती है।[३]

(११) विघ्नराज तीर्थ—यहाँ स्नान करनेपर मनुष्य सब प्रकारके विघ्नोंसे मुक्त हो जाता है। विघ्न विनाशक श्रीगणेशजी यहाँ सर्वदा निवास कर भगवद्

---

(१) सरस्वत्याञ्च पतनं सर्वपापहरं शुभम् ।
तत्र स्नात्वा नरो देवि! अवर्णोऽपि यतिर्भवेत ।।
(आदि वराह पुराण)

(२) चक्रतीर्थं तु विख्यातं माथुरे मम मण्डले ।
यस्तत्र कुरुते स्नानं त्रिरात्रोपोषितो नरः ।
स्नानमात्रेण मनुजो मुच्यते ब्रह्महत्यया ।।

(३) दशास्वमेधमृषिभिः पूजितं सर्वदा पुरा ।
तत्र ये स्नान्ति मनुजास्तेषां स्वर्गो न दुर्ल्लभः ।।

आराधना करते हैं। यहाँ स्नान करनेसे विशेषरूपसे भगवान् नृसिंहदेवकी कृपासे भक्तिके सारे विघ्न दूर हो जाते हैं तथा भगवद् धामकी प्राप्ति होती है।[१]

(१२) कोटितीर्थ—यहाँ स्नान करनेसे मनुष्य कोटि-कोटि गोदानका फल प्राप्त करता है।[२] पास ही में गोकर्ण तीर्थ है। प्रसिद्ध गोकर्णने अपने भाई धुंधुकारीको श्रीमद्भागवतकी कथा सुनाकर उसका प्रेतयोनिसे उद्धार किया था। उन्हीं गोकर्णकी भगवद् आराधनाका यह स्थल है।[३]

मथुरा परिक्रमामें दर्शनीय स्थान

उपरोक्त वर्णित चौब्बीस घाटोंके अतिरिक्त मथुराकी पञ्चकोसी परिक्रमाके अन्तर्गत निम्नलिखित दर्शनीय स्थान हैं—

विश्राम घाटसे परिक्रमा आरम्भ करनेपर सर्वप्रथम पीपलेश्वर महादेवका दर्शन होता है—

पीपलेश्वर महादेव—मथुराके चार क्षेत्रपालोंमेंसे एक हैं। ये मथुरापुरीके पूर्व दिशामें विश्राम घाटके निकट स्थित हैं तथा मथुरा क्षेत्रकी सदा रक्षा करते हैं। तदनन्तर वेणी माधव, रामेश्वर, दाऊजी, मदनमोहन, तन्दुकतीर्थ, सूर्यघाट, ध्रुव टीलाका दर्शन कर सप्तऋषि टीलेपर अत्रि, मरीचि, क्रतु, अङ्गीरा, गौतम, वशिष्ठ, पुलस्त्यका दिव्य दर्शन है। ये सप्त ऋषि मथुरा धाममें इसी स्थानपर रहकर भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना करते हैं।

बलि महाराजका टीला—यहाँ बलि महाराज और वामनदेवजीका दर्शन है। बलि महाराजने यहाँ भगवान वामनदेवकी आराधना की थी।

अक्रूरभवन—कुछ आगे बढ़नेपर अक्रूरजीका भवन है, अक्रूरजी कृष्ण बलदेवको मथुरामें अपने इसी वासस्थलपर लाना चाहते थे, किन्तु कृष्ण और बलदेव कंसको मारनेके पश्चात् वहाँ आनेका वचन देकर अपने पिता श्रीनन्दबाबाके पास मथुराकी सीमापर ठहर गये थे।

---

(१) तीर्थं तु विघ्नराजस्य पुण्यं पापहरं शुभम् ।
तत्र स्नातं तु मनुजं विघ्नराजो न पीडयेत् ।।

(२) ततः परं कोटितीर्थं तीर्थानां परमं शुभम् ।
तत्रैव स्नानमात्रेण गवां कोटिफलं लभेत ।।

(३) ततो गोकर्ण तीर्थाख्यं तीर्थं भुवनविश्रुतम् ।
विद्यते विश्वनाथस्य विष्णोरत्यन्तवल्लभम् ।।

(सभी—आदि वराह पुराण)

कुब्जा कूप—मथुरा भ्रमणके समय श्रीकृष्ण–बलराम यहींपर कंसकी दासी कुब्जासे मिले थे। कुब्जाने प्रीतिपूर्वक श्रीकृष्ण बलरामके अङ्गोंमें अङ्गराग सुशोभित किया था। श्रीकृष्णने देखते–देखते ही उसकी कमर और ठोढ़ीको अपने हाथोंसे स्पर्श कर उसे अप्सरा जैसी परमा सुन्दरी किशोरीके रूप परिणत कर दिया। कुब्जाने काम भरी लजीली आँखोंसे उनकी ओर देखकर उन्हें अपने घर ले जाना चाहा, किन्तु श्रीकृष्ण अपना कार्य पूर्ण होनेपर पीछे आनेका वचन देकर चले गये। कंस–वधके पश्चात् कृष्णने उद्धवजीके साथ उसके इसी निवास स्थानपर कुछ समयके लिए उपस्थित होकर उसका मनोरथ पूर्ण किया।

रङ्गभूमि एवं श्रीरङ्गेश्वर महादेव—मथुराके दक्षिणमें श्रीरङ्गेश्वर महादेवजी क्षेत्र पालके रूपमें अवस्थित हैं। भोज–कुलांगार महाराज कंसने श्रीकृष्ण और बलदेवको मारनेका षड़यन्त्रकर इस तीर्थ स्थानपर एक रङ्गशालाका निर्माण करवाया। अक्रूरके द्वारा छलकर श्रीनन्दगोकुलसे श्रीकृष्ण–बलदेवको लाया गया। श्रीकृष्ण और बलदेव नगरभ्रमणके बहाने ग्वालबालोंके साथ लोगोंसे पूछते–पूछते इस रङ्गशालामें प्रविष्ट हुये। रङ्गशाला बहुत ही सुन्दर सजायी गई थी। सुन्दर–सुन्दर तोरण–द्वार पुष्पोंसे सुसज्जित थे। सामने शंकरका विशाल धनुष रखा गया था। मुख्य प्रवेश द्वारपर मतवाला कुबलयापीड़ हाथी झूमते हुए, बस इङ्गित पानेकी प्रतीक्षा कर रहा था, जो दोनों भाईयोंको मारनेके लिए भलीभाँति सिखाया गया था। रङ्गेश्वर महादेवकी छटा भी निराली थी। उन्हें विभिन्न प्रकारसे सुसज्जित किया गया था। रङ्गशालाके अखाड़ेमें चाणूर, मुष्टिक, शल, तोषल आदि बड़े–बड़े भयङ्कर पहलवान दङ्गलके लिए प्रस्तुत थे। महाराज कंस अपने बड़े–बड़े नागरिकों तथा मित्रोंके साथ उच्च मञ्चपर विराजमान था।

रङ्गशालामें प्रवेश करते ही श्रीकृष्णने अनायास ही धनुषको अपने बायें हाथसे उठा लिया। पलक झपकते ही सबके सामने उसकी डोरी चढ़ा दी तथा डोरीको ऐसे खींचा कि वह धनुष भयङ्कर शब्द करते हुए टूट गया। धनुषकी रक्षा करनेवाले सारे सैनिकोंको दोनों भाईयोंने अनायास ही मार गिराया। कुवलयापीड़का बधकर श्रीकृष्णने उसके दोनों दाँतोंको उखाड़ लिया और उससे महावत एवं अनेक दुष्टोंका संहार किया। कुछ सैनिक भाग खड़े हुए और महाराज कंसको सारी सूचनाएँ दीं, तो कंसने क्रोधसे दाँत पीसते हुए चाणूर–मुष्टिकको शीघ्र ही दोनों बालकोंका वध करनेके लिए

इंगित किया। इतनेमें श्रीकृष्ण एवं बलदेव अपने अङ्गोंपर खूनके कुछ छींटे धारण किये हुए हाथीके विशाल दातोंको अपने कंधेपर धारण कर सिंहशावककी भाँति मुसकुराते हुए अखाड़ेके समीप पहुँचे। चाणूर और मुष्टिकने भङ्गीपूर्वक उन दोनों भाईयोंको मल्लयुद्धके लिए ललकारा। नीति विचारक श्रीकृष्णने अपने समान आयु वाले मल्लोंसे लड़नेकी बात कही। किन्तु चाणूरने श्रीकृष्णको और मुष्टिकने बलरामजीको बड़े दर्पसे, महाराज कंसका मनोरञ्जन करनेके लिए ललकारा। श्रीकृष्ण–बलराम तो ऐसा चाहते ही थे। इस प्रकार मल्लयुद्ध आरम्भ हो गया।

वहाँपर बैठी हुई पुर–स्त्रियाँ उस अनीतिपूर्ण मल्लयुद्धको देखकर वहाँसे उठकर चलनेको उद्यत हो गईं। श्रीकृष्णकी रूपमाधुरीका दर्शनकर कहने लगीं—अहो! सच पूछो तो ब्रजभूमि ही परम पवित्र और धन्य है। वहाँ परम पुरुषोत्तम मनुष्यके वेशमें छिपकर रहते हैं। देवादिदेव महादेव शंकर और लक्ष्मीजी जिनके चरणकमलोंकी पूजा करती हैं, वे ही प्रभु वहाँ रङ्ग–बिरङ्गे पुष्पोंकी माला धारणकर गऊओंके पीछे–पीछे सखाओं और बलरामजीके साथ बाँसुरी–बजाते और नाना प्रकारकी क्रीड़ाएँ करते हुए आनन्दसे विचरण करते हैं। श्रीकृष्णकी इस रूपमधुरिमाका आस्वादन केवल ब्रजवासियों एवं विशेषकर गोपियोंके लिए ही सुलभ है। वहाँके मयूर, शुक, सारी, गौएँ, बछड़े तथा नदियाँ सभी धन्य हैं। वे स्वच्छन्द रूपसे श्रीकृष्णकी विविध–प्रकारकी माधुरियोंका पान करके निहाल हो जाते हैं। अभी वे ऐसी चर्चा कर ही रही थीं कि श्रीकृष्णने चाणूर और बलरामजीने मुष्टिकको पछाड़कर उनका वध कर दिया। तदनन्तर कूट, शल, तोषल आदि भी मारे गये। इतनेमें कंसने क्रोधित होकर श्रीकृष्ण–बलदेव और नन्द–वसुदेव सबको बंदी बनानेके लिए आदेश दिया। किन्तु, सबके देखते ही देखते बड़े वेगसे उछलकर श्रीकृष्ण उसके मञ्चपर पहुँच गये और उसकी चोटी पकड़कर नीचे गिरा दिया तथा उसकी छातीके ऊपर कूद गये, जिससे उसके प्राण पखेरू उड़ गये। इस प्रकार सहज ही कंस मारा गया। श्रीकृष्णने रङ्गशालामें बड़े ही रङ्गसे अनुचरोंके साथ कंसका उद्धार किया। कंसके पूजित शंकरजी इस रङ्गको देखकर कृतकृत्य हो गये। इसलिए उनका नाम श्रीरङ्गेश्वर हुआ। यह स्थान आज भी कृष्णकी इस रङ्गमयी लीलाकी पताका फहरा रहा है।

श्रीमद्भागवतके अनुसार तथा श्रील विश्वनाथ चक्रवर्त्ती पादके विचारसे कंसका वध शिवरात्रिके दिन हुआ था। क्योंकि कंसने अक्रूरको एकादशीकी रात अपने घर बुलाया तथा उससे मंत्रणा की थी। द्वादशीको अक्रूरका नन्द भवनमें पहुँचना हुआ, त्रयोदशीको नन्दगाँवसे अक्रूरके रथमें श्रीकृष्ण–बलराम मथुरामें आये, शामको मथुरा नगर भ्रमण तथा धनुष–यज्ञ हुआ था। दूसरे दिन अर्थात् शिव चतुर्दशीके दिन कुवलयापीड़, चाणुरमुष्टिक एवं कंसका वध हुआ था।

प्रतिवर्ष यहाँ कार्तिक माहमें देवोत्थान एकादशीसे एक दिन पूर्व शुक्ला दशमीके दिन चौबे समाजकी ओरसे कंसवध मेलेका आयोजन किया जाता है। उस दिन कंसकी २५–३० फुट ऊँची मूर्त्तिका श्रीकृष्णके द्वारा वध प्रदर्शित होता है।

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ—श्रीरङ्गेश्वर महादेव और कंस–टीलाके पास ही परिक्रमा मार्ग पर दाहिनी ओर तथा मथुरा–आगरा राजमार्ग पर बायीं ओर श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ वर्तमान समयमें एक प्रसिद्ध दर्शनीय स्थान है। आचार्य केशरी ॐविष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजने मथुराके देवाधिदेव भगवान् श्रीकेशवजीके नाम पर इस मठका नामकरण "श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ" किया था। प्रारम्भसे ही त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराजको इस मठका मठरक्षक नियुक्त किया गया था; जिससे भारतके हिन्दी–भाषी क्षेत्रोंमें श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा आचरित और प्रचारित शुद्ध भक्तिका प्रचार हो सके। कुछ ही दिनोंमें यहींसे राष्ट्रभाषा हिन्दीमें मासिक 'श्रीभागवत–पत्रिका', जैवधर्म, श्रीशिक्षाष्टक, श्रीमन्महाप्रभुकी शिक्षा, उपदेशामृत, श्रीमनःशिक्षा, श्रीमद्भगवद्गीता आदि ग्रन्थोंका प्रकाशन हुआ और अभी भी नये–नये भक्ति–ग्रन्थोंका प्रकाशन हो रहा है। यहीं पर पाश्चात्य जगत्में श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रचारित श्रीहरिनाम–संकीर्तनकी धूम मचानेवाले तथा विश्वकी अनेक भाषाओंमें श्रीमद्भगवद्गीता, श्रीमद्भागवत आदि अनेक ग्रन्थोंका विपुल रूपमें प्रकाशन और वितरण करनेवाले श्रीअभयचरण भक्तिवेदान्तजीने ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजसे त्रिदण्ड–संन्यास–वेश ग्रहण किया था। तबसे उनका संन्यासका नाम—त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज हुआ। त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भभक्तिवेदान्त नारायण महाराजने उक्त अनुष्ठानका पौरोहित्य किया था।

इसके अनन्तर शिवताल और कङ्काली देवीका दर्शन है।

चित्र सं.–5

चित्र सं.–5A

कङ्काली—कङ्काली टीलेपर कङ्काली देवीका दर्शन है। कंसके द्वारा पूजित होनेके कारण यह कंस काली या कङ्काली देवी कहलाती है। यह वही अष्टभुजा सिंहवाहनी दुर्गा देवी है, जिसे कंसने देवकीकी कन्या समझकर उसे मारना चाहा था, किन्तु देवी उसके हाथसे छूटकर आकाशमें चली गई थी।

इससे आगे बलभद्र कुण्ड है। कुण्डके तटपर दाऊजी तथा जगन्नाथजीका मन्दिर है। वहाँसे आगे भूतेश्वर महादेवजीका मन्दिर है।

चित्र सं.–6

श्रीकङ्कालीदेवीका मन्दिर

भूतेश्वर महादेव—मथुराके पश्चिम दिशामें क्षेत्रपालके रूपमें नित्यकाल भूतेश्वर महादेव विराजमान हैं। पास ही में कंसके द्वारा पूजित पाताल देवी है। कुछ दूर आगे पोतरा कुण्ड, आदिकेशव और जन्मस्थान है, जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है। इससे आगे ज्ञान–वापी या ज्ञानबाउड़ी है।

चित्र सं.–7

श्रीभूतेश्वर महादेव

ज्ञान–वापी—मथुराकी पंचकोसी परिक्रमा मार्गमें भूतेश्वर महादेव और कटरा केशवदेव (श्रीकृष्ण जन्मस्थान)के मध्यमें भूगर्भमें छिपा हुआ एक महत्वपूर्ण पौराणिक तीर्थ है—ज्ञानवापी या ज्ञानबाबड़ी। इस तीर्थके सम्बन्धमें ऐसा उल्लेख है—

यो वाप्यां धर्मराजस्य, मथुरायास्तु पश्चिमै ।
स्थानं करोति तस्यां तु, ग्रहदोर्षर्न लिप्यते ।।
(वाराह पुराण अन्तर्गत मथुरा महात्म्य अ.—२६९–४२)

अर्थात् जो लोग मथुराके पश्चिममें स्थित धर्मराजकी ईशवापी बावड़ीमें स्नान करते हैं, उनके सारे ग्रह–दोष दूर हो जाते हैं एवं भगवत्भक्ति होती है।

सतयुग कौ इक तीरथ कहौ, वापी ज्ञानभक्तिकों लहों ।
यामं जों स्नान करैजू, धोई पाप बहु पुन्य भरैजू ।।
(कविवर हरिलाल ककोरकी मथुरा परिक्रमा, पृष्ठ–९ विक्रमी २५००)

वायु पुराणके अनुसार धर्मराज युधिष्ठिरने इस बावड़ीका निर्माण कराया था। भगवान् श्रीकृष्ण और महाराज युधिष्ठिरका मन्त्रणा–स्थल होनेके कारण भी यह स्थान महत्वपूर्ण है।

चित्र सं.–8

ज्ञानवापी तथा उसमें राजा भर्तृहरीकी समाधि

सारे विश्वमें शुद्धभक्ति एवं कृष्णनाम संकीर्तनका प्रचार करने वाले श्रीकृष्णाभिन्न शचीनन्दन गौरहरिके श्रीधाम मथुरा ब्रजमें पधारनेका भी वर्णन श्रीचैतन्य चरितामृमें विशेष रूपसे किया गया है। वे मथुरामें विश्राम घाट यमुनामें स्नान कर श्रीकेशवदेवके मन्दिरमें पधारे थे। उस समय भावावेशमें उनको नृत्य और कीर्तन करते देखकर उनके दर्शनोंके लिए हजारों लोगोंकी भीड़ उपस्थित हुई। उन्होंने ज्ञान बाबड़ीमें स्नान और आचमन किया था। तत्पश्चात् बाबड़ीके निकटस्थ एक सानौढ़िया ब्राह्मण वैष्णवके घर पर ठहरने और वहीं प्रसाद पानेका उल्लेख भी चैतन्य चरितामृतमें आता है। पौराणिक (ग्रन्थों) पुस्तकोंमें इस स्थानसे राजा भर्तृहरिका सम्बन्ध होना भी पाया जाता है। यही राजा भर्तृहरिकी समाधि भी स्थित थी, जो कुटिल कालकी गतिसे कुछ परिवर्तित रूपमें विद्यमान है।

महाविद्या देवी—इन्हें अम्बिका देवी भी कहा जाता है। एक समय महाराज नन्द, कृष्ण, बलदेव, यशोदा देवी और अन्यान्य गोपोंके साथ देवयात्राके उपलक्ष्यमें यहीं अम्बिका वनमें उपस्थित हुए। वहाँ सबके साथ पवित्र सरस्वतीके जलमें स्नान कर पशुपति (गोकर्ण महादेव) की पूजा अर्चना की। रात्रिमें सबके साथ वहीं निवास किया। उसी रातको एक विशाल अजगरने नन्दबाबाको पकड़ लिया और क्रमशः उनको निगलने लगा तो सभीने उन्हें बचानेकी चेष्टा की, किन्तु सभी असफल हो गये। उस समय नन्दबाबाने बड़े आर्त्त होकर कृष्णको पुकारा। बड़े आश्चर्यकी बात हुई। ज्योंहि कृष्णने अपने पैरोंसे उसे स्पर्श किया, अजगरने अपना विशाल सर्प शरीर

चित्र सं.–9

श्रीमहाविद्यादेवीका मन्दिर

त्यागकर सुन्दर विद्याधरके रूपमें खड़े होकर श्रीकृष्णको प्रणाम किया। श्रीकृष्णके द्वारा पूछे जाने पर उसने अपना परिचय बतलाया कि पहले मैं सुदर्शन नामका विद्याधर था। मैंने कभी विमानसे विचरण करते समय अङ्गीरस नामक कुरूप ऋषियोंको देखकर उनका उपहास किया था, जिससे उन्होंने मुझे सर्प योनि ग्रहण करनेका अभिशाप दिया। आज वही अभिशाप मेरे लिए वरदान सिद्ध हुआ। मैं आपके चरणकमलोंके स्पर्शसे शापमुक्त ही नहीं, वरन् परम कृतार्थ हो गया। वही स्थान महाविद्या देवीके रूपमें प्रसिद्ध है।

तदनन्तर सरस्वती कुण्ड, चामुण्डा देवी और रजक-बध टीला है—

रजक बध—मथुरापुरी भ्रमण करते समय यहींपर श्रीकृष्ण और बलदेवजीने एक धोबीको देखा। वह कंसके वस्त्रोंको धौत कर रंगनेका भी काम करता था। श्रीकृष्ण और बलदेवने उसके पास सुन्दर-सुन्दर वस्त्रोंको देखकर उनमेंसे अपने लिए उपयुक्त वस्त्रोंको माँगा। किन्तु, रजकने श्रीकृष्ण-बलरामका उपहास करते हुए वस्त्रोंको देनेके लिए मना किया। उसके व्यंग्य भरे उपहासको सुनकर श्रीकृष्णने सबके देखते-ही-देखते पलक झपकते ही अपने हाथोंसे उसका सिर उड़ा दिया और उसे सुन्दर गति प्रदान की।

कुछ और आगे बढ़नेपर गोकर्ण महादेवका दर्शन होता है।

गोकर्ण महादेव—मथुराके उत्तर दिशामें ये धामके क्षेत्रपाल हैं। ये प्रसिद्ध श्रीमद्भागवत वक्ता गोकर्णके द्वारा पूजित होनेके कारण गोकर्ण महादेव कहलाते हैं। इससे आगे यमुनाके तटपर नीलकंठेश्वर महादेवका दर्शन करते हुए अम्बरीष टीलेका दर्शन होता है।

अम्बरीष टीला—सरस्वती एवं यमुनाके संगमके समीप ही दाहिनी ओर अम्बरीष टीला है। महाराज अम्बरीष सत्ययुगमें सप्तद्वीपवती पृथ्वीके चक्रवर्ती सम्राट थे। वे भगवानके ऐकान्तिक भक्त थे। उन्होंने अपनी सारी इन्द्रियोंको भक्तिके विभिन्न अङ्गोंके पालनमें नियुक्त कर रखा था। वे मनके द्वारा श्रीकृष्णकी लीलाओंका चिंतन करते थे। वाणीके द्वारा भगवानका नाम कीर्तन एवं लीला कथाओंका वर्णन करते थे। हाथोंके द्वारा भगवानके श्रीमन्दिरका मार्जन करते। कानोंके द्वारा भगवानकी कथाओंका श्रवण करते। नेत्रोंसे श्रीमुकुन्दके श्रीमन्दिरोंका दर्शन करते। घ्राणेन्द्रियोंसे भगवद् चरणोंमें अर्पित माल्य, चन्दन आदि निर्माल्यकी सुगन्ध ग्रहण करते, रसनाके द्वारा भगवदर्पित प्रसादका सेवन करते तथा पैरोंसे भगवद् धाम, तुलसी एवं श्रीमन्दिर आदिकी

परिक्रमा करते थे तथा एकादशी आदि हरिवासर तिथियोंका पालन भी करते थे।

एक समय मथुरामें उन्होंने इस स्थानपर वास करते हुए द्वादशी–व्रतका निर्जला उपवास किया एवं दूसरे दिन सूर्योदयके बाद पारणके लिए थोड़ा सा समय बचा हुआ था। उन्होंने पूजा, अर्चना आदिके पश्चात् ज्योंहि भगवानको निवेदित अन्नके द्वारा पारण करना चाहा, उसी समय महर्षि दुर्वासा वहाँ उपस्थित हुए। महाराजने आदरपूर्वक उन्हें भी व्रतका पारण करनेके लिए निर्मंत्रित किया। महर्षिने महाराजसे कहा—आपका निमंत्रण स्वीकार है, किन्तु मेरे अभी कुछ नित्य कृत्य बाकी हैं। यमुना तटपर स्नान कर अपने कृत्य समाप्त कर अभी आ रहा हूँ, आप प्रतीक्षा करें। ऐसा कहकर वे यमुनाकी ओर चले गये। महर्षि दुर्वासाको लौटनेमें कुछ विलम्ब हो गया। इधर पारणका समय बीता जा रहा था। महाराज अम्बरीषने ब्राह्मणों एवं सभासदोंसे परामर्शकर व्रतकी रक्षाके लिए भगवद्–चरणामृत की एक बूँद ग्रहण कर ली।

जब महर्षि दुर्वासा लौटे तो यह जानकर बड़े क्रोधित हुए कि महाराजने उनकी प्रतीक्षा किये बिना ही व्रतका पारण कर लिया है। उन्होंने अपनी जटा उखाड़ ली और उसे जलती हुई कृत्या राक्षसीका रूप देकर अम्बरीषको भस्म करना चाहा। महाराज अम्बरीष दीनतापूर्वक हाथ जोड़े निर्भीक रूपसे खड़े रहे। किन्तु, भक्तोंके रक्षक सुदर्शन चक्रने तत्क्षणात् प्रकट होकर कृत्याको जलाकर भस्म कर दिया और महर्षिकी ओर लपके। महर्षि दुर्वासा सिरपर पैर रखकर बड़ी तेजीसे भुः, भुवः, स्वः आदि लोकोंमें इधर–उधर प्राणोंको बचानेके लिए भागे। ब्रह्मलोक एवं शिवलोकमें भी गये, किन्तु किसीने भी उनकी रक्षा नहीं की। सर्वत्र ही उन्होंने भयङ्कर चक्र सुदर्शनको अपना पीछा करते देखा। अनन्तर वैकुण्ठलोकमें नारायणके पास पहुँचकर त्राहि–त्राहि पुकारने लगे। त्राहि! त्राहि! रक्ष माम्! भगवान् श्रीनारायणने कहा—मैं भक्तोंके पराधीन हूँ। मैं उनका हृदय हूँ और वे मेरे हृदय हैं। जिन्होंने घर–बार, स्त्री, पुत्र, परिवार, धन, सम्पत्ति आदि सब कुछ छोड़कर मेरी शरण ग्रहण की है, उनको मैं भला कैसे छोड़ सकता हूँ। आप शीघ्र भक्त अम्बरीषके पास लौटकर क्षमा माँगें। उनकी प्रार्थनासे ही सुदर्शन चक्र शान्त हो सकते हैं, अन्यथा नहीं।

परम भागवत अम्बरीष महाराज एक वर्ष तक दुर्वासाके कल्याणकी कामना करते हुए वहीं प्रतीक्षा करमें खड़े रहे। वैकुण्ठसे लौटकर दुर्वासाने अस्त-व्यस्त होकर महाराज अम्बरीषसे अपने प्राणोंकी भीख माँगी। अम्बरीषजीने प्रार्थना कर सुदर्शन चक्रको शान्त किया तथा महर्षिको आदर पूर्वक विविध प्रकारके सुस्वादु अन्न-व्यञ्जनोंसे सन्तुष्ट किया। दुर्वासाजी महाराज अम्बरीषकी महिमा देखकर आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने कहा—अहो! आज मैंने भगवान् अनन्तदेवके भक्तोंकी अभूतपूर्व महिमाकी उपलब्धि की। मुझ जैसे अपराधीकी भी उन्होंने सदा मङ्गल की ही कामना की। यह केवल भगवद् भक्तोंके लिए ही सम्भव है। यह वही स्थान है। अम्बरीष टीला भक्त अम्बरीषकी महिमाका आज भी साक्षी दे रहा है।

पास ही यमुनाके तटपर चक्रतीर्थ है, जहाँ महाराज अम्बरीषने स्तव-स्तुतियोंके द्वारा चक्रको शान्त किया था।

कृष्णगङ्गा और गऊघाटसे आगे कंस टीला, घण्टाकर्ण एवं मुक्ति तीर्थ है। कंसकिला कंसका निवास स्थान या उसका राजभवन था। किलेका भग्नावशेष आज भी उसकी साक्षी दे रहा है। कंस किला और स्वामी घाट (स्वामी घाटके पासमें) वसुदेव घाटके बीचमें ब्रह्म घाट, वैकुण्ठ घाट और धारापतन है। तत्पश्चात् असिकुण्ड (असकुण्डा घाट) और मणिकर्णिका घाटके पश्चात् विश्राम घाट है। यहींपर पञ्चकोसी मथुरा परिक्रमा समाप्त होती है।

अन्तरगृही परिक्रमामें विश्राम घाटके दक्षिणमें **गताश्रम नारायणका** मन्दिर है। वर्तमान सतीबुर्जके पास ही दाहिनी ओर गलीमें **चर्चिका देवीका** दर्शन है। रङ्गेश्वर मंदिरके पास पूर्वकी ओर **सप्त सामुद्री कूप** है। जंक्शन स्टेशन जाने वाले राजमार्ग पर रेललाईनके नीचे **शिवताल** है। वहींसे मधुवन जानेका रास्ता भी है। भरतपुर दरवाजेके समीप ही **दीर्घ विष्णुका** मन्दिर है।

दीर्घ विष्णु—जिस समय श्रीकृष्ण गोप सखाओं एवं श्रीबलदेवजीके साथ रङ्गभूमिमें जा रहे थे, उस समय श्रीदाम आदि सखाओंने सखा कृष्णसे पूछा—सखे! तुम रङ्गभूमिमें जा रहे हो। इतने सुकोमल और नन्हे शरीरसे महाबलवान कंसको कैसे मारोगे? श्रीकृष्णने शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुए अपने दीर्घ स्वरूपको दिखलाया। तब सखाओंको यह विश्वास हुआ कि उनका कन्हैया नारायणकी कृपासे सब कुछ कर सकता है। कभी-कभी इसमें नारायणका आवेश भी होता है। तब वे नृत्य करते हुए श्रीकृष्णके साथ आनन्दपूर्वक रङ्गशालाकी ओर चले।

चित्र सं.–10

श्रीदीर्घविष्णुजीका विग्रह
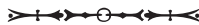
मथुरादेवी—दीर्घ विष्णुके समीप ही पूर्वकी ओर एक गलीमें मथुरादेवीका दर्शन है। मथुरा देवीका श्रीयमुनाजीसे बड़ा ही प्रीतिपूर्ण सखीका सम्बन्ध है। दोनों मिलकर अपने प्रभु श्रीकृष्णकी सेवा करती हैं। इन्हें मथुराकी अधिष्ठात्री देवी कहा जाता है।

चित्र सं.–11

श्रीमथुरादेवी

श्रीपद्मनाभजी—उसी गलीसे होकर पूर्वकी ओर जानेपर भगवान् श्रीपद्मनाभका चौबेया पाड़ामें मन्दिर है। गर्भोदशायी भगवान् पद्मनाभके नाभिस्थलसे निकली हुई कमल डण्डीसे निःसृत पद्मके ऊपर लोक पितामह ब्रह्माजीका जन्म होता है और उन्हींकी कृपासे वे वैराज ब्रह्माजी स्थूल-ब्रह्माण्डकी सृष्टि करते हैं।

आदिवराहका मन्दिर—आगे बढ़नेपर वर्तमान द्वारकाधीश मन्दिरके पीछे माणिक चौकमें वराहजीके दो मन्दिर हैं। एकमें कृष्णवराह मूर्ति और दूसरेमें श्वेतवाराह मूर्तिका दर्शन है। ब्राह्मकल्पके स्वायम्भुव मन्वन्तरमें ब्रह्माजीके नासिका छिद्रमेंसे कृष्णवराहका जन्म हुआ था। ये चतुष्पाद वराह मूर्ति थे। इन्होंने रसातलसे पृथ्वीदेवीको अपने दाँतोंपर रखकर उद्धार किया था। चाक्षुस मन्वन्तरमें समुद्रके जलसे श्वेत वराहका आविर्भाव हुआ था। उनका मुखमण्डल वराहके समान और नीचेका अङ्ग मनुष्यका था। इन्हें नृवराह भी कहते हैं। इन्होंने हिरण्याक्षका बध और पृथ्वीका उद्धार किया था।

सत्ययुगके प्रारम्भमें कपिल नामक एक ब्राह्मण ऋषि थे। वे भगवान् आदिवराहके उपासक थे। देवराज इन्द्रने उस ब्राह्मणको प्रसन्न कर पूजा करनेके लिए उक्त वराह-विग्रहको स्वर्गमें लाकर प्रतिष्ठित किया। पराक्रमी रावणने इन्द्रको पराजित कर उस वराह विग्रहको स्वर्गसे लाकर लंकामें स्थापित किया। भगवान् श्रीरामचन्द्रने निर्विशेषवादी रावणका बधकर उक्त मूर्तिको अयोध्याके अपने राजमहलमें स्थापित किया। महाराज शत्रुघ्न लवणासुरका वध करनेके लिए प्रस्थान करते समय उक्त वराह मूर्तिको ज्येष्ठ भ्राता श्रीरामचन्द्रजीसे माँगकर अपने साथ लाकर और लवणासुर वधके पश्चात् मथुरापुरीमें उक्त मूर्तिको प्रतिष्ठित किया। यहाँ वराहजीकी श्रीमूर्ति दर्शनीय हैं। इसके अतिरिक्त भी बहुत से दर्शनीय स्थान हैं जिनका पुराण आदिमें उल्लेख तो है, किन्तु अधिकांश स्थान आज लुप्त हैं।

मधुवन

श्रीमथुराके नैर्ऋत कोणमें भूतेश्वर महादेवसे लगभग ढाई मीलकी दूरीपर मधुवन स्थित है। यह ब्रजके प्रसिद्ध बारह वनोंमेंसे एक है। सत्ययुगमें मधु नामक एक दैत्यका भगवानने यहाँ बध किया था। इस कारण भगवानका नाम मधुसूदन हो गया। अतः भगवान् श्रीमधुसूदनके नामपर इस वनका नाम मधुवन पड़ा है, क्योंकि यह मधुवन भगवान् श्रीमधुसूदनके समान ही प्रिय एवं मधुर है।[१]

मधुसूदनका ही दूसरा नाम माधव है, क्योंकि ये सर्व लक्ष्मीमयी श्रीमती राधिकाके धव अर्थात् प्रियतम या बल्लभ हैं। ये श्रीमाधव ही वनके अधिष्ठातृ देवता हैं। वन भ्रमणके समय यहाँ स्नान एवं आचमनके समय "ओं ह्रां ह्रीं मधुवनाधिपतये माधवाय नमः स्वाहा" मन्त्रका जप करना चाहिए। इस मन्त्रके जपसे यहाँकी परिक्रमा सफल होती है। मधुवनका वर्तमान नाम महोलीग्राम है। ग्रामके पूर्वमें ध्रुव टीला है। जिसपर बालक ध्रुव एवं उनके आराध्य चतुर्भुज नारायणका श्रीविग्रह विराजमान है। यही ध्रुवकी तपस्या स्थली है। यहींपर बालक ध्रुवने देवर्षि नारदके दिये हुए मन्त्रके द्वारा भगवानकी कठोर आराधना की थी, जिससे प्रसन्न होकर भगवानने उनको दर्शन दिया और छत्तीस हजार वर्षका एकछत्र भूमण्डलका राज्य एवं तत्पश्चात् अक्षय ध्रुवलोक प्रदान किया। ध्रुवलोक ब्रह्माण्डके अन्तर्गत ही श्रीहरिका एक अक्षय धाम है।

त्रेतायुगमें मधुदैत्यके अत्याचारसे ऋषि–मुनि और यहाँके निवासी बहुत भयभीत थे। उस दैत्यने शंकरजीकी कठोर आराधना कर उनसे एक शूल प्राप्त किया था। वह शूल उसके हाथोंमें रहनेपर उसे देवता, दानव अथवा मनुष्य कोई भी पराजित नहीं कर सकता था। वह सूर्यवंशका एक राजकुमार था। किन्तु कुसङ्गमें पड़कर बड़ा ही क्रूर और सदाचार विहीन हो गया। इसीलिए उसके पिताने उसे त्यज्य पुत्रके रूपमें अपने राज्यसे निकाल दिया था। वह मधुवनमें रहता था। मधुवनमें एक नये राज्यकी स्थापना कर

---

(१) मधोर्वनं प्रथमतो यत्र वै मथुरापुरी ।
मधुदैत्यो हतो यत्र हरिणा विश्वमूर्तिना ।।

(आदि वराह पुराण)

वह सभीको उत्पीड़ित करने लगा। सूर्यवंशके महाप्रतापी राजा मान्धाताने उसे दण्ड देनेके लिए उसपर आक्रमण किया, किन्तु मधुदैत्यके शंकर प्रदत्त शूलके द्वारा वे भी मारे गये। अपनी मृत्युसे पूर्व दैत्यने उस शूलको अपने पुत्र लवणासुरको दिया और उससे कहा कि जब तक तेरे हाथोंमें यह शूल रहेगा, तुम्हें कोई नहीं मार सकता। अधिकन्तु शत्रु तुम्हारे इस अमोघ त्रिशूलके द्वारा मारा जायेगा।

उस शूलको पाकर लवणासुर और भी भयंकर अत्याचारी हो गया। उसके अत्याचारोंसे त्रस्त होकर मधुवनके आस-पासके ऋषि-महर्षि अयोध्यामें श्रीरामके समीप पहुँचे और दीन-हीन होकर लवणासुरसे अपनी रक्षाकी प्रार्थना की। उन्होंने लवणासुरके पराक्रम एवं अमोघ शूलके सम्बन्धमें भी सूचना दी। उन्होंने कहा कि वह उक्त शूलरहित अवस्थामें ही मारा जा सकता है, अन्यथा वह अजेय है।

भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने अपने छोटे भैया शत्रुघ्नजीको अयोध्यामें ही मधुवनके राज्यका राजतिलक किया। शत्रुघ्नजीने लंकासे लाये हुये प्रभावशाली श्रीवराह मूर्त्तिको पूजाके लिए माँगा। श्रीरामचन्द्रजीने सहर्ष वह वराहमूर्ति शत्रुघ्नजीको प्रदान की। शत्रुघ्नजी ऋषि-महर्षियोंके साथ वाल्मीकि ऋषिके आश्रमसे होते हुए उनका आशीर्वाद लेकर मधुवन पहुँचे और धनुष-बाणके साथ लवणासुरकी गुफाके द्वारपर उस समय पहुँचे, जिस समय वह अपने शूलको गुफामें रखकर शिकारके लिए जंगलमें गया हुआ था। जब वह हाथी और बहुतसे मृग आदि जानवरोंका बधकर उन्हें लेकर अपने वासस्थानमें लौट रहा था, उसी समय शत्रुघ्नजीने उसे युद्धके लिए ललकारा। दोनोंमें भयंकर युद्ध छिड़ गया। वह किसी प्रकारसे अपना शूल लानेकी चेष्टा कर रहा था। किन्तु, महापराक्रमी शत्रुजयी शत्रुघ्नजीने उसे शूल ग्रहण करनेका समय नहीं दिया और अपने पैने बाणोंसे उसका सिर काट दिया। फिर उन्होंने उजड़ी हई मधुपुरीको पुनः बसाया और वहाँ भगवान् वराहदेवकी स्थापना की। ये आदिवराहदेव मथुरामें उसी स्थानपर विराजमान हैं। मधुवनमें भगवान् माधवका प्रिय मधुकुण्ड भी है, अब इसे कृष्णकुण्ड भी कहते हैं। पास ही में लवणासुरकी गुफा है। यहीं कृष्णकुण्डके तटपर भगवान् शत्रुघ्नजीका दर्शनीय श्रीविग्रह है।

द्वापर युगके अन्तमें श्रीकृष्ण लाखों गऊओंके पीछे उनका नाम धौली, धूमरी, कालिन्दी आदि पुकारते हुए हियो-हियो, धीरी-धीरी, तीरी-तीरी ध्वनि

करते हुए दाऊ भैयाके साथ मधुर बांसुरी बजाते सखाओंके कन्धेपर हाथ रखे हँसते–हँसाते हुए कभी कुञ्जोंकी ओटसे ब्रजरमणियोंकी ओर सतृष्ण नेत्रोंसे कटाक्षपात करते हुए गोचारणके लिए जाते। गोचारणमें ग्वाल मण्डलीमें रसीली धूम मच जाती। इस प्रकार मधुवनमें जहाँ तहाँ सर्वत्र ही प्रेमका मधु बरसता था। गोचारण करते हुए श्रीकृष्ण श्रीबलरामजीके साथ उस प्रेम मधुको पानकर निहाल हो उठते। ब्रजरमणियाँ गोष्ठसे निकलते एवं लौटते समय कुञ्जोंकी आड़से, महलोंकी अटारियों और झरोखोंसे अपनी प्रेमभरी तिरछी चितवनोंसे कृष्णकी आरती उतारती थीं। कृष्ण उसे नेत्रभङ्गीसे स्वीकार करते। कृष्णके विरहमें ये ब्रजबधुएँ एक पलका समय भी करोड़ों युगोंके समान और मिलनमें एक युगका समय भी निमेषके समान अनुभव करती थीं।

मधुवनमें गोचारणकी लीला भी मधुके समान मधुर और वर्णनातीत है। कलियुगमें अभी पाँचसौ पच्चीस वर्ष पूर्व श्रीचैतन्य महाप्रभुजी वन–भ्रमणके समय मधुवनमें पधारे थे। यहाँ श्रीकृष्ण लीलाओंकी स्फूर्तिसे वे विह्वल हो उठे। यहाँपर प्रतिवर्ष बहुतसी यात्राएँ विश्राम करती हैं।

ऐसी किंवदन्ती है कि दाऊजी यहाँ मधुपानकर सखाओंके साथ नृत्य करते थे। आज भी यहाँ काले दाऊजीका विग्रह दर्शनीय है। इसका गूढ़ रहस्य यह है कि श्रीकृष्ण–बलदेव वृन्दावन और मथुराको छोड़कर द्वारकामें परिजनोंके साथ वास करने लगे। उस समय ब्रज एवं ब्रजवासियोंका श्रीकृष्ण विरहसे व्याकुलताकी बात सुनकर बलदेवजीने कृष्णको साथ लेकर ब्रजमें जानेकी इच्छा व्यक्त की। किन्तु किसी कारणसे श्रीकृष्णके जानेमें विलम्ब देखकर वे अकेले ही ब्रजमें पधारे और सबको यथासाध्य सान्त्वना देनेकी चेष्टा की। किन्तु ब्रजवासियोंकी विरह दशा देखकर स्वयं भी कृष्ण–विरहमें कातर हो गये। कृष्णकी ब्रजलीलाओंका चिन्तन करते हुए श्यामरस पान करते हुए एवं श्यामकी चिन्ता करते हुए, स्वयं श्याम अंगकान्तिवाले हो गये। यह श्यामरस ही मधु है, जिसे बलदेव सतत पानकर कृष्ण–प्रेममें विभोर रहते हैं।

चित्र सं.-12

श्रीतालवन

चित्र सं.-13

तालवन

अहो! यह वही तालवन है, जहाँ श्रीकृष्ण और श्रीबलरामजीने यादवोंके हितार्थ और सखाओंके विनोदार्थ धेनुकासुरका वध किया था।[१]

मधुवनसे दक्षिण पश्चिममें लगभग ढाई मीलकी दूरीपर यह तालवन स्थित है। यहाँ ताल वृक्षोंसे भरपूर एक बड़ा ही सुहावना एवं रमणीय वन था। दुष्ट कंसने अपने एक अनुयायी धेनुकासुरको उस वनकी रक्षाके लिए नियुक्त कर रखा था। वह दैत्य बहुतसी पत्नियों और पुत्रोंके साथ बड़ी सावधानीसे इस वनकी रक्षा करता था। अतः साधारण लोगोंके लिए यह वन अगम्य था। केवल महाराज कंस एवं उसके अनुयायी ही मधुर तालफलोंका रसास्वादन करते थे।

एक दिनकी बात है सखाओंके साथ कृष्ण और बलदेव गोचारण करते हुए इधर ही चले आये। सखाओंको बड़ी भूख लगी थी। उन्होंने कृष्ण-बलदेवको क्षुधारूपी असुरसे अपनी रक्षाके लिए निवेदन किया। उन्होंने यह भी बतलाया कि कहीं पाससे ही पके हुए मधुर तालफलोंकी सुगन्ध आ रही है। यह सुनकर कृष्ण और बलदेव सखाओंको साथ लेकर तालवन पहुँचे[२], बलदेवजीने पके हुए फलोंसे लदे हुए एक पेड़को नीचेसे हिला दिया, जिससे पके हुए फल थप-थप कर पृथ्वीपर गिरने लगे। ग्वाल-बाल आनन्दसे उछलने लगे। इतनेमें ही फलोंके गिरनेका शब्द सुनकर धेनुकासुरने अपने अनुचरोंके साथ कृष्ण और बलदेवपर अपने पिछले पैरोंसे जोरोसे आक्रमण किया। बलदेवप्रभुने अवलीलापूर्वक महापराक्रमी धेनुकासुरके पिछले पैरोंको पकड़कर उसे आकाशमें घुमाया तथा एक बृहत् ताल वृक्षके ऊपर पटक दिया। साथ ही साथ वह असुर मल-मूत्र त्याग करता हुआ मारा गया। इधर कृष्णने भी धेनुकासुरके अनुचरोंका वध करना आरम्भकर दिया। इस प्रकार सारा तालवन गधोंके मल-मूत्र और रक्तसे दूषित हो गया।

---

(१) अहो तालवनं पुण्यं यत्र तालैर्हतो सुरः ।
हिताय यादवानाञ्च आत्मक्रीड़नकाय च ।।

(स्क. पु.)

(२) एवं सुहृद्वचः श्रुत्वा सुहृत्प्रियचिकीर्षया ।
प्रहस्य जग्मतुर्गोपैर्वृतौ तालवनं प्रभू ।।

(श्रीमद्भा. १०/१५/२७)

तालके सारे वृक्ष भी एक दूसरेपर गिरकर नष्ट हो गये। पीछेसे तालवन शुद्ध होनेपर सखाओं एवं सर्वसाधारणके लिए सुलभ हो गया।

इस उपाख्यानमें कुछ रहस्यपूर्ण शिक्षाएँ हैं। श्रीबलदेवप्रभु अखण्ड गुरुतत्त्व हैं। श्रीगुरुदेवकी कृपासे ही साधक अज्ञानतासे अपने हृदयकी रक्षा कर सकता है अर्थात् श्रीगुरुदेव ही सद् शिष्यकी विभिन्न प्रकारकी अज्ञताको दूरकर उसके हृदयमें कृष्णभक्तिका संचार कर सकते हैं। धेनुकासुर अज्ञताकी मूर्ति है। अखण्ड गुरुतत्त्व बलदेवप्रभुकी कृपासे कृष्ण–तत्त्व, भक्ति–तत्त्व, माया–तत्त्वका बोध सम्भव है। ऐसा होनेपर कृष्णकी भक्ति सुदृढ़ होती है। गधे, मूर्ख होनेके कारण संसारके विविध प्रकारके भारोंको ढोनेवाले, गदहियोंकी लातें खानेवाले तथा धोबियोंके द्वारा सर्वदा प्रहार सहनेवाले, बड़े कामी भी होते हैं। जो लोग भगवान्का भजन नहीं करते और गधेके दुर्गुणोंसे युक्त होते हैं, वे अपनी मूर्खतावश वर्षाऋतुमें प्रचुर घासवाले स्थानपरभी दुबले–पतले तथा गर्मीके समय कम घासके दिनोंमें मोटे–ताजे हो जाते हैं। यहाँ बलभद्र कुण्ड और बलदेवजीका मन्दिर है। मथुराके छह मील दक्षिण और मधुवनसे दो मील दूर और नैऋत कोणमें यह तालवन है।

चित्र सं.–14

श्रीतालवनके मन्दिरमें दाऊजीका विग्रह

कुमुदवन

तालवनसे दो मील पश्चिममें कुमुदवन स्थित है। इसका वर्तमान नाम कुदरवन है। यहाँ एक कुण्ड है, जिसे कुमुदिनीकुण्ड या विहारकुण्ड भी कहते हैं। श्रीकृष्ण एवं श्रीबलरामजी सखाओंके साथ गोचारण करते हुए इस रमणीय स्थानपर विचरण करते थे। सखाओंके साथ श्रीकृष्ण स्वयं इसमें जलविहार करते तथा गऊओंको भी मधुर शब्दोंसे बुलाकर चूँ-चूँ कहकर जल पिलाते, तीरी-तीरी कहकर उन्हें तटपर बुलाते। कुमुदिनी फूलोंके हार बनाकर एक दूसरेको पहनाते। कभी-कभी कृष्ण सखाओंसे छिपकर श्रीमती राधिका, ललिता, विशाखा आदि प्रियनर्म सखियोंके साथ जल- विहार करते थे। आजकल यहाँ कुण्डके तटपर श्रीकपिलदेवजीकी मूर्ति विराजमान है। भगवान् कपिलने यहाँ स्वयं भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना की थी।

यहाँसे ब्रजयात्रा शान्तनु कुण्डसे होकर बहुलावनकी ओर प्रस्थान करती है। आसपासमें उसपार, मानको नगर, लगायो, गणेशरा (गन्धेश्वरी वन) दतिहा, आयोरे, गौराई, छटीकरा, गरुड़गोविन्द, ऊँचागाँव आदि दर्शनीय लीला-स्थलियाँ हैं।

चित्र सं.-15

श्रीकुमुदवन (गंगासागर)

दतिहा—यह स्थान मथुरासे पश्चिम दिशामें लगभग छह मील और शान्तनु कुण्डसे दो मीलकी दूरी पर है। यहाँपर श्रीकृष्णने दन्तवक्रका वध किया था। पद्मपुराणके अनुसार सूर्यग्रहणके समय नन्दादि समस्त व्रजवासी एवं श्रीकृष्णकी प्रियतम गोपियाँ कृष्णसे मिलने कुरुक्षेत्र गई थीं। 'मैं शीघ्र ही ब्रजमें आऊँगा' पुनः–पुनः ऐसा आश्वासन देकर श्रीकृष्णने उन सभीको ब्रजमें लौटा दिया। गोप–गोपियाँ नन्दबाबाके साथ ब्रजमें लौटे, किन्तु गोकुल महावन न जाकर दतिहाके पास ही यमुनाके उसपार कृष्णकी प्रतीक्षा करने लगे। जहाँ प्रतीक्षा करते हुए वास कर रहे थे, उस गाँवका नाम **मगेरा** या **मघेरा** है और दूसरे गाँवका नाम उसपार है। उधर श्रीकृष्ण शिशुपालको मारकर ब्रजमें आये और इसी स्थानपर दन्तवक्रका वध किया तथा यमुना पारकर माता–पिता एवं ब्रजवासियोंसे मिले। यहँ दन्तवक्रका वध होनेके कारण इसे दतिहा कहते हैं।

आयोरे—श्रीकृष्णको देखते ही ब्रजवासियोंने प्रसन्नतासे "आयोरे! आयोरे!" इस प्रकार कहा था। नन्दबाबा और यशोदा बड़े लाड़ प्यारसे कृष्णसे मिले। यवनोंने अपने राज्यत्व कालमें इसका नाम आलीपुर रख दिया जो आज भी प्रसिद्ध है।

गौराई या गोरवाई—जब नन्दबाबा कुरुक्षेत्रसे लौटे तब इस ग्रामके जमींदारने बड़े आदर और गौरवके साथ उनका सम्मान किया। इसलिए इस स्थानका नाम गौरव या गोरवाई हो गया। यह स्थान गोकुलसे ईशान कोणमें तीन मील दूर स्थित है। इसका वर्तमान नाम 'गुरु' है।

छट्टीकरा (शकटीकरा)—इस स्थानका वर्तमान नाम छट्टीकरा है। यह दिल्ली–मथुरा राजमार्गपर मथुरासे चार मील एवं वृन्दावनसे लगभग दो मील दूरीपर स्थित है। गोकुल महावनमें असुरोंका उत्पात देखकर नन्दबाबा सारे ब्रजवासियोंके साथ यहाँ उपस्थित हुए। ब्रजवासियोंने अपने लाखों शकटोंसे (बैलगाड़ियोंसे) अर्द्धचन्द्राकार रूपमें अपना निवास स्थान प्रस्तुत किया। शकटोंसे (बैलगाड़ियोंसे) वासस्थान निर्मित होनेके कारण यह स्थान छट्टीकराके नामसे प्रसिद्ध है। श्रीकृष्ण–बलराम यहींसे मधुर वृन्दावन एवं आस–पासके क्षेत्रोंमें गोवत्स और गोचारणके लिए जाते थे। यहींसे उन्होंने ब्रजकी रासादि लीलाओंका सम्पादन किया। उस समय वृन्दावन समृद्ध नगर नहीं, बल्कि नाना प्रकारके कुञ्ज, लता एवं रमणीय वनोंसे सुसज्जित श्रीकृष्ण–लीला विलासका स्थल था।

गरुड़ गोविन्द—छट्टीकराके पास ही गरुड़-गोविन्द कृष्णकी विहार स्थली है। एक दिन श्रीकृष्ण गोचारण करते हुए सखाओंके साथ यहाँ नाना प्रकारकी क्रीड़ाओंमें मग्न थे। वे बालक्रीड़ा करते हुए श्रीदाम सखाको गरुड़ बनाकर उसकी पीठपर स्वयं बैठकर इस प्रकार खेलने लगे मानो स्वयं लक्ष्मीपति नारायण गरुड़की पीठपर सवार हों। आज भी गरुड़ बने हुए श्रीदाम तथा गोविन्दजीका यहाँ दर्शन होता है।

चित्र सं.-15A

श्रीगरुड़गोविन्दजी

अन्य प्रसङ्ग—रामावतारमें जब श्रीरामचन्द्रजी मेघनादके द्वारा नाग पासमें बंधकर असहाय जैसे हो गये, उस समय देवर्षि नारदसे संवाद पाकर गरुड़जी वहाँ उपस्थित हुए। उनको देखते ही नाग श्रीरामचन्द्रजीको छोड़कर भाग गये। इससे गरुड़जीको श्रीरामकी भगवत्तामें कुछ संदेह हो गया। पीछेसे महात्मा काकभुषुण्डीके सत्सङ्गसे एवं तत्पश्चात् श्रीकृष्ण–लीलाके समय श्रीकृष्ण दर्शनसे उनका वह संदेह दूर हो गया। जहाँ उन्होंने गो, गोप एवं गऊओंके पालन करने वाले श्रीगोविन्दका दर्शन किया था, उसे गरुड़ गोविन्द कहते हैं। उस समय श्रीकृष्णने उनके कंधेपर आरोहण कर उन्हें आश्वासन दिया था।

गन्धेश्वरी—इस स्थानका वर्तमान नाम गणेशरा गाँव है। श्रीकृष्णने गोचारणके समय सखाओंके साथ गन्ध द्रव्योंको अपने–अपने अङ्गोंमें धारण किया था। कहते हैं यहाँ सहेलियोंके साथ पास ही में छिपी हुई श्रीमती राधिकाके अङ्गोंकी गन्धसे श्रीकृष्ण मोहग्रस्त हो गये।[१] श्रीमतीजीको देखकर उनके हाथोंसे बंशी गिर गई। मोर मुकुट भी श्रीराधिकाके चरणोंमें गिर गया। यहाँ तक कि वे स्वयं मूर्छित हो गये।[२] इसलिए यह गन्धेश्वरी तीर्थ कहलाता है। श्रीमती राधिकाका दूसरा नाम गान्धर्वा भी है। उन्हींके नामके अनुसार यहाँ गान्धर्वा कुण्ड आज भी श्रीराधाकृष्णके विलासकी ध्वजा फहरा रहा है। गन्धेश्वरीका अपभ्रंश ही वर्तमान समयमें गणेशरा नामसे प्रसिद्ध है।

---

(१) यस्याः कदापि वसनाञ्चलखेलनोत्थ
धन्यातिधन्य–पवनेन कृतार्थमानी ।
योगीन्द्र–दुर्गमगतिर्मधुसूदनोऽपि
तस्या नमोऽस्तु वृषभानुभूवो दिशेऽपि ।।
राधारससुधानिधि—२

(२) वंशी करान्निपतितः स्खलितं शिखण्डं
भ्रष्टञ्च पीतवसनं व्रजराजसूनोः।
यस्याः कटाक्षशरघात–विमूर्च्छितस्य
तां राधिकां परिचरामि कदा रसेन।।
राधारससुधानिधि—३९

खेचरी गाँव—यह गाँव मथुराके पश्चिममें दो मील तथा शान्तनु कुण्डसे ईशान कोणमें एक मील की दूरीपर स्थित है। खेचरीका तात्पर्य आकाशमें विचरण करने वाली राक्षसी पूतनासे है। कंसने इसके प्रभावको जानकर इसे अपनी बहन बना लिया था। उसीके अनुरोधसे विविध प्रकारके रूप धारण करने वाली, बालकोंके रुधिर एवं मांसको भक्षण करने वाली अपवित्र पूतना माताका सुन्दर वेश धारणकर तथा स्तनोंमें कालकूट विष भरकर नन्दभवनमें श्रीकृष्णको मारने आई। किन्तु अहैतुकी कृपाके सागर श्रीकृष्णने केवल माताका वेश धारण करनेके कारण ही विषके साथ-साथ उसके प्राणोंको भी खींचकर उसे मातृ सुलभ गति प्रदान की। यह पूतना राक्षसीका निवास-स्थल है।

शान्तनु कुण्ड—यह स्थान महाराज शान्तनुकी तपस्या-स्थली है। इसका वर्तमान नाम सतोहा है। मथुरासे लगभग तीन मीलकी दूरी पर गोवर्धन राजमार्गपर यह स्थित है। महाराज शान्तनुने पुत्र-कामनासे यहाँ पर भगवद् आराधना की थी। प्रसिद्ध भीष्म पितामह इनके पुत्र थे। भीष्म पितामहकी माताका नाम गङ्गा था। किन्तु गङ्गाजी विशेष कारणसे महाराज शान्तनुको छोड़कर चली गई थी। महाराज शान्तनु मथुराके सामने यमुनाके उसपार एक धीवरके घर रूपलावण्यवती (उर्वशीकी कन्या सत्यवती) मत्स्यगन्धा या मत्स्योदरीको देखकर उससे विवाह करनेके इच्छुक हो गये किन्तु धीवर दाशराज, महाराजको अपनी पोष्य कन्याको देनेके लिए प्रस्तुत नहीं हुआ। उसने कहा—मेरी कन्यासे उत्पन्न पुत्र ही आपके राज्यका अधिकारी होगा। मेरी इस शर्तको स्वीकार करनेपर ही आप मेरी इस कन्याको ग्रहण कर सकते हैं। महाराज शान्तनुने युवराज देवव्रत (भीष्म) के कारण विवाह करना अस्वीकार कर दिया। किन्तु मन ही मन दुःखी रहने लगे। कुमार देवव्रतको यह बात मालूम होनेपर वे धीवरके घर पहुँचे और उसके सामने प्रतिज्ञा की कि मैं आकुमार ब्रह्मचारी रहूँगा और मत्स्योदरीके गर्भसे उत्पन्न बालक तुम्हारा दोहता ही राजा होगा। ऐसी प्रतिज्ञा कर उस धीवर-कन्यासे महाराज शान्तनुका विवाह करवाया। इससे प्रतीत होता है कि महाराजकी राजधानी हस्तिनापुर होनेपर भी शान्तनु कुण्डमें भी उनका एक निवास स्थल था। यहाँ शान्तनु कुण्ड है, जहाँ संतानकी कामना करने वाली स्त्रियाँ इस कुण्डमें स्नान करती हैं तथा मन्दिरके पीछे गोबरका सतिया बनाकर पूजा करती हैं। शान्तनु कुण्डके बीचमें ऊँचे टीलेपर शान्तनुके आराध्य श्रीशान्तनु-बिहारीजीका मन्दिर है।

बहुलावन

बहुलावन एक परम सुन्दर और रमणीय वन है। यह स्थान बहुला नामक श्रीहरिकी सखी (गोपी) का निवास स्थल है। 'बहुला श्रीहरेः पत्नी तत्र तिष्ठति सर्वदा'। इसका वर्तमान नाम बाटी है। यह स्थान मथुरासे पश्चिममें सात मीलकी दूरीपर राधाकुण्ड एवं वृन्दावनके मध्य स्थित है। यहाँ सङ्कर्षण कुण्ड तथा मानसरोवर नामक दो कुण्ड हैं। कभी श्रीमती राधिका मान करके इस स्थानके एक कुञ्जमें छिप गईं। कृष्णने उनके विरहमें कातर होकर सखियोंके द्वारा अनुसंधानकर बड़ी कठिनतासे उनका मान भङ्ग किया था। जनश्रुति है कि जो लोग जैसी कामना कर उसमें स्नान करते हैं, उनके मनोरथ सफल हो जाते हैं। कुण्डके तटपर स्थित मन्दिरमें श्रीकृष्ण, बाघ, गाभी, वत्स और एक ब्राह्मणकी मूर्ति विराजमान है। लोककथाके अनुसार किसी समय बहुला नामकी एक गाय इस सरोवरमें पानी पी रही थी, उसी समय एक भयङ्कर बाघने उसपर आक्रमण कर उसे पकड़ लिया। वह अपने भूखे बछड़ेको दूध पिलाकर लौट आनेका आश्वासन देकर अपने स्वामी ब्राह्मणके घर लौटी। उसने अपने द्वारा बाघको दिये हुये वचनकी बात सुनाकर अपने बछड़ेको भरपेट दूध पी लेनेके लिए कहा तो बछड़ा भी बिना दूध पिये माताके साथ जानेकी हठ करने लगा। ब्राह्मण उन दोनोंको घर रखकर बाघका ग्रास बननेके लिए स्वयं जानेको उद्यत हो गया। अन्ततः ये तीनों बाघके समीप पहुँचे। तीनों अपने-अपनेको बाघको उत्सर्ग करना चाहते थे। इतनेंमें श्रीकृष्ण वहाँ प्रकट हो गये। बाघका हृदय बदल गया। श्रीकृष्णकी कृपासे वह ब्राह्मण, गाय और बछड़ेको लेकर सकुशल घर लौट आया।

बहुलावनके अन्तर्गत ही श्रीराधाकुण्ड है। इसलिए बहुलाष्टमीके दिन श्रीराधाकुण्डमें स्नानकी विधि है तथा उस दिन स्नानका विशाल मेला लगता है। भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु वन-भ्रमणके समय यहाँके प्राकृतिक सौन्दर्यको देखकर विह्वल हो गये। श्रीचैतन्यचरितामृतमें इसका मनोरम हृदयस्पर्शी वर्णन उपलब्ध होता है—जिस समय श्रीचैतन्य महाप्रभुने इस बहुलावनमें प्रवेश किया उस समय वहाँपर चरती हुई सुन्दर-सुन्दर गायोंने चरना छोड़कर उन्हें घेर लिया। वे प्रेममें भरकर हूँकार करने लगी तथा उनके अंगोंको चाटने लगीं। गऊओंके प्रेमभरे वात्सल्यको देखकर महाप्रभुजी प्रेमकी तरंगोंमें

बहते हुए भावाविष्ट हो गये। कुछ स्वस्थ होनेपर उनकी लोरियोंको सहलाने लगे। गऊएँ भी उनका संग नहीं छोड़ना चाहती थीं। किन्तु चरवाहोंने बड़े कष्टसे उन्हें किसी प्रकार रोका। उस समय महाप्रभु 'कोथाय कृष्ण, कोथाय कृष्ण' कहकर भावाविष्ट हो रोदन कर रहे थे। झुण्ड-के-झुण्ड हिरण और हिरणियाँ एकत्रित हो गईं और निर्भय होकर प्रेमसे महाप्रभुजीके अंगोंको चाटने लगीं। शुक-सारी, कोयल, पपीहे, भृङ्ग पञ्चमस्वरमें गाने लगे। मयूर महाप्रभुके आगे-आगे नृत्य करने लगे। वृक्ष और लताएँ पुलकित हो उठीं—अंकुर, नव-किशलय एवं पुष्पोंसे भरपूर हो गयीं। वे प्रेमपूर्वक अपनी टहनीरूपी करपल्लवोंसे महाप्रभुके चरणोंमें पुष्प और फलोंका उपहार देने लगीं। महाप्रभु वृन्दावनके स्थावर और जंगम सभीके उच्छ्वलित भावोंको देखकर और भी अधिक भावाविष्ट हो गये। जब महाप्रभुजी भावाविष्ट होकर कृष्ण बोलो! कृष्ण बोलो! कहकर उच्चस्वरमें रोदन करते, ब्रजके स्थावर-जंगम सभी प्रतिध्वनिके रूपमें उनको दोहराते। महाप्रभुजी कभी-कभी हिरण और हिरणियोंके गलेको पकड़कर बहुत ही कातर-स्वरसे रोदन करते। वे भी अश्रुपूरित नेत्रोंसे उनके मुखारविन्दको प्रणयभरी दृष्टिसे निहारने लगतीं। कुछ आगे बढ़नेपर महाप्रभुजीने देखा आमने-सामने वृक्षोंकी डालियोंपर शुक-सारी परस्पर प्रेम-कलह करते हुए श्रीश्रीराधाकृष्ण युगलका गुणगान कर रहे हैं—

शुक—मेरे कृष्ण मदनमोहन हैं।

सारी—मेरी राधा उनके वाम भागमें हैं जबतक अन्यथा केवल मदन ही हैं।

शुक—मेरे कृष्णने गिरिराजको धारण किया था।

सारी—क्योंकि मेरी राधाने उनमें शक्तिका संचार किया था। अन्यथा धारण कैसे करते?

शुक—मेरे कृष्ण जगतके जीवन हैं।

सारी—मेरी राधा उन जीवनकी भी जीवन हैं।

शुक—मेरे कृष्णके सिरपर मयूर-पंख सुशोभित है।

सारी—क्योंकि मेरी राधाका नाम उसमें अंकित है।

शुक—मेरे कृष्णके सिरपर बायीं ओर झुका हुआ मोर-पंख है।

सारी—क्योंकि वह मेरी राधाके चरणोंमें झुकना चाहता है।

शुक—मेरे कृष्ण चाँद हैं।

सारी—मेरी राधा चाँद पकड़नेकी फाँद है।

शुकने कहा वृथा कलह की आवश्यकता नहीं। दोनों मिलकर युगल किशोरका गुण–गान करेंगे। सारीने कहा मुझे सहर्ष स्वीकार है।

गोविन्दलीलामृतके १३ वें सर्गके २६ श्लोकमें शुकवाक्य—

सौन्दर्यम् ललनालिधैर्यदलनं लीला रमास्तम्भिनी
तीर्याम् कन्दुकिताद्रि–वर्यममलाः पारे–पराद्धं गुणाः ।
शीलं सर्वजनानुरञ्जनमहो यस्यायमस्मत प्रभुर्विश्वं
विश्वजनीनकीर्तिरवतात् कृष्णे जगन्मोहनः ।। (क)

गो. ली. के १३वें सर्गके ३० श्लोकमें सारी वाक्य—

श्रीराधिकायाः प्रियता स्वरूपता सुशीलता नर्तनगानचातुरी ।
गुणालिसम्पत कविता च राजते जगन्मोहन–चित्तमोहिनी ।। (ख)
वंशीधारी जगन्नारी–चित्तहारी स सारिके ।
विहारी गोपनारीभिर्जीयान्मदनमोहनः ।। (ग)

श्रीचैतन्य महाप्रभु शुक–सारीके इस प्रेम–कलहको सुनकर इतने विह्वल हो गये कि वे स्थिर नहीं रह सके, मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। उनके साथियोंने उन्हें किसी प्रकार सचेतन कराया । तत्पश्चात् ब्रज–परिक्रमामें अग्रसर हुये।

शकना गाँव—यह बाटी गाँवसे एक मीलकी दूरी पर स्थित है। यहाँ बलभद्र और दाऊजीके दर्शन हैं।

अनन्तर शुकने कहा—

(क) जिनका अनुपम सौन्दर्य असंख्य रमणीसमूहके धैर्य धनको अपहरण कर लेता है, जिनकी विश्वविख्यात कीर्ति लक्ष्मीदेवीको भी स्तम्भित कर देती है, जिनका वीर्य गिरिवर गोवर्धनको बालकोंका खिलौना बना देता है, जिनके गुण अनन्त हैं, जिनका सरल स्वभाव सर्वसाधारणको मनोरजंन करता है, जिनकी कीर्ति निखिल ब्रह्माण्डका कल्याण साधन करती है वे हम लोगोंके प्रभु जगमोहन समस्त विश्वकी रक्षा करें।

(ख) यह सुनकर शारिकाने उत्तर दिया—शुक! श्रीराधिकाका प्रेम, सौन्दर्य, नृत्य, उनकी सुशीतलता और संगीतकी चातुरी, अखिल गुणसम्पत्ति, कविता अर्थात् पाण्डित्य जगन्मनोमोहन श्रीकृष्णकी मनोमोहिनी होकर सुशोभित हो रही है।

तोषगाँव—यहाँके तोष नामक गोप नृत्यकलामें बड़े निपुण थे। उन्होंने श्रीकृष्णको नृत्य कलामें निपुण किया। उस नृत्यसे कृष्णको बहुत ही सन्तोष हुआ। यहाँ तरस कुण्ड है। जिसके जलको पीकर गऊएँ, ग्वाल-बाल, कृष्ण और बलरामको बड़ा ही सन्तोष होता था। इसलिए भी इस गाँवका नाम तोष गाँव है।

जखिन ग्राम—यह तोष ग्रामसे दो मीलकी दूरीपर है। इसका पूर्वनाम दक्षिण ग्राम है। श्रीमती राधिकाजीका वाम्य भाव ही प्रसिद्ध है। श्रीकृष्णको वही भाव सर्वाधिक सुखकर है। किन्तु श्रीमती राधिकाजीमें अखिल नायिकोचित भाव भी विद्यमान हैं। अतः कभी-कभी विशेष स्थितिमें यहाँ दक्षिण नायिकोचित भावको प्रकाश कर किशोरीजीने श्रीकृष्णको आनन्दित किया था। इसलिए इस ग्रामका नाम दक्षिण ग्रम हुआ है। किसी समय दाऊजीने कृष्ण-विलासमें बाधा देनेवाले एक यक्षिणीका बध किया था। इसलिए इसे जक्षिण या जखिन ग्राम भी कहते हैं। यहाँ बलभद्र कुण्ड तथा बलदेव-रेवतीका दर्शन है।

विहारवन—यह श्रीराधाकृष्ण युगलकी विहारस्थली है। यहाँपर श्रीमती राधिकाजीने कृष्णके नृत्यकी परीक्षा ली थी।

प्रियको नचवन सिखवत राधा प्यारी!
मान गुमान लकुट लिए ठाढ़ी
मंथरगति जबहि, डरपत कुञ्जबिहारी।।

मान-गुमानकी छड़ी लेकर राधाप्यारी प्यारे कुञ्जविहारीको नाचना सिखा रही हैं। किन्तु जब राधाप्यारीके निर्देशके अनुसार क्षिप्र गतिसे नृत्यमें कोई त्रुटि आ पड़ी तो प्यारीजीने आँखोंकी प्रखर दृष्टिसे उन्हें ताड़न किया। यहाँ विहारकुण्ड है, जिसके निर्मल जलमें ग्वालबालोंके साथ कृष्णने गऊओंको मधुर जल पिलाया तथा जल विहार किया। पास ही अति रमणीय कदम्ब-खण्डी है, जिसमें छोटीसी छत्रीमें भगवानके श्रीचरणोंके चिह्न दर्शनीय हैं।

बसौंती और राल ग्राम—वर्तमान बसौंतीका नाम बसती है और रालका वर्तमान नाम रार ग्राम है। जिस समय नन्दबाबाने सपरिवार गोकुल महावनको छोड़कर छट्टीकरामें निवास किया, उस समय उनके मित्र वृषभानु महाराजने यहाँ बसौंती ग्राममें निवास किया। उनके यहाँ वास करनेसे यह बसौंती हुआ है। निकट ही राल गाँव है। राल श्रीमतीजीकी बाल्य लीला-स्थली

है तथा बसौंती उनकी आंशिक पौगण्ड लीला–स्थली है। बरसाना, जावट और राधाकुण्ड उनकी किशोर लीलाकी स्थलियाँ हैं। किन्तु श्रीराधाकुण्ड उनकी परिपूर्णतम लीला विलासकी परमोच्चतम लीला–स्थली है। यहाँ बलभद्रकुण्ड, बलभद्रमन्दिर तथा पास ही में कदम्ब–खण्डी है।

अडींग—मथुरासे पश्चिममें ९ मीलकी दूरीपर मुख्य राजमार्गपर तथा गोवर्धनसे चार मील पूर्वमें अडीग स्थित है। सखाओंके साथ श्रीकृष्णने यहाँ सखियोंसे अड़कर दान लिया था। इसलिए इसका नाम अडींग है। यहाँ किल्लोल कुण्डमें श्रीकृष्ण–बलरामने जल–कल्लोल—जल–बिहार किया था।

माधुरी कुण्ड—अडींगसे दो मील अग्निकोणमें माधुरी खोर है। यह राधाजीकी प्रिय सखी माधुरीजीका स्थान है। वाणीकार माधुरीदासजीकी यहाँ भजन स्थली है। यह स्थान बड़ा ही रमणीय है।

मयूर ग्राम—यह स्थान बहुलावनसे दो मील नैॠत कोणमें है। यहाँ श्रीकृष्ण अपनी प्रिय गोपियोंके साथ मयूरोंका नृत्य देखकर स्वयं भी उनके बीचमें आनन्द पूर्वक नृत्य करने लगे। मयूरोंने प्रसन्न होकर कृष्णको अपना एक सुन्दर बहुरंगी पंख न्यौछावर स्वरूप दिया, जिसे कृष्णने अपने मस्तकपर धारण कर लिया। यहाँ मयूरकुण्ड दर्शनीय है।

छकना ग्राम—मयूर गाँवके पासमें ही छकना ग्राम है। गोचारणके समय यहाँकी गोपियोंने सखाओंके साथ श्रीकृष्ण–बलरामको पेट भरकर छाछ पिलायी थी।

श्रीराधाकुण्ड–श्रीश्यामकुण्ड

यथा राधा प्रिया विष्णोः तस्याः कुण्डं प्रियं तथा ।
सर्वगोपीषु सेवैका विष्णोरत्यन्तवल्लभा ।।

(पद्मपुराण)

जिस प्रकार समस्त गोपियोंमें श्रीमतीराधाजी श्रीकृष्णको सर्वाधिक प्रिय हैं, उनकी सर्वाधिक प्राणवल्लभा हैं, उसी प्रकार राधाजीका प्रियकुण्ड भी उन्हें अत्यन्त प्रिय है।

और भी वराहपुराणमें—

सर्वपापहरस्तीर्थं नमस्ते हरिमुक्तिदः ।
नमः कैवल्यनाथाय राधाकृष्णभिधायिने ।।

(वराह पुराण)

हे श्रीराधाकुण्ड! हे श्रीकृष्णकुण्ड! आप दोनों समस्त पापोंको क्षय करने वाले तथा अपने प्रेमरूप कैवल्यको देनेवाले हैं। आपको पुनः–पुनः नमस्कार है। इन दोनों कुण्डोंका माहात्म्य विभिन्न पुराणोंमें प्रचुर रूपसे उल्लिखित है।

श्रीलरघुनाथदास गोस्वामी यहाँतक कहते हैं कि ब्रजमण्डलकी अन्यान्य लीलास्थलियोंकी तो बात ही क्या, श्रीवृन्दावन जो रसमयी रासस्थली आदिके कारण परम सुरम्य है तथा श्रीमान् गोवर्धन भी जो रसमयी रास और युगलकी रहस्यमयी केलि–क्रीड़ाके स्थल हैं, ये दोनों भी श्रीमुकुन्दके प्राणोंसे भी अधिक प्रिय श्रीराधाकुण्डकी महिमाके अंशके अंश लेशमात्र भी बराबरी नहीं कर सकते। ऐसे श्रीराधाकुण्डका मैं आश्रय ग्रहण करता हूँ।[१]

श्रीराधाकुण्ड गोवर्धनसे प्रायः ३ मील उत्तर–पूर्व कोणमें स्थित है। गाँवका नाम आरिट है। यहीं अरिष्टासुरका बध हुआ था। कंसका यह अनुचर बैल या साँढ़का रूप धारण कर कृष्णको मारना चाहता था, किन्तु कृष्णने यहींपर इसका बधकर दिया था। वृन्दावन और मथुरा दोनोंसे यह १४ मीलकी

---

(१) श्रीवृन्दाविपिनं सुरम्यमपि तच्छ्रीमान् स गोवर्द्धनः
सा रासस्थलिकाप्यलं रसमयी किं तावदन्यत् स्थलम् ।
यस्याप्यंशलवेन नार्हति मनाक् साम्यं व मुकुन्दस्य तत्
प्राणेभ्योऽप्यधिकप्रियेव दयितं तत्कुण्डमेवाश्रये ।।

दूरी पर अवस्थित है। श्रीराधाकुण्ड श्रीराधाकृष्ण युगलके मध्याह्निक–लीलाविलासका स्थल है। यहाँ श्रीराधाकृष्णकी स्वच्छन्दतापूर्वक नाना प्रकारकी केलि–क्रीड़ाएँ सम्पन्न होती हैं जो अन्यत्र कहीं भी सम्भव नहीं है। इसलिए इसे नन्दगाँव, बरसाना, वृन्दावन और गोवर्धनसे भी श्रेष्ठ भजनका स्थल माना गया है। इसलिए श्रीराधाभाव एवं कान्ति सुवलित श्रीचैतन्य महाप्रभुने स्वयं इस परमोच्च भावयुक्त रहस्यमय स्थलका प्रकाश किया है। उनसे पूर्व श्रीमाधवेन्द्रपुरी, श्रीलोकनाथ गोस्वामी, श्रीभूगर्भ गोस्वामी भी ब्रजमें आये और कृष्णकी विभिन्न लीलास्थलियोंका प्रकाश किया, किन्तु उन्होंने भी इस परमोच्च रहस्यमयी स्थलीका प्रकाश नहीं किया। स्वयं श्रीराधाकृष्ण मिलिततनु श्रीगौरसुन्दरने ही इसका प्रकाश किया।

चित्र सं.–16

श्रीराधाकुण्ड और श्यामकुण्डके मध्य सङ्गमस्थली

प्रसंग

श्रीकृष्णने जिस दिन अरिष्टासुरका वध किया, उसी दिन रात्रिकालमें इसी स्थलपर श्रीकृष्णके साथ श्रीराधिका आदि प्रियाओंका मिलन हुआ। श्रीकृष्णने बड़े आतुर होकर श्रीमती राधिकाका आलिंगन करनेके लिए अपने कर–पल्लवोंको बढ़ाया, उस समय श्रीमती राधिका परिहास करती हुई पीछे हट गयी और बोलीं—आज तुमने एक वृष (गोवंश)की हत्या की है। इसलिए तुम्हें गोहत्याका पाप लगा है, अतः मेरे पवित्र अंगोंका स्पर्श मत करो। किन्तु कृष्णने मुस्कराते हुए उत्तर दिया—प्रियतमे! मैंने एक असुरका वध किया है। उसने छलकर साँढ़का वेश बना लिया था। अतः मुझे पाप कैसे स्पर्श कर सकता है? श्रीमतीजीने कहा जैसा भी हो, तुमने साँढ़के रूपमें ही उसे मारा है। अतः गोहत्याका पाप अवश्य ही तुम्हें स्पर्श कर रहा है। सखियोंने भी इसका अनुमोदन किया।

प्रायश्चित्तका उपाय पूछनेपर श्रीमतीजीने मुस्कराते हुए भूमण्डलके समस्त तीर्थोंमें स्नानको ही प्रायश्चित्त बतलाया। ऐसा सुनकर श्रीकृष्णने अपनी एड़ीकी चोटसे एक विशालकुण्डका निर्माण कर उसमें भूमण्डलके सारे तीर्थोंको आह्वान किया। साथ–ही–साथ असंख्य तीर्थ रूप–धारणकर वहाँ उपस्थित हुए। कृष्णने उन्हें जलरूपसे उस कुण्डमें प्रवेश करनेको कहा। कुण्ड तत्क्षणात् परम पवित्र एवं निर्मल जलसे परिपूर्ण हो गया। श्रीकृष्ण उस कुण्डमें स्नानकर श्रीमतीजीको पुनः स्पर्श करनेके लिए अग्रसर हुए; किन्तु श्रीमती राधिका स्वयं उससे भी सुन्दर जलपूर्ण वृहद् कुण्डको प्रकाशकर प्रियतमके आस्फालनका उत्तर देना चाहती थीं। इसलिए उन्होंने तुनककर पास में ही सखियोंके साथ अपने कंकणके द्वारा एक परम मनोहर कुण्डका निर्माण किया। किन्तु उसमें एक बूँद भी जल नहीं निकला। कृष्णने परिहास करते हुए गोपियोंको अपने कुण्डसे जल लेनेके लिए कहा, किन्तु श्रीमतीजी अपनी अगणित सखियोंके साथ घड़े लेकर मानसी गंगासे पानी भर लानेके लिए प्रस्तुत हुईं, किन्तु श्रीकृष्णने तीर्थोंको मार्गमें सत्याग्रह करनेके लिए इंगित किया। तीर्थोंने रूप धारणकर सखियों सहित श्रीमती राधिकाजीकी बहुतसी स्तव–स्तुतियाँ कीं, श्रीमती राधिकाजीने प्रसन्न होकर अपने कुण्डमें उन्हें प्रवेश करनेकी अनुमति दी। साथ–ही–साथ तीर्थोंके जलप्रवाहने कृष्णकुण्डसे राधाकुण्डको भी परिपूर्ण कर दिया। श्रीकृष्णने श्रीमती राधिका एवं सखियोंके साथ इस प्रिय कुण्डमें उल्लासपूर्वक स्नान एवं जलविहार

किया। अर्धरात्रिके समय दोनों कुण्डोंका प्रकाश हुआ था। उस दिन कार्तिक माहकी कृष्णाष्टमी थी, अतः उस बहुलाष्टमीकी अर्द्धरात्रिमें लाखों लोग यहाँ स्नान करते हैं।

श्रीराधाकुण्ड गोवर्धन पर्वतकी तलहटीमें शोभायमान है, कार्तिक माहकी कृष्णाष्टमी (इन दोनों कुण्डकी प्रकट तिथि बहुलाष्टमी) के दिन यहाँ स्नान करनेवाले श्रद्धालुओंको श्रीराधा–कुञ्जविहारी श्रीहरिकी सेवामयी प्रेमाभक्ति प्राप्त होती है।[१] कार्तिक माहकी दीपावलीके दिन श्रीराधाकुण्डमें श्रीराधाकृष्णके ऐकान्तिक भक्तोंको अखिलब्रह्माण्ड तथा सम्पूर्ण व्रजमण्डल दीख पड़ता है।[२]

कुछ समय बाद श्रीकृष्णके द्वारका गमनके पश्चात् ये दोनों कुण्ड लुप्त हो गये थे। महाराज वज्रनाभने (कृष्णके प्रपौत्र) शाण्डिल्य आदि ऋषियोंके आनुगत्यमें ब्रजकी लीलास्थलियोंको प्रकाश करते समय इन दोनों कुण्डोंका भी पुनः उद्धार किया, किन्तु पाँच हजार वर्षोंके पश्चात् ये दोनों कुण्ड पुनः लुप्त हो गये। जिस समय श्रीचैतन्य महाप्रभु यहाँ पधारे, उस समय यहाँके लोगोंसे राधाकुण्ड एवं श्यामकुण्डके विषयमें पूछा, किन्तु वे लोग इसके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं बता सके। केवल इतना ही बताया कि सामने कालीखेत एवं गौरीखेत हैं, जहाँ कुछ–कुछ जल है। महाप्रभुने बड़े आदरके साथ कालीखेतको श्यामकुण्ड और गौरीखेतको राधाकुण्ड सम्बोधन कर प्रणाम किया। उनमें स्नान करते ही वे भावविभोर हो उठे, उनका सारा धैर्य जाता रहा, वे हा राधे! हा कृष्ण! कहते हुए मूर्छित हो गये। जिस स्थान पर वे बैठे थे वह आज भी तमालतलाके नामसे प्रसिद्ध है। उसे महाप्रभुजीकी बैठक भी कहा जाता है।

श्रीचैतन्य महाप्रभुके अप्रकट होनेके पश्चात् श्रीरघुनाथदास गोस्वामी जगन्नाथ पुरीसे राधाकुण्डमें आकर भजन करने लगे, एक समय मुगल सम्राट अकबर अपनी बड़ी सेनाके साथ इसी रास्तेसे कहीं जा रहा था, सारी सेना, उसके हाथी, घोड़े, ऊँट सभी बहुत प्यासे थे। उसने दास गोस्वामीजीसे

---

(१) गोवर्धनगिरौ रम्ये राधाकुण्डं प्रियं हरेः ।
कार्तिके बहुलाष्टम्यां तत्र स्नात्वा हरेः प्रियः ।।
नरो भक्तो भवेद्विततस्थितस्य तस्य प्रतोषणाम् ।।
(पद्मपुराण)

(२) दीपोत्सवे कार्तिके च राधाकुण्डे युधिष्ठिर ।
दृश्यते सकलं विश्वं भृत्यैर्विष्णुपरायणैः ।।
(पद्मपुराण)

पूछा—कहीं बड़ा सरोवर उपलब्ध हो सकता है? उन्होंने कालीखेत एवं गौरीखेतमें पानी पीने एवं पिलानेके लिए इंगित किया। बादशाहने सोचा यह पानी उसके एक हाथीके लिए भी पर्याप्त नहीं है, इसमें सभीकी प्यास कैसे बुझ सकती है? किन्तु दास गोस्वामीके पुनः-पुनः कहनेसे उसने देखा कि सारी सेनाएँ, घोड़े, हाथी और ऊँट उस जलसे तृप्त हो गये, जल तनिक भी कम नहीं हुआ। बादशाहके आश्चर्यकी सीमा नहीं रही।

कुछ दिनोंके बाद श्रीरघुनाथदास गोस्वामी जब वहाँपर भजन कर रहे थे, उस समय उनके मनमें उन दोनों कुण्डोंके पुनः उद्धार की बात आयी। किन्तु साथ ही श्रीराधाकुण्डकी अप्राकृत महिमाका स्मरणकर अपनेको धिक्कारने लगे। उसी समय एक धनी व्यक्ति बद्रिकाश्रमसे परम विरक्त श्रीदास गोस्वामीकी खोज करता हुआ वहाँ पर पहुँचा। उसने गोस्वामीजीके चरणोंमें दण्डवत् प्रणाम कर बतलाया कि मैं बद्रिकाश्रमसे लौट रहा हूँ। भगवान् श्रीबद्रीनारायणने मुझे आपके पास भेजा है, मैं उनकी आज्ञासे आपको इन दोनों कुण्डोंके सुन्दर रूपमें पुनः उद्धारके लिए सारा खर्च दे रहा हूँ, आप इसे स्वीकार करें। श्रीदास गोस्वामी यह सुनकर गद्‌गद हो गये। उन्होंने उसे पहले तो लौटा दिया, किन्तु श्रीराधाकृष्णकी अभिलाषा जानकर उसे लेकर पुनर्निर्माणका कार्य आरम्भ कर दिया। श्रीराधाकुण्ड सहज रूपमें ही परम रमणीय चौकोर रूपमें प्रकट हुआ, किन्तु जब श्यामकुण्ड निर्माणका कार्य आरम्भ हुआ तब उसे भी चौकोर बनानेके लिए उसके किनारे खड़े कुछ पेड़ोंको काटनेकी बात हुई। रातमें भजन करते समय श्रीदास गोस्वामीको झपकी सी आई, तो उन्होंने देखा, पाँच व्यक्ति खड़े होकर कह रहे हैं—हम पाँचों पाण्डव हैं। वृक्षके रूपमें हम यहाँ युगलकिशोरकी आराधना कर रहे हैं। कृपया हमें कटवायें नहीं, टेड़े-मेड़े जिस रूपमें कुण्ड है उसी रूपमें संस्कार करा दें। इसीलिए श्रीदास गोस्वामीने वृक्षोंको कटवाया नहीं, श्रीकृष्ण जैसे टेड़े-मेढ़े रूपमें केवल गहरा बनाकर घाटोंको पक्का करवा दिया। ये दोनों कुण्ड उसी रूपमें आज भी विराजमान हैं। बीच-बीचमें कुछ-कुछ संस्कार किये गये होंगे।

श्रीगिरिराज गोवर्द्धन उत्तरसे दक्षिणकी ओर मयूराकारमें स्थित हैं। पिछला दक्षिणी भाग पूछरी कहलाता है। उत्तरमें मुख-मण्डलमें दो नेत्रोंके समान श्रीराधाकुण्ड और श्रीश्यामकुण्ड स्थित हैं।

श्रीलविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरने कृष्णभावनामृत ग्रन्थमें श्रीराधाकुण्ड और श्रीश्यामकुण्डका बड़ा ही रमणीय रसपूर्ण उल्लेख किया है—व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण समस्त अवतारोंके अवतारी, सबके आदि स्वयं अनादि, अखिल रसामृतमूर्ति तथा सर्वशक्तिमान तत्त्व होनेपर भी महाभाव स्वरूपा सर्वकान्ता शिरोमणि श्रीमती राधिकाके प्रेमके अधीन हैं। वे सर्वदा अपनेसे भी अधिक अपनी प्रियतमा श्रीकिशोरीजीकी महिमाकी प्रतिष्ठा करते हैं। श्रीराधाकुण्ड और श्यामकुण्ड अब अपने स्वरूपसे अभिन्न स्वयं श्रीराधा और श्यामसुन्दर हैं। फिर भी उन्होंने स्वयं श्रीराधाकुण्डको ही प्रसिद्धि प्रदान की। श्रीराधाकुण्डके उत्तरमें सुवर्णमय अष्टदल कमलाकार ललितानन्दद नामक श्रीललिता देवीका कुञ्ज है। श्रीकुण्डके ईशान कोणमें मणिमय सोलह दल कमलके आकारका विशाखा सखीका विशाखानन्दद कुञ्ज है। पूर्व दिशामें चित्रा सखीका चित्र–विचित्र चित्रानन्दद कुञ्ज है। अग्नि कोणमें इन्दुलेखा सखीका हीरानिर्मित अष्टदलाकार इन्दुलेखानन्दद कुञ्ज है। दक्षिणमें चम्पकलता सखीका सुवर्णकमलाकार चम्पकलतानन्दद कुञ्ज है और नैऋत कोणमें नीलमणिकमलाकार रङ्गदेवीसुखद रङ्गदेवीका कुञ्ज है। पश्चिम दिशामें लालमणिमय कमलाकार तुङ्गविद्यानन्दद नामक तुङ्गविद्या सखीका कुञ्ज और वायुकोणमें मरकत मणिविरचित कमलाकार सुदेवीजीका सुदेवीसुखद या आनन्दद कुञ्ज तथा श्रीराधाकुण्डके मध्यमें चन्द्रकान्तमणि विरचित षोडश दलकमलाकार अनंगमंजरी–आनन्दद कुञ्ज है, जिसे स्वानन्दसुखद कुञ्ज भी कहते हैं। यह अनंगमंजरीका कुञ्ज है। वहाँ जानेके लिए चन्द्रकान्तमणिका सेतु है।

इसी प्रकार श्रीराधाकुण्डके वायुकोणमें हीरा–पन्ना–जवाहरातसे निर्मित एक परम रमणीय स्थान है, जहाँ श्रीमती राधिका नित्य स्नान करती हैं। इसके उत्तरमें सुबल सखाका सुबलानन्दद कुञ्ज है, जिसे उन्होंने श्रीमती राधिकाजीको अर्पण कर दिया है। यहाँ श्रीराधाकृष्ण शयन करते हैं। कृष्णकुण्डके उत्तरमें श्वेतमणिमय मधुमंगलानन्दद नामक मधुमंगलजीका कुञ्ज है, जिसे उन्होंने ललिताजीको अर्पण कर रखा है। यहाँ श्रीयुगलकिशोर नाना प्रकारसे हास–परिहास करते हैं। ईशानकोणमें उज्ज्वलसखाका अरुणमणिमय उज्ज्वलानन्दद कुञ्ज है, जिसे उन्होंने विशाखा सखीको अर्पण कर दिया है। पूर्व दिशामें अर्जुन सखाका नीलमणिमय अर्जुनानन्दद कुञ्ज है, जिसे उन्होंने चित्रा सखीको अर्पण कर दिया है। अग्निकोणमें गन्धर्व सखाका चित्रविचित्र मणिमय गन्धर्वानन्दद कुञ्ज है, जिसे उन्होंने इन्दुलेखा सखीको

अर्पण कर दिया है। दक्षिणकोणमें हरित मणिमय विदग्धानन्दद नामक विदग्ध सखाका कुञ्ज है, जिसे उन्होंने चम्पकलताको दिया है। यहाँ युगलकिशोर चौपड़ खेलते हैं। नैऋत कोणमें भृङ्गसखाका भृङ्गानन्दद कुञ्ज है, जिसे भृङ्ग सखाने रङ्गदेवीको अर्पित कर रखा है तथा पश्चिममें विचित्र मणिमय दक्षसनन्दानन्द कुञ्ज है। दोनों कुण्डोंके मध्य विविध प्रकारकी मणियोंसे रचित संगमस्थल है, जिसे कृष्णलीलाका योगपीठ भी कहते हैं तथा पश्चिममें कोकिलानन्दद कुञ्ज कोकिलसखाने सुदेवीको अर्पण कर दिया है।

श्रीकुण्डके दक्षिणमें चम्पकवृक्षकी डालियोंमें रत्नके झूले लगे हैं। पूर्व दिशामें कदम्ब वृक्षकी डालियोंमें रत्नमय झूले, पश्चिममें आम्रवृक्षकी डालियोंमें रत्ननिर्मित हिंडोले तथा उत्तरमें मौलश्री वृक्षकी डालियोंमें रत्नके हिंडोले लगे हुए हैं, जिसपर रसिक श्रीकृष्ण श्रीमती राधिका एवं अन्यान्य सखियोंके साथ झूलेपर झूलते हैं।

दोनों कुण्डोंके चारोंओर हरे–भरे फल–फूलोंसे युक्त आम, कटहल, कदम्ब, मौलश्री आदि कल्पतरु हैं, जिनके मूल नाना प्रकारकी मणियोंसे चबूतरोंके रूपमें बँधे हुए हैं। बसंतऋतुके आनुगत्यमें सभी ऋतुएँ सदा–सर्वदा युगलकी सेवा करती हैं। वृन्दादेवी विविध प्रकारकी परिपाटियोंके साथ युगल सेवाके अनुरूप सारी व्यवस्था सम्पन्न करती हैं। वहाँ कोयलें कुहकती हैं, मयूर मधुर 'के' 'का' निनाद करते हुए नृत्य करते हैं। श्रीकुण्डोंमें नीलकमल, लालकमल तथा नाना प्रकारके केतकी पुष्प कुण्डोंकी तरंगोंपर अठखेलियाँ करते हैं तथा मतवाले भृङ्ग उनपर झङ्कार करते हैं। उनके जलमें राजहंस–हंसी, चक्रवाक–चक्रवाकी, सारस–सारसी कलरव करते हुए विहार करते हैं। वृक्षकी डालियोंपर विभिन्न प्रकारके पक्षी श्रीराधाकृष्ण युगलको रसकाव्य सुनाकर उनकी प्रीति उत्पादन करते हैं। वहाँके सुरम्य कुञ्जोंके आस–पास हिरण–हिरणियाँ विचरण करती हैं। इस वनमें श्रीमती राधिकाकी एकान्त सहेलियोंके अतिरिक्त किसीका भी प्रवेश नहीं है।

श्रीराधाकुण्डके वर्तमान दर्शनीय स्थल

श्रीराधाकुण्डके पश्चिममें झूलनतला है। एक समय श्रीसनातन गोस्वामी और श्रीरूपगोस्वामी राधाकुण्डकी उत्तर–पूर्वी दिशामें श्रीरघुनाथदास गोस्वामीकी भजनकुटीके निकट बैठे हुए कृष्णकथामें विभोर हो रहे थे। श्रीसनातन गोस्वामीने श्रीरूप गोस्वामीसे पूछा—रूप, आजकल क्या लिख रहे हो? श्रीलरूप

गोस्वामीने स्वरचित 'चाटुपुष्पाञ्जलिः' नामक स्तोत्र उनके हाथोंमें दे दिया। उसका पहला श्लोक था—

नव–गोरोचना–गौरीं प्रवेरेन्दीवराम्बराम् ।
मणि–स्तवक–विद्योति–वेणीव्यालङ्गणाफणां ।।

हे वृन्दावनेश्वरि! मैं तुम्हारी पुनः–पुनः वन्दना करता हूँ, तुम नित्य नवीन गोरोचनाकी भाँति गौराङ्गी हो, सुन्दर नीलकमल जैसे तुम्हारे वस्त्र हैं, तुम्हारे मस्तकसे नीचेकी ओर लम्बित वेणीके ऊपर मणिरत्नोंसे ग्रथित कवरीबन्धको देखकर ऐसा प्रतीत होता है, मानो वह फणायुक्त काली भुजङ्गिनी हो।

श्रीसनातन गोस्वामीने उसे पढ़कर कहा—रूप! तुमने 'वेणीव्यालङ्गणाफणा' पदके द्वारा श्रीमती राधिकाकी लहराती हुई काली बङ्किम वेणीकी तुलना विषधर काली नागिनसे की है। श्रीमती राधिका तो सर्वगुणसम्पन्न, परम लावण्यवती, सुकोमल एवं परम मधुर कृष्णकी प्रिया हैं। उनकी सुन्दर वेणीकी यह उपमा मुझे रुचिकर प्रतीत नहीं हो रही है। श्रीरूप गोस्वामीने मुस्कुराते हुए नम्रतापूर्वक इसमें संशोधन करनेके लिए प्रार्थना की। श्रीसनातन गोस्वामीको उस समय अन्य कोई उपमा सूझी। 'पीछे संशोधन करूँगा' ऐसा कहकर वे इसी विषयकी चिन्ता करते हुए वहाँसे विदा हुए। जब वे कुण्डकी पश्चिम दिशामें इस स्थलपर पहुँचे, तो उन्होंने कदम्ब वृक्षकी डालियोंपर एक सुन्दर झूलेपर एक गोपकिशोरीको झूलते हुए देखा। उसकी सहेलियाँ मल्लार रागका गायन करती हुई उसे झुला रही थीं। श्रीसनातन गोस्वामीने उस झूलती हुई किशोरीकी लहराती हुई काली वेणीपर अपने फणोंको लहराती हुई काली नागिनको देखा। वे उसे बचानेके लिए उधर ही दौड़ते हुए पुकारने लगे—लाली! लाली! सावधान तुम्हारी वेणीपर काली नागिन है। किन्तु, जब निकट पहुँचे तो देखा कुछ भी नहीं है। वहाँ न किशोरी है न सखियाँ हैं और न झूला। वे उस दृश्यका स्मरणकर आनन्दसे क्रन्दन करने लगे और उल्टे पाँव रूप गोस्वामीके पास पहुँचे और बोले—रूप! तुम्हारी उपमा सर्वाङ्गसुन्दर है। श्रीमती किशोरीजीने मुझपर अनुग्रहकर अपनी बङ्किम वेणीका स्वयं ही दर्शन कराया है। उसमें संशोधनकी कोई आवश्यकता नहीं है। श्रीसनातन गोस्वामीने इसी झूलनतलापर राधाजीका दर्शन पाया था।

'नैर्ऋत कोणमें कदम्बवृक्षके पास ही श्रीराधाकृष्णका प्राचीन मन्दिर है। जनश्रुतिके अनुसार श्रीदास गोस्वामीने श्रीराधाकृष्णके इस विग्रहको कुण्ड–

संस्कारके समय प्राप्त किया था। अकिञ्चन दासगोस्वामीने इस विग्रहको सेवाके लिए ब्रजवासियोंको अर्पित कर दिया था। पास ही श्रीकृष्णकुण्डके वायुकोणमें श्रीश्यामानन्दप्रभुके आराध्यदेव श्रीश्यामसुन्दरजीका मन्दिर है। उसीके उत्तरमें श्रीजीव गोस्वामीके आराध्य श्रीराधादामोदरजीका दर्शन है। उसीके उत्तरमें श्रीनिवासाचार्य प्रभुकी भजन–कुटी है। वहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभुजीका श्रीविग्रह है। श्रीश्यामसुन्दरजीकी पूर्व दिशामें तथा श्रीकुण्डके उत्तरमें श्रीजाह्नवा ठकुरानीका घाट एवं बैठक है। पास ही श्रीगोपीनाथजीका मन्दिर है। पास ही श्रीरघुनाथ दास गोस्वामीका वास स्थान एवं पुष्प समाधि है। इससे आगे श्रीगोविन्ददेवका मन्दिर है। पास ही में श्रीगिरिराजजीकी जिह्वारूपी शिला है। श्रीकुण्डके पूर्वीतटपर श्रीगोपालभट्ट गोस्वामीकी भजन कुटी और इसके पूर्व दिशामें निकट ही श्यामकुण्डके तटपर श्रीरघुनाथदास गोस्वामीकी भजन कुटी है।

श्रीरघुनाथ गोस्वामीकी भजन कुटी—श्रीरघुनाथदास गोस्वामी जगन्नाथ पुरीसे आकर श्रीराधाकुण्डके समीप जगमोहन कुण्डपर रहते थे। यहाँ एक समय होलीके दिन श्रीमती राधिका सहेलियोंके साथ बैठी हुई थीं और शंखचूड़ अकस्मात् उन्हें हरणकर ले जाने लगा। कृष्णने उसका बधकर उसके मस्तकसे मणि निकाल ली और उसे श्रीबलदेवजीको दे दिया। बलदेवजीने धनिष्ठाके हाथोंसे श्रीमती राधिकाके पास भिजवा दिया।

यद्यपि श्रीदास गोस्वामी पहले उक्त जगमोहन कुण्ड पर रहते थे, किन्तु बादमें वे श्रीराधाकुण्डके तटपर भजन करने लगे।

एक दिन श्रीरघुनाथदास गोस्वामी इस स्थान पर खुले आकाशके नीचे भजन कर रहे थे। वे भजनमें ऐसे आविष्ट थे कि उन्हें तन–मनकी भी सुध नहीं थी। आँखोंसे अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। उनके मुखसे कभी–कभी हा राधे! हा राधे! शब्द निकल पड़ते थे। उसी समय श्रीसनातन गोस्वामी उनके निकट आ रहे थे। श्रीसनातन गोस्वामीने कुछ दूरसे देखा एक खूंखार बाघ एवं बाघिनीका जोड़ा रघुनाथदासके बगलसे होता हुआ कुण्डमें जलपान कर पुनः उसी मार्गसे लौट गया, मानो उस जोड़ेने रघुनाथ दास गोस्वामीको देखा ही नहीं।

श्रीसनातन गोस्वामी श्रीदास गोस्वामीके निकट आये और उन्हें छोटे भाईकी भाँति बड़े प्यारसे एक भजनकुटी निर्माणकर भजन करनेका परामर्श दिया। उन्होंने स्वयं ही एक पर्णकुटी बनवा दी और उसीमें उनको भजन

करनेका निर्देश दिया। अब वह भजनकुटी तो रही नहीं, उसके स्थानपर पक्की भजनकुटी बना दी गई है।

इस भजन कुटीके पास ही युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव ये पाँचों पाण्डव तथा द्रौपदी वृक्षरूप धारणकर भजन करते थे। अभी कुछ ही दिन पहले वे वृक्ष अप्रकट हो गये हैं। इस भजनकुटी एवं श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामीकी भजनकुटीके बीचमें भूगर्भ गोस्वामी, दास गोस्वामी एवं कविराज गोस्वामीकी समाधियाँ हैं। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामीकी भजनकुटीके उत्तरमें श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामीकी भजनकुटी है। कहते हैं कि उन्होंने श्रीचैतन्यचरितामृतका कुछ अंश यहाँ भी लिखा था। अधिकांश भाग वृन्दावनमें श्रीराधादामोदर मन्दिरकी भजनकुटीमें लिखा था।

पास ही ईशानकोणमें श्रीगदाधर चैतन्यका मन्दिर है। इस मन्दिरके वायुकोणमें श्रीराधागोविन्दजीका मन्दिर है। इसी मन्दिरके प्रवेश द्वारके पास श्रीगोवर्द्धनकी जिह्वा शिलाका दर्शन है।

जिह्वा–शिला—श्रीदास गोस्वामी नित्यक्रियासे निवृत्त होकर श्रीश्यामकुण्डकी पूर्व दिशामें स्थित गोपी कूपके जलसे स्नान करनेके पश्चात् श्रीकुण्डमें स्नान करते थे। कुछ दिनोंके पश्चात् गोपी कूपसे जल खींचते समय उसमें गोवर्धनकी एक शिला निकली। उस दिन दास गोस्वामी वहाँ स्नान कर चले गये। रातमें कन्दरामें भजन करते समय उन्होंने स्वप्नमें देखा कि वह शिला श्रीगिरिराजजीकी जिह्वा है तथा उसकी विधिवत् पूजन करनेका भी उन्हें आदेश हुआ। उन्होंने उस जिह्वा–शिलाको श्रीगोविन्ददेवजीके प्रवेश द्वारके समीप एक मन्दिर बनाकर उसमें रख दिया तथा विधिवत् पूजाकी व्यवस्था की। आज भी यह शिला दर्शनीय है। श्रीदास गोस्वामीने तबसे गोपीकूपमें स्नान करना बन्द कर दिया तथा ललिताकुण्डके पूर्वी तटपर एक नया कुआँ प्रस्तुत करवाकर उसी कुएँके जलमें स्नानादि करते थे। वह नया कुआँ अब भी है। उससे आगे नरहरि सरकारका कुञ्ज है। ललिता कुण्ड ललितानन्दद कुञ्जके स्थानपर स्थित है। विशाखा आदि बहुतसे कुण्डोंका इसमें समावेश है। अन्यान्य कुण्ड अब लुप्त हो चुके हैं। आगे श्रीराधाविनोद विहारीजी एवं श्रीसीतानाथके मन्दिर हैं। जगमोहन कुण्डके पास में ही परिक्रमा–मार्गपर श्रीराजेन्द्र गोस्वामीकी समाधि है। श्रीराजेन्द्र गोस्वामीने कृष्ण विरहमें यहींपर प्राणत्याग किया था। श्रीराधाकुण्डके पश्चिममें श्रीराधाकुञ्जविहारी गौड़ीय मठ है। विश्वमें महाप्रभुके द्वारा आचरित एवं

प्रचारित विमल वैष्णव धर्म एवं श्रीहरिनाम संकीर्तनका प्रचार करनेवाले जगद्गुरु परमहंस परिव्राजकाचार्यवर्य ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपादने यहाँ श्रीराधाकुञ्जविहारीजीकी प्रतिष्ठा की है। श्रीरघुनाथदास गोस्वामीकी समाधिपीठसे आगे निकट ही सप्तम गोस्वामी श्रील सच्चिदानन्द भक्तिविनोद ठाकुर एवं श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामीकी भजनकुटी दर्शनीय है।

शिवखोर—उद्धवकुण्डसे चलकर श्रीराधाकुण्ड गाँवमें प्रवेश करते ही परिक्रमा मार्ग पर दाहिनी ओर यह स्थान स्थित है। कहते हैं, प्राचीन कालमें एक समय एक शृगाली भूली–भटकी दिनके समय इधर चली आयी। कुत्तों ने उसे मार डाला। यह देखकर गाँववालोंने इसी स्थान पर मृत शृगालीका दाह–संस्कार सम्पन्न किया। आश्चर्यकी बात यह हुई कि दाह–संस्कारके समय शृगालीके शरीरसे एक किशोरी गोपी प्रकट होकर आकाशमें अन्तर्ध्यान हो गयी। कहते हैं कि श्रीराधाकुण्डमें मृत्यु होने पर जीवको गोलोक वृन्दावनकी गति प्राप्त होती है।

माल्यहारिणी कुण्ड—यह कुण्ड राधाकुण्डके पश्चिममें है। यहाँ माधवी कुंजमें बैठकर श्रीमती राधिकाजीने मुक्ताओंकी माला पिरोई थी। श्रीदास गोस्वामीने मुक्ताचरित–ग्रन्थमें इस लीलाका बड़ा ही मनोरम वर्णन प्रस्तुत किया है।

प्रसङ्ग—एक समय कार्त्तिक माहमें गिरिराज गोवर्द्धनमें दीपावली महोत्सवके अवसर पर ब्रजवासी अपनी–अपनी गायों आदिको विविध प्रकारकी वेषभूषाओंसे सुसज्जित करनेमें संलग्न थे। गोपियाँ भी अपने–अपने घरसे विविध प्रकारकी वेषभूषा लाकर गौओंको भूषित कर रही थीं। श्रीराधिकाजी भी सहेलियोंके साथ माल्यहारिणी कुण्डके निकट माधवी चबूतरे पर बैठकर सुन्दर–सुन्दर मुक्ताओंसे नाना प्रकारके भूषण प्रस्तुत करने लगीं। इसी बीच विचक्षण नामक शुक पक्षीके मुखसे श्रीराधिकाजी द्वारा मुक्ता द्वारा विविध प्रकारके शृङ्गारोंके बनाये जानेकी बात सुनकर श्रीकृष्ण श्रीराधिकाजीके पास उपस्थित हुए और उनसे कुछ मुक्ता माँगे किन्तु श्रीराधिकाजी तथा उनकी सहेली गोपियोंने गर्वपूर्वक दो–चार बातें सुनाकर मुक्ता देनेके लिए निषेध कर दिया। फिर भी श्रीकृष्णने कहा—'सखियों! यदि तुम अधिक संख्यामें मुक्ता नहीं दे सकती हो, तो थोड़ेसे ही मुक्ता दे दो, जिससे मैं अपनी प्यारी हंसिनी और हरिणी नामक गौओंका शृङ्गार कर सकूँ'। परन्तु

हठीली गोपियोंने श्रीकृष्णकी इस प्रार्थनाको भी अस्वीकार कर दिया। ललिताजी तो कुछ उत्तम–उत्तम मुक्ताओंको हाथोंमें लेकर श्रीकृष्णको दिखलाती हुई कहने लगी—कृष्ण! ये मुक्ताएँ साधारण नहीं हैं, जिनसे तुम अपनी गायोंका श्रृंगार कर सको, ये बड़ी मूल्यवान मुक्ताएँ हैं, समझे?

श्रीकृष्ण निराश होकर घर लौट आये। उन्होंने मैया यशोदासे हठपूर्वक कुछ मुक्ता लेकर यमुनाके पनघटके समीप ही कुछ जमीनको खोद–खादकर उसमें उन मुक्ताओंको रोप दिया। उस स्थानको चारों ओरसे इस प्रकार घेर दिया, जिससे पौधे निकलने पर उसे पशु–पक्षी नष्ट नहीं कर सकें। श्रीकृष्ण प्रतिदिन प्रचुर गो–दुग्धसे उस खेतकी सिंचाई भी करने लगे। इसके लिए उन्होंने गोपियोंसे दूध भी माँगा; परंतु उन्होंने उसके लिए भी अस्वीकार कर दिया।

बड़े आश्चर्यकी बात हुई—दो–चार दिनोंमें ही उन सारी मुक्ताओंमें अंकुर लग गये तथा देखते–देखते कुछ ही दिनोंमें पौधे बड़े हो गये तथा उनमें प्रचुर मुक्ताओंके फल लग गये। उनसे अत्यन्त सुन्दर–सुन्दर प्रचुर मात्रामें मुक्ताएँ भी निकलने लगीं। जमुना जल भरनेके लिए पनघट पर आती–जाती हुईं गोपियोंने इस आश्चर्यजनक मुक्ताके खेतको मुक्ताओंसे भरे हुए देखा। वे आपस में कानाफूसी भी करने लगीं।

इधर श्रीकृष्णने बहुतसी मुक्ताओंको लाकर बड़ी प्रसन्नतापूर्वक घर लाकर मैयाके अंचलमें रख दिया। मैयाने आश्चर्य पुर्वक पूछा—कन्हैया! तुम्हें इतनी उत्तम मुक्ताएँ कहाँसे मिलीं। श्रीकृष्णने उन्हें सारी बातें बतलायीं।

अब श्रीकृष्ण सखाओंके साथ अपनी सारी गौओंका श्रृंगार करनेके लिए अगणित मुक्ता–मालाएँ बनाने लगे। उनकी गौएँ भी उन मुक्तामालाओंसे विभूषित होकर इधर–उधर डोलने लगीं। परंतु गोपियोंको यह बात बड़ी असह्य हुई। उन्होंने भी अपने–अपने घरोंसे छिपा–छिपाकर बहुत सी मुक्ताओंको लेकर श्रीकृष्ण–जैसी मुक्ताकी खेती की। उसे गौओंके दूधसे प्रचुर सिंचन भी किया। उन मुक्ताओंसे पौधे भी निकले; किन्तु आश्चर्यकी बात यह हुई कि उनसे हिंस लता उगने लगीं।

ऐसा देखकर गोपियाँ बड़ी चिन्तित हुईं। उन्होंने सारी घटना सुनाकर श्रीकृष्णसे कुछ मुक्ताके लिए प्रार्थना की। रसिक शिरोमणि श्रीकृष्णने अवहेला पूर्वक मुक्ता देना अस्वीकार कर दिया; परन्तु अन्तमें उन मुक्ताओंके बदले उनसे उनके श्रीअङ्गोंका स्पर्श, आलिङ्गन, चुम्बन आदिका दान माँगा।

इस प्रकार यह रहस्यपूर्ण लीला इस कुण्ड पर सम्पन्न होनेके कारण इस कुण्डका नाम माल्यहारिणी कुण्ड हुआ। अधिक जाननेके लिए मुक्ताचरित–ग्रन्थ अनुशीलनीय है। श्रीदास गोस्वामीने अत्यन्त सरसता पूर्वक इस गंभीर लीलाका उसमें वर्णन किया है। महाभागवतों द्वारा समाधिमें उपलब्ध सारे रहस्य सम्पूर्ण सत्य और अप्राकृत होते हैं।

श्रीराधाकुण्ड और श्यामकुण्डके प्रसिद्ध घाट

(१) श्रीगोविन्द घाट—यह श्रीराधाकुण्डके पूर्व तटपर स्थित है। श्रीसनातन गोस्वामीने इसी घाटपर श्रीमती राधिकाजीको झूलेपर झूलते हुए देखकर श्रीरूप गोस्वामीकृत चाटुपुष्पाञ्जलिके 'वेणीव्यालंगणाफणा' पदका रहस्य हृदयंगम किया था। यह घाट श्रीगोपालभट्ट गोस्वामीकी भजनकुटी और विहारीजीके मन्दिरके मध्य स्थित है।

(२) श्रीमानस पावन घाट—श्यामकुण्डके वायुकोणमें स्थित यह घाट श्रीमती राधिकाजीको अत्यन्त प्रिय है।

(३) पञ्च पाण्डव घाट—यह घाट श्रीश्यामकुण्डके उत्तरमें मानस घाटसे संलग्न है। इसी घाटके ऊपर पाँचों पाण्डवोंने श्रीरघुनाथ दास गोस्वामीको वृक्षोंके रूपमें अपना परिचय दिया था। इसी घाटपर एक प्राचीन छोहरा वृक्ष है। उसने श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरको अपना परिचय काशीवासी ब्राह्मणके रूपमें दिया था। यह वृक्ष श्रीगदाधर–चैतन्य मन्दिरके प्रवेश द्वारपर स्थित है।

(४) मधुमंगल घाट—इसी घाटके ऊपर मधुमङ्गलानन्दद नामक श्रीमधुमङ्गलजीका कुञ्ज है, जिसे इन्होंने श्रीललिता सखीको अर्पण कर रखा है। इस घाटपर हितहरिवंश गोस्वामीकी बैठक है।

(५) श्रीजीव गोस्वामी घाट—यहींपर ऊपरमें श्रीजीव गोस्वामीकी भजन कुटी है। वे प्रतिदिन इसी घाटपर स्नान करते थे।

(६) गया घाट—इसका नामान्तर धनमाधवघेरा घाट भी है। इसीके ऊपर श्रीमाधवेन्द्रपुरीकी बैठक एवं श्रीहरिराम व्यासजीकी भजन–स्थली है।

(७) अष्ट सखीका घाट—यह गया घाट और तमालतलाके मध्यमें अवस्थित है।

(८) तमालतला घाट—यह श्यामकुण्डके दक्षिण तटपर स्थित है। इसी घाटके ऊपर तमाल वृक्षके नीचे श्रीचैतन्य महाप्रभुजी बैठे थे तथा उन्होंने ग्रामवासियोंसे दोनों कुण्डोंके सम्बन्धमें पूछा था। किन्तु ग्रामवासी उत्तर नहीं दे सके। उन्होंने केवल पासमें ही काली और गौरी नामक खेतोंको दिखलाया। महाप्रभुने ही उनका राधाकुण्ड एवं श्यामकुण्ड नामकरण कर उनमें स्नान किया। इस प्रकार उन्होंने महाराज बज्रनाभ द्वारा प्रतिष्ठित श्रीराधाकुण्ड और श्रीश्यामकुण्डका जगतमें प्रकाश किया। बादमें श्रीरघुनाथ दास गोस्वामीने इनके घाटोंको पक्का बनवा दिया।

(९) श्रीवल्लभ घाट—यह तमालतलासे पश्चिममें श्यामकुण्डके दक्षिण तटपर अवस्थित है। श्रीवल्लभाचार्यने अपने परिकरोंके साथ इस घाटपर छोहरा वृक्षकी छायामें बैठकर दोनों कुण्डोंका माहात्म्य गान किया था। वे कुछ दिन यहाँपर रहे थे तथा प्रतिदिन इस घाटपर स्नान करते और श्रीमद्भागवतका प्रवचन भी करते थे।

(१०) श्रीमदनमोहन घाट—इसी घाटके दक्षिण भागमें श्रीमदनमोहनजीका मन्दिर है।

(११) सङ्गम घाट—यह दोनों कुण्डोंके मध्यमें स्थित है। यहीं पर नीचे–ही–नीचे दोनों कुण्डोंका परस्पर संगम होता है। यह श्रीराधाकृष्ण युगलकी नित्यलीलाका योगपीठ है। वैष्णव लोग पहले श्रीराधाकुण्डमें स्नानकर पीछे श्रीश्यामकुण्डमें स्नान करते हैं। कहते हैं—यहाँ एक तमालका पुराना वृक्ष था। किसी भक्तको उसने अगस्त ऋषिके रूपमें अपना परिचय दिया था।

(१२) रासवाड़ी घाट—यह श्रीराधाकुण्डके दक्षिण भागमें स्थित है। इस घाटपर श्रीरासमण्डल स्थित है।

(१३) झूलन घाट—यह घाट श्रीराधाकुण्डके पश्चिमी तटपर स्थित है। यहाँ श्रीराधाकृष्ण झूला झूलते थे। आज भी राधाकुण्डकी ब्रजरमणियाँ बड़े समारोहसे झूला झूलती हैं। इस घाटका दूसरा नाम राधाकृष्णका घाट भी है।

(१४) श्रीजाह्नवा घाट—यह घाट राधाकुण्डके उत्तरमें स्थित है तथा श्रीनित्यानन्द प्रभुकी पत्नी श्रीजाह्नवा ठाकुरानीके स्नान करनेका घाट है। यहींपर वे भजन भी करती थीं। आज भी वह बैठक विद्यमान है।

(१५) श्रीबज्रनाभ कुण्ड—यह कुण्ड श्रीकृष्णकुण्डके मध्यमें स्थित है।

(१६) श्रीकङ्कण कुंड—श्रीराधाजीने सखियोंकी सहायतासे अपने कङ्कणोंके द्वारा इस कुण्डका निर्माण किया था। श्रीराधाकुण्डके बीचोंबीचमें यह कुण्ड स्थित है।

श्रीराधाकुण्डके रासमण्डल

(१) श्रीराधाकुण्डके दक्षिणमें अत्यन्त प्राचीन रासमण्डल है। वहाँपर रासमण्डल वेदी बनी हुई है।

(२) श्रीराधाकुण्डके ईशान कोणमें गोविन्द मन्दिरके पीछे यह रासमण्डल है।

(३) ग्रामके उत्तरमें भानुखोरके दक्षिणमें यह रासमण्डल है।

(४) श्रीश्यामकुण्डके उत्तरमें राधावल्लभ घाटके उत्तरमें यह रासमण्डल स्थित है।

(५) नन्दिनीघेरामें रासमण्डल है।

(६) ललितविहारीजीमें यह रासमण्डल है।

श्रीराधाकुण्डके क्षेत्रपाल महादेव

(१) श्रीराधाकुण्डके नैऋत कोणमें कुंडेश्वर महादेव।

(२) ग्रामके पश्चिममें शिवखोरके उत्तरमें महादेव।
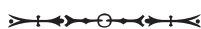
(३) श्रीराधारमणजी मन्दिरमें एक महादेव।

(४) श्रीश्यामकुण्डके उत्तरमें महादेव।

(५) श्रीश्यामकुण्डके अग्निकोणमें बनखण्डी महादेव।

(६) माल्यहारणी कुण्डपर महीमेश्वर महादेव।

(७) वल्लभाचार्यकी बैठकके पश्चिम भागमें एक महादेव।

चित्र सं.-17

श्रीगोवर्धन परिक्रमा

श्रीराधाकुण्ड और श्रीश्यामकुण्ड गिरिराज श्रीगोवर्धनके दो नेत्र हैं। अतः श्रीगिरिराजजीके ही ये सर्वश्रेष्ठ अङ्ग हैं। यहींसे गिरिराजजीकी परिक्रमा आरम्भ करनेपर जो-जो कृष्णलीला-स्थलियाँ दर्शनीय हैं, उनका नीचे उल्लेख किया जा रहा है—

(१) मुखराई—राधाकुण्डके दक्षिणमें एक मीलकी दूरीपर यह स्थान है। यह राधिकाजीकी मातामही वृद्धा मुखराजीका वासस्थान है। यशोदाजीको बाल्यावस्थामें इन्होंने दूध पिलाया था। मातामही मुखरा कौतुकवश श्रीराधाकृष्ण युगलकिशोर-किशोरीका अलक्षित रूपमें मिलन कराकर बड़ी प्रसन्न होती थीं। ये महाराज वृषभानुकी सास और कृतिका मैयाकी माता हैं। ब्रजवासी इनको "बढ़ाई" नामसे पुकारते थे। ये प्रतिदिन प्रातःकाल बड़ी उत्कण्ठासे श्रीमती राधिका एवं कृष्णका दर्शन करने जाती थीं। यहाँ मुखरा देवीका दर्शन है।

(२) रत्न सिंहासन—यह श्रीराधाकुण्डसे गोवर्धनकी ओर परिक्रमा मार्गमें एक मील दूरीपर कुसुमसरोवरके दक्षिणमें स्थित है। यहाँका लीला-प्रसङ्ग इस प्रकार है—शिवचतुर्दशीके उपरान्त पूर्णिमाके दिन श्रीकृष्ण एवं श्रीबलराम गोपरमणियोंके साथ विचित्र रंगोंकी पिचकारियोंके साथ परस्पर होली खेल रहे थे। मृदंग-मञ्जीरे, वीणादि वाद्य-यन्त्रोंके साथ वासंती आदि रागोंसे मधुर सङ्गीत भी चल रहा था। श्रीमती राधिकाजी पास ही रत्न सिंहासनपर बैठ गईं। उसी समय कुबेरका अनुचर शंखचूड़ भगवान् श्रीकृष्णको मनुष्य समझकर परम सुन्दरी इन गोप ललनाओंको हरण करनेके लिए चेष्टा करने लगा। गोपियाँ राम और कृष्णको पुकारती हुई आर्त्तनाद करने लगीं। कृष्णने बड़े वेगसे दौड़कर शंखचूड़का बध किया और उसके मस्तककी मणि निकालकर श्रीबलरामजीको प्रदान की। बलरामजीने उस मणिको धनिष्ठाके हाथों श्रीमती राधिकाको प्रदान किया। यह उसी रत्न सिंहासनका स्थान है जहाँ राधिकाजी बैठी थीं।

(३) श्यामकुटी—यह स्थान रत्न-सिंहासनके पास ही सघन वृक्षावलीके मध्यमें स्थित है। यहाँ श्रीश्यामसुन्दरने श्यामरंगकी कस्तूरीका अङ्गोंमें अनुलेपनकर श्याम रङ्गके अलंकार तथा श्याम रङ्गके ही वस्त्र धारणकर श्याम रङ्गके निकुञ्जमें प्रवेश किया तो गोपियाँ भी उनको पहचान न सकीं।

तत्पश्चात् पहचाननेपर उनकी बड़ी मनोहारी लीलाएँ सम्पन्न हुईं। पास ही बाजनी शिला है, जिसे बजानेसे मधुरनाद उत्पन्न होता है।

(४) ग्वाल पोखर—श्यामकुटीके पास ही सघन सुन्दर वृक्ष और लताओंसे परिवेष्टित मनोहर लीला स्थली है। गोचारणके समय श्रीकृष्ण मध्याह्न कालमें यहाँ विश्राम करते हैं। बाल सखाओंके द्वारा कृष्णकी प्रेममयी सख्य रसकी सेवा तथा ग्वाल बालोंकी छीना-झपटी आदि मनोहारी लीलाओंके कारण बाल पोखरा अत्यन्त प्रसिद्ध है। यहाँका एक प्रसङ्ग इस प्रकार है—श्रीकृष्ण पुरोहित बालकका वेश धारणकर बटु मधुमङ्गलके साथ सूर्यकुण्डमें श्रीमती राधिकाका सूर्यपूजन सम्पन्न कराकर यहाँ सखाओंके साथ बैठ गये। मधुमङ्गलके पास दक्षिणासे मिले हुए मनोहर लड्डू और एक स्वर्ण मुद्रिका थी। मधुमङ्गलने अपने वस्त्रोंमें उन्हें विशेष सावधानीके साथ बाँध रखा था। कौतुकी बलरामने मधुमङ्गलसे पूछा—भैया मधुमङ्गल! तुम्हारी इस पोटलीमें क्या है? मधुमङ्गलने झिझकते हुए उत्तर दिया—कुछ नहीं। इतनेमें बलदेवजीने सखाओंकी ओर इशारा किया। उसमेंसे कुछ सखाओंने मधुमङ्गलके दोनों हाथोंको पकड़ लिया। एक सखाने अपनी हथेलियोंसे उसके नेत्र बंदकर दिये। कुछ सखाओंने बलपूर्वक मधुमङ्गलके हाथोंसे वह पोटली छीन ली। फिर ठहाके लगाते हुए मधुमङ्गलके सामने ही उन लड्डुओंको परस्पर बाँटकर खाने लगे। छीना-झपटीमें मधुमङ्गलका वस्त्र भी खुल गया। वह बड़े जोरसे बिगड़ा और हाथमें यज्ञोपवीत धारणकर बलराम तथा श्रीदामादि सखाओंको अभिशाप देनेके लिए प्रस्तुत हो गया। तब कृष्णने उसे किसी प्रकार शान्त किया। तब मधुमङ्गल भी हँसता हुआ उन सखाओंसे लड्डुके कुछ अवशिष्ट चूर्णको मांगने लगा। यह ग्वाल पोखरा इन लीला स्मृतियोंको संजोए हुए आज भी विद्यमान है। श्रीचैतन्य महाप्रभुने गिरिराज गोवर्धनकी परिक्रमा के समय इन लीलाओंका स्मरण करते हुए यहाँ पर कुछ क्षण विश्राम किया था। इसके पास में ही दक्षिणकी ओर **किल्लोल कुण्ड** है।

(५) किल्लोल कुण्ड—अपने नामके अनुरूप ही यह कुण्ड श्रीराधाकृष्ण युगलकी जलकेलि तथा कृष्णका सखाओंके साथ जल क्रीड़ाका स्थल है।

(६) कुसुम सरोवर—यह श्रीराधाकुण्डसे डेढ़ मील दक्षिण-पश्चिममें परिक्रमा मार्गके दाहिनी ओर स्थित है। यहाँ बेली-चमेली, जूही, यूथी, मल्लिका, चम्पक आदि विविध प्रकारके पुष्पोंकी लताओं और तरुओंसे परिपूर्ण कुसुमवन

था। यहाँ श्रीकृष्णसे मिलनेके बहाने श्रीमती राधिका सहेलियोंके साथ पुष्प-चयन करने आती थीं तथा उनका रसिक कृष्णके साथ रसपूर्ण केलि-कलह एवं नोक-झोंक हुआ करता था।

चित्र सं.-18

कुसुम सरोवर

प्रसङ्ग (१)—कृष्णभावनामृतमें प्रसङ्गके अनुसार एक दिन श्रीमती राधाजी सहेलियोंके साथ यहाँ पुष्प–चयन कर रही थीं। इतनेमें कृष्ण वहाँ उपस्थित हुए।

कृष्णने पूछा—कौन है?

राधाजी—कोई नहीं!

कृष्ण—ठीकसे बताओ, तुम कौन हो?

राधाजी—कोई नहीं।

कृष्ण—बड़ी टेड़ी–मेढ़ी बातें कर रही हो।

राधाजी—तुम बड़ी सीधी साधी बातें करते हो।

कृष्ण—मैं पूछ रहा हूँ, तुम कौन हो?

राधाजी—क्या तुम नहीं जानते?

कृष्ण—क्या कर रही हो?

राधाजी—सूर्य पूजाके लिए पुष्प चयन कर रही हूँ।

कृष्ण—क्या किसीसे आदेश लिया?

राधाजी—किसीसे आदेशकी आवश्यकता नहीं।

कृष्ण—अहो! आज चोर पकड़ी गई। मैं सोचता था कि प्रतिदिन कौन हमारी इस पुष्पवाटिकासे पुष्पोंकी चोरी करता है तथा इस पुष्पोद्यानको सम्पूर्ण रूपसे उजाड़ देता है। आज तुम्हें पकड़ लिया है। अभी इसका दण्ड देता हूँ।

राधाजी—तुम इस पुष्पवाटिकाके स्वामी कबसे बने? क्या यहाँ एक पौधा भी कभी लगाया है? अथवा किसी एक पौधेका सिञ्चन भी किया है? उल्टे तुम तो लाखों गऊओं तथा उद्धत सखाओंके साथ इस कुसुमवनको उजाड़नेवाले हो। भला रक्षक कबसे बने?

कृष्ण—मुझ धर्मात्माके ऊपर आक्षेप मत करो। मैं अभी इसके लिए उचित शिक्षा दे रहा हूँ।

राधाजी—अहा हा! (मुस्कराते हुए) बड़े भारी धर्मात्मा हैं। पैदा होते ही एक नारीका बध किया, बचपनमें मैयासे भी झूठ बोलते, पास–पड़ोसकी गोपियोंके घरोंमें मक्खन चुराते, कुछ बड़े होनेपर गोप कुमारियोंके वस्त्रोंका हरण करते, अभी कुछ ही दिन पूर्व एक गायके बछड़ेका बध किया। यह तो तुम्हारे धर्माचरणकी हद हो गई।

उत्तर सुनकर कृष्ण सिर खुजलाते हुए मधुमङ्गलकी ओर देखने लगे। चतुर मधुमङ्गलने समझाया—चुप रहनेमें ही भलाई है।

इतनेमें सभी सखियोंने तालियाँ बजाते हुए श्यामसुन्दरको घेर लिया।

दूसरा प्रसङ्ग—एक दिन प्रातःकाल श्रीमती राधिकाजी अपनी सहेलियोंके साथ पुष्प चयन करनेके लिए कुसुम सरोवरके तटपर उपस्थित हुईं। कुसुम सरोवरके तटपर बेली, चमेली, जूही, कनेर, चंपक आदि विविध प्रकारके पुष्प खिल रहे थे। श्रीमतीजी एक वृक्षकी टहनीमें प्रचुर पुष्पोंको देखकर उस टहनीको हाथसे पकड़कर दूसरे हाथसे पुष्पोंका चयन करने लगीं। इधर कौतुकी श्रीकृष्णने, श्रीमती राधिकाको यहाँ पुष्प चयन करनेके लिए आती हुईं जानकर, पहले से ही उस वृक्षकी डाल पर चढ़कर अपने भारसे उसे नीचे झुका दिया और स्वयं डाल पर पत्तोंकी आढ़में छिप गये, जिससे श्रीमतीजी उन्हें देख न सकें। श्रीमतीजी पुष्प चयनमें विभोर थीं। उसी समय कृष्ण दूसरी डाल पर चले गये, जिससे वृक्षकी वह डाल काफी ऊपर उठ गई, राधिकाजी भी उस डालको पकड़ी हुए ऊपर उठ गई। फिर तो वे बचानेके लिए चिल्लाने लगीं। उसी समय श्रीकृष्णने पेड़की डालीसे कूदकर डालीमें टंगी हुई श्रीमतीजीको गोदीमें पकड़ कर उतारा। इधर सखियाँ यह दृश्य देखकर बड़े जोरसे ताली बजाकर हँसने लगीं। श्रीमती राधिकाजी श्रीकृष्णके आलिङ्गन पाशसे मुक्त होकर श्रीकृष्णकी भर्त्सना करने लगीं।

वर्तमान समयमें यहाँका कुसुमवन सम्पूर्ण रूपसे उजड़ गया है। भरतपुरके महाराजा जवाहरसिंहने १७६७ ई. में दिल्लीका खजाना लूटकर उस धनसे कुसुम सरोवरमें सुन्दर सोपानों सहित पक्के घाट बनाये थे। सरोवरके पश्चिममें राजा सूरजमलकी छत्री तथा उसके दोनों ओर दोनों रानियोंकी छत्रियाँ और पास ही दाऊजीका मन्दिर है।

(७) नारद कुण्ड—कुसुम सरोवरसे दक्षिण-पूर्व दो फर्लांग दूर नारदजीकी तपस्या स्थली नारद-कुण्ड है। वृन्दावनकी अधिष्ठात्री देवी वृन्दादेवीके मुखसे उच्चतम गोपीभावकी महिमा सुनकर गोपी-देहसे श्रीराधाकृष्ण युगलकी प्रेममयी उन्नत उज्ज्वलसेवा प्राप्त करनेके लिए नारदजीके हृदयमें तीव्र लालसा उत्पन्न हुई। उन्होंने लोकपितामह ब्रह्मासे गोपाल-मंत्र प्राप्तकर इसी स्थानपर गोपियोंके आनुगत्यमें रागमार्गसे साधन भजन करना आंरम्भ किया। बहुत युगोंतक आराधनाके पश्चात् योगमाया पौर्णमासीने नारदजीको कुसुमसरोवरमें स्नान कराया, जिससे साथ ही साथ उन्हें गोपी-देहकी प्राप्ति हुई। तत्पश्चात्

उन्हें रागमार्गके एकादश भाव प्रदानकर युगलसेवामें अधिकार प्रदान किया। यहाँ नारद–कुण्ड दर्शनीय है।

(८) पालेई—नारदकुण्डसे डेढ़ मील पूर्व मथुरामार्गके पास ही यह गाँव स्थित है। कभी यमुनाजी यहाँ बहती थीं। मिट्टी खोदनेपर अभी भी यमुनाकी रेत निकलती है। कृष्णने सखाओंके साथ यहाँ गोचारण किया था तथा सखियोंके साथ नाना प्रकारके लीला–विलास किये थे। अष्टछापके कवि कुम्भनदासजीका यहाँ निवास स्थल था। यहाँपर उनके नामका सरोवर और खिड़क प्रसिद्ध है।

श्रीगोवर्धन एवं यहाँकी लीला–स्थलियाँ

(१) गोवर्धन—मथुराके पश्चिममें लगभग १४ मीलकी दूरीपर गिरिराज गोवर्धन विराजमान हैं। श्रीकृष्णने इस विशाल गिरिराजजीको अपने बाएँ हाथकी कनिष्ठ अंगुलीपर सात दिनोंतक धारणकर ब्रजकी रक्षा की और इन्द्रका गर्व चूर्ण किया था। श्रीकृष्णके नित्य अप्राकृत गोलोक वृन्दावन धामसे श्रीराधाकृष्ण युगलकी सेवाके लिए विविध प्रकारके निभृत निकुञ्जों, कन्दराओं, निर्मल सरोवरों तथा नाना प्रकारके युगल सेवोपयोगी गैरिक आदि धातुओंके साथ इन्होंने भौम ब्रजमें अवतरण किया है। तत्त्वकी दृष्टिसे कृष्णसे अभिन्न स्वरूप होते हुए भी ये हरिदासवर्य अर्थात् हरिके सेवकोंमें सर्वोत्तम माने गये हैं। गोपियोंने गोवर्धनको हरिदासवर्य कहकर सम्बोधन किया है—सखि री! ये गिरिराज हरिदासोंमें सबसे श्रेष्ठ हैं, जो सदा–सर्वदा श्रीबलराम और श्रीकृष्णका चरणस्पर्श कर परमआनन्दसे पुलकित हो जाते हैं। गऊओं, ग्वालबालोंके साथ–साथ श्रीकृष्ण और बलरामजीको निर्मल सरोवरोंके जल, हरीभरी घासें, फल, मूल, कन्द तथा गैरिक आदि धातुओंके द्वारा नाना प्रकारसे सेवाकर उन्हें तृप्त करते हैं।[१]

श्रीगोवर्धन प्रकट होनेका प्रसंग—आदि वराहपुराणके प्रसंगानुसार रामावतारमें सेतु निर्माण हो रहा था। सभी बन्दर और भालू जहाँ–तहाँसे

---

(१) हन्तायमद्रिरबला हरिदासवर्यो यद् रामकृष्णचरणस्पर्शप्रमोदः ।
मानं तनोति सहगोगणयेस्तयोर्यत् पानीयसूयवसकन्दरकन्दमूलैः ।।
श्रीमद्भा. १०/२१/१८

बड़ी–बड़ी पत्थरकी शिलाएँ ला रहे थे। हनुमानजी भी श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर उत्तराञ्चलसे गोवर्धनजीको उखाड़कर ला रहे थे। उसी समय दैववाणी हुई 'समुद्रमें सेतु बन गया है। अतः अब प्रस्तर शिलाओंकी आवश्यकता नहीं'। दैववाणी सुनकर हनुमानजीने कुछ दुःखित होकर श्रीगिरिराजजीको यहीं पृथ्वीपर रख दिया। उस समय गिरिराजजीने बड़े दुःखित होकर हनुमानजीसे कहा 'आपने मुझे भगवान् श्रीरामके चरणस्पर्शसे वञ्चित कर दिया। मैं आपको श्राप दूँगा।' हनुमानजीने कहा 'आप मुझे क्षमा करें। अभी आगामी द्वापरमें स्वयं–भगवान् श्रीकृष्ण देवराज इन्द्रकी पूजा बन्दकर आपकी ही पूजा करायेंगे। फिर इन्द्र जब कुपित होकर मूसलाधार वर्षा और वज्रसे सारे ब्रजको ध्वंस करना चाहेगा, उस समय श्रीकृष्ण आपको अपनी हथेलियोंपर धारणकर ब्रजकी रक्षा करेंगे तथा आपकी अभिलाषा पूर्ण करेंगे'। ऐसा कहकर हनुमानजी कूदकर आकाशमार्गसे श्रीरामचन्द्रजीके समीप आये और सारा वृत्तान्त उन्हें सुनाया। श्रीरामचन्द्रजीने कहा 'सेतु बन्धके लिए लाये गये ये सारे पर्वत मेरे चरण स्पर्शसे विमुक्त हो गए हैं। किन्तु गोवर्धनको मैं अपनी हथेलियोंपर रखकर तथा अपने सर्वांगके स्पर्शके द्वारा उसके अभीष्टको पूर्ण करूँगा। मैं द्वापरके अन्तमें यदुकुलमें जन्म लेकर गोवर्धनके ऊपर सखाओंके साथ गोचारण तथा अपनी प्रियतमा गोपियोंके साथ उसके कुञ्जोंमें केलि–क्रीड़ाओंके द्वारा उसे श्रेष्ठ हरिदासके रूपमें प्रसिद्ध करा दूँगा'।

कल्पभेदसे गर्गसंहिताके अनुसार एक समय पुलस्त्य ऋषि भ्रमण करते हुए द्रोणाचल पर्वतपर पहुँचे। वहाँसे द्रोणाचलके पुत्र परम सुन्दर, सुगन्धमय अतिस्निग्ध, नाना प्रकारके हरे–भरे वृक्ष–लताओंसे भरे गोवर्धनजीको वे अपने वासस्थान काशी लाना चाहते थे, क्योंकि काशीमें ऐसा कोई पर्वत नहीं था, जहाँ वे शान्तिसे बैठकर साधन–भजन कर सकें। उन्होंने द्रोणाचलसे उनके पुत्र गोवर्धनको काशी ले जानेके लिए माँगा। अभिशापके डरसे पिता द्रोणाचल मना नहीं कर सके। किन्तु गोवर्धनजीने इस शर्तके साथ चलना स्वीकार किया कि मार्गमें जहाँ कहीं भी आप पृथ्वीपर मुझे रख देंगे, मैं वहीं स्थित हो जाऊँगा। आप मुझे कहीं भी नीचे नहीं रखें। ऋषिजीने उनकी शर्तको स्वीकारकर योगबलसे उन्हें अपनी हथेलीपर रखकर काशीके लिए प्रस्थान किया। किन्तु, ब्रजमें इस स्थानपर आते ही श्रीकृष्णकी भविष्यमें होनेवाली लीलाओंका स्मरण कर गोवर्धन बड़े भारी हो गये। ऐसे भारी

हो गये कि धारण करनेमें असमर्थ होनेपर ऋषिने उन्हें पृथ्वीमें इसी स्थानपर रख दिया। जब स्नान, सन्ध्या, वन्दन, भोजन और विश्रामके पश्चात् ऋषि गिरिराजजीको उठानेके लिए प्रयत्न करने लगे, उस समय गिरिराजजीने अपनी पूर्व शर्तके अनुसार यहाँसे जाना अस्वीकार कर दिया। ऋषि अपनी भरपूर चेष्टा करनेपर भी उन्हें उठा न सके और अन्तमें क्रोधित होकर उन्हें श्राप दिया कि तुम दिन–प्रतिदिन एक–एक तिलके परिमाणमें क्षीण होओगे। गोवर्धनजीने ऋषिके श्रापको सहर्ष मस्तकपर धारणकर लिया, क्योंकि उन्हें स्वयं–भगवान् श्रीकृष्णके अवतारकी बातका पता था। उन्हें यह मालूम था कि श्यामसुन्दर यहाँ मेरे ऊपर विविध प्रकारकी लीलाएँ करेंगे और मैं कृतकृतार्थ हो जाऊँगा। इसीलिए श्रापके कारण प्रतिदिन वे क्षीण हो रहे हैं, किन्तु यह ऋषिके अभिशापके कारण हो रहा है अथवा श्रीकृष्णके विरहमें इसे कौन जानता है?

(२) मानसी गङ्गा—(१) गोपियोंके कहनेसे श्रीकृष्णने वृष–हत्याके (वृषभासुरकी हत्या) पातकसे मुक्त होनेके लिए अपने मनसे इसे उत्पन्न किया तथा इसमें स्नानकर पवित्र हुए। (२) दूसरी कथाके अनुसार एक समय श्रीनन्द महाराज आदि गोपगण तथा श्रीयशोदा आदि गोपियोंने कृष्ण बलदेवके साथ गङ्गा स्नानके लिए यात्रा की। रात्रिको इन्होंने गोवर्धनके निकट विश्राम किया। कृष्णने सोचा सारे तीर्थ ब्रजमें विद्यमान हैं, फिर अधिक दूर जानेकी आवश्यकता ही क्या है? ऐसा सोचकर मन–ही–मन गङ्गा देवीका स्मरण किया। स्मरण करते ही भगवती भागीरथी गंगाकी तीव्र धारा कल–कल करती हुई इस स्थलतक पहुँची। धाराप्रवाहके अग्रिम भागमें मगरपर आरूढ़ श्रीगंगादेवीका दर्शनकर नन्द–यशोदा आदि गोप–गोपी एवं ब्रजवासी लोग आश्चर्यचकित हो गये। कृष्णने कहा ब्रजमें सभी तीर्थ विद्यमान हैं। आप लोग गङ्गास्नान करना चाहते थे, इसे जानकर गंगादेवी आज स्वयं ही आपलोगोंके सम्मुख प्रकट हुई हैं। अतः आपलोग बिना विलम्ब किये गंगास्नान करें। कार्तिक अमावस्याकी दीपावलीके दिन गंगादेवी यहाँ प्रकट हुई थीं। इसलिए आज तक दीपावलीके दिन लाखों श्रद्धालु जन इसमें स्नानकर श्रीहरिदेवजीका दर्शन करते हैं तथा मानसी गंगाके चारों ओर और श्रीगिरिराज गोवर्धनके निकट सर्वत्र दीप दान करते हैं।

मानसीगंगाके घाटोंको जयपुर नरेश मानसिंहके पिता राजा भगवानदासने पत्थरोंसे बनवाया था।

(३) तीसरी कथा यह है कि कृष्ण कभी सखाओंके साथ, कभी प्रियतमा गोपियोंके साथ यमुना जलमें विहार करते थे। अपनी छोटी बहन यमुनाका यह सौभाग्य दर्शनकर भगवती गंगाके हृदयमें भी राधाकृष्ण युगलकी सेवाकी तीव्र लालसा उत्पन्न हुई। उन्होंने अपनी छोटी बहन यमुनाजीसे अपनी हृदयकी अभिलाषा प्रकटकर इस विषयमें अपनी सहायता करनेके लिए निवेदन किया। कृष्णप्रिया श्रीयमुनाजीने अपनी बड़ी बहन गंगादेवीके ऊपर कृपा करनेके लिए प्रियतम कृष्णसे प्रार्थना की। श्रीकृष्णने प्रिया यमुना देवीकी प्रार्थना सुनकर उचित समयपर गंगाजीको भी ब्रजमें आवाहन कर गोपियोंके साथ जलविहार आदिके द्वारा उन्हें कृतार्थ कर दिया।

चित्र सं.–19

श्रीगोवर्धन मानसीगङ्गामें मुखारविन्द

(३) श्रीहरिदेव—मानसी गंगाके दक्षिण तटपर श्रीहरिदेवजी विराजमान हैं। ये गिरिराज गोवर्धनके अधिष्ठातृदेव हैं। श्रीकृष्णने एक स्वरूपसे गिरिधारी बनकर अपनी हथेलीपर अपने दूसरे स्वरूप गिरिराजजीको धारण किया था। आन्योर गाँवमें गोवर्धन धारणकी लीलामें इस प्रसंगका विशेष वर्णन किया जायेगा।

(४) ब्रह्मकुण्ड—गोवत्स एवं ग्वालबालोंके अपहरणजनित अपराधको क्षमा करानेके लिए ब्रह्माजी कृष्णको प्रसन्न देखकर यहाँ उपस्थित हुए तथा सामवेदके मन्त्रोंके द्वारा यहाँ कृष्णका अभिषेक एवं स्तुति की। अभिषेकका पवित्र जल ब्रह्म–कुण्ड कहलाया, जिसमें देवताओंके सहित ब्रह्माजीने स्नान किया।

(५) मनसा देवी—ब्रह्मकुण्डके ऊपर ही मानसी गंगाके दक्षिण तटपर मनसादेवीका मन्दिर है। ये मनसादेवी और कोई नहीं, स्वयं योगमायादेवी हैं। योगमाया पौर्णमासीजीकी कृपासे ही राधाकृष्ण युगलकी सेवामें अधिकार प्राप्त होता है। कोई–कोई वैष्णवजन मानसी गंगादेवीको मनसादेवी भी कहते हैं।

(६) गोघाट—श्रीकृष्ण इस घाटपर गऊओं एवं बछड़ोंको जल पिलाते थे।

(७) चक्रतीर्थ—मानसी गंगाके उत्तरमें यह तीर्थ स्थित है। यहाँ चक्रेश्वर महादेवजी विरामान हैं। आजकल चक्रेश्वर महादेवको चकलेश्वर भी कहते हैं। इन्द्रके द्वारा वारिवर्षणके समय इन महादेवने (सदाशिव विष्णुतत्त्व होनके कारण) अपने त्रिशूलको चक्रके समान धारणकर गिरिराजकी एवं ब्रजवासियोंकी रक्षाकर उनकी सेवा की थी। [कुछ भक्तोंका कहना है कि इन महादेवजीकी प्रार्थनासे यहाँपर सुदर्शन–चक्रने गिरिराज गोवर्धन एवं ब्रजकी रक्षा की थी इसलिए इनका नाम चक्रेश्वर महादेव है।]

मानसीगंगाके इस घाटपर चक्रेश्वरजी विराजमान हैं। इसे पारंग घाट भी कहते हैं। गोपियाँ इस घाटसे मानसी गंगाको पार करती थीं। इसी घाटके सामने भगवती मानसी गंगामें श्रीकृष्ण नाविक बनकर गोपियोंको पार करते समय नौका विलास आदि लीलाएँ करते थे। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरने श्रीगोवर्धनाष्टकम् नामक स्तवमें नौका विलास लीलाका बड़ा ही मर्मस्पर्शी वर्णन किया है—

यत्रैव गंगामनु नावि राधा–, मारोह्य मध्ये तु निमग्ननौकः।
कृष्णो हि राधानुगलो बभौ स, गोवर्धनो मे दिश्तामभीष्टम्।।

जहाँ मानसी गङ्गाके बीचो–बीचमें नौकापर श्रीमतीराधिकाको बैठाकर, नाविक बने श्रीकृष्णने नौकाको डुबानेका उपक्रम किया तथा भयभीत श्रीमती राधिकाने श्रीकृष्णको आलिङ्गन पाशमें बाँध लिया था, वे श्रीगोवर्द्धन मेरे सब प्रकारकी अभिलाषाओंको पूर्ण करें।

(८) श्रीसनातन गोस्वामीकी भजनकुटी—चक्रतीर्थपर ही चकलेश्वर महादेवके सामने श्रीसनातन गोस्वामीकी भजन कुटी है। सनातन गोस्वामी कभी यहाँ रहकर भजन कर रहे थे। परन्तु मच्छरोंके उत्पातसे उद्विग्न होकर अन्यत्र कहीं जानेका विचार करने लगे। उसी समय चकलेश्वर महादेवने विप्ररूपमें उपस्थित होकर उनसे निवेदन किया कि बाबाजी आप कहीं अन्यत्र न जाएँ; यहीं रहकर स्वच्छन्द रूपसे भजन करें। अबसे यहाँ मच्छरोंका उत्पात नहीं होगा। तबसे यहाँ मच्छरोंका उत्पात नहीं होता है। सनातन गोस्वामीने निर्विघ्न रूपसे रहकर यहाँ कुछ दिनों तक भजन किया।

श्रीसनातन गोस्वामी वृद्धावस्थामें भी गोवर्धनकी परिक्रमा करते थे। ग्रीष्म कालमें एक बार परिक्रमा कर रहे थे। चिलचिलाती धूप पड़ रही थी। पैरतले मिट्टी भी तप्त हो रही थी। गोस्वामीजी पसीनेसे लथपथ एवं क्लान्त होकर एक जगह बैठ गये। कोई छाया नहीं थी, हठात् एक ग्वारिया बालक आया और अपने एक हाथसे पीली ओढ़नीसे उनके ऊपर छाया कर दी और दूसरे हाथसे अपनी ओढ़नीके दूसरे छोरसे सनातन गोस्वामीके मुखमण्डलपर हवा भी करने लगा। उस बालकके स्पर्शसे सनातन गोस्वामीका सारा अंग सुशीतल हो गया। उस बालकने बड़ी मीठी बोलीमें सनातन गोस्वामीसे कहा—बाबा! इस वृद्धावस्थामें इतने कष्टसे गिरिराजकी परिक्रमा करनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं गिरिराजजीकी एक शिला तुम्हें देता हूँ जिसपर श्रीकृष्ण चरण एवं लकुटीका चिह्न अंकित है। तुम प्रतिदिन इस शिलाकी परिक्रमा कर लेना। इससे गोवर्धन परिक्रमाका सारा फल तुम्हें प्राप्त होगा। इतना कहकर तो बालकने वह शिला सनातन गोस्वामीको दे दी और वहाँसे अन्तर्धान हो गया। यह बालक और कोई नहीं गिरिराजजीको धारण करनेवाले गिरिधारी ही थे। यह शिला श्रीवृन्दावनमें श्रीराधादामोदरजीके मन्दिरमें विराजमान थी। इस समय यह जयपुरके श्रीराधादामोदर मन्दिरमें विराजमान है। वृन्दावनके श्रीराधादामोदर मन्दिरमें इसकी प्रतिभू विग्रह है। श्रीराधादामोदरकी चार बार

परिक्रमा करनेसे गिरिराज गोवर्धनकी एक परिक्रमाका फल सहज ही प्राप्त हो जाता है।

यहाँ चकलेश्वर मन्दिरके सामने ही श्रीगौरनित्यानन्द प्रभुका मन्दिर है। श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीचैतन्य महाप्रभुने गोवर्धन परिक्रमा करते समय यहाँ श्रीचकलेश्वर महादेव और मानसी गंगाके पारङ्ग घाट आदिका दर्शन कर विश्राम किया था।

(९) मुखारविन्द—मानसी गंगाके उत्तरी तटपर श्रीगोवर्धनजीका मुखारविन्द है। गोवर्धनजीका आकार बैठी हुई गायके समान है। जिसका पिछला भाग पूछरी है। उन्होंने अपनी गर्दनको घुमाकर मुखमण्डलको अपने पेटके निकट रखा है। उनके दोनों नेत्र राधाकुण्ड और श्यामकुण्ड हैं। अतएव उनका मुखारविन्द पेटके निकट गोवर्धनमें है। यहाँ गिरिराजजीके मुखारविन्दका बहुत ही सुन्दर मन्दिर है। यहाँ प्रतिदिन इनका अभिषेक पूजन और भोग–राग होता है। अन्नकूट और दीपावलीके अवसरपर महोत्सवका आयोजन होता है।

(१०) इन्द्रध्वज वेदी—यह गोवर्धनकी पूर्व दिशामें अवस्थित है। यहींपर पहले इन्द्रकी पूजा होती थी। श्रीकृष्णने इस पूजाका स्वरूप बदलकर इन्द्रपूजाके बदले गोवर्धन–पूजाका प्रचलन कराया।

(११) ऋण मोचन और पाप मोचन कुण्ड—गोवर्धनके पूर्व–दक्षिणमें इन्द्रध्वज वेदीके पास ही वर्तमान बस अड्डेके पास ये दोनों कुण्ड हैं। किन्तु वर्तमान अवस्थामें ये कुण्ड लुप्त हो गये हैं। एक कुण्डको पाटकर वहाँ बिजली–कार्यालय बना दिया गया है। दूसरेको भी पाट कर दूकानें और घर बना लिये गये हैं।

(१२) दानघाटी—गोवर्धन पर्वतके बीचमें जहाँसे आजकल मथुरा–काम्यवनका राजमार्ग जाता है उसे दानघाटी कहते हैं। यहाँ अभी भी इसपारसे उसपार या उसपारसे इसपार करनेमें टोल टैक्स देना पड़ता है। कृष्णलीलाके समय कृष्णने दानी बनकर गोपियोंसे प्रेमकलह कर नोक–झोंकके साथ दानलीला की है। दानकेलि–कौमुदी तथा दानकेलि–चिन्तामणि आदि गौड़ीय गोस्वामियोंके ग्रन्थोंमें इस लीलाका सरस वर्णन है।

प्रसंग—किसी समय श्रीभागुरी ऋषि गोविन्द–कुण्डके तट पर भगवत् प्रीतिके लिए यज्ञ कर रहे थे, दूर–दूरसे गोप–गोपियाँ यज्ञके लिए द्रव्य ला रही थीं। श्रीमती राधिका एवं उनकी सखियाँ भी दानघाटीके उसपारसे

दधि, दुग्ध, मक्खन तथा दूधसे बने हुए विविध प्रकारके रबड़ी आदि द्रव्य ला रही थीं। इसी स्थानपर सुबल, मधुमंगल आदि सखाओंके साथ श्रीकृष्ण अपने लाठियोंको अड़ाकर बलपूर्वक दान (टोलटैक्स) माँग रहे थे। गोपियोंके साथ उनलोगोंकी बहुत नोक-झोंक हुई।

कृष्णने त्रिभंग ललित रूपमें खड़े होकर भंगिसे कहा क्या ले जा रही हो?

गोपियाँ—भागुरी ऋषिके यज्ञके लिए दूध, दही, मक्खन ले जा रही हैं।

मक्खनका नाम सुनते ही मधुमंगलके मुखमें पानी भर आया। वह जल्दीसे बोल उठा शीघ्र ही यहाँका दान देकर आगे बढ़ो।

ललिता—तेवर भरकर बोली—कैसा दान? हमने कभी दान नहीं दिया।

श्रीकृष्ण—यहाँका दान चुकाकर ही जाना होगा।

श्रीमतीजी—आप यहाँ दानी कबसे बने? क्या यह आपका बपौती राज्य है?

श्रीकृष्ण—टेड़ी बातें मत करो? मैं वृन्दावन राज्यका राजा वृन्दावनेश्वर हूँ।

श्रीमतीजी—सो, कैसे?

श्रीकृष्ण—वृन्दा मेरी विवाहिता पत्नी है। पत्नीकी सम्पत्ति भी पतिकी होती है। वृन्दावन वृन्दादेवीका राज्य है, अतः यह मेरा ही राज्य है।

ललिता—अच्छा, हमने कभी भी ऐसा नहीं सुना। अभी वृन्दाजीसे पूछ लेते हैं।

तुरन्त ही सखीने वृन्दाकी ओर मुड़कर मुस्कराते हुए पूछा—वृन्दे! क्या यह 'काला' तुम्हारा पति है?

वृन्दा—(तुनककर) कदापि नहीं। इस झूठे लम्पटसे मेरा कोई सम्पर्क नहीं है। हाँ यह राज्य मेरा था, किन्तु मैंने इसे वृन्दावनेश्वरी श्रीमती राधिकाजीको अर्पण कर दिया है। सभी सखियाँ ठहाका मारकर हँसने लगी। श्रीकृष्ण कुछ झेंपसे गये, किन्तु फिर भी दान लेनेके लिए डटे रहे। फिर गोपियोंने प्रेमकलहके पश्चात् कुछ दूर भीतर दान-निवर्तन कुण्डपर प्रेमका दान दिया और लिया भी। अधिक जाननेके लिए उपरोक्त दोनों ग्रन्थ द्रष्टव्य हैं।

(१३) दाननिवर्तन कुण्ड—गोपियोंने यहाँ कृष्णसे प्रतिदान ग्रहण किया था।

(१४) परासौली—गोवर्धनकी तलहटीमें गोवर्धन ग्रामसे लगभग एक सवा मील अग्निकोणमें परासौली ग्राम है। मुगलकालमें मुसलमानोंने गाँवका नाम बदलकर महम्मदपुर रख दिया है। यह कृष्ण एवं उनकी प्रियतमा गोपियोंकी वासन्ती रासलीलाका स्थल है। यहाँपर ब्रह्माजीकी एक रात तक रास हुआ, परन्तु ऐसा प्रतीत हुआ मानो ब्रह्माजीकी वह रात भी कुछ क्षणोंमें ही बीत गई। आकाशमें चन्द्र भी रासलीलाको देखकर स्तम्भित हो गये, तथा सारी रात टससे मस नहीं हुए। उनकी पूर्ण ज्योत्स्नामयी किरणोंके प्रकाशमें रास होता रहा। इसलिए इसे चन्द्रसरोवर भी कहते हैं। सरोवरके नैऋत्यकोणमें शृंगार मन्दिर है, जहाँ कृष्णने स्वयं श्रीमतीका शृंगार किया था।

सरोवरके पास ही छोंकर वृक्षके नीचे श्रीवल्लभाचार्यजीकी बैठक है। उसीके समीप सूरकुटी और सूर–समाधि श्रीवल्लभाचार्यजीकी बठैकमें ही स्थित है। सूरदास जन्मजात कवि थे, इनकी पदावलियोंका संग्रह सूरसागर या सूरपदावलीके नामसे प्रसिद्ध है। सूरदासजी अन्धे होते हुए भी श्रीनाथजीका जैसा शृंगार होता, ठीक वैसे ही पदकी रचना कर उसका सरस वर्णन करते थे। एकदिन पुजारीजीने श्रीनाथजीको बिल्कुल नंगे रखकर मन्दिरके पट खोल दिये एवं सूरदासको उनके शृंगारका वर्णन करनेको कहा। सूरदास कुछ क्षण तक मौन खड़े रहे। किन्तु पुजारीजीके बार–बार पूछनेपर सूरदासजी बड़े जोरसे हँसे, और यह पद गाना आरम्भ किया—

"आज भये हरि नंगम नंगा"।

सूरदासका यह पद सुनकर सभी लोग़ स्तब्ध हो गये। अपने अन्तिम दिनोंमें वे पारसौलीमें ही थे। श्रीगोसांईजीने पूछा—सूर! तुम क्या चिन्ता कर रहे हो? सूरदासजीने अन्तिम पदावलीके रूपमें गाते–गाते अपने प्राणोंको छोड़ दिया—

"खंजन नैन रूप रस माते,
अतिशय चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते"

गोसाईंजीने अश्रुपूरित नेत्रोंसे कहा—आज पुष्टिमार्गका जहाज चला गया। पारसौलीके अग्निकोणमें संकर्षण–कुण्ड है, उसके तटके ऊपर श्रीबलदेवजीका मन्दिर है।

(१५) पैठा ग्राम—परासौलीसे दो मील दक्षिणमें यह ग्राम है, वासन्ती रासके समय जब श्रीकृष्ण रासस्थलीसे अन्तर्धान हो गये, उस समय विरहातुर गोपियाँ इधर–उधर सर्वत्र उन्हें ढूँढ़ने लगी। यहाँ आनेपर उन्होंने चतुर्भुज

स्वरूपमें कृष्णको देखा। गोपियाँ उन्हें प्रणामकर आगे निकल गईं, उनके पीछे-पीछे श्रीमतीजी भी विरहातुर होकर उन्हें ढूँढ़ती हुई वहाँ उपस्थित हुई। श्रीमतीजीको देखते ही श्रीकृष्ण अपने चतुर्भुज रूपमें स्थिर नहीं रह सके। उनके दो हाथ उनके स्वरूपमें ही घुस गये (पैठ गये)। वे नवकिशोर नटवर गोपवेश वेणुकरके स्वरूपमें श्रीमतीजीसे मिले, इस प्रकार दोनोंका मिलन हुआ। श्रीकृष्णने श्रीमतीजीसे क्षमा माँगते हुए कहा, "प्रिये! रासके समय हठात् तुम्हें न देखकर मैं तुम्हारे विरहमें कातर होकर तुम्हें ढूँढ़

चित्र सं.-20

पैंठाका श्रीमन्दिर

रहा था। यह रास केवल तुम्हारे लिए ही है। तुम फिर कभी ऐसा मानकर मुझे छोड़कर मत चली जाना।" इस प्रकार वासन्ती रासका अपना एक प्रधान वैशिष्ट्य है, जिसमें श्रीमती राधिकाकी सर्वश्रेष्ठता प्रमाणित हुई है। श्रीजयदेव कविने अपने गीतगोविन्दमें वासन्ती रासका वर्णन किया है। श्रीचैतन्य महाप्रभुजीने श्रीमती राधिकाकी श्रेष्ठता प्रमाणित करते हुए इस वासन्ती रासका ही प्रमाण दिया है। श्रीचैतन्य–चरितामृतके श्रीरायरामानन्द संवादमें इस सरस प्रसङ्गका वर्णन है। गौड़ीय वैष्णवोंके लिए यह स्थान अत्यन्त महत्व रखता है। कृष्णकी बहुतसी प्रेयसियाँ हैं; किन्तु उन महाभाव स्वरूपा श्रीमती राधिका सर्वगुण सम्पन्ना होनेके कारण कृष्णकान्ता–शिरोमणि हैं। इसलिए श्रीकृष्ण अन्यान्य सखियोंके सम्मुख अपने चतुर्भुज स्वरूपको धारण किये रहे, परन्तु श्रीमतीजीको देखते ही अपने भावको स्थिर नहीं रख सके। उनके दो हाथ उनके स्वरूपमें ही घुस गये (पैठ गये)। राधाजीकी यह विशेष महिमा है। पैठामें नारायण सरोवर, ऐंठा कदम्ब, खीरसागर और बलभद्रकुण्ड आदि दर्शनीय स्थान हैं। पासमें ही बछड़ोंको चरानेका स्थान बछ गाँव है। वहाँ कनक–सागर, सहस्र–कुण्ड, रामकुण्ड, अडवारोकुण्ड, रावरिकुण्ड, माखन–चोर ठाकुर तथा वत्सविहारी ठाकुर हैं।

(१६) बछ गाँव—पैंठसे तीन मील दक्षिणमें बछ गाँव है। इसे वत्सवन भी कहते हैं। यह बछड़ोंको चरानेका ही स्थल है।

प्रसङ्ग—ब्रह्माजीने श्रीकृष्णकी और भी मधुर लीलाओंका दर्शन करनेके लिए ग्वाल–बाल और बछड़ोंका अपहरणकर लिया था। उस समय श्रीकृष्णने स्वयं सारे ग्वाल–बाल, उनकी लकुटियाँ, बंशी, श्रृंग और बछड़े आदि बनकर एक वर्ष तक उनके साथ गोचारण आदि लीलाएँ पूर्ववत् कीं। जब एक वर्षमें केवल दो–एक दिन बाकी रह गये, उसी समय श्रीकृष्ण, बलराम एवं ग्वाल–बालोंके साथ इसी स्थानपर बछड़े चरा रहे थे। इधर निकट ही गोवर्धन पर्वतपर प्रौढ़ गोप गऊओंको चरा रहे थे। गऊओंके नवजात बछड़े और बछड़ियाँ भी पास में ही थीं। गऊएँ दूरसे अपने एक वर्षसे अधिक आयुके बछड़ोंको देखकर हूँकार करती हुई काँटे, कुश और गड्ढ़ोंकी परवाह नहीं करती हुई चौकड़ी भरती हुई इधर ही दौड़ने लगीं। प्रौढ़ गोपोंने उन्हें अपनी लाठियोंसे घेरते हुए रोकनेका भरसक प्रयत्न किया, किन्तु उन्हें रोक नहीं सके। उन्होंने पासमें ही खड़े अपने नवजात बछड़ोंकी भी परवाह नहीं की। गऊएँ इसी स्थानपर अपने बछड़ोंसे मिलीं तथा हूँ–हूँ करती हुई

बड़े प्यारसे उन्हें चाटने लगीं। प्रौढ़ गोप गऊओंको रोकनेमें असमर्थ होनेके कारण बड़े क्रोधित हुए। उन्होंने सोचा, हमारे बच्चोंने ही वेणु और सींगेकी ध्वनिसे गऊओंको आकृष्ट किया है। वे शीघ्र पहुँचकर अपने बच्चोंको दण्ड देना चाहते थे। किन्तु निकट पहुँचते ही उनका सारा क्रोध दूर हो गया तथा वे अपने बच्चोंको गलेसे लगाकर प्यार करने लगे।

श्रीबलदेवजी इस घटनाको देखकर बड़े आश्चर्यचकित हुए। उन्होंने सोचा–'क्या कारण है कि आजकल ये गऊएँ अपने नवीन बछड़ोंको छोड़कर इन पुराने बछड़ोंको अधिक स्नेह कर रही हैं?' पहले तो ये अपने नये बछड़ोंको और उससे भी अधिक भैया कृष्णको प्यार करती थीं। दूसरी बात गोपमाताएँ पहले कृष्णको अधिक प्यार करती थीं। किन्तु अब कृष्ण और अपने पुत्रोंमें समान स्नेह रखती हैं। उन्होंने इस क्योंका उत्तर ढूढ़नेके लिए समाधि नेत्रोंसे देखा और मुस्कुराते हुए कृष्णसे कहा "भैया क्या एक मैयाके दूधसे तुम्हारा पेट नहीं भरा? जो लाखों माताओंका दूध पीनेके लिए उन सभीके बच्चे बन गये, फिर भी पेट नहीं भरा तो इन सारे बछड़ोंका रूप धारणकर करोड़ों गऊओंका दूध पी रहे हो। तुम्हारी इस लीलाका रहस्य क्या है।" कृष्णने बलदेवजीको सारे रहस्य सुनाये। इसीलिए इसे बछड़ोंके वनसे बछवन कहते हैं।

(१७) गौरी तीर्थ—आन्यौर गाँवके पूर्वमें थोड़ी ही दूरपर गौरी–कुण्ड है। यह स्थान कदम्ब वृक्षोंसे भरा हुआ है तथा हरे–भरे कुञ्जोंके बीच रमणिक स्थल है। चन्द्रावली एवं कृष्णके निभृत विहारका स्थल है। विदग्धमाधव नाटकमें इस प्रसंगका सरस वर्णन है। चन्द्रावलीजी वृषभानु महाराजके बड़े भैया चन्द्रभानु गोपकी कन्या हैं। ये रूप, गुण, लावण्य, वैदग्ध्य आदिके विषयमें श्रीमती राधिकाके विपक्षकी सर्वश्रेष्ठ गोपी हैं। पद्मा एवं शैब्या इनकी प्रधान सखियाँ हैं। ये अपनी सहेलियोंके साथ गौरी पूजनके छलसे यहाँ इस संकेत स्थानपर कृष्णके लिए अभिसार करती थीं। श्रीकृष्ण कुछ समयके लिए इनसे क्रीड़ाविनोद करते थे। कभी–कभी श्रीमती राधिकाकी रूप एवं रति मञ्जरियाँ छल, बल, कौशलसे श्रीकृष्णको यहाँसे ले जाकर श्रीराधाकुण्डमें श्रीमती राधिकाजीके साथ मिलन कराती थीं। एक समय कृष्णने चन्द्रावलीजीसे विनोद करते समय हड़बड़ीमें भूलवश उनसे पूछा—

कृष्ण—राधे! तुम कुशलपूर्वक तो हो?

(राधाजीका नाम सुनते ही चन्द्रावली चिढ़ गई और बोली)

चन्द्रावली—महाराज कंस! आप सकुशल तो हैं?

कृष्ण—सखि! यहाँ कंस कहाँ है?

चन्द्रावली—यहाँ तुम्हारी राधा कहाँ है?

कृष्णको अपनी भूल समझमें आई। वे बड़े लज्जित होकर चन्द्रावलीसे क्षमा माँगने लगे।

(१८) आन्यौर गाँव—यह गोवर्धन गाँवसे दो मील दक्षिणमें परिक्रमा मार्गपर स्थित है। ग्रामके पश्चिममें गिरिराजजीके उस पार जतीपुरा या गोपालपुरा ग्राम है। श्रीमद्भागवतमें यहाँ इन्द्रके बदले गिरिराजजीकी पूजा और अन्नकूटका वर्णन है। कृष्णके परामर्शके अनुसार नन्दबाबा आदि ब्रजवासियोंने यहींपर गिरिराजजीकी पूजा की थी। उन्होंने अपने-अपने घरोंसे पूए-पकवान, दधि, दुग्ध, रबड़ी और तरह-तरहके व्यंजन लाखों छकड़ोंमें भरकर गिरिराजजीके सामने प्रस्तुत किये। श्रीकृष्णने स्वयं इन सारे नैवेद्योंको गिरिराजजीको निवेदन किया तथा साथ ही अपने दूसरे विराट् स्वरूपसे चतुर्भुज रूप धारणकर अपनी लम्बी-लम्बी भुजाओंसे उन भोज्य द्रव्योंको गपागप खा गये और आनन्दमें भरकर 'आनो रे! आनो रे!' कहकर पुनः खानेके लिए माँगने लगे। कृष्णने उनसे हाथ जोड़कर कहा—हम गरीब ब्रजवासी हैं। हमारे पास जो कुछ था, आपके सामने प्रस्तुत कर दिया है। आप इतनेमें ही संतुष्ट हो जाएँ। गिरिराजजीने चतुर्भुज गिरिराज स्वरूपमें मानसीगंगा, कुसुम सरोवर आदिका जल पानकर तृप्तोऽस्मि, तृप्तोऽस्मि कहते हुए अपने वस्त्रोंसे ही अपने हाथ मुख पोंछ लिये और ब्रजवासियोंसे वर माँगनेके लिए कहा। ब्रजवासियोंने केवल यही एक वर माँगा—हमारा यह लाला सर्वदा सुखी रहते हुए चिरजीवी हो। चतुर्भुज स्वरूपके अन्तर्ध्यान होनेपर श्रीकृष्णने ब्रजवासियोंसे पूछा—क्या तुमने आजतक कभी इन्द्रदेवका दर्शन किया था? गिरिराजजी बड़े दयालु हैं, वे सभीकी मनोकामनाओंको पूर्ण करते हैं। ब्रजवासियोंने गोवर्धनपूजासे अपना जीवन सार्थक माना। गिरिराजजीके आनो रे! आनो रे! कथनसे इस स्थानका नाम आन्यौर ग्राम पड़ा। यहाँ अन्नकूटके स्थलपर गिरिराजजीकी शिलाओंपर नैसर्गिक रूपसे कटोरोंके चिह्न बने हुए हैं। पास ही में बाजना शिला है। जिसे किसी पत्थरके टुकड़े, छड़ी या अगुंलीसे बजानेपर सुन्दर स्वर निकलता है। पास में ही गोवर्धनकी तलहटीमें श्रीनाथजीके प्रकट होनेका स्थल है।

(१९) श्रीनाथजीका प्राकट्य स्थल—(प्रसङ्ग) एक समय श्रीमाधवेन्द्र पुरीजी भ्रमण करते हुए ब्रजमें पधारे। ये श्रीचैतन्य महाप्रभुजीके परमगुरु तथा श्रीईश्वरपुरीके गुरु थे। श्रीचैतन्य महाप्रभुजीने ब्रह्मा आदि देवताओंके लिए दुर्लभ जिस ब्रजप्रेमको विश्वमें लुटाया है, उस प्रेम–कल्पतरुके बीज

चित्र सं.–21

सङ्कर्षण कुण्ड (ऊपरमें माधवेन्द्रपुरी पाढ़के गोपालजीका मन्दिर)

या अंकुर ये माधवेन्द्रपुरीपादजी ही हैं। ये कभी किसीसे भोजन नहीं मांगते थे। ये अयाचक वृत्तिके यति थे। एकबार गोविन्दकुण्डके निकट हरे–भरे वृक्षों एवं लताओंसे आच्छादित निर्जन स्थानमें रहकर भजन कर रहे थे। दो तीन दिनोंतक भजनमें ऐसे आविष्ट हो गये कि इन्हें शरीरकी भी सुधबुध नहीं रही। तीसरे दिन दोपहरके समय एक श्याम रंगका गोप बालक अपने हाथोंमें मिट्टीके पात्रकेमें दूध लिए हुए उपस्थित हुआ और बोला—"बाबा! ब्रजमें कोई भूखा नहीं रहता। मेरी मैयाने इधरसे जाते समय आपको भूखा–प्यासा जानकर आपके लिए यह दूध भेजा है। वे पनघटपर जल भरनेके लिए आई थीं। आपको भूखा–प्यासा देख गई हैं। मैं अभी गोचारणके लिए जा रहा हूँ, लौटकर पात्रको ले जाऊँगा।" ऐसा कहकर वह बालक जल्दीसे चला गया।

बालककी मीठी बोली, मधुर व्यवहार और मधुर रूपश्री देखकर पुरीजी ताकते ही रह गये। सोचा जीवनमें आजतक मैंने इतना सुन्दर बालक भी नहीं देखा। फिर भजन समाप्तकर अपने आराध्य देवको अर्पणकर दुग्ध पान किया। दूधके अपूर्व स्वाद एवं सुगंधसे पुरीजीको रोमाञ्च हो आया। वे कृष्ण–प्रेममें विह्वल हो गये। परन्तु उनका आज भजनमें मन नहीं लगा। अश्रुपूरित नेत्रोंसे उस श्याम बालकके आनेकी प्रतीक्षा करने लगे। प्रतीक्षा करते–करते रात हो गई, परन्तु बालक नहीं आया। ब्रह्ममुहूर्त्तके समय उन्हें तन्द्रा–सी आई और उन्होंने देखा कि वही बालक उनके समीप आकर कह रहा था—'मैं ब्रजराजनन्दका पुत्र गोपाल हूँ। मेरा दूसरा नाम श्रीनाथजी है। महाराज वज्रनाभने यहीं गिरिराजजीके ऊपर मेरी स्थापना की थी। बहुत दिन हुए म्लेच्छोंके भयसे मेरे सेवक पुजारियोंने मुझे पास ही गोवर्धनकी तलहटीमें पृथ्वीके अन्दर छिपा रखा है। मैं बहुत दिनोंसे भूखा–प्यासा हूँ तथा मुझे बहुत गर्मी लग रही है। इसलिए मैं बहुत दिनोंसे तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा था कि माधवेन्द्र कब मुझे यहाँसे निकालकर मेरी सेवा करेगा। ऐसा कहकर वह बालक अपनी अंगुलीसे अपने छिपे रहनेका स्थान निर्देश करते हुए अन्तर्ध्यान हो गया।

प्रातःकाल होनेपर पुरीजीने ग्रामवासियोंसे यह वृत्तान्त कहा और उन्हें साथ लेकर उस निर्दिष्ट स्थानपर मिट्टी खोदनेपर उन्हें गोपालजी मिले। पुरी गोस्वामी और ब्रजवासी बड़े प्रसन्न हुए। पर्वतके ऊपर तीन ओरसे तीन शिलाओंको खड़ाकर और ऊपरमें एक बड़ी शिलाको रखकर उससे सिंहासन

प्रस्तुतकर गोपालजीको पधराया गया। बहुत दिनोंतक प्रचुर दूध, दही आदि पञ्चामृतसे महाभिषेक कर दाल, भात, कढ़ी, पूरी, कचौड़ी आदि विविध प्रकारके सुस्वाद नैवेद्योंका अन्नकूट अर्पण किया जाने लगा। आस-पासके गाँवके ब्रजवासी विशेषकर मथुराके धनी-मानी सेठोंने इसमें तन, मन, धनसे भाग लिया। इस प्रकार कुछ दिनोंतक सेवा करनेपर श्रीनाथजीके आदेशसे, अपने शिष्योंके ऊपर सेवाका भार देकर माधवेन्द्रपुरीजी मलयज चन्दन लानेके लिए जगन्नाथ पुरी चले गये। आजकल उन्हींके नामपर इस ग्रामका नाम जतीपुरा पड़ा है। श्रीचैतन्य-चरितामृतमें इस प्रसङ्गका विशद् वर्णन है। आजकल श्रीनाथजी श्रीनाथद्वारामें विराजमान हैं।

धर्मान्ध मुगल सम्राट औरंगजेबके अत्याचारोंके कारण जयपुर नरेशने वृन्दावनके श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ, श्रीमदनमोहन आदि श्रीविग्रहोंके साथ इन्हें भी अपने राज्य राजस्थानमें पधराया।

(२०) गोविन्द कुण्ड—अपनी पूजा बन्द तथा गोवर्धनकी पूजा प्रचलित होते देखकर क्रोधित इन्द्रदेवने ब्रजवासियोंको नष्ट-भ्रष्ट करनेके लिए सात दिनोंतक मूसलाधार वर्षा एवं वज्रपात करवाया। किन्तु, अपने कार्यमें असफल रहे। अन्तमें ब्रह्माजीके परामर्शसे अपना अपराध क्षमा करानेके लिए सुरभी देवीको साथ लेकर यहाँ श्रीकृष्णका अभिषेक किया तथा गो, गोप, गाभी और ब्रज सबका आनन्दवर्धक और पोषक होनेके कारण गोविन्द नाम करण किया। तभीसे कृष्णका एक नाम गोविन्द हुआ। श्रीगोविन्दका नामकरण और अभिषेक होनेके कारण इस स्थलका नाम गोविन्द कुण्ड हुआ। श्रीवज्रनाभने इस लीलाकी स्मृतिके लिए इस कुण्डकी स्थापना की थी।

(२१) पूँछरी—यह गिरिराज गोवर्धनके दक्षिणमें अन्तिम सीमा कहलाती है। हमने पहले ही बताया है कि गोवर्धनका आकार मयूरके समान है। यह पिछला भाग मयूरकी पूँछकी भाँति ऊपर उठा हुआ है। पूर्व दिशाकी परिक्रमा समाप्त कर यहींसे पश्चिमकी परिक्रमा आरम्भ होती है। यहीं पर अप्सरा कुण्ड और नवल कुण्ड भी हैं।

(२२) अप्सरा कुण्ड एवं नवल कुण्ड—दोनों ही कुण्ड आस-पास हैं। श्रीमती राधिका परम सुन्दरी अप्सरा हैं। इनके नामपर अप्सरा कुण्ड है तथा नित्य नवीन नन्दनन्दन यहाँ नवलकुण्डके रूपमें विराजमान हैं। पास में ही रासस्थली तमाल-कदम्ब-खण्डी है। हजारों कदम्ब और तमाल वृक्षोंसे भरे होनेके कारण यह अत्यन्त रमणीय रासस्थली है। रासमें नृत्य

इत्यादि करते हुए श्रीराधाकृष्ण युगल प्रेमसे द्रवित हो गये। इन दोनोंका द्रवित स्वरूप अप्सरा और नवल कुण्ड हैं। सौभाग्यवान् साधक इन कुण्डोंका दर्शन प्राप्त करता है।

(२३) राघव पण्डितकी गुफा—पास में ही महाप्रभुके परिकर गौड़ीय वैष्णव श्रीराघव पण्डितकी भजन गुफा है। ये यहीं निर्जनस्थानमें रहकर भजन करते थे। श्रील जीव गोस्वामीने श्रीनिवासाचार्य, श्रीलनरोत्तम ठाकुर और श्रीश्यामानन्द प्रभुको इन्हींके साथ ब्रजमण्डलकी परिक्रमा करायी थी। ये परम तत्त्वज्ञ एवं रसिक वैष्णव थे। भक्तिरत्नाकर ग्रन्थमें इनका उल्लेख है। इस गुफाके पास ही गोवर्धन पर्वतके ऊपर श्रीकृष्णके मुकुटका चिह्न है।

(२४) श्यामढाक—पूछरीसे एक मील पश्चिम दिशामें यह श्रीकृष्णकी लीलास्थली है। यह स्थान पलाशके हरे–भरे वृक्षोंसे भरा हुआ है। यहाँ पासमें ही बहुत बड़ी कदम्ब–खण्डी है। यहाँके कदम्ब वृक्षके पत्ते कुछ दोनेके आकारके होते हैं। श्रीकृष्ण सखाओंके साथ इन पत्तोंके दोनोंमें छाछ भर–भरकर पीया करते थे। यहाँ रासस्थली भी है।

(२५) सुरभि कुण्ड—श्रीराघव पण्डितकी गुफासे आगे चलनेपर परिक्रमा मार्गमें दाहिनी ओर निर्मल और मीठे जलसे भरा हुआ सुरभि कुण्ड स्थित है। गोविन्द कुण्डपर इन्द्रकी प्रार्थनासे सुरभीजीने अपने स्तनके दूधसे श्रीगोविन्दजीका अभिषेक किया था। तत्पश्चात् श्रीकृष्णकी गोचारण लीला तथा विशेषतः श्रीराधाकृष्ण युगलकी निभृत निकुञ्जलीलाका दर्शन करनेके लोभसे श्रीकृष्णकी ब्रजलीला तक यहीं निवास करने लगी। महाराज वज्रनाभने उनकी स्मृतिके लिए इस सुरभिकुण्डकी स्थापना की। यहाँ स्नान एवं आचमन करनेसे सारे पाप, अपराध एवं अनर्थ दूर हो जाते हैं तथा ब्रजप्रेम प्राप्त होता है।

(२६) ऐरावत कुण्ड—इन्द्रके आदेशसे ऐरावत हस्तीने अपनी सूँड़से आकाश गङ्गाके जलसे श्रीकृष्णका अभिषेक किया था। कुण्डके समीप ही पर्वतके ऊपर ऐरावत हस्तीके चरण चिह्न हैं।

(२७) रुद्र कुण्ड—इसका नामान्तर रुदन कुण्ड भी है। यहाँ महादेवजी श्रीकृष्ण–लीलाओंके चिन्तनमें विभोर होकर रुदन करने लगे थे। यहाँ सूर्य कुण्ड और बिलछू कुण्ड भी हैं। पास में ही कृष्णकी कन्दुक (गेंद) क्रीड़ाका चौगान(स्थल) है। श्रीमती राधिकाजीकी बैठक, जान–अजान वृक्ष, पूजनी

शिला आदि दर्शनीय स्थल हैं। रुद्रकुण्डका नाम ही हरजी कुण्ड है, जो वायु कोणमें स्थित है।

(२८) जतिपुरा—यह श्रीमाधवेन्द्रपुरी यतिकी भजन स्थली है। श्रीनाथजीके प्रकट होनेपर श्रीनाथजी पर्वतके ऊपर विराजमान हुए। माधवेन्द्र यति यहीं जतिपुरामें निवास करते थे। यहींपर उन्होंने श्रीनाथजीका अभिषेक एवं अन्नकूट महोत्सव किया तथा श्रीनाथजीके आदेशसे ही वे अपने शिष्योंको श्रीनाथजीका सेवाभार अर्पणकर मलयज चन्दन और कर्पूर लानेके लिए श्रीपुरीधाम गये। जाते समय रेमुनामें गोपीनाथजीने उनके लिए खीर भोगकी एक कुल्लड़ चोरी कर उन्हें दिलवाई थी, जिससे उनका नाम खीरचोरा गोपीनाथ हुआ था। जगन्नाथ पुरीसे मलयज चन्दन और कर्पूरका भार लेकर लौटते समय यहींपर रातमें गोवर्धनवाले श्रीनाथजीका स्वप्नादेश हुआ कि खीरचोरा गोपीनाथको चन्दन और कर्पूर घिसकर लेपन करनेसे ही मेरे शरीरका ताप दूर हो जायेगा। कहते हैं कि श्रीखीरचोरा गोपीनाथजीको एक माह तक प्रतिदिन चन्दन एवं कर्पूरको घिसकर प्रलेप लगानेसे गोवर्धन श्रीनाथजीका ताप दूर हुआ। किन्तु माधवेन्द्रपुरी यहाँ लौटे या नहीं इसका उल्लेख नहीं पाया जाता। वहीं खीरचोरा गोपीनाथजीके मन्दिरके पास ही इनकी समाधि भी देखी जाती है।

श्रीरूप-सनातन-रघुनाथ आदि षड् गोस्वामियोंका श्रीवल्लभाचार्यजीके पुत्र श्रीविट्ठलाचार्यजीके साथ बहुत सुन्दर सम्बन्ध था। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामीसे इनका प्रीतिपूर्ण सख्य भाव था। श्रीरूप-सनातन गोस्वामी श्रीविट्ठलाचार्यजीको रघुनाथ दासकी भाँति ही अपना छोटा भाई मानते और स्नेह करते। परम निष्किञ्चन श्रीगौड़ीय वैष्णवाचार्यगण हरिनाम सङ्कीर्तनके माध्यमसे राधाकृष्ण युगलकी भाव-सेवा—अष्टकालीय लीला-सेवाके चिन्तनमें विभोर रहते थे। अतः उन्होंने श्रीनाथजीकी सेवाका भार श्रीवल्लाभाचार्यके पुत्रोंको ही सौंप रखा था। हमारे गोस्वामीगण श्रीगिरिराज गोवर्धनको श्रीकृष्णका ही स्वरूप समझते थे। अतः गोवर्धनके ऊपर चढ़कर उनका दर्शन करने नहीं जाते थे। उनकी दर्शन करनेकी विशेष अभिलाषा होनेपर श्रीनाथजी स्वयं ही छल करके कभी—गाँठौली ग्राममें, तो कभी मथुराके सतघड़ामें आकर दर्शन देते। श्रीचैतन्यचरितामृत एवं भक्तिरत्नाकरमें इसका उल्लेख है। श्रीमन् महाप्रभुने भी इनका गाँठौली ग्राममें ही दर्शन किया था, वे पर्वतके ऊपर नहीं चढ़े थे।

(२९) अन्नकूट स्थली—जतिपुरामें श्रीगोवर्धनसे लगे हुए स्थानको अन्नकूट स्थल कहते हैं। यहींपर माधवेन्द्रपुरीजीने एक माह तक लगातार अन्नकूट महोत्सव किया था। अभी भी यहाँ विशेष अवसरोंपर अन्नकूटका भोग महोत्सव होता है तथा प्रतिदिन हजारों यात्री यहाँपर गिरिराजजीका मनों दूधसे अभिषेक करते हैं।

चित्र सं.–22

उद्धव कुण्ड

(३०) बिलछूकुण्ड—इसका नाम विलास-वदन भी है। यह श्रीराधाकृष्णकी विलास स्थली है।

(३१) कदम्ब खण्डी—बिलछूकुण्डसे आगे दान-घाटीको पारकर गोवर्धन ग्राममें प्रवेश होता है। पुनः मानसी गङ्गा और चक्रेश्वरकी परिक्रमा लगती है। मानसी गङ्गाके पश्चिम-उत्तरमें थोड़ी ही दूरपर चन्द्रावली सखीका स्थान सखी-स्थली है। अब इस गाँवका नाम **सखीथरा** हो गया है। यह सखी वनके अन्तर्गत है।

प्रसङ्ग—श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी राधाकुण्डके तटपर भजन करते थे। वे दिन-रातमें केवल एक छोटेसे कदम्ब पत्रके दोनेमें थोड़ी सी छाछ पीते थे तथा दिन रात भजनमें विभोर रहते थे। एक दिन एक ब्रजवासीने उन्हें कदम्ब पत्तेके बड़े दोनेमें भरकर छाछ लाकर दी। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामीने उससे पूछा 'कहाँ' से इतने बड़े दोनेमें छाछ ले आये? ब्रजवासीने उल्लास पूर्वक बतलाया कि यह छाछ सखी स्थलीसे लाया हूँ। उस समय दास गोस्वामी बाह्य ज्ञानसे रहित थे। अतः सखी-स्थलीका नाम सुनते ही झुंझला उठे। उन्होंने बिगड़कर उस ब्रजवासीको दूर हट जानेके लिए कहा। ब्रजवासी उनके भावोंको समझ नहीं सका और हटकर वहाँसे भाग गया। श्रीदास गोस्वामी श्रीराधिकाकी प्रिय स्वपक्षकी सेविका हैं। साधारण व्यक्तिके लिए उनका गंभीरभाव एवं मुद्रा बोधगम्य नहीं है।

(३२) सौंकराई—कृष्णने यहाँ गोपियोंसे बार-बार शपथ लेकर कहा था कि मैं श्रीराधिकाके अतिरिक्त कुछ नहीं जानता हूँ। राधिकाकी स्वपक्ष गोपियोंने उन्हें शपथ दिलाई थी। शपथ लेनेके कारण इसका नाम सौंकराई है। यह स्थान गोवर्धनसे दो मील पश्चिमकी ओर है।

(३३) शकरवा गाँव—इन्द्रने कृष्णके लिए यहाँ सुरभी गायका दान दिया था। इसका वर्तमान नाम शकरवा है। यहाँ शक्र कुण्ड और ग्वाल कुण्ड है। यह स्थान सखीथरासे डेढ़ मील उत्तर-पश्चिम कोणमें है।

(३४) उद्धव कुण्ड—कुसुमसरोवरके ठीक पश्चिममें परिक्रमा मार्गपर दाहिनी ओर उद्धव कुण्ड है। स्कन्दपुराणके श्रीमद्भागवत-माहात्म्य प्रसङ्गमें इसका बड़ा ही रोचक वर्णन है। वज्रनाभ महाराजने शाण्डिल्य आदि ऋषियोंके आनुगत्यमें यहाँ उद्धव कुण्डका प्रकाश किया। उद्धवजी यहाँ पास में ही गोपियोंकी चरणधूलिमें अभिषिक्त होनेके लिए तृण-गुल्मके रूपमें सर्वदा निवास करते हैं। श्रीकृष्णकी लीला अप्रकट होनेपर कृष्णकी द्वारकावाली पटरानियाँ

बड़ी दुःखी थीं। एकबार वज्रनाभजी उनको साथ लेकर यहाँ उपस्थित हुए। बड़े जोरोंसे सङ्कीर्तन आरम्भ हुआ। देखते–देखते उस महासङ्कीर्तनमें कृष्णके सभी परिकर क्रमशः आविर्भूत होने लगे। अर्जुन मृदङ्ग वादन करते हुए नृत्य करने लगे। इस प्रकार द्वारकाके सभी परिकर उस सङ्कीर्तन मण्डलमें नृत्य और कीर्तन करने लगे। हठात् महाभागवत उद्धव भी वहाँके तृण गुल्मसे आविर्भूत होकर नृत्यमें विभोर हो गये। फिर भला कृष्ण ही कैसे रह सकते थे? श्रीमती राधिका आदि सखियोंके साथ वे भी उस महासङ्कीर्तन रासमें आविर्भूत हो गये। थोड़ी देरके बाद ही वे अन्तर्ध्यान हो गये। उद्धवजीने द्वारकाकी महिषियोंको यहींपर सांत्वना दी थी।

यहाँ श्रीगोवर्धनकी परिक्रमा करनेवाले परिक्रमा–मार्गसे श्रीराधाकुण्ड आदिकी परिक्रमा करते हुए आगे बढ़ते हैं। श्रीराधाकुण्ड आदिकी परिक्रमा और दर्शनीय लीलास्थलियोंका वर्णन पहले किया जा चुका है।

श्रीब्रजमण्डल परिक्रमाके यात्री गोवर्धन–परिक्रमा सम्पन्न कर गोवर्धन या जतीपुरासे नीमगाँवकी ओर अग्रसर होते हैं।

नीम गाँव—श्रीकृष्णकी माता, मातामह एवं स्थानीय गोपियोंने यहाँ पर अपने पुत्रों और प्राणोंसे भी अधिक प्रिय कृष्णका निर्मछंनकर उनका मुख चुम्बन किया था। निर्मछंन गाँवका ही अपभ्रंश नीमगाँव है। यह स्थान गोवर्धन बरसाना राजमार्गपर गोवर्धनसे दो मील दूर पश्चिममें है। यह श्रीनिम्बार्काचार्यका भजन स्थान भी है। यहाँ निम्बार्क सम्प्रदायका एक मन्दिर और कुण्ड भी है। यह गौड़ीय वैष्णवोंका भी भजन–स्थल है।

पाटल ग्राम—यह स्थान नीमगाँवसे दो मील उत्तरमें स्थित है। श्रीमती राधिकाजी सखियोंके साथ यहाँ पाटल पुष्प या गुलाबके फूलोंका चयन करती थीं। इसलिए इस ग्रामका नाम पाटल गाँव हुआ। वर्तमान नाम पाडर है।

डेरावली—श्रीनन्दमहाराजने नन्दगाँव जाते समय रास्तेमें छट्टीकरासे आकर यहाँ दूसरा डेरा (पड़ाव) डाला था। इसलिए इस गाँवका नाम डेरावली हो गया।

नवाग्राम—इसका वर्तमान नाम कुञ्जेरा है। यहाँसे राधाकुण्डके कुञ्जोंकी सीमा आरम्भ होती है। कुञ्जोंके कारण इस गाँवका नाम कुञ्जेरा है। राधाकुण्डसे दक्षिण–पश्चिमी कोनेमें यह लीला–स्थली है। यहाँपर गोपियोंने मिलकर कुञ्जर अर्थात् हाथीका आकार धारण किया था और कृष्णने

उसपर आरोहण किया था। कुञ्जर-क्रीड़ाके कारण भी इसका नाम कुञ्जेरा है।

सूर्यकुण्ड (छोटा भरना)—राधाकुण्डसे लगभग चार मीलकी दूरीपर उत्तर दिशामें सूर्यकुण्ड है। श्रीमती राधिका सूर्यपूजाके छलसे सखियोंके साथ यहाँ आकर विशेषकर रविवारके दिन मित्रदेव—सूर्यदेवकी पूजा करती थीं। उधर श्रीकृष्ण भी पुरोहितका वेश धारणकर मधुमङ्गलके साथ यहाँ बड़े रङ्गसे मित्र देवताकी पूजा कराते थे। मित्रके दो अर्थ होते हैं—एक सूर्य देवता और दूसरा प्राणसखा स्वयं कृष्ण। [जटिला इस पूजाको केवल मात्र सूर्यदेवताकी पूजा ही समझती थी। राधाकृष्ण युगलके प्रेमभावोंको समझ नहीं पाती थी]। दिनके तीसरे पहरमें यह लीला सम्पन्न होती थीं। इसके पश्चात श्रीमतीजी अपनी सहेलियों और सास जटिलाके साथ वापस लौट जाती थी। कृष्ण भी मधुमङ्गलके साथ गोवर्धनकी तलहटीमें अपनी सखामण्डलीमें लौट आते थे। कृष्णके सखा दौड़कर कृष्णसे ऐसे मिलते थे मानो कृष्ण क्षणभर पहले ही पासके ही किसी स्थानसे लौटे हों।

श्रीराधाकृष्ण युगलके प्रेमकी रङ्गस्थली होनेके कारण इसे मदनरण-वाटिका भी कहते हैं। यह कुञ्ज सूर्यकुण्डके ऊपर ही स्थित है। यहाँ सूर्यदेवका एक सुन्दर मन्दिर दर्शनीय है। आजकल सूर्यकुण्डको छोटा भरना भी कहते हैं।

यहीं पर कुण्डके पश्चिम तट पर गौड़ीय महात्मा श्रीमधुसूदन बाबाजीकी भजन-स्थली है। वे महान् तत्त्वविद् और रसिक वैष्णव थे। दूर-दूरसे वैष्णवजन उनसे भजन-शिक्षाके लिए आते थे। प्रसिद्ध वैष्णव-सार्वभौम श्रीजगन्नाथदास बाबाजी महाराज उन्हीं महापुरुषके शिष्य थे। श्रीजगन्नाथदास बाबाजीने भी बहुत दिनों तक यहाँ भजन किया था, पीछे ये श्रीनवद्वीपधाम चले गये थे। वहीं श्रीकोलद्वीपमें इनकी भजनकुटी और समाधि है। श्रीसच्चिदानन्द भक्तिविनोद ठाकुर सूर्यकुण्डमें श्रीजगन्नाथदास बाबाजीसे मिले थे। ये सिद्ध बाबाजी ही श्रीलभक्तिविनोद ठाकुरके भागवत-परम्पराके गुरु (शिक्षागुरु) हैं।

क्यों नाई (कोनाई)—यह राधाकृष्ण युगलके मिलनका संकेत-स्थल है। एक समय श्रीकृष्ण यहींपर श्रीमती राधिकाजीकी प्रतीक्षाकर रहे थे। श्रीमती राधिकाकी कुछ सहेलियाँ कृष्णकी राधासे मिलनकी उत्कण्ठाकी परीक्षा करनेके लिए पहले ही उपस्थित हो गईं। राधिकाको कहीं पासमें ही कुञ्जमें छिपा दिया। कृष्णने बड़ी उत्कण्ठासे सखियोंसे पूछा—

कृष्ण—किशोरीजी क्यों ना आईं?

सखियाँ—आज अभिमन्यु घरपर है। जटिला और कुटिला ये दोनों भी आज (कृष्णकी उत्कण्ठा बढ़ाते हुए कहा) बड़ी सावधानीसे चौकसी कर रही हैं, जिससे वे कहीं निकल नहीं पा रही हैं। इसलिए आज आनेकी सम्भावना कम है।

ऐसा सुनकर कृष्णका मुख मलिन हो गया और वे बड़े दुःखी हो गये। उनको इस प्रकार श्रीमतीजीके विरहमें आतुर देखकर सखियाँ बड़ी प्रसन्न हुईं तथा निकटके कुञ्जसे श्रीमती राधिकाको लाकर कृष्णसे मिलन कराया। कृष्णके 'क्यों ना आई?' पूछनेके कारण ही इस स्थलका नाम 'क्योंनाई' हो गया। क्योंनाईका अपभ्रंश कोनाई हुआ, जो इस स्थलका वर्तमान नाम है। यह गाँव श्रीराधाकुण्डसे चार मील उत्तरमें है। यहाँ ग्वालकुण्ड और गोकुण्ड दर्शनीय हैं।

भदावर—वर्तमान नाम भदाहर है। यह आठ यूथेश्वरियोंमेंसे एक भद्रा यूथेश्वरीका निवास–स्थान है। ये श्रीमती राधिकाजीकी तटस्थ और श्रीमती चन्द्रावलीकी सुहृद–पक्षकी सखी हैं।

गाँठोली—यहाँ श्रीराधाकृष्ण युगल होली खेलते हुए सिंहासनपर विराजमान हुए थे तथा रासविलासमें उन्मत्त हुए थे। उस समय ललिताजीने पीछेसे चुपचाप दोनोंके उत्तरियोंकी गाँठ बाँध दी थी। जब दोनों उठने लगे, तब उस गाँठके कारण अलग नहीं हो सके। सखियाँ ऐसा देखकर हँसने लगीं। इस रहस्यमयी लीलाके कारण इस स्थानका नाम गाँठोली पड़ा। गोवर्धन–डीगके राजमार्गपर यह स्थान स्थित है।

कभी–कभी श्रीनाथजी म्लेच्छोंके भयका बहाना दिखलाकर भक्तोंको दर्शन देनेके लिए, इस गाँवमें पधारते थे। जब श्रीचैतन्य महाप्रभु गोवर्धन आये, तब उनको श्रीनाथ गोपालजीके दर्शन करनेकी तीव्र लालसा हुई। उसी समय म्लेच्छोंके आक्रमणके भयसे पुजारियोंने श्रीगोपालजी अर्थात् श्रीनाथजीको तीन दिनों तक गाँठोलीमें विराजमान कराया था। श्रीचैतन्य महाप्रभुजी गोवर्धन पर्वतपर नहीं चढ़ते थे, क्योंकि वे इन्हें श्रीकृष्णका ही स्वरूप मानते थे। इसलिए इनके अनुगत कोई भी गौड़ीय वैष्णव श्रीगोवर्धन पर्वतपर चढ़कर दर्शन नहीं करते। श्रीरूप–सनातन भी उसी प्रकार गोवर्धनके ऊपर नहीं चढ़ते थे। श्रीचैतन्य महाप्रभुको जब पता चला कि गोपालजी गाँठोली गाँवमें पधारे हुए हैं तो तीन दिनोंतक यहाँ रहकर उन्होंने भावमें विभोर होकर

इनकी परिक्रमा, स्तव-स्तुति और इनके सामने नृत्य और सङ्कीर्तन किया था। यहाँ **गुलाल कुण्ड** दर्शनीय है।

गुलालकुण्ड—यह गांठोलीके पास ही राजमार्गपर बाईं ओर स्थित है। बसन्तके समय इस कुण्डके जलमें फाग अर्थात् गुलालका रङ्ग मिला हुआ दीखता है। कहते हैं कि होली खेलनेके उपरान्त श्रीराधाकृष्ण और गोपियोंने इस कुण्डमें स्नानकर अपने अङ्गों और वस्त्रोंका गुलाल धोया था। अतः इसका नाम गुलाल कुण्ड हुआ है।

बेहेज—यह गोवर्धनसे छह मील दूर गोवर्धन-डीग राजमार्गपर स्थित है। श्रीकृष्णके प्रति अपराधी इन्द्र बेहाया (बेशर्म) होकर सुरभीको आगेकर श्रीकृष्णके निकट क्षमा प्रार्थना करनेके लिए आये थे। बेशर्मका अर्थ ही बेहेज है। बेहाया होनेके कारण इस स्थानका नाम बेहेज पड़ा। यहींसे परिक्रमा देवशीर्ष और मुनिशीर्ष होकर आगे बढ़ती है। बेहेजसे पश्चिममें दो मीलकी दूरीपर डीग है। यहाँ सूर्यकुण्ड, रेवती कुण्ड, बिहारीजीका मन्दिर तथा श्रीराधाकान्तजीके दर्शन हैं।

देवशीर्ष स्थान—यह कृष्णके गोचारणका स्थान है। शीर्ष स्थानके (श्रेष्ठ-श्रेष्ठ) देवताओंने यहाँ श्रीकृष्णकी स्तव-स्तुतियाँ की थीं। इसलिए इस स्थानका नाम देवशीर्ष है। यह लठावनसे पांच मील उत्तरकी ओर स्थित है।

मुनिशीर्ष स्थान—देवशीर्षके पश्चिममें यह स्थान स्थित है। इस स्थान पर प्रमुख ऋषि मुनियोंने तपस्याकर कृष्णका दर्शन पाया था। शीर्षका अर्थ प्रमुखसे है। प्रमुख ऋषि-मुनियोंकी आराधना स्थली होनेसे इस स्थानका 'मुनिशीर्ष स्थान' नाम पड़ा है। इसका वर्तमान नाम मुड़शेरस है। यहाँ चन्द्रावली देवीका प्राचीन मन्दिर बहुत ही प्रसिद्ध है।

सूर्यपतन वन—इसका वर्तमान नाम सांवरीखेरा है। यह बेहेजसे तीन मील दूर है। यहाँ सूर्यदेवने भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना की थी। यहाँ सूर्यकुण्ड, गोपाल कुण्ड, गोपाल मन्दिर, बिहारीजीका मन्दिर और ग्वालकुण्ड दर्शनीय स्थान हैं।

दीर्घपुर (डीग)—छट्टीकरासे डेरावली और वहाँसे इस स्थानपर नन्दबाबाका डेरा लगा था अर्थात् यहाँ कुछ दिन रहकर काम्यवन गये थे तथा वहाँ से नन्दगाँव पहुँचे थे। यहाँपर श्रीकृष्णने अपने रूप सौन्दर्य और वेणु माधुर्यसे श्रीमती राधिकाके धैर्य, धर्म एवं लज्जाको भी डिगा दिया था। इसलिए

इसका नाम डीग है। यह त्रेता युगका भी प्रसिद्ध स्थान है। जिस प्रकार शत्रुघ्नजीने मथुरा और भरतजीने भरतपुरको बसाया था, उसी प्रकार लक्ष्मणजीने भी दीर्घपुरको बसाया था। यहाँ लक्ष्मणजीका भी प्रसिद्ध मन्दिर है। यहाँ कृष्णकुण्ड, साक्षीगोपालजीका मन्दिर, रूपसागर आदि दर्शनीय स्थल हैं। यहाँ ब्रजयात्राका पड़ाव है।

परमादना—वर्तमान नाम परमदीरा है। यथार्थमें इसका नाम प्रमोद वन है। यहाँ राधाकृष्ण युगल मिलकर बड़े प्रमुदित हुए थे। इसलिए इस गाँवका नाम परमोदरा पड़ा। गाँवके उत्तर दिशामें कृष्णकुण्ड तथा पूर्वमें चरण कुण्ड है।

सेतुकन्दरा—इसका वर्तमान नाम सेऊ है। दो पर्वतोंके बीचमें बसा हुआ श्रीकृष्णके गोचारणका रमणीय स्थान है। यहाँसे बद्रीनारायण डेढ़ मील उत्तरमें हैं। पर्वतोंके बीचमें स्थित होनेके कारण इसे सेऊ कन्दरा भी कहते हैं।

आदिबद्री—यह आदिबद्रीका स्थान है। एक समय नन्दादि गोप–गोपियोंकी बद्रीनारायण जानेकी अभिलाषा हुई। उनकी हार्दिक अभिलाषा जानकर श्रीकृष्णने उन सबको साथ लेकर इस आदिबद्रीका दर्शन कराया। हिमालयमें स्थित बद्रीविशालका भी यह उद्‌गम स्थान आदिबद्री है। यहाँ बद्रीनारायण नर–नारायण ऋषि–कुबेर, नारदऋषि, उद्धवजी आदिका दर्शन है। [नर–नारायण ऋषिकी तपस्याको भङ्ग करनेके लिए इन्द्रने अप्सराओंको भेजा था। किन्तु नर–नारायण ऋषिने अपनी वाम जंघासे उर्वशीको प्रकटकर यहाँ इन्द्रके दर्पको चूर्ण किया था।] जिस प्रकार बद्रीमें अलकानन्दा और तप्त कुण्ड हैं, उसी प्रकार यहाँपर भी अलकानन्दा और तप्त कुण्ड हैं। किन्तु यहाँ तप्त कुण्डका पानी इस समय ठण्डा है।

आदिबद्रीसे कुछ ऊपरमें पर्वत पर बूढ़े बद्री, गन्धमादन पर्वत, तपोवन आदिका दिव्य दर्शन है। यह स्थान हरी–भरी पर्वत–मालाओंसे घिरा हुआ अत्यन्त मनोरम स्थान है। बहुतसे ऋषि–मुनियों एवं गौड़ीय वैष्णवोंकी भी आराधनाका स्थल है। यहाँका प्राकृतिक दृश्य बद्रीनारायणके सदृश ही है। आदिबद्रीसे पर्वतके नीचे ही मेव जातिके लोगोंका गाँव आलीपुर है।

आलीपुर—यहींसे आदिबद्री–पर्वतके ऊपर चढ़ते हैं। पहले इस गाँवका नाम आदिबद्री ही था, किन्तु मुसलमानोंने इस गाँवका नाम बदलकर आलीपुर रख दिया है। हम पहले ही कह चुके हैं कि

मुसलमानोंने अयोध्याका नाम फैजाबाद, वृन्दावनका फकीराबाद, मथुराका ममीनाबाद, प्रयागका नाम इलाहाबाद बदल दिया था, उसी प्रकार यहाँका नाम भी बदल दिया था।

शाङ्राशिखर—इसे धवल पर्वत भी कहते हैं। धवल अर्थात् सफेद होनेके कारण इसे नवनीत पर्वत भी कहते हैं। पास ही में कदम्ब-खण्डी है। श्रीराधाकृष्ण युगलने यहाँ झूला झूलने आदि विविध प्रकारकी क्रीड़ाएँ की थीं। पास ही नील पर्वत और आनन्दाद्रि(घाटी) है। खोहसे आगे ये सब स्थान हैं। पहाड़में स्थान-स्थानपर किस स्थानसे कौनसा स्थान किधर तथा कितनी दूर है—अंकित है। यह गौड़ीय गोस्वामियोंके अथक परिश्रमका सूचक है। कितने कठोर परिश्रमसे इन स्थानोंकी महिमा प्रकट की गई है, इसका सहज ही अनुमान किया जा सकता है।

इन्द्रौली—देवराज इन्द्रने अपने अपराधको दूर करनेके लिए यहाँ भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना की थी। यह इन्दुलेखाका गाँव है। इन्हीं कारणोंसे इस स्थानका नाम इन्द्रौली या इन्दरोली पड़ा है। यहाँ इन्दुलेखाका कुञ्ज, इन्द्रकुण्ड तथा इन्द्रकूप दर्शनीय हैं।

गोदृष्टिवन—आजकल इस स्थानको गुहाना कहते हैं। यह परमोदरासे एक मीलकी दूरीपर स्थित है। यह श्रीकृष्णके गोचारणका स्थान है। कृष्ण ऊँचे टीलेपर खड़े होकर यहींसे गऊओंको देखते थे कि गऊएँ कहाँ हैं? तथा यहींसे उन्हें श्यामली, धवली, कालिन्दी आदि नामोंसे बंशीके द्वारा पुकारते थे, जिससे वे दौड़कर उनके समीप आ जाती थीं। श्रीकृष्ण अपनी मणिमालापर गऊओंकी संख्या गिनकर भलीभाँति गऊओंकी संख्यासे सन्तुष्ट होकर गऊओंको लेकर गोष्ठमें लौटते थे। यहाँ श्यामकुण्ड और गोपालकुण्ड हैं। यह श्रीकृष्णके सुदाम सखाका जन्मस्थान है।

कनोवारो—यह श्रीकृष्णकी गोचारण स्थली तथा कण्वमुनिकी प्रसिद्ध आराधना-स्थली भी है। इसी कारणसे इस स्थानका नाम कनोवारो हुआ है। पास में ही सुनहराकी कदम्ब खण्डी, पानिहारी-कुण्ड, कृष्ण-कुण्ड आदि दर्शनीय स्थल हैं।

बद्रीनारायणका दर्शनकर कोई-कोई सेऊ घाटी और इन्द्रौली होकर सीधे काम्यवन जाते हैं। इन्द्रौलीसे वायु कोणमें दो मील दूर काम्यवन है। कुछ लोग बद्रीनारायणसे **गोहाना, खोह गाँव, धवल पर्वत** आदि होकर काम्यवन जाते हैं। कुछ लोग **आदिबद्री, आलीपुर, पशप गाँव** होकर पाँच मील उत्तरमें

काम्यवन जाते हैं। कोई–कोई पशप गाँवसे पाँच मील पश्चिममें आदि केदारनाथका दर्शन करते हुए काम्यवन जाते हैं। केदारनाथसे छह मील ईशान कोणमें काम्यवन है। केदारनाथसे ईशानकोणमें दो मीलकी दूरीपर बिलोन्द नामक गाँव है। उससे दो मील दूरीपर ईशानकोणमें चरण–पहाड़ी है। चरण पहाड़ीसे दो मील ईशानकोणमें काम्यवन स्थित है।

श्रीकाम्यवन (कामवन)

ब्रजमण्डलके द्वादशवनोंमें चतुर्थवन काम्यवन है। यह ब्रजमण्डलके सर्वोत्तम वनोंमेंसे एक है। इस वनकी परिक्रमा करनेवाला सौभाग्यवान् व्यक्ति ब्रजधाममें पूजनीय होता है।[१]

हे महाराज! तदनन्तर काम्यवन है, जहाँ आपने (श्रीब्रजेन्द्रनन्दन कृष्णने) बहुत सी बालक्रीड़ाएँ की थीं। इस वनके कामादि सरोवरोंमें स्नान करने मात्रसे सब प्रकारकी कामनाएँ यहाँ तक कि कृष्णकी प्रेममयी सेवाकी कामना भी पूर्ण हो जाती है।[२]

यथार्थमें श्रीकृष्णके प्रति गोपियोंका प्रेम ही 'काम' शब्द वाच्य है। 'प्रेमैव गोपरामाणां काम इत्यागमत प्रथाम्', अर्थात् गोपिकाओंका निर्मल प्रेम जो केवल श्रीकृष्णको सुख देनेवाला होता है, जिसमें लौकिक कामकी कोई गन्ध नहीं होती, उसीको शास्त्रोंमें काम कहा गया है। सांसारिक काम वासनाओंसे गोपियोंका यह शुद्ध काम सर्वथा भिन्न है। सब प्रकारकी लौकिक कामनाओंसे रहित केवल प्रेमास्पद कृष्णको सुखी करना ही गोपियोंके कामका एकमात्र तात्पर्य है। इसीलिए गोपियोंके विशुद्ध प्रेमको ही श्रीमद्भागवतादि शास्त्रोंमें कामकी संज्ञा दी गई है। जिस कृष्णलीला-स्थलीमें श्रीराधाकृष्ण युगलके ऐसे अप्राकृत प्रेमकी अभिव्यक्ति हुई है, उसका नाम कामवन है। जिस वनमें सब प्रकारकी लौकिक कामनाओंकी सिद्धि की तो बात ही क्या? गोपियोंके विशुद्ध प्रेमस्वरूप शुद्धकामकी भी सहज ही सिद्धि होती है, उसे कामवन कहा गया है।

'काम्य' शब्दका अर्थ अत्यन्त सुन्दर, सुशोभित या रुचिर भी होता है। ब्रजमण्डलका यह वन विविध-प्रकारके सुरम्य सरोवरों, कूपों, कुण्डों, वृक्ष-वल्लरियों, फूल और फलोंसे तथा विविध प्रकारके विहङ्गमोंसे अतिशय सुशोभित श्रीकृष्णकी परम रमणीय विहार स्थली है। इसलिए इसे काम्यवन कहा गया है।

---

(१) चतुर्थ काम्यकवनं वनानां वनमुत्तमं ।
तत्र गत्वा नरो देवि! मम लोके महीयते ।।

(आ.व.पु.)

(२) ततः काम्यवनं राजन! यत्र बाल्ये स्थितो भवान् ।
स्नानमात्रेण सर्वेषां सर्वकामफलप्रदम ।।

(स्क.पु)

विष्णु पुराणके अनुसार काम्यवनमें चौरासी कुण्ड (तीर्थ), चौरासी मन्दिर तथा चौरासी खम्बे वर्तमान हैं। कहते हैं कि इन सबकी प्रतिष्ठा किसी प्रसिद्ध राजा श्रीकामसेनके द्वारा की गई थी। ऐसी भी मान्यता है कि देवता और असुरोंने मिलकर यहाँ एक सौ अड़सठ (१६८) खम्बोंका निर्माण किया था।

यहाँ छोटे-बड़े असंख्य कुण्ड और तीर्थ हैं। इस वनकी परिक्रमा चौदह मीलकी है। विमलकुण्ड यहाँका प्रसिद्ध तीर्थ या कुण्ड है। सर्वप्रथम इस विमलकुण्डमें स्नानकर श्रीकाम्यवनकी परिक्रमा अथवा काम्यवनकी दर्शनीय स्थलियोंका दर्शन प्रारम्भ होता है। विमलकुण्डमें स्नानके पश्चात् गोपिका कुण्ड, सुवर्णपुर, गयाकुण्ड एवं धर्मकुण्डके दर्शन हैं। धर्मकुण्डपर धर्मराजजीका सिंहासन दर्शनीय है। आगे यज्ञकुण्ड, पाण्डवोंके पञ्चतीर्थ सरोवर, परम मोक्षकुण्ड, मणिकर्णिका कुण्ड हैं। पासमें ही निवासकुण्ड तथा यशोदा कुण्ड हैं। कुछ आगे मनोकामना कुण्ड, गोपिकारमणकुण्ड, सेतुबन्ध रामेश्वरकुण्ड, ध्यानकुण्ड, तप्तकुण्ड, जलविहारकुण्ड, जलक्रीड़ाकुण्ड, रङ्गीलाकुण्ड, छबीलाकुण्ड, जकीलाकुण्ड, मतीलाकुण्ड, दतीलाकुण्ड, पञ्चकुण्ड, घोषरानीकुण्ड, विह्वलकुण्ड, श्यामकुण्ड, गोमतीकुण्ड, द्वारकाकुण्ड, मानकुण्ड, ललिताकुण्ड, विशाखाकुण्ड, दोहनीकुण्ड, मोहिनीकुण्ड, बलभद्रकुण्ड, चतुर्भुजकुण्ड, सुरभीकुण्ड, वत्सकुण्ड, लुकलुकीकुण्ड, गोविन्दकुण्ड, नेत्रमीचनकुण्ड, फिसलनी शिला, व्योमासुर गुफा, भोजनथाली, सुमना सखीका विवाह स्थल, ललिता ग्रन्थिदत्तस्थान, तदनन्तर विष्णु चिह्नपाद-पर्वत, गरुड़ तीर्थ, कपिल तीर्थ, लोहजंघऋषि-स्थान, होड़ स्थान, इसीके उत्तरमें इन्दुलेखा देवी स्थल, पासमें ही पर्वतके ऊपर बलराम स्थल, बलरामके हलकी रेखा, उसीके उत्तर भागमें कृष्णकूप, उसीके पास दूसरा सङ्कर्षण कुण्ड, अनन्तर लोकेश्वर नामक गुह्य तीर्थ, वराहकुण्ड, सतीकुण्ड, चन्द्रसखी पुष्करिणी, उसके ऊपर चन्द्रशेखर शिवमूर्ति तथा शृंगारतीर्थ हैं। अनन्तर पर्वतके दक्षिणमें प्रभालल्ली नामक बावड़ी है। उसके पश्चिम भागमें भारद्वाज ऋषिकूप है। उसके उत्तरमें सङ्कर्षण कुण्ड है, उसके पूर्व भागमें कृष्णकूप है। ये तीनोंकूप पर्वतके निकटमें हैं। पर्वतके शिखरपर भद्रेश्वर शिवमूर्ति है। अनन्तर अलक्ष गरुड़ मूर्ति है। पास में ही पिप्पलाद ऋषिका आश्रम है। अनन्तर दिहुहली, राधापुष्करिणी और उसके पूर्व भागमें ललिता पुष्करिणी, उसके उत्तरमें विशाखा पुष्करिणी, उसके पश्चिममें चन्द्रावली पुष्करिणी तथा उसके दक्षिण भागमें

चन्द्रभागा पुष्करिणी है, पूर्व-दक्षिणके मध्य स्थलमें लीलावती पुष्करिणी है। पश्चिम-उत्तरमें प्रभावती पुष्करिणी, मध्यमें राधा पुष्करिणी है। इन पुष्करिणियोंमें चौंसठ सखियोंकी पुष्करिणी हैं। आगे कुशस्थली है। वहाँ शंखचूड़ बधस्थल तथा कामेश्वर महादेवजी दर्शनीय हैं, वहाँसे उत्तरमें चन्द्रशेखर मूर्ति विमलेश्वर तथा वराह स्वरूपका दर्शन है। वहीं द्रोपदीके साथ पञ्च पाण्डवोंका दर्शन, आगे वृन्दादेवीके साथ गोविन्दजीका दर्शन, श्रीराधावल्लभ, श्रीगोपीनाथ, नवनीत राय, गोकुलेश्वर और श्रीरामचन्द्रके स्वरूपोंका दर्शन है। इनके अतिरिक्त चरणपहाड़ी श्रीराधागोपीनाथ, श्रीराधामोहन (गोपालजी), चौरासी खम्बा आदि दर्शनीय स्थल हैं।

इनमेंसे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लीलास्थलियोंका नीचे वर्णन दिया जा रहा है—

विमल कुण्ड—कामवन ग्रामसे दो फर्लांग दूर दक्षिण-पश्चिम कोणमें प्रसिद्ध विमलकुण्ड स्थित है। कुण्डके चारों ओर क्रमशः (१) दाऊजी, (२) सूर्यदेव, (३) श्रीनीलकंठेश्वर महादेव, (४) श्रीगोवर्धननाथ, (५) श्रीमदन मोहन एवं काम्यवन विहारी, (६) श्रीविमल विहारी, (७) विमला देवी, (८) श्रीमुरलीमनोहर, (९) भगवती गङ्गा और (१०) श्रीगोपालजी विराजमान हैं।

प्रसंग—गर्ग संहिताके अनुसार प्राचीनकालमें सिन्धु देशकी चम्पकनगरीमें विमल नामके एक प्रतापी राजा थे। उनकी छह हजार रानियोंमेंसे किसीको कोई सन्तान नहीं थी। श्रीयाज्ञवल्क्य ऋषिकी कृपासे उन रानियोंके गर्भसे बहुतसी सुन्दर कन्याओंने जन्म ग्रहण किया। वे सभी कन्याएँ पूर्व जन्ममें जनकपुरकी वे स्त्रियाँ थीं जो श्रीरामचन्द्रजीको पति रूपसे प्राप्त करनेकी इच्छा रखती थीं। राजा विमलके घर जन्म ग्रहण करनेपर जब वे विवाहके योग्य हुईं, तब महर्षि याज्ञवल्क्यकी सम्मतिसे राजा विमलने अपनी कन्याओंके लिए सुयोग्य वर श्रीकृष्णको ढूंढ़नेके लिए अपना दूत मथुरापुरीमें भेजा। सौभाग्यसे मार्गमें उस दूतकी भेंट श्रीभीष्मपितामहसे हुई। श्रीभीष्मपितामहने उस दूतको श्रीकृष्णका दर्शन करनेके लिए श्रीवृन्दावन भेजा। श्रीकृष्ण उस समय वृन्दावनमें विराजमान थे। राजदूतने वृन्दावन पहुँचकर श्रीकृष्णको राजा विमलका निमंत्रण-पत्र दिया, जिसमें श्रीकृष्णको चम्पक नगरीमें आकर राजकन्याओंका पाणिग्रहण करनेकी प्रार्थना की गई थी। श्रीकृष्ण, महाराज विमलका निमंत्रण पाकर चम्पक नगरी पहुँचे और राजकन्याओंको अपने साथ ब्रजमण्डलके इस कमनीय कामवनमें ले आये। उन्होंने उन कन्याओंकी संख्याके अनुरूप रूप धारणकर उन्हें अङ्गीकार किया। उनके साथ रास

आदि विविध प्रकारकी क्रीड़ाएँ कीं। उन कुमारियोंकी चिरकालीन अभिलाषा पूर्ण हुई। उनके आनन्दाश्रुसे प्रपूरित यह कुण्ड विमलकुण्डके नामसे प्रसिद्ध हुआ। इस विमल कुण्डमें स्नान करनेसे लौकिक, अलौकिक एवं अप्राकृत सभी प्रकारकी कामनाएँ पूर्ण होती हैं। हृदय निर्मल होता है तथा उसमें ब्रजभक्तिका संचार होता है।

द्वितीय प्रसङ्ग—जनश्रुतिके अनुसार चातुर्मास्य कालमें विश्वके सारे तीर्थ ब्रजमें आगमन करते हैं। एकबार चातुर्मास्य कालमें तीर्थराज पुष्कर ब्रजमें नहीं आये। श्रीकृष्णने योगमायाका स्मरण किया। स्मरण करते ही पृथ्वीतलसे एक जलका प्रबल प्रवाह निकला। आश्चर्यकी बात उस पवित्र जलके प्रवाहसे सब प्रकारके मलोंसे रहित परम सुन्दर एक किशोरी प्रकट हुई। श्रीकृष्णने उस सुन्दरीके साथ जल–प्रवाहमें विविध प्रकारसे जलविहार किया। उस किशोरीने अपनी विशुद्ध प्रेममयी सेवाओं और सौन्दर्यसे परम रसिक श्रीकृष्णको परितृप्त कर दिया। श्रीकृष्णने परितृप्त होकर उस किशोरीको वरदान दिया कि आजसे तुम विमला देवीके नामसे विख्यात होओगी। यह कुण्ड तुम्हारे नामसे प्रसिद्ध होगा। इसमें स्नान करनेसे तीर्थराज पुष्करमें स्नान करनेकी अपेक्षा सातगुणा अधिक पुण्यफल प्राप्त होगा। तबसे यह कुण्ड विमलाकुण्डके नामसे विख्यात हुआ।

इस कुण्डके किनारे श्रीकृष्णकी भक्ति प्राप्त करनेके लिए बड़े–बड़े ऋषि–महर्षियोंने वास किया है। महर्षि दुर्वासा और पाण्डवोंका निवास यहाँ प्रसिद्ध ही है। प्रत्येक ब्रजमण्डल परिक्रमा–मण्डली अथवा परिक्रमा करनेवाले यात्री यहाँ निवास करते हैं तथा यहींसे काम्यवनकी परिक्रमा आरम्भ करते हैं।

श्रीवृन्दादेवी और श्रीगोविन्द देव—यह काम्यवनका सर्वाधिक प्रसिद्ध मन्दिर है। यहाँ वृन्दादेवीका विशेष रूपसे दर्शन है, जो ब्रजमण्डलमें कहीं अन्यत्र दुर्लभ है। श्रीश्रीराधा–गोविन्ददेव भी यहाँ विराजमान हैं। पासमें ही श्रीविष्णु सिंहासन अर्थात् श्रीकृष्णका सिंहासन है। उसके निकट ही चरणकुण्ड है, जहाँ श्रीराधा और गोविन्द युगलके श्रीचरणकमल पखारे गये थे।

श्रीरूप–सनातन आदि गोस्वामियोंके अप्रकट होनेके पश्चात् धर्मान्ध मुगल सम्राट औरंगजेबके अत्याचारोंसे जिस समय ब्रजमें वृन्दावन, मथुरा आदिके प्रसिद्ध मन्दिर ध्वंस किये जा रहे थे, उस समय जयपुरके परम भक्त महाराजा

ब्रजके श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ, श्रीमदनमोहन, श्रीराधादामोदर, श्रीराधमाधव आदि प्रसिद्ध विग्रहोंको अपने साथ लेकर जब जयपुर आ रहे थे, तो उन्होंने मार्गमें इस काम्यवनमें कुछ दिनोंतक विश्राम किया। श्रीविग्रहोंको रथोंसे यहाँ विभिन्न स्थानोंमें पधराकर उनका विधिवत् स्नान, भोगराग और शयनादि सम्पन्न करवाया था। तत्पश्चात् वे जयपुर और अन्य स्थानोंमें पधराये गये। तदनन्तर काम्यवनमें जहाँ-जहाँ श्रीराधागोविन्द, श्रीराधागोपीनाथ और श्रीराधामदनमोहन पधराये गये थे, उन-उन स्थानोंपर विशाल मन्दिरोंका निर्माण कराकर उनमें उन-उन मूल श्रीविग्रहोंकी प्रतिभू-विग्रहोंकी प्रतिष्ठा की गई।

श्रीवृन्दादेवी काम्यवन तक तो आईं, किन्तु वे ब्रजको छोड़कर आगे नहीं गई। इसीलिए यहाँ श्रीवृन्दादेवीका पृथक् रूप दर्शन है।

चित्र सं.-23

श्रीराधागोविन्दजी (जयपुर)

श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके श्रीरूप सनातन गोस्वामी आदि परिकरोंने ब्रजमण्डलकी लुप्त लीलास्थलियोंको प्रकाश किया है। इनके ब्रजमें आनेसे पूर्व काम्यवनको वृन्दावन माना जाता था। किन्तु, श्रीचैतन्य महाप्रभुने ही मथुराके सन्निकट श्रीधाम वृन्दावनको प्रकाशित किया। क्योंकि काम्यवनमें यमुनाजी, चीरघाट, निधुवन, कालीयदह, केशीघाट, सेवाकुञ्ज, रास स्थली वंशीवट, श्रीगोपेश्वर महादेवकी स्थिति असम्भव है। इसलिए विमलकुण्ड, कामेश्वर महादेव, चरण पहाड़ी, सेतुबांध रामेश्वर आदि लीला स्थलियाँ जहाँ विराजमान हैं, वह अवश्य ही वृन्दावनसे पृथक् काम्यवन है। वृन्दादेवीका स्थान वृन्दावनमें ही है। वे वृन्दावनके कुञ्जोंकी तथा उन कुञ्जोंमें श्रीराधाकृष्ण युगलकी क्रीड़ाओंकी अधिष्ठात्री देवी हैं। अतः अब वे श्रीधाम वृन्दावनके श्रीरूप सनातन गौड़ीय मठमें विराजमान हैं। यहाँ उनकी बड़ी ही दिव्य झाँकी है।

श्रीगोविन्द मन्दिरके निकट ही गरुड़जी, चन्द्रभाषा कुण्ड, चन्द्रेश्वर महादेवजी, वाराहकुण्ड, वाराहकूप, यज्ञकुण्ड और धर्मकुण्डादि दर्शनीय हैं।

धर्मकुण्ड—यह कुण्ड काम्यवनकी पूर्व दिशामें है। यहाँ श्रीनारायण धर्मके रूपमें विराजमान हैं। पासमें ही विशाखा नामक वेदी है। श्रवणा नक्षत्र, बुधवार, भाद्रपद कृष्णाष्टमीमें यहाँ स्नानकी विशेष विधि है। धर्मकुण्डके अन्तर्गत नर–नारायण कुण्ड, नील वराह, पञ्च पाण्डव, हनुमानजी, पञ्च पाण्डव कुण्ड (पञ्च तीर्थ) मणिकर्णिका, विश्वेश्वर महादेवादि दर्शनीय हैं।

प्रसङ्ग—पाँचों पाण्डवोंने अपने वनवासके समय इस रमणीय काम्यवनमें बहुत दिनोंतक वास किया था। यहाँ निवास करते समय एक दिन महारानी द्रौपदी तथा पाण्डवोंको प्यास लगी। गर्मीके दिन थे, आस पासके सरोवर और जल–स्रोत सूख गये थे। दूर–दूर तक कहीं भी जल उपलब्ध नहीं था। महाराज युधिष्ठिरने अपने परम पराक्रमी भ्राता भीमसेनको एक पात्र देकर निर्मल जल लानेके लिए भेजा। बुद्धिमान भीम पक्षियोंके गमनागमनको लक्ष्यकर कुछ आगे बढ़े। कुछ दूर अग्रसर होनेपर उन्होंने निर्मल और सुगन्धित जलसे भरे हुए एक सुन्दर सरोवरको देखा। वे बड़े प्यासे थे। उन्होंने सोचा पहले स्वयं जलपानकर पीछे भाईयोंके लिए जल भरकर ले जाऊँगा। ऐसा सोचकर ज्यों ही वे सरोवरमें उतरे, त्यों ही एक यक्ष उनके सामने प्रकट हुआ और बोला—"पहले मेरे प्रश्नोंका उत्तर दो तत्पश्चात्

जल पीनेकी धृष्टता करना, अन्यथा मारे जाओगे"। महापराक्रमी भीमसेनने यक्षके आदेशकी उपेक्षाकर जलपान करनेके लिए ज्योंही अञ्जलिमें जल उठाया, तत्क्षणात् वे वहींपर मूर्छित होकर गिर पड़े।

इधर भाईयोंके साथ महाराज युधिष्ठिरने भीमसेनके आनेमें विलम्ब देखकर क्रमशः अर्जुन, नकुल और सहदेवको पानी लानेके लिए आदेश दिया। किन्तु, उस सरोवरपर पहुँचकर सबकी वही गति हुई, जो भीमकी हुई थी। क्योंकि उन्होंने भी यक्षके आदेशकी परवाह किये बिना जलपान करना चाहा था। अन्तमें महाराज युधिष्ठिर भी वहीं पहुँचे। वहाँ पहुँचकर अपने भाईयोंको मूर्छित पड़े हुए देखा। वे बड़े चिन्तित हुए। उन्होंने सोचा पहले जलपान कर लूँ और फिर भाईयोंको सचेत करनेकी चेष्टा करूँगा। ऐसा सोचकर वे ज्योंही पानी पीनेके लिए सरोवरमें उतरे, त्योंही उस यक्षने पहलेकी भाँति प्रकट होकर उसके प्रश्नोंका सदुत्तर देकर जलपान करनेके लिए कहा। महाराज युधिष्ठिरने धैर्य धारणकर यक्षसे प्रश्न करनेका अनुरोध किया।

यक्षने पूछा—सूर्यको कौन उदित करता है?

युधिष्ठिर—ब्रह्म सूर्यको उदित करता है।

यक्ष—पृथ्वीसे भारी क्या है? आकाशसे भी ऊँचा क्या है? वायुसे भी तेज चलने वाला क्या है? और तिनकोंसे भी अधिक संख्यामें क्या है?

युधिष्ठिर—माता भूमिसे भी भारी है। पिता आकाशसे भी ऊँचा है। मन वायुसे भी तेज चलनेवाला है। चिन्ता तिनकोंसे भी अधिक संख्यामें है।

यक्ष—लोकमें सर्वश्रेष्ठ धर्म क्या है? उत्तम क्षमा क्या है?

युधिष्ठिर—लोकमें श्रेष्ठ धर्म दया है। सुख-दुःख, लाभ-हानि, जीवन-मरण आदि द्वन्द्वोंको सहना ही क्षमा है।

यक्ष—मनुष्योंका दुर्जेय शत्रु कौन है? अनन्त व्याधि क्या है? साधु कौन है? असाधु कौन है?

युधिष्ठिर—मनुष्योंका क्रोध ही दुर्जेय शत्रु है? लोभ अनन्त व्याधि है। समस्त प्राणियोंका हित करने वाला साधु है। अजितेन्द्रिय निर्दय पुरुष ही असाधु है।

यक्ष—सुखी कौन है? सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है? मार्ग क्या है? वार्ता क्या है?

युधिष्ठिर—जिसपर कोई ऋण न हो और जो परदेशमें नहीं है, किसी प्रकार साग-पात पकाकर खा ले, वही सुखी है। रोज-रोज प्राणी यमराजके

घर जा रहे हैं, किन्तु जो बचे हुए हैं, वे सर्वदा जीवित रहनेकी इच्छा करते हैं। इससे बढ़कर और क्या आश्चर्य हो सकता है। तर्ककी स्थिति नहीं है। श्रुतियाँ भी भिन्न-भिन्न हैं। कोई एक ऐसा ऋषि नहीं, जिसका मत भिन्न न हो, अतः धर्मका तत्त्व अत्यन्त गूढ़ है। इसलिए महापुरुष जिस मार्गपर चलते हैं, वही मार्ग है। इस माया-मोह रूप कड़ाहमें काल समस्त प्राणियोंको माह और ऋतु-रूप कलछीसे उलट-पलट कर सूर्यरूप अग्नि और दिन-रात रूप ईंधनके द्वारा पका रहे हैं, यही वार्ता है।

यक्ष—राजन! तुमने हमारे प्रश्नोंका ठीक-ठीक उत्तर दिया है। इसलिए अपने भाईयोंमेंसे जिस किसी एकको तुम कहो वही जीवित हो सकता है।

युधिष्ठिर—हमारे इन भाईयोंमेंसे महाबाहु श्यामवर्णवाले नकुल जीवित हो जाएँ।

यक्ष—राजन्! जिसमें दस हजार हाथियोंके समान बल है, उस भीमको तथा अद्वितीय धनुर्धर अर्जुनको भी छोड़कर तुम्हें नकुलको जीवित करानेकी इच्छा क्यों है?

युधिष्ठिर—मैं धर्मका त्याग नहीं कर सकता। मेरा ऐसा विचार है कि सबके प्रति समान भाव रखना ही परम धर्म है। मेरे पिताकी कुन्ती और माद्री दो पत्नियाँ थीं। वे दोनों ही पुत्रवती बनी रहें—ऐसा मेरा विचार है। मेरे लिए जैसी कुन्ती हैं, वैसी माद्री भी हैं। दोनोंके प्रति समान भाव रखना चाहता हूँ, इसलिए नकुल ही जीवित हो उठें।

यक्ष—भक्त श्रेष्ठ! तुमने अर्थ और कालसे भी धर्मका विशेष आदर किया। इसलिए तुम्हारे सभी भाई जीवित हों।

यह यक्ष और कोई नहीं स्वयं धर्मराज (श्रीनारायण) थे। वे अपने पुत्र युधिष्ठिरके धर्मकी परीक्षा लेना चाहते थे, जिसमें महाराज युधिष्ठिर उत्तीर्ण हुए।

दूसरा प्रसङ्ग—जब पाण्डव द्रौपदीके साथ वनवासका समय यहाँ काट रहे थे, एक समय महारानी द्रौपदी अकेली विमल कुण्डमें स्नान करने गई थीं। पाण्डव लोग अपने निवास स्थानपर निश्चिन्त होकर भगवद् कथामें निमग्न थे। इधर दुर्योधनका बहनोई जो पाण्डवोंका भी बहनोई लगता था, द्रौपदीपर आसक्त था। वह पाण्डवोंका अपमान करनेके लिए इस अवसरकी प्रतीक्षामें था कि द्रौपदी कहीं मुझे अकेली मिल जाए तो सहज ही उसका

अपहरण कर लूँ। होनहारवश आज उसे द्रौपदी अपने निवास स्थानसे दूर विमल कुण्डपर स्नान करती हुई मिल गई। जयद्रथने द्रौपदीके निकट साम, दाम, दण्ड, भेदका अवलम्बन कर उसे अपने साथ अपने राज्यमें ले जानेकी चेष्टा की। किन्तु, पतिव्रता शिरोमणिने दृढ़तासे उसके विचारोंको अस्वीकार कर दिया, जिससे क्रोधित होकर जयद्रथने उसे बलपूर्वक खींचकर अपने रथमें बैठा लिया तथा बड़े वेगसे घोड़ोंको हाँकने लगा।

द्रौपदी जोर-जोरसे अर्जुन, भीम और कृष्णको अपनी रक्षाके लिए पुकारने लगी। किसी प्रकारसे उसकी चीख अर्जुन और भीमके कानोंमें पड़ी, वे दोनों महाबली तुरन्त बड़े वेग पूर्वक दौड़े। महारथी अर्जुनने अपने अग्नि बाणसे जयद्रथका रथ रोक दिया। जयद्रथ रथसे कूदकर प्राणोंको बचानेके लिए भागा। किन्तु, भीमने उससे भी अधिक वेगसे दौड़कर उसे पकड़ लिया। दोनों भाईयोंने जयद्रथको पकड़कर द्रौपदीके सामने प्रस्तुत किया। फिर तीनों महाराज युधिष्ठिरके पास आये। भीमने क्रोधित होकर कहा—"इस आततायीको अभी तुरन्त मार डालना चाहिए।" अर्जुनने भी भीमके प्रस्तावका समर्थन किया। किन्तु धर्मराज युधिष्ठिरने दोनों भाईयोंको शान्त करते हुए कहा—"इस नीचने द्रौपदीके चरणोंमें अपराध किया है। इसलिए द्रौपदीसे पूछकर ही इसे उचित दण्ड देना चाहिए।" द्रौपदीने गम्भीर होकर कहा—"जैसा भी हो इसने भयंकर अपराध तो किया है, किन्तु यह आप लोगोंकी बहनका पति है। मैं अपनी ननदको विधवा होकर सारा जीवन रोते हुए नहीं देखना चाहती। इसे छोड़ देना ही उचित है।" किन्तु भीम उसे मार ही डालना चाहते थे। अन्तमें यह निश्चित हुआ कि किसी सम्मानीय व्यक्तिका अपमान करना भी मृत्युके समान है। इसलिए इसका सिर मुण्डन कर दिया जाये और पाँच चोटियाँ रख दी जाएँ; उसी प्रकार ही मूँछ मुड़ाकर दाढ़ी रख दी जाये और उसे छोड़ दिया जाये। अन्तमें अर्जुनने वैसे ही मुण्डनकर एवं मूँछ काटकर—अपमानित कर उसे छोड़ दिया। जयद्रथ घोर अपमानित होकर चला गया और पाण्डवोंका वध करनेके लिए घोर तपस्या करने लगा। किन्तु अन्तमें महाभारतके युद्धमें श्रीकृष्णके परामर्शसे अर्जुनके हाथों वह मारा गया।

तीसरा प्रसङ्ग—पाण्डव लोग द्रोपदीके साथ वनवासके समय यहीं निवास कर रहे थे। उधर दुष्ट दुर्योधन पाण्डवोंको समूल नष्टकर देनेके लिए सदा चिन्तित रहता था। उसने महर्षि दुर्वासाजीको निमंत्रित कर बड़े ही

सम्मान और आदरके साथ परमस्वादिष्ट षडरस भोजन कराकर उन्हें तृप्त किया। उसकी सेवासे सन्तुष्ट होकर दुर्वासाजीने उसे कोई भी वर माँगनेके लिए कहा। उसने हाथ जोड़कर महर्षिसे यह वरदान माँगा कि "महाराज युधिष्ठिर मेरे बड़े भईया हैं। आप कृपाकर अपने साठ हजार शिष्योंके साथ उनके निवास स्थानपर आतिथ्य ग्रहण करें। किन्तु आपलोग दोपहरके पश्चात् तृतीय प्रहरमें ही उनका आतिथ्य ग्रहण करें। आजकल पाण्डव लोग काम्यवनमें निवासकर रहे हैं।"

दुर्योधन यह भलीभाँति जानता था कि पाण्डवलोग अतिथियोंकी भलीभाँति सेवा करते हैं। द्रौपदीके पास सूर्यदेवकी दी हुई एक ऐसी बटलोई है, जिसमें अन्न पाक करनेपर अगणित व्यक्तियोंको तृप्तिपूर्वक भोजन कराया जा सकता है, किन्तु द्रौपदीके भोजन कर लेनेपर उसे माँजकर रख देनेके पश्चात् उससे कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता है। द्रौपदी अतिथियों और पाँचों पाण्डवोंको खिला पिलाकर तृतीय प्रहरसे पूर्व अवश्य ही उस बटलोईको माँजकर रख देती है। अतः तृतीय प्रहरके बाद दुर्वासाजीके पहुँचनेपर उस समय पाण्डव लोग साठ हजार शिष्यों सहित दुर्वासाजीको भोजन नहीं करा सकेंगे। फलतः महाक्रोधी दुर्वासा ऋषि पाण्डवोंको अपने अभिशापसे भस्मकर देंगे।

महर्षि दुर्वासा तो कृष्णभक्त पाण्डवोंकी महिमाको भलीभाँति जानते हैं। परन्तु उनकी अटपटी चेष्टाओंको समझ पाना देवताओंके लिए भी बड़ा ही कठिन है। कब, किसलिए वे क्या करते हैं, यह वे ही जानते हैं। अतः वे साठ हजार ऋषियोंको साथ लेकर तृतीय प्रहरमें पाण्डवोंके निवासस्थल काम्यवनमें पहुँचे। उन्हें देखकर पाण्डवगण बड़े प्रसन्न हुए। महाराज युधिष्ठिरने उनकी पूजाकर उनसे आतिथ्य ग्रहण करनेके लिए प्रार्थना की। महर्षिने कहा—हम लोग अभी विमलकुण्डमें स्नान करनेके लिए जा रहे हैं। स्नानादिसे निवृत्त होकर तुरन्त आ रहे हैं। भोजनकी व्यवस्था ठीक रखना। हम यहींपर भोजन करेंगे। ऐसा कहकर वे सारे ऋषि–शिष्योंको लेकर स्नान करने चले गये।

इधर पाण्डव लोग बड़े चिन्तित हुए। भोजनकी क्या व्यवस्था हो? उन्होंने द्रौपदीको बुलाया और उससे साठ हजार ऋषियोंके भोजनकी व्यवस्था करनेके लिए कहा। परन्तु उसकी बटलोई माँजी हुई औंधी पड़ी हुई थी। वह सोच रही थी कि क्या करूँ? उसे पाण्डवोंको बचानेके लिए कोई

भी उपाय सूझ नहीं रहा था। अन्तमें अपने प्रियसखा श्रीकृष्णको बड़े आर्त स्वरसे पुकारने लगी। उसकी पुकार सुनकर द्वारकानाथ भला कैसे रुक सकते थे? तुरन्त द्रौपदीके सामने प्रकट हो गये और बोले—सखि! मुझे बड़ी भूख लगी है। मुझे कुछ खिलाओ। द्रौपदीने उत्तर दिया—तुम्हें भूख लगी हुई है, इधर घरमें कुछ भी नहीं है। मेरी बटलोई भी मँजी हुई औंधी पड़ी हुई है। परमक्रोधी महर्षि दुर्वासा अपने साठ हजार शिष्योंके साथ अभी तुरन्त भोजन करनेके लिए पधारने वाले हैं। भोजन नहीं मिलनेपर पाण्डवोंका सर्वनाश अनिवार्य है। अतः पहले इसकी व्यवस्था कीजिये। श्रीकृष्णने कहा—बिना कुछ खाये-पीये मैं कुछ भी नहीं कर सकता। जरा अपनी बटलोई लाना तो।

द्रौपदीने करुण स्वरसे कहा—बटलोईमें कुछ भी नहीं है। मैंने उसे भलीभाँति माँजकर रख दिया है।

श्रीकृष्ण—फिर भी लाओ तो देखूँ।

द्रौपदीने बटलोईको लाकर कृष्णके हाथोंमें दे दिया। श्रीकृष्ण बहुत प्रसन्न हुए। उस बटलोईके भीतर कहीं एक छोटा सा सागका टुकड़ा चिपका हुआ था। श्रीकृष्णने उसे अपने नाखूनसे कुरेदकर अपने मुखमें डाल लिया। फिर द्रौपदीके हाथोंसे पेट भरकर पानी पीया। तत्पश्चात् तृप्तो ऽस्मि! तृप्तोऽस्मि! कहकर अपने पेटपर हाथ फेरने लगे। श्रीकृष्णको तृप्तिकी डकार भी आने लगी। उन्होंने भीमसेनको ऋषियोंको शीघ्र ही बुला लानेके लिए भेजा। महापराक्रमी भीम अपने हाथमें गदा लेकर ऋषियोंको बुलाने विमलकुण्डकी ओर गये।

महर्षि दुर्वासा और उनके शिष्य विमलकुण्डमें स्नान कर रहे थे। अचानक इनका पेट पूर्णरूपसे भर गया। सबको भोजन करनेके पश्चातवाली डकारें भी आने लगीं। उसी समय भीमको अपनी ओर आते देखा तो दुर्वासाजीको अम्बरीष महाराजजीकी घटनाका स्मरण हो आया। वे बहुत डरे और सारे शिष्योंको लेकर जल्दी-से-जल्दी आकाश मार्गसे भागकर महर्षि लोकमें चले गये। भीम वहाँ पहुँचकर ऋषियोंको न पाकर लौट आये तथा महाराज युधिष्ठिर और श्रीकृष्णको बतलाया कि—"चारों ओर खोजकर भी मैं उनको नहीं पा सका।"

द्रौपदी और पाण्डव श्रीकृष्णसे सबकुछ जानकर निश्चिन्त हो गये। श्रीकृष्णके परितृप्त होनेपर विश्व परितृप्त हो जाता है। इस उपाख्यानका विश्वके लिए यही सन्देश है। श्रीकृष्णकी यह लीला यहींपर हुई थी।

चतुर्थ प्रसङ्ग—एक समयकी बात है। जब पाण्डव लोग यहीं निवास कर रहे थे। दुष्ट दुर्योधनको यह पता लगा। उसने पाण्डवोंको नीचा दिखलानेके लिए अपने सारे भाईयों, परिकरों कर्ण–शकुनि आदि बंधु–बान्धवों और चतुरङ्गिणी सेनाके साथ काम्यवनमें विमल कुण्डके तटपर कुछ दिनके लिए उत्सव मनाना आरम्भ किया। यह बात इन्द्रको मालूम पड़नेपर उन्होंने अपने सेनापति चित्रसेनको दुर्योधनको पकड़ लानेके लिए आदेश दिया। वह दुर्योधनकी सारी सेनाको परास्तकर उसे पकड़कर आकाश मार्गसे इन्द्रके पास ले जाने लगा। दुर्योधन बड़े जोरसे चीख–चिल्ला रहा था। उसके रोनेका शब्द महाराज युधिष्ठिरके कानोंमें पहुँचा। उन्होंने दुर्योधनको छुड़ा लानेके लिए भीमसेनको आदेश दिया। किन्तु भीमसेनने कहा—'महाराज! दुर्योधन हमारा अनिष्ट करना चाहता था। इसे जानकर ही हमारे परम हितैषी चित्रसेन उसे पकड़कर ले जा रहे हैं। हमारे लिए चुपचाप रहना ही अच्छा है। महाराज युधिष्ठिरसे रहा नहीं गया। उन्होंने अर्जुनकी तरफ देखकर कहा—भाई अर्जुन! हमारा भाई सुयोधन संकटमें फँसा है। उसे छुड़ा लाना हमारा कर्तव्य है। हम परस्पर किसी बातके लिए लड़–झगड़ सकते हैं। किन्तु दूसरोंके लिए हम १०५ भाई एक हैं। शीघ्र ही सुयोधनको छुड़ा लाओ। महारथी अर्जुनने देव–सेनापति चित्रसेनके हाथोंसे दुर्योधनको छुड़ाकर अपने वाणोंसे सहज ही महाराज युधिष्ठिरके सामने उतार लिया। महाराज युधिष्ठिर बड़े प्रेमसे उससे मिले तथा आदरपूर्वक उसे उसके निवास स्थलकी ओर बिदा किया। किन्तु कोयला लाख साबुन लगानेसे भी अपना कालापन नहीं छोड़ता। महाराज युधिष्ठिरका यह प्रेमपूर्ण व्यवहार भी उसके हृदयमें शूलकी भाँति चुभ गया। वह अपनेको अपमानित समझ बहुत क्षुब्ध होकर हस्तिनापुर लौटा। जाको राखे साईयाँ मार सके ना कोई। श्रीकृष्ण जिसकी रक्षा करते हैं, उसका कोई भी बाल बांका नहीं कर सकता—यह घटना भी यहीं हुई थी।

पञ्चतीर्थ सरोवरके निकट इसी स्थानपर पाण्डवों और द्रौपदीकी दिव्य मूर्तियाँ थीं। कुछ समय पहले यह स्थान जनशून्य होनेपर इसमेंसे कुछ मूर्तियोंको चोर चुरा कर ले गये और कुछका अङ्ग–भङ्ग हो गया। तब ये बची हुई मूर्तियाँ निकट ही कामेश्वर मंदिरमें पधराई गईं। वे यहींपर उपेक्षित रूपमें पड़ी हुई हैं।

पास ही धर्मकूप, धर्मकुण्ड और अनेक ऐसी स्थलियाँ हैं जिनका सम्बन्ध पाण्डवोंसे रहा दीखता है।

यशोदाकुण्ड—काम्यवनमें यहीं कृष्णकी माता श्रीयशोदाजीका पित्रालय था। श्रीकृष्ण बचपनमें अपनी माताजीके साथ यहाँ कभी-कभी आकर निवास करते थे। कभी-कभी नन्द-गोकुल अपने गऊओंके साथ पड़ावमें यहीं ठहरता था। श्रीकृष्ण सखाओंके साथ यहाँ गोचारण भी करते थे।

देख यशोदाकुण्ड परम निर्मल ।
एथा गोचारणे कृष्ण हईया विह्वल ।।

(भक्तिरत्नाकर)

ऐसा शास्त्रोंमें उल्लेख है। यह स्थान अत्यन्त मनोहर है।

गयाकुण्ड—गयातीर्थ भी ब्रजमण्डलके इस स्थानपर रहकर कृष्णकी आराधना करते हैं। इसमें अगस्त कुण्ड भी एक साथ मिले हुए हैं। गया कुण्डके दक्षिणी घाटका नाम अगस्त घाट है। यहाँ आश्विन माहके कृष्ण पक्षमें स्नान, तर्पण और पिण्डदान आदि प्रशस्त हैं।

प्रयागकुण्ड—तीर्थराज प्रयागने यहाँ श्रीकृष्णकी आराधना की थी। प्रयाग और पुष्कर ये दोनों कुण्ड एक साथ हैं।

द्वारकाकुण्ड—श्रीकृष्णने यहाँपर द्वारकासे ब्रजमें पधारकर महिषियोंके साथ शिविर बनाकर निवास किया था।

द्वारकाकुण्ड, सोमती कुण्ड, मानकुण्ड और बलभद्र कुण्ड—ये चारों कुण्ड परस्पर सन्निकट अवस्थित हैं।

नारदकुण्ड—यह नारदजीकी आराधना स्थली है। देवर्षि नारद इस स्थानपर कृष्णकी मधुर लीलाओंका गान करते हुए अधैर्य हो जाते थे।

देखह नारद कुण्ड नारद एई खाने ।
हैल महा अधैर्य कृष्णेर लीला गाने ।।

(भक्तिरत्नाकर)

मनोकामना कुण्ड—विमल कुण्ड और यशोदा कुण्डके बीचमें मनोकामना कुण्ड और काम सरोवर एकसाथ विराजमान हैं। यहाँ स्नानादि करनेपर मनकी सारी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

तत्र कामसरो राजन! गोपिकारमणं सरः ।
तत्र तीर्थ सहस्त्राणि सरांसि च पृथक्-पृथक् ।।

(स्क.पु.)

काम्यवनमें गोपिकारमण कामसरोवर है, जहाँपर मनकी सारी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। उसी काम्यवनमें अन्यान्य सहस्र तीर्थ विराजमान हैं।

सेतुबन्ध सरोवर—श्रीकृष्णने यहाँपर श्रीरामके आवेशमें गोपियोंके कहनेसे बंदरोंके द्वारा सेतुका निर्माण किया था। अभी भी इस सरोवरमें सेतु बन्धके भग्नावशेष दर्शनीय हैं। कुण्डके उत्तरमें रामेश्वर महादेवजी दर्शनीय हैं। जो श्रीरामावेशी श्रीकृष्णके द्वारा प्रतिष्ठित हुए थे। कुण्डके दक्षिणमें उस पार एक टीलेके रूपमें लंकापुरी भी दर्शनीय हैं।

प्रसङ्ग—श्रीकृष्णलीलाके समय एक दिन परम कौतुकी श्रीकृष्ण इसी कुण्डके उत्तरी तटपर गोपियोंके साथ वृक्षोंकी छायामें बैठकर विनोदिनी श्रीराधिकाके साथ हास्य–परिहास कर रहे थे। उस समय उनकी रूप माधुरीसे आकृष्ट होकर आस पासके सारे बंदर पेड़ोंसे नीचे उतरकर उनके चरणोंमें प्रणामकर किलकारियाँ मारकर नाचने–कूदने लगे। बहुतसे बंदर कुण्डके दक्षिण तटके वृक्षोंसे लम्बी छलांग मारकर उनके चरणोंके समीप पहुँचे। भगवान् श्रीकृष्ण उन बंदरोंकी वीरताकी प्रशंसा करने लगे। गोपियाँ भी इस आश्चर्यजनक लीलाको देखकर मुग्ध हो गईं। वे भी भगवान् श्रीरामचन्द्रकी अद्‌भुत लीलाओंका वर्णन करते हुए कहने लगीं कि श्रीरामचन्द्रजीने भी बंदरोंकी सहायता ली थी। उस समय ललिताजीने कहा—"हमने सुना है कि महापराक्रमी हनुमानजीने त्रेतायुगमें एक छलांगमें समुद्रको पार कर लिया था। परन्तु आज तो हम साक्षात् रूपमें बंदरोंको इस सरोवरको एक छलांगमें पार करते हुए देख रही हैं।"

ऐसा सुनकर कृष्णने गर्व करते हुए कहा—जानती हो! मैं ही त्रेतायुगमें श्रीराम था। मैंने ही रामरूपमें सारी लीलाएँ की थीं।

ललिता श्रीरामचन्द्रकी अद्‌भुत लीलाओंकी प्रशंसा करती हुई बोलीं—तुम झूठे हो। तुम कदापि राम नहीं थे। तुम्हारे लिए कदापि वैसी वीरता सम्भव नहीं। श्रीकृष्णने मुस्कराते हुए कहा—तुम्हें विश्वास नहीं रहा है, किन्तु मैंने ही रामरूप धारणकर जनकपुरीमें शिवधनुको तोड़कर सीतासे विवाह किया था। पिताके आदेशसे धनुषबाण धारणकर सीता और लक्ष्मणके साथ चित्रकूट और दण्डकारण्यमें भ्रमण किया तथा वहाँ अत्याचारी दैत्योंका विनाश किया। फिर सीताके वियोगमें वन–वनमें भटका। पुनः बन्दरोंकी सहायतासे रावण सहित लंकापुरीका ध्वंसकर अयोध्यामें लौटा। मैं इस समय गोपालनके द्वारा वंशी धारणकर गोचारण करते हुए वन–वनमें भ्रमण करता हुआ प्रियतमा

श्रीराधिकाके साथ तुम गोपियोंसे विनोद कर रहा हूँ। पहले मेरे रामरूपमें धनुष-बाणोंसे त्रिलोकी काँप उठती थी। किन्तु, अब मेरे मधुर वेणुनादसे स्थावर-जङ्गम सभी प्राणी उन्मत्त हो रहे हैं।

ललिताजीने भी मुस्कराते हुए कहा—हम केवल कोरी बातोंसे ही विश्वास नहीं कर सकतीं। यदि श्रीराम जैसा कुछ पराक्रम दिखा सको तो हम विश्वास कर सकती हैं। श्रीरामचन्द्रजी सौ योजन समुद्रको भालू-कपियोंके द्वारा बंधवाकर सारी सेनाके साथ उसपार गये थे। आप इन बंदरोंके द्वारा इस छोटेसे सरोवरपर पुल बँधवा दें तो हम विश्वास कर सकती हैं।

ललिताकी बात सुनकर श्रीकृष्णने वेणु-ध्वनिके द्वारा क्षणमात्रमें सभी बंदरोंको एकत्र कर लिया तथा उन्हें प्रस्तर शिलाओंके द्वारा उस सरोवरके ऊपर सेतु बाँधनेके लिए आदेश दिया। देखते-ही-देखते श्रीकृष्णके आदेशसे हजारों बंदर बड़ी उत्सुकताके साथ दूर-दूरके स्थानोंसे पत्थरोंको लाकर सेतु-निर्माणमें लग गये।

श्रीकृष्णने अपने हाथोंसे उन बंदरोंके द्वारा लाये हुए उन पत्थरोंके द्वारा सेतुका निर्माण किया। सेतुके प्रारम्भमें सरोवरकी उत्तर दिशामें श्रीकृष्णने अपने रामेश्वर महादेवकी स्थापना भी की। आज भी ये सभी लीलास्थान दर्शनीय हैं। इस कुण्डका नामान्तर लंका कुण्ड भी है।

लुकलुकी कुण्ड—गोचारण करते समय कभी कृष्ण अपने सखाओंको खेलते हुए छोड़कर कुछ समयके लिए एकान्तमें इस परम रमणीय स्थानपर गोपियोंसे मिले। वे उन ब्रज-रमणियोंके साथ यहाँपर लुका-छिपी (आँख मुदउवल) की क्रीड़ा करने लगे। सब गोपियोंने अपनी-अपनी आँखें मूँद लीं और कृष्ण निकट ही पर्वतकी एक कन्दरामें प्रवेश कर गये। सखियाँ चारों ओर खोजने लगीं, किन्तु कृष्णको ढूँढ़ नहीं सकीं। वे बहुत ही चिन्तित हुईं कि कृष्ण हमें छोड़कर कहाँ चले गये? वे कृष्णका ध्यान करने लगीं। जहाँपर वे बैठकर ध्यान कर रही थीं, वह स्थल ध्यान-कुण्ड है। जिस कन्दरामें कृष्ण छिपे थे, उसे लुक-लुक कन्दरा कहते हैं।
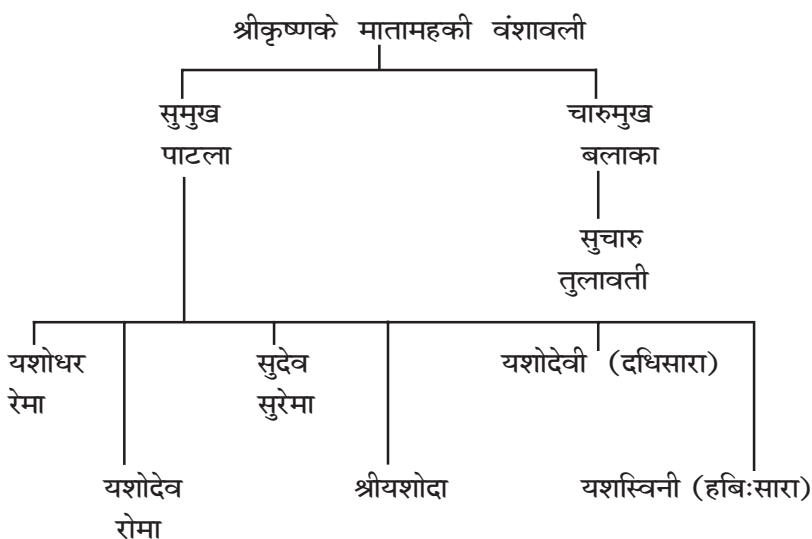
चरणपहाड़ी—श्रीकृष्ण इस कन्दरामें प्रवेशकर पहाड़ीके ऊपर प्रकट हुए और वहींसे उन्होंने मधुर वंशीध्वनि की। वंशीध्वनि सुनकर सखियोंका ध्यान टूट गया और उन्होंने पहाड़ीके ऊपर प्रियतमको वंशी बजाते हुए देखा। वे दौड़कर वहाँपर पहुँचीं और बड़ी आतुरताके साथ कृष्णसे मिलीं। वंशीध्वनिसे पर्वत पिघल जानेके कारण उसमें श्रीकृष्णके चरण चिह्न उभर
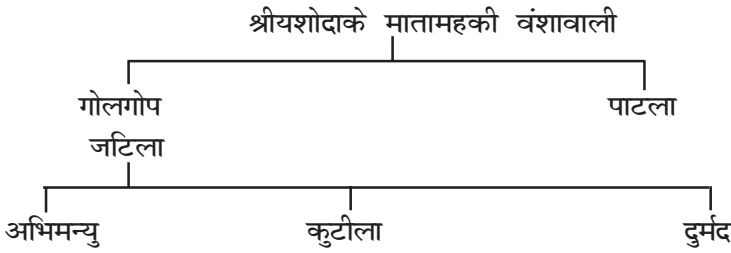
आये। आज भी वे चरण–चिह्न स्पष्ट रूपमें दर्शनीय हैं। पासमें ही उसी पहाड़ीपर जहाँ बछड़े चर रहे थे और सखा खेल रहे थे, उसके पत्थर भी पिघल गये जिसपर उन बछड़ों और सखाओंके चरण–चिह्न अंकित हो गये, जो पाँच हजार वर्ष बाद आज भी स्पष्ट रूपसे दर्शनीय हैं।

लुक–लुकी कुण्डमें जल–क्रीड़ा हुई थी। इसलिए इसे जल–क्रीड़ा कुण्ड भी कहते हैं।

विह्वल कुण्ड—चरण पहाड़ीके पास ही विह्वल कुण्ड और पञ्चसखा कुण्ड है। यहाँपर कृष्णकी मुरली ध्वनिको सुनकर गोपियाँ प्रेममें विह्वल हो गई थीं। इसलिए वह स्थान विह्वल कुण्डके नामसे प्रसिद्ध हुआ। पञ्च सखा कुण्डोंके नाम रङ्गीला, छबीला, जकीला, मतीला और दतीला कुण्ड हैं। ये सब अग्रावली ग्रामके पास विद्यमान हैं।

यशोधरा कुण्ड—नामान्तरमें घोषरानी कुण्ड है। घोषरानी यशोधर गोपकी बेटी थी। यशोधर गोपने यहीं अपनी कन्याका विवाह दिया था। श्रीकृष्णकी मातामही पाटला देवीका वह कुण्ड है।

श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतीकी भजन-स्थली—लुकलुकी कुण्डके पास ही बड़े ही निर्जन किन्तु सुरम्य स्थानमें श्रीप्रबोधानन्दजीकी भजन-स्थली है। श्रीप्रबोधानन्दजी, श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामीके गुरु एवं पितृव्य थे। ये सर्वशास्त्रोंके पारंगत अप्राकृत कवि थे।

राधारससुधानिधि, श्रीनवद्वीप शतक, श्रीवृन्दावन शतक आदि इन्हीं महापुरुषकी कृतियाँ हैं। श्रीकविकर्णपूरने अपने प्रसिद्ध गौरगणोद्देशदीपिकामें उनको कृष्णलीलाकी अष्टसखियोंमें सर्वगुणसम्पन्ना तुंगविद्या सखी बतलाया है।

श्रीरङ्गममें श्रीमन्महाप्रभुसे कुछ कृष्णकथा श्रवणकर ये श्रीसम्प्रदायको छोड़कर श्रीमन्महाप्रभुके अनुगत हो गये। श्रीमन्महाप्रभुके श्रीरङ्गमसे प्रस्थान करनेपर ये वृन्दावनमें उपस्थित हुए और कुछ दिनों तक यहाँ इस निर्जन स्थानमें रहकर इन्होंने भजन किया था। अपने अन्तिम समयमें श्रीवृन्दावन कालीयदहके पास भजन करते-करते नित्यलीलामें प्रविष्ट हुए। आज भी उनकी भजन और समाधि स्थली वहाँ दर्शनीय है।

फिसलनी शिला—कलावता ग्रामके पासमें इन्द्रसेन पर्वतपर फिसलनी शिला विद्यमान है। गोचारण करनेके समय श्रीकृष्ण सखाओंके साथ यहाँ फिसलनेकी क्रीड़ा करते थे। कभी-कभी श्रीमती राधिकाजी भी सखियोंके साथ यहाँ फिसलनेकी क्रीड़ा करती थीं। आज भी निकट गाँवके लड़के गोचारण करते समय बड़े आनन्दसे यहाँपर फिसलनेकी क्रीड़ा करते हैं।

यात्री भी इस क्रीड़ा-कौतुकवाली शिलाको दर्शन करनेके लिए जाते हैं।

व्योमासुर गुफा—इसके पास ही पहाड़ीके मध्यमें व्योमासुरकी गुफा है। यहींपर कृष्णने व्योमासुरका वध किया था। इसे मेधावी मुनिकी कन्दरा भी कहते हैं। मेधावी मुनिने यहाँ कृष्णकी आराधना की थी। पास में ही पहाड़ीके नीचे श्रीबलदेव प्रभुका चरणचिह्न है।

जिस समय श्रीकृष्ण व्योमासुरका वध कर रहे थे, उस समय पृथ्वी काँपने लगी। बल्देवजीने अपने चरणोंसे पृथ्वीको दबाकर शान्त कर दिया था। उन्हींके चरणोंका चिह्न आज भी दर्शनीय है।

प्रसङ्ग—एक समय कृष्ण गोचारण करते हुए यहाँ उपस्थित हुए। चारों तरफ वनमें बड़ी–बड़ी हरी–भरी घासें थीं। गऊवें आनन्दसे वहाँ चरने लग गईं। श्रीकृष्ण निश्चिन्त होकर सखाओंके साथ मेष (भेड़) चोरीकी लीला खेलने लगे। बहुतसे सखा भेड़ें बन गये और कुछ उनके पालक बने। कुछ सखा चोर बनकर भेड़ोंको चुरानेकी क्रीड़ा करने लगे। कृष्ण विचारक (न्यायाधीश) बने। मेष पालकोंने न्यायाधीश कृष्णके पास भेड़ चोरोंके विरुद्ध मुकदमा दायर किया। श्रीकृष्ण दोनों पक्षोंको बुलाकर मुकदमेका विचार करने लगे। इस प्रकार सभी ग्वालबाल क्रीड़ामें आसक्त हो गये। उधर व्योमासुर नामक कंसके गुप्तचरने कृष्णको मार डालनेके लिए सखाओं जैसा वेश धारणकर सखा मण्डलीमें प्रवेश किया और भेड़ोंका चोर बन गया तथा उसने भेड़ बने हुए सारे सखाओंको क्रमशः लाकर इसी कन्दरामें छिपा दिया। श्रीकृष्णने देखा कि हमारे सखा कहाँ गये? उन्होंने व्योमासुरको पहचान लिया कि यह कार्य इस सखा बने दैत्यका ही है। ऐसा जानकर

चित्र सं.–24

व्योमासुरकी गुफा (काम्यवन)

उन्होंने व्योमासुरको पकड़ लिया और उसे मार डाला। तत्पश्चात् पालक बने हुए सखाओंके साथ पर्वतकी गुफासे सखाओंका उद्धार किया। श्रीमद्भागवत दशम स्कन्धमें श्रीकृष्णकी इस लीलाका वर्णन देखा जाता है।

भोजन थाली—व्योमासुर गुफासे थोड़ी दूर भोजन-थाली है। श्रीकृष्णने व्योमासुरका बधकर यहींपर इस कुण्डमें सखाओंके साथ स्नान एवं भोजन क्रीड़ा की थी। जिस कुण्डमें स्नान किया था उस कुण्डको क्षीरसागर या कृष्णकुण्ड कहते हैं। इस कुण्डके ऊपर कृष्णने सब गोप सखाओंके साथ भोजन किया था। भोजन करनेके स्थलमें अभी भी पहाड़ीमें थाल और कटोरीके चिह्न विद्यमान हैं। पासमें ही श्रीकृष्णके बैठनेका सिंहासन स्थल भी विद्यमान है। भोजन करनेके पश्चात् कुछ ऊपर पहाड़ीपर सखाओंके साथ क्रीड़ा कौतुकका स्थल भी विद्यमान है। सखालोग एक शिलाको वाद्ययन्त्रके रूपमें व्यवहार करते थे। आज भी उस शिलाको बजानेसे नाना प्रकारके मधुर स्वर निकलते हैं। यह बाजन शिलाके नामसे प्रसिद्ध है।

पासमें ही शान्तनुकी तपस्या स्थली शान्तनुकुण्ड है, जिसमें गुप्तगंगा नैमिषतीर्थ, हरिद्वार कुण्ड, अवन्तिका कुण्ड, मत्स्य कुण्ड, गोविन्द कुण्ड, नृसिंह कुण्ड और प्रह्लाद कुण्ड ये एकत्र विद्यमान हैं। भोजन स्थलीकी पहाड़ीपर श्रीपरशुरामजीकी तपस्या स्थली है। यहाँपर श्रीपरशुरामजीने भगवद् आराधना की थी।

काम्यवनमें श्रीगौड़ीय सम्प्रदायके विग्रह—श्रीगोविन्दजी, श्रीवृन्दाजी, श्रीगोपीनाथजी और श्रीमदनमोहनजी हैं।

श्रीवल्लभ सम्प्रदायके विग्रह—श्रीकृष्णचन्द्रमाजी, नवनीतप्रियाजी और श्रीमदनमोहनजी हैं।

काम्यवनके दरवाजे

काम्यवनमें सात दरवाजे हैं—

(१) डीग दरवाजा—काम्यवनके अग्निकोणमें (दक्षिण-पूर्व दिशामें) अवस्थित है। यहाँसे डीग (दीर्घपुर) और भरतपुर जानेका रास्ता है।

(२) लंका दरवाजा—यह काम्यवन गाँवके दक्षिण कोणमें अवस्थित है। यहाँसे सेतुबन्ध कुण्डकी ओर जानेका मार्ग है।

(३) आमेर दरवाजा—काम्यवन गाँवके नैऋत कोणमें (दक्षिण-पश्चिम दिशामें) अवस्थित है। यहाँसे चरणपहाड़ी जानेका मार्ग है।

(४) देवी दरवाजा—यह काम्यवन गाँवके पश्चिममें अवस्थित है। यहाँसे वैष्णवीदेवी (पंजाब) जानेका मार्ग है।

(५) दिल्ली दरवाजा—यह काम्यवनके उत्तरमें अवस्थित है। यहाँसे दिल्ली जानेका मार्ग है।

(६) रामजी दरवाजा—गाँवके ईशान कोणमें अवस्थित है। यहाँसे नन्दगाँव जानेका मार्ग है।

(७) मथुरा दरवाजा—यह गाँवके पूर्वमें अवस्थित है। यहाँसे बरसाना होकर मथुरा जानेका मार्ग है।

काम्यवनकी परिक्रमा और दर्शन समाप्त कर जब आगे अग्रसर होते हैं, तब निम्नलिखित लीलास्थलियाँ मिलती हैं—

धुलेडा गाँव—जब श्रीकृष्ण सखाओंके साथ गोष्ठालयसे गोचारणके लिए निकलते तथा शामको गोचारणकर लौटते थे, तो उस समय लाखों सखाओंके पैर और अगणित गऊओंके खुरसे धूल उड़कर सारे आकाशमें भर जाती थी। उसे देखकर ब्रजवासियोंको यह सहज ही पता चल जाता था कि कृष्ण सखाओंके साथ गोचारणके लिए जा रहे हैं अथवा गोचारणसे आ रहे हैं। काम्यवनके पास ही पूर्वकी ओर यह धुलेड़ा नामक गाँव है, जहाँ सारा आकाश गोरजसे भर जाता था।

ऊधा—जिस समय उद्धवजी कृष्णका सन्देश लेकर मथुरासे नन्दगाँव आ रहे थे, उस समय रास्तेमें उन्होंने यहाँ कुछ देरतक विश्राम किया था। इसलिए उद्धवजीके ठहरनेसे इस स्थानका नाम ऊधा हुआ है।

आटोर—यहाँपर श्रीकृष्ण दाम, श्रीदाम, सुदाम, वसुदाम, स्तोककृष्ण, कोकिल, भृंग, उज्ज्वल, अर्जुन, सुबल और मधुमंगल आदि प्राणप्रिय सखाओंके साथ आठों प्रहर क्रीड़ा सुखमें मग्न रहते थे। आटोर शब्दका अर्थ ही आठों प्रहर क्रीड़ासुखमें मग्न रहना है। इसलिए इसका नाम आटोर हो गया है।

बजेरा—काम्यवनसे दो मील पूर्वमें बजेरा गाँव स्थित है। बजेरामें रंगदेवी और सुदेवी दोनों बहनोंका जन्म हुआ था। रंगदेवी एवं सुदेवी अष्टसखियोंमेंसे एक-एक प्रधान सखियाँ हैं। ये दोनों यमज बहनें हैं। पिताका नाम रंगसार गोप और माताका नाम करुणा गोपी है। रंगदेवीके पतिका नाम वक्रखन गोप है। ये जावटमें श्रीमती राधिकाके पास निवास करती हैं और सर्वदा उनकी सेवा करती हैं। सुदेवीके पति वक्रखनके कनिष्ठ भ्राता हैं। ये भी जावटमें श्रीमती राधिकाके साथ निवास करती हैं।

सुनहरा गाँव—यह गाँव काम्यवनसे चार मील पूर्व अथवा बजेरा गाँवसे दो मीलकी दूरीपर स्थित है। यहाँ श्रीराधिकाजीने सुवर्णहार पहनाकर महादेवजीकी पूजा की थी। इसलिए अब भी इस गाँवको सुनहरा या सुनेरा कहते हैं। यह गाँव सुवर्णाचल पर्वतके ऊपर बसा होनेके कारण भी सुनहरा या सुनेरा कहलाता है।

कदम्ब–खण्डी—सुनेरा गाँवके पास ही नैर्ऋतकोणमें एक विशाल कदम्ब खण्डी है। उसमें रासमण्डल एवं रत्नकुण्ड विद्यमान हैं। यहाँ भादों शुक्ल चतुर्दशीके दिन बूढ़ी लीला प्रसंगमें यहाँ रासलीलाका अभिनय होता है। कदम्ब खण्डीमें नाभाजीकी भजनस्थली है। इनका पूर्व नाम चतुरचिन्तामणि था। ब्रजके पयगाँवमें इनका जन्म हुआ था। ये संसारसे विरक्त होकर बचपनमें ही निर्जन कदम्बखण्डीमें भजन करने लगे। ये महान विरक्त थे। कहा जाता है कि ये भावमें विभोर होकर लीला चिन्तनमें निमग्न रहते थे। इनकी जटाएँ बड़ी लम्बी–लम्बी थीं। ये एकबार लीला–चिन्तन करते–करते भावाविष्ट अवस्थामें ही खड़े होकर प्रिया–प्रियतमकी सेवाके लिए पुष्प चयन करने लगे। उस समय उनकी जटाएँ एक हींसकी झाड़ीमें अटक गई। ये तीन दिनोंतक उसी अवस्थामें वहीं खड़े रहे। किशोर एवं किशोरी युगल प्रकट होकर इनकी जटाएँ सुलझाने लगे। इन्होंने पूछा तुम कौन हो? किशोरीजीने मुस्कराकर अपने नेत्रोंसे इशारा किया ये श्यामसुन्दर तुम्हारी जटाओंको स्वयं सुलझा रहे हैं। फिर दोनों तत्क्षणात् अन्तर्धान हो गये। नाभाजीका जीवन कृतकृत्य हो गया। वे रोते–रोते लोटपोट हो गये। बादमें ये वृन्दावन चले आये तथा विहारघाटपर निवास करने लगे।

ऊँचा गाँव—सुनेरा गाँवसे पूर्वमें तीन मील अथवा बरसानेसे पश्चिममें एक मील दूर ऊँचागाँव स्थित है। यह ललिताजीका गाँव है। इस स्थानके सम्बन्धमें ऐसा वर्णन है—

सखीगिरि पर्वतोऽस्ति तत्पार्श्वे स्खलिनी शिलामन्दिरं,
तत्रैव ललिताविवाहस्थलं, तत्पर्वतस्य दक्षिणपार्श्वे त्रिवेणीतीर्थ,
तन्मध्ये रासमण्डलं तत्पार्श्वे सखीकूपं,
तदुत्तरपार्श्वे शिलापृष्ठस्थ श्रीयुगलबलदेवमूर्तिः हिंसवृक्षादधस्थः।।

(विष्णुरहस्य धृत ब्रजभक्तिविलास)

अर्थात् यहाँ पासमें ही सखीगिरी पर्वत है। उस पर्वतमें फिसलनी शिला, ललिताका विवाह मण्डप, सखीगिरी कूप, पास में ही त्रिवेणी कूप, रास

चित्र सं.–25

सखिगिरी पर्वत विवाह मण्डप, अलता पहाड़ी (ऊँचा गाँव)

मण्डल, हींसकी कुञ्जोंमें दाऊजीका श्रीविग्रह, गोपी पुष्करिणी और देह कुण्ड आदि लीलास्थलियाँ विद्यमान हैं।

सखीगिरि पर्वत—ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णके धीरललित आदि नायकोचित गुणोंसे आकृष्ट एवं मुग्ध होकर ललिता आदि सखियोंने इस पर्वतके ऊपर और नीचे रासविलासादि विविध–क्रीड़ाएँ की थीं। इसलिए इस पर्वतका नाम सखीगिरि पर्वत है।

यत्र गोपसुताः सर्वाः ललितादिप्रभृतयः।
क्रीड़ां चक्रुः समासेन श्रीकृष्णगुणमोदिताः।
यस्मात्सखीगिरिर्नाम बभूव ब्रजमण्डले।
तत्पार्श्वे स्खलिनि ख्याता कृष्णक्रीड़ाशिला स्थिता ।।

(विष्णु रहस्य)

फिसलनी शिला—सखीगिरि पर्वतके ऊपर यह शिला स्थित है। यह स्थान ललिता–विवाह–स्थलसे लगा हुआ है। यहाँ ललिता आदि सखियाँ फिसलनेकी क्रीड़ा करती थीं। पर्वतमें उसका चिह्न आज भी अंकित है। उस शिलामें गोपियोंके चरणोंमें लिप्त महावर (अलता) का चिह्न आज भी देखा जा सकता है। उसीके बगलमें पर्वतके ऊपर कुछ उत्तरकी ओर चलकर चित्र–विचित्र शिलाएँ दीखती हैं। ये सूर्यकी किरणोंसे अद्भुत रंग–बिरंगी दीख पड़ती हैं। गोपियोंने भी इन शिलाओंपर विचित्र चित्रोंका अंकन किया था। इसलिए ये शिलाएँ चित्र शिलाएँ कहलाती हैं। पर्वतके ऊपर श्रद्धापूर्वक अन्वेषण और प्रार्थना करनेपर गोपियोंके चरणचिह्न भी कभी–कभी दीख पड़ते हैं।

ललिता–विवाह मण्डप—यहींपर सप्त वर्षीय श्रीकृष्णके साथ गोपियोंने ललिताका विवाह रचाया था। एक समय ललिता आदि सखियाँ रसिक कृष्णके साथ बैठकर रसालाप कर रही थीं। श्रीमती राधिकाका सेंकेत पाकर विशाखा आदि सखियोंने परस्पर पास बैठे हुए श्रीश्यामसुन्दरके पीताम्बरके साथ श्रीललिताजीकी चुनरीका गठबन्धनकर दिया। रंगदेवी आदि सखियाँ विवाहका गान करने लगीं और तुंगविद्या आदि विवाहका मन्त्र उच्चारण करने लगीं। अवशिष्ट सखियाँ श्रीकृष्ण और ललिता युगलजोड़ीके ऊपर पुष्पोंकी वर्षा करने लगीं। ललिताजीको कुछ सन्देह हुआ, वे जल्दीसे उठकर वहाँसे भागने लगी; किन्तु गठजोड़के कारण भाग नहीं सकी। सारी गोपियाँ

इस युगल जोड़ीको चारों ओरसे घेरकर परमोत्सव मनाने लगीं। इस लीलाके कारण इस स्थानका नाम ललिता–विवाहस्थल हुआ।

गोपी पुष्करिणी—यह सखीगिरि पर्वतमें स्थित है, ललिता आदि सखियाँ इस सरोवरमें स्नान करते समय विविध प्रकारकी जलक्रीड़ाएँ करती थीं। यह देवदुर्लभ स्थान है। सखियोंने कभी क्रीड़ा करते समय बद्रीफल संग्रहकर उन्हें ऊखलके रूपमें सजाया था। वह स्थान आज भी बद्रीका ओखलके नामसे प्रसिद्ध है।

सखीकूप—सखीगिरी पर्वतके पास ही सखीकूप स्थित है। ललिता आदि सखियाँ कृष्णके आगमनकी प्रतीक्षामें बड़ी उत्कण्ठित हो रही थीं। बहुत देरतक उत्कण्ठित रहनेके कारण उन्हें जलपिपासा लगनेपर उन्होंने अपने हाथोंसे इस कूपको खोदा और ज्योंही जलपान करना आरम्भ किया, उसी समय कृष्ण विचित्र वेश धारण किये हुए वहाँ उपस्थित हुये। उस समय गोपियोंने उन्हें अपने रहस्यमय वचनोंसे अद्भुत रूपमें छकाया था। सखियोंके द्वारा निर्मित होनेके कारण इस कूपका नाम सखीकूप है।

त्रिवेणीकूप—सखीगिरि पर्वतसे ऊँचागाँवकी ओर कुछ दूर चलनेपर दायीं ओर त्रिवेणीकूप स्थित है। श्रीदाऊजी एवं ललिताजी त्रिवेणीकूपमें नित्य स्नान करती थीं। किसी समय माघ माहमें ललितादि सखियाँ गंगा, यमुना एवं सरस्वती तीन नदियोंकी संगम स्थली त्रिवेणी संगममें स्नान करनेकी अभिलाषा कर रही थीं। गोपियोंके देखते–देखते श्रीकृष्णने अपनी वेणुकी नोकसे इस कूपका निर्माणकर दिया तथा उनके स्मरण मात्रसे ही त्रिवेणी संगमका पवित्रजल इसमें प्रकटित हो गया। फिर क्या था गोपियोंने यहींपर स्नान किया। यहाँ इस कुएँके जलकी तो बात ही क्या, कुएँके निकटकी धूलि उठाकर ललाटपर धारण करनेसे त्रिवेणी–स्नानका फल सहज ही प्राप्त हो जाता है।

दाऊजी—त्रिवेणी कूपसे पूर्वकी ओर निकट ही हींसवृक्षोंकी घनी झाड़ियोंके बीच दाऊजीका विशाल श्रीविग्रह है। इस मन्दिरको श्रीनारायण भट्टके आदेशसे राजा टोडरमलने बनवाया था।

प्रसंग—श्रीनारायण भट्ट गौड़ीय वैष्णवाचार्य थे। दक्षिण भारतके मधुरापत्तन प्रदेशमें इनका जन्म हुआ था। इनके पिता श्रीभट्टजी वहाँके भट्टभास्कर तैलंग ब्राह्मण परम्परामें अपनी विद्वताके लिए प्रसिद्ध थे। श्रीनारायणभट्ट चौदह वर्षकी आयुमें ही संसारसे विरक्त हो, सम्वत् १६०२ के आसपास

ब्रजमें पधारे। ये श्रीमती राधिकाजीके प्रति विशेषरूपसे समर्पित थे। ऐसी प्रसिद्धि है कि सम्वत् १६२६ आषाढ़ शुक्ल द्वितीयाके दिन श्रीनारायणभट्टकी विशेष प्रार्थनासे ही बरसानेमें विराजमान श्रीजीका वर्तमान विग्रह प्रकट हुआ है।

ब्रजके प्रति आपकी अनन्य निष्ठा रही। ब्रजभक्तिविलास इनकी प्रसिद्ध रचना है। इस ग्रन्थमें इन्होंने ब्रजमण्डलकी सारी कृष्णलीला-स्थलियोंका विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। वर्तमानमें प्रचलित रासलीलाका प्रचलन भी इन्हीं नारायण भट्टने किया था। बरसाना स्थित श्रीजीमन्दिरके पुजारी, ब्राह्मणगण इन्हीं नारायण भट्ट गोस्वामीके वंशजोंसे दीक्षा ग्रहण करते हैं। भट्टजी प्रधानतः ऊँचागाँवके इसी दाऊजी मन्दिरकी सेवामें नियुक्त रहते थे।

ललितास्थल (अटोरापर्वत)—दाऊजी मन्दिरसे पश्चिम तथा देह कुण्डके पूर्वमें उससे संलग्न अटोरापर्वत स्थित है। इसी पर्वतके ऊपर ऊँचागाँव बसा हुआ है। इसी पर्वतके ऊपर ललिताजीकी अटारी और ललिताजीकी बालक्रीड़ाओंका स्थान है—

ग्राममध्ये त्वटा त्वस्ति ललितायास्तु खेलनम् ।
तस्मिन्नटायां ललिता साष्टाभिः सखिभिः सह ।।
अष्टाब्दसंयुतावस्था सखिभिः परिक्रीड़ते ।
तस्मादुच्चाभिधानस्याटोरिसंज्ञं प्रवक्षते ।।

(बृहत् गौतमीय तन्त्र)

यह श्रीललितासखीके बाल्य क्रीड़ाका स्थान है। इनके पिताका नाम विशोभ गोप तथा माताका नाम शारदी गोपी था। इनका विवाह जावटमें हुआ था। पतिका नाम भैरों गोप है। श्रीमती राधिकाकी अष्ट सखियोंमें ललिताजी सर्वप्रधान हैं। श्रीमती राधिकाकी सखियों, दासियों और दूतियों इन तीनों प्रकारके यूथोंकी ये सर्वाध्यक्षा हैं।

राधाजीके समस्त भाव और गुण इनमें होनेके कारण ये अनुराधाके नामसे भी प्रसिद्ध हैं। स्वभावसे ये वामा प्रखरा हैं। राधाकृष्णकी सब प्रकारकी सेवाओंमें सुदक्षा हैं। स्वयं श्रीकृष्ण और श्रीमती राधा भी इनके शासनका अतिक्रमण नहीं कर पातीं। ये वेश रचना, श्रृंगार, इन्द्रजाल, शैय्या रचना तथा राधाकृष्णका मिलन कराने आदि सभी कार्योंमें निपुण एवं पारंगत हैं।

देहकुण्ड—ललिताके जन्मस्थानके ठीक नीचे पश्चिम दिशामें देहकुण्ड अवस्थित है।

प्रसङ्ग—किसी पर्वके उपलक्ष्यमें एक समय श्रीराधा एवं श्रीकृष्ण दोनों यहाँ सखियोंके साथ स्नान कर रहे थे। जिस समय वे स्नान करनेके पश्चात् कपड़े आदि धारण कर रहे थे, उसी समय एक दरिद्र ब्राह्मण वहाँ आया तथा गिड़गिड़ाकर श्रीकृष्णसे बोला—मेरी एक विवाह योग्य कन्या है, किन्तु अर्थके अभावमें किसी योग्य वरको कन्यादान नहीं कर पा रहा हूँ। इसलिए मुझे कुछ अर्थ प्रदान करें।

श्रीकृष्णने सोचा राधाजी ही हमारी सम्पूर्ण अर्थ हैं। इसके अतिरिक्त मेरे पास कुछ भी अर्थ नहीं है। प्रकट रूपमें उन्होंने ब्राह्मणसे कहा—मैं तुम्हें थोड़ा अर्थ नहीं, अपना सम्पूर्ण अर्थ ही दान करना चाहता हूँ। ऐसा कहकर उन्होंने श्रीराधाजीको दिखलाकर ब्राह्मणसे कहा—ये ही हमारा यथासर्वस्व अर्थ-सम्पत्ति हैं। तुम इन्हें ग्रहण करो।

ऐसा सुनकर दरिद्र ब्राह्मण अपना सिर ठोकता हुआ दुःखी होकर कहने लगा—हे व्रजेशनन्दन! पहलेसे ही मैं एक लड़कीका भी कन्यादान नहीं कर पा रहा हूँ, फिर इन दोनों लड़कियोंका कन्यादान कैसे कर सकूँगा? यह तो मेरे लिए बड़ी विपत्ति हुई। अब मैं क्या करूँ? वह कुछ स्वर्ण दान लेना चाहता था। ऐसा देखकर श्रीकृष्णने तराजूपर प्रियाजीको सोनेसे तौलकर वह सारा सोना उस ब्राह्मणको दे दिया। इससे श्रीमतीजी भी बड़ी प्रसन्न हो गईं। नहीं तो वे बड़ी उलझनमें पड़ी हुई थीं। इधर ब्राह्मण भी प्रचुर स्वर्ण लाभकर प्रसन्नतासे अपने घर लौट गया और उसने बड़ी धूमधामसे लड़कीका विवाह सम्पन्न किया।

कहा जाता है एक धनी व्यक्ति कुष्ठ रोगसे बहुत ही पीड़ित था। उसने यहाँ आकर इस कुण्डमें स्नान किया तथा दस कर्ष स्वर्ण उपयुक्त ब्राह्मणोंको दान किया। कुछ दिनोंमें ही वह कुष्ठ रोगसे मुक्त हो गया।

वेणीशंकर महादेव—कुण्डके तटपर ही वेणीशंकर महादेव विराजमान हैं। गोपियोंने अपने हाथोंसे इस महादेवजीकी स्थापना की है। जो लोग श्रद्धापूर्वक इस देहकुण्डमें स्नानकर वेणीशंकरका दर्शन करते हैं, उसे त्रिवेणी संगमके स्नानका फल प्राप्त होता है। उसे कृष्णकी निर्मल भक्ति प्राप्त होती है। उसके सारे कष्ट मिट जाते हैं।

बरसाना (वृषभानुपुर)

श्रीकृष्णप्रिया श्रीमती राधिकाकी लीलास्थली बरसाना गाँव अनेकानेक सुमधुर लीलाओं, युगलकी सरसकेलि-रहस्यों, मधुर भावनाओं और कामनाओंकी स्मृतियोंको अपने अन्तरमें संजोए हुए वैष्णव जगतके लिए सदा-सर्वदा प्रणम्य है। यहाँकी वन्दनीय भूमि, सरोवर, उद्यान, गह्वरादि वन, कुण्ड, साकरी खोर आदि लीला-स्थलियाँ राधाकृष्णकी किसी-न-किसी विशेष लीलाका स्मरण कराती हैं। गोष्ठके तृण, गुल्म-लता, वृक्ष, पशु-पक्षी, कीट-पतंग, सर्पादि सभी स्वरूपतः सच्चिदानन्दमय और राधाकृष्णकी लीलाके पोषक हैं तथा उनके परमप्रिय हैं। शास्त्रोंमें ऐसा कहा गया है कि ब्रह्मा, शंकरादि बड़े-बड़े सिद्ध महापुरुष भी राधाकृष्णकी सेवाके लिए उनके जैसा जन्म पानेके लिए पुनः-पुनः प्रार्थना करते हैं।[१]

बरसानाका शुद्धनाम वृषभानुपुर है। श्रीमती राधिकाके पिता वृषभानु महाराज सपरिवार यहींपर निवास करते थे।

गोवर्धनसे पश्चिममें चौदह मील अथवा काम्यवनसे छह मील पूर्वकी ओर इसकी स्थिति है। वाराह एवं पद्मपुराणके अनुसार सत्ययुगके अन्तमें ब्रह्माजीने कठोर आराधना द्वारा श्रीहरिको प्रसन्न कर उनसे वर माँगा—'आप मेरे ऊपर ब्रजगोपियोंके साथ सुमधुर क्रीड़ाएँ करें और मैं उसे दर्शन कर सकूँ। विशेषरूपसे वर्षाकालमें झूलादि लीलाओं तथा वसन्तमें फागादिकी लीला-विलासके द्वारा मुझे कृत-कृत्य करें'।[२] श्रीहरिने प्रसन्न होकर ब्रह्माजीको आदेश दिया कि "तुम वृषभानुपुरमें जाकर पर्वत रूपमें विराजमान हो जाओ।

---

(१) यत् किञ्चित् तृण गुल्म कीकटमुखं गोष्ठे समस्त हि तत्
सर्वानन्दमय मुकुन्द दयितं लीलानुकूलम् परम् ।
शास्त्रैरेव मुहुर्मुहुः स्फुटमिदं निष्टंकितं याञ्चया
ब्रह्मादेरपि सस्पृहेन तदिदं मया वन्द्यते ।।

(२) पुरा कृतयुगस्यान्ते ब्रह्मणा प्रार्थितो हरिः ।
ममोपरि सदा त्वं हि रासक्रीडां करिष्यसि ।
सर्वाभिव्रजगोपीभिः प्रावृट्काले कृतार्थकृत् ।।

तुम पर्वत स्वरूपसे हमारी सभी माधुर्यमयी लीलाएँ देखनेमें समर्थ हो सकोगे।[१] ऐसा ही हुआ। ब्रह्माजीने ब्रजमें इसी स्थानपर पर्वतका रूप धारणकर अपनी चिर अभिलाषाको पूर्ण किया।

बरसानाकी परिक्रमा चार मीलकी है। ब्रजभक्तिविलासमें वृषभानुपुरका चिह्न इस प्रकार निर्देश किया गया है—'विष्णुब्रह्म नामानौ पर्वतौ द्वौ परस्परौ। दक्षिणपार्श्वे ब्रह्मनामपर्वतः वामपार्श्वे विष्णुनाम पर्वतः। ब्रह्मपर्वतोपरि श्रीराधाकृष्णमन्दिरं, श्रीराधाकृष्णदर्शनं, तदधोभागे श्रीवृषभानुगोप-मन्दिरं,

चित्र सं.–26

श्रीबरसानाका श्रीमन्दिर

---

(१) तथा ब्रह्मन् व्रजं गत्वा वृषभानुपुरं गतः ।
पर्वतो भवसि त्वं हि मम क्रीडां च पश्यसि ।
यस्मात् ब्रह्मा पर्वतोऽभूद्वृषभानुपुरे स्थितः ।।
(वाराह और पद्मपुराण)

वृषभानु-कीर्ति-श्रीदामादर्शनं, तत्पार्श्वे ललितासखीनां प्रियासहितानां मन्दिरं राधादि नवसखीनां दर्शनम्। ब्रह्मपर्वतोपरि दानमन्दिरं, हिण्डोल-स्थलं, मयुरकुटीस्थलं, विष्णु ब्रह्मनाम्नोरुभयोः सांकरी खोरिस्थलं। ब्रह्मपर्वतोपरि श्रीराधमन्दिरमग्रे लीलानृत्यमण्डलम्। विष्णुपर्वतोपरिस्थं श्रीकृष्णामन्दिरमग्रे लीलानृत्यमन्दिरम्, तत्पार्श्वे विलासमन्दिरं तत्पार्श्वे गह्वरवनं तदधःस्थले रासमण्डलं, राधासरोवरि दोहिनीकुण्ड, तत्समीपे चित्रलेखया कृत मयूरसरः।।'—(पद्मपुराण)

पद्मपुराणके अनुसार यहाँ विष्णु और ब्रह्मा नामके दो पर्वत आमने-सामने विद्यमान हैं। दाहिनी ओर ब्रह्म पर्वत और बायीं ओर विष्णु पर्वत है। ब्रह्म पर्वतके ऊपर श्रीराधाकृष्णका मन्दिर है, जिसमें श्रीराधाकृष्णके दर्शन हैं। उसके नीचे उत्तरकी ओर निकट ही महाराज वृषभानुका राजभवन है। उसमें श्रीवृषभानु महाराज, श्रीमती कीर्तिदा महारानी, श्रीदाम एवं श्रीमती राधिकाजीके दर्शन हैं। पास ही श्रीललिताजीका मन्दिर है, जिसमें राधिकाको लेकर नौ सखियोंके दर्शन हैं। ब्रह्म पर्वतके ऊपर दानमन्दिर, हिण्डोला स्थल, मयूर कुटी, रासमण्डल और श्रीमती राधाजीका मन्दिर विराजमान है। इससे आगे दोनों पर्वतोंके बीचमें साँकरीखोर स्थली है। उसीके पासमें विलास मन्दिर है, उसीके पास गह्वर वन है। गह्वर वनके भीतर रासमण्डल और राधासरोवर हैं। उसके पासमें दोहनीकुण्ड है तथा उसीके सन्निकट चित्रलेखा द्वारा निर्मित मयूर सरोवर है। उसीके निकट भानु सरोवर है। भानु सरोवरके तटपर व्रजेश्वर नामक महारुद्र मूर्ति है। उसीके वाम भागमें कीर्ति सरोवर है। बरसानाके चारों ओर चार सरोवर हैं। पूर्वमें भानुकुण्ड, उसके वायुकोणमें कीर्तिदाकुण्ड, नैर्ऋत कोणमें विहारकुण्ड, नामान्तर तिलककुण्ड तथा दक्षिण पश्चिममें दोहनीकुण्ड है, जो चिकसौली ग्रामके दक्षिणमें है। चिकसौलीके उत्तरमें साँकरी खोर तथा साँकरी खोरके पूर्वमें विष्णुपर्वतके ऊपर विलासगढ़ है। उसमें रासमण्डल तथा पासमें राधिकाजीकी धूलिमें खेलनेका स्थान विलास-मन्दिर है। साँकरी खोरके पश्चिममें पर्वतके ऊपर दानगढ़, साँकरी खोरके नैर्ऋत कोणकी ओर तथा चिकसौली ग्रामके पश्चिममें गह्वर वन और गह्वर कुण्ड हैं। गह्वर वनमें प्रवेश करते ही दाहिनी ओर मयूरकुटी है। गह्वर-वनके नैर्ऋत कोणमें पर्वतके ऊपर मानगढ़, उसमें मानमन्दिर तथा पास ही नीचे मानपुरा गाँव है। मानगढ़के उत्तरमें जयपुरके महाराजका मन्दिर तथा उसके उत्तरमें श्रीजीका मन्दिर है। श्रीजीके मन्दिरसे नीचे जानेके रास्तेमें

ब्रह्माजीका मन्दिर (पहाड़ीके ऊपरमें ही), श्रीमती राधिकाजीके पितामह महीभानुजीका राजभवन, नीचे बरसाना गाँव है। बरसानाके पश्चिममें मुक्ता कुण्ड या रत्नकुण्ड है। इनमेंसे प्रसिद्ध–प्रसिद्ध लीलास्थलियोंका हम विशेषरूपमें वर्णन कर रहे हैंः—

(१) वृषभानुकुण्ड—वृषभानुकुण्ड बरसाना गाँवके पूर्वमें स्थित है। महाराज वृषभानु प्रतिदिन नियमानुसार प्रातःकाल इस कुण्डमें स्नान और आह्निक आदि कार्य किया करते थे। किसी कल्पकी कथाके अनुसार इसी सरोवरमें स्नान करते समय महाराज वृषभानुको कमलके फूलोंके ऊपर क्रीड़ा करती हुई सद्योजात बालिकाके रूपमें राधिकाजी मिली थीं। जियल नामक वृक्षोंसे चारों तरफसे परिवेष्टित यह सरोवर परम रमणीय है। कभी कभी सखियोंके साथ श्रीमती राधिका इस सरोवरमें स्नान एवं जलक्रीड़ा करती थीं। दूसरे घाटपर स्नान करते हुए रसिक श्रीब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण डूबकर स्नान–करती हुई गोपियोंके चरण पकड़ लेते और पुनः अपने घाटपर प्रकट हो जाते। कभी–कभी इन गोपबालिकाओंके साथ नन्दनन्दन श्रीकृष्ण जलक्रीड़ा और लुकाछिपीकी क्रीड़ाएँ भी करते थे। महाराज वृषभानुके नामके अनुसार इस कुण्डका नाम वृषभानुकुण्ड है।

(२) साँकरी खोर—ब्रह्म पर्वत और विष्णु पर्वतके बीचमें आने जानेका संकुचित मार्ग है। गोप, गोपियाँ इसी संकीर्ण रास्तेसे गमनागमन करती हैं। गोदोहनके पश्चात् गोप–ग्वाले इसी मार्गसे होकर काँवरोंसे दूध इस पारसे उस पार ले जाते थे। रंगीले कृष्णने रंगीली गोपियोंसे यहाँ दूध, दधि, मक्खनकी लूट की थी। प्रतिवर्ष भाद्र महीनेमें शुक्ला त्रयोदशीके दिन यहाँ बूढ़ी लीला होती है। बूढ़ी लीलाके प्रवर्त्तक श्रीनारायण भट्ट हैं।

प्रसंग—ग्वाल–बालोंके साथ श्रीकृष्ण यहाँ दानघाटीपर दानी बनकर दूध, दही, मक्खनका दान माँगते थे। गोपियोंके मना करनेपर भी बलपूर्वक लूटकर खा लिया करते थे।

गोपियोंने देःखी आकर दिन–प्रतिदिनके इस वाद–विवादका प्रतिवाद करनेका संकल्प किया। स्थिर हुआ कि एक विशेष दिन सारी गोपियाँ घाटीके दोनों ओर पर्वतकी कन्दराओं एवं सघन कुञ्जोंमें छिपी रहें और कुछ थोड़ीसी गोपियाँ दूध, दही और मक्खनकी मटुकियाँ अपने सिरपर रखकर इस साँकरी खोरसे गुजरें। ज्योंही कृष्ण और उनके सखा उनका मार्ग रोककर दूध, दही लूटनेका प्रयास करें, त्योंही वे गोपियाँ छिपी हुई

गोपियोंको चिल्लाकर बुलावें और सारी गोपियाँ ललिताजीकी अध्यक्षतामें कृष्ण और उनके सखाओंको इसका मजा चखा दें।

ऐसा ही हुआ, दूसरे दिन हजारों-हजारों गोपियाँ दलोंमें विभक्त होकर साँकरी खोरके आसपासके सघन कुञ्जों और बड़ी-बड़ी कन्दराओंमें छिप गईं। कुछ गोपियाँ पूर्व दिनोंकी भाँति दूध, दहीकी मटुकियोंको सिरपर रखकर स्वाभाविक रूपसे साँकरी खोरकी ओरसे जा रही थीं। कृष्णने मधुमंगल आदि सखाओंके साथ उनका मार्ग रोककर बलपूर्वक दूध, दही लूटना आरम्भ किया। ठीक उसी समय उन गोपियोंने संकेत द्वारा छिपी हुई गोपियोंको बुलाया। फिर तो एक अपूर्व लीला हुई। गोपियोंके समूहमेंसे पाँच-दसने मिलकर कृष्णको, कुछने मिलकर मधुमङ्गलको, कुछने मिलकर सुबल, अर्जुन लवंग आदि सखाओंको बलपूर्वक पकड़ लिया और उनके गालोंको गुल्चे मारकर फुला दिया तथा उनकी चोटियोंको पेड़ोंकी डालियोंमें बाँधकर पूछने लगीं "दधि लूटनेमें कैसा मजा आ रहा है? फिर दधि लूटनेका दुस्साहस करोगे?" मधुमङ्गल तो हाथ जोड़कर ललिताजीके चरणोंमें प्रार्थना करने लगा "मुझे छोड़ दो। मुझे बड़ी भूख लगी है। मैं तो एक सीधा-सादा ब्राह्मण बालक हूँ। चंचल कृष्णके कहनेमें आ गया। आजसे ऐसा नहीं करूँगा।" इस प्रकार अन्य गोपियाँ भी दूसरे-दूसरे सखाओंको पाठ सिखाने लगीं। इधर श्रीमती राधिका, विशाखा आदि सखियोंने कृष्णको पकड़कर उन्हें दो चार गुल्चे लगाये तथा बलपूर्वक उन्हें चोली और लहंगा आदि पहनाकर स्त्रीवेश धारण करा दिया। मांगमें सिंदूर भी भर दिया। हाथोंमें चूड़ियाँ और पैरोंमें नूपुर आदि भी पहना दिये, घूंघटसे आधा मुख भी ढक दिया तथा सिरपर दधिकी मटकी रखकर उनसे साँकरी खोरमें ठिठोली करती हुई दधिका दान मांगने लगीं। ललिता सखीने पर्वतके ऊपरसे पत्थरका एक टुकड़ा ऐसे साधकर मारा, जिससे दधिकी मटकी उनके सिरपर ही फूट गई। उनका सारा शरीर दधिसे ओतप्रोत हो गया। सारी सखियाँ ताली बजाकर हँसने लगीं। श्याम बड़े लज्जित हुए। गोपियोंने फिर पूछा "कहिए जी! फिर कभी दधिका दान लेनेके लिए दुस्साहस करोगे? कान पकड़िए और प्रतिज्ञा कीजिए-आजसे फिर ऐसा नहीं करूँगा।" गोपियोंने कृष्णको ऐसा कहनेके लिए विवश कर दिया। आज भी प्रतिवर्ष इस लीलाका अभिनय श्रीमती राधिकाके जन्मोत्सवके उपलक्ष्यमें सम्पन्न होता है। इस लीला अभिनयको बूढ़ी लीला कहते हैं।

मानगढ़के पास ही दक्षिणमें मानपुरा गाँव बसा हुआ है। जो इन लीलाओंका स्मरण कराता है।

दानगढ़—ब्रह्माचल पर्वतके ऊपर दानगढ़ बहुत ही रमणीय स्थल है।

प्रसंग—एक दिन रसिक श्रीकृष्ण दानी बनकर सुबल सखाको लेकर यहाँपर सखियोंके साथ श्रीमती राधिकाके आगमनकी प्रतीक्षामें बड़े उत्कण्ठित हो रहे थे। श्रीमती राधिका सखियोंके साथ सूर्यपूजाका बहानाकर पूजाके विविध द्रव्योंको लेकर इधरसे निकल रहीं थीं। उन्हें देखकर श्रीकृष्ण उनका मार्ग रोकते हुए डपटकर बोले—तुम कौन हो? कहाँ जा रही हो?

श्रीमती राधिकाने उत्तर दिया—क्या तुम नहीं जानते कि हम कौन हैं? और बेधड़क होकर आगे बढ़ने लगीं।

कृष्णने सुबल सखाके साथ उन्हें रोककर कहा—क्या तुमलोग नहीं जानतीं कि मैं यहाँ इस प्रदेशके राजाका बैठाया हुआ दानी हूँ। बिना दान दिये हुए तुमलोग यहाँसे निकल नहीं सकतीं। तुमलोग प्रतिदिन नाना प्रकारके बहुमूल्य द्रव्योंको लेकर यहाँसे बिना दान दिये ठुमक-ठमक कर चली जाती हो। ठहर जाओ! दान देकर यहाँसे जाओ। विशाखाजी कड़क कर बोलीं—यह राधिकाका राज्य है। वृषभानुनन्दिनी श्रीमती राधिका ही वृन्दावनेश्वरी हैं। बिना उनके आदेशके तुम यहाँ दानी कैसे बन बैठे? तुमने यह अक्षम्य अपराध किया है। इसका दण्ड तुम्हें भोगना ही पड़ेगा।

श्रीकृष्णने उत्तर दिया—इतनी बहककर बातें मत करो। यहाँके राजा तो कन्दर्पदेव हैं। तुम प्रतिदिन लुक-छिपकर नाना प्रकारके मूल्यवान द्रव्योंको लेकर यहाँसे आती-जाती हो। किन्तु दान (कर) नहीं देतीं। अतः महाराज कन्दर्पने क्रोधित होकर मुझे भेजा है। यदि दान देनेके लिए अस्वीकार करती हो, तो मैं तुम सबको बाँधकर राजाके पास उपस्थित करूँगा। वे विचारकर जैसा दण्डके लिए आदेश देंगे, वैसा दण्ड तुमको भोगना पड़ेगा।

कृष्णकी बातोंको सुनकर विशाखाजीने कहा—तुम्हारा राजा क्या कर सकता है? हमारी महारानी वृन्दावनेश्वरीजी हैं। उनके रहते हमें किसीका भय नहीं है। हम तुम्हारे महाराज कन्दर्पका पराक्रम भलीभाँति जानती हैं। श्रीमती राधिकाके कटाक्षरूपी बाणोंसे उनका सारा गर्व चकनाचूर हो जाता है। ऐसा कहकर श्रीमती राधिकाको आगेकर सब सखियाँ अग्रसर होने लगीं। कृष्ण आगे बढ़कर साँकरी खोरके बीचमें खड़े हो गये और बोले—अरी ढीठी ब्रजरमणियों! तुम निर्भीक होकर नाना प्रकारके रत्नोंको छिपाकर प्रतिदिन

इस प्रकार इस मार्गसे चली जाती हो। आज तुम्हें इन रत्नोंका दान अवश्य ही देना होगा। इस प्रकार हास्य-उपहासके उपरान्त युगल किशोर-किशोरी दोनों निभृत केलिकुञ्जमें नाना प्रकार से क्रीड़ा-विलास करने लगे। सारी सहेलियाँ आनन्दमें भर गईं। यहाँ दानमन्दिर है।

दानवेषधरायैव दध्युपास्याभिलाषिणे ।
राधानिर्भर्त्सितायैव कृष्णाय सततं नमः ॥

(ब्राह्मे)

मानगढ़—ब्रह्माचल पर्वतके ऊपर मानगढ़ एक बहुत ही रमणीय स्थान है। श्रीमती राधिकाजीने यहाँ मान किया था। रसिक कृष्णने बड़े कौशलसे यहाँपर उनका मान भङ्ग किया था।

प्रसंग—एक दिन प्रियनर्म सखा सुबल और वृन्दादेवीके माध्यमसे संकेत देकर श्रीकृष्ण श्रीमती राधिकाके निकट अभिसार कर रहे थे। अर्थात् उनके निकट आ रहे थे। अकस्मात् मार्गमें चन्द्रावलीजीकी सखी पद्माजी मिलीं। पद्माजीने श्रीमती चन्द्रावलीकी विरहोत्कण्ठाका वर्णन करते हुए उन्हें चन्द्रावलीसे मिलनेके लिए बार-बार अनुरोध किया। श्रीकृष्ण उसके अनुरोधको टाल नहीं सके। वे कुछ समयके लिए चन्द्रावलीके कुञ्जमें ठहर गये। फिर चन्द्रावलीके साथ रसमयी बातें तथा क्रीड़ा विनोदमें इस प्रकार रम गये कि उनको और किसी भी बातका स्मरण नहीं रहा। श्रीमती राधिकासे मिलनेका समय भी व्यतीत हो गया। इसी बीच श्रीमती राधिकाकी एक सुशिक्षित सारी (मैना) उसी कुञ्जमें एक वृक्षके ऊपर बैठ गई। उसने चन्द्रावली और श्रीकृष्णके परस्पर रसालाप और उनके परस्पर विलासादिका सारा संवाद लौटकर श्रीमती राधिकाको सुनाया। वे बड़ी उदास हो गई और उन्हें बड़ा ही दुर्जेय मान हुआ। उन्होंने मन-ही-मन ठान लिया कि ऐसे उद्धत कृष्णसे मुझे कोई प्रयोजन नहीं।

इधर समय बीतनेपर श्रीकृष्ण जब उनके निकट आये, तब श्रीमतीजीने उनकी तरफसे अपना मुख मोड़ लिया। श्रीकृष्णने उनका कठोर मान देखकर साम, दाम, दण्ड, भेद नीतिके द्वारा उन्हें समझानेकी सारी चेष्टाएँ कीं, फिर भी जब उनका मान नहीं टूटा, तब कृष्ण निराश और दुःखी होकर वहाँसे चले गये। रास्तेमें उन्हें विशाखाजी मिलीं। उनके परामर्शसे उन्होंने एक नवीन सखीका रूप धारणकर वीणावादन करते हुए विशाखाजीके साथ श्रीमती राधिकाके निकट आये। विशाखाजीने इस नवेली सखीका श्यामा सखीके

रूपमें परिचय देकर उनके वीणावादनके साथ संगीतकी कला तथा अन्यान्य गुणोंकी बहुत प्रशंसा की। श्रीमती राधिकाने बड़े आदर और सम्मानके साथ श्यामा सखीको निकट बैठाकर उसके अपूर्व संगीतको श्रवणकर आनन्दमें भरकर उसका आलिंगन किया। किन्तु ज्योंहि आलिंगन किया, त्योंहि उनके आलिंगनके स्पर्शमात्रसे अपने प्रियतमको पहचान गईं फिर तो उनका मान जहाँका तहाँ धरा रह गया। सखियोंसे परिवेष्टित हो वे प्राणप्रियतमके सहित लीला–विलासमें रम गईं—

देवगन्धर्वरम्याय राधामानबिधायिने ।
मानमन्दिरसंज्ञाय नमस्ते रत्नभूमये ।।

(आदि वाराहे)

मानगढ़में मान मन्दिर, झूला, रासमण्डल और रत्नाकर सरोवर आज भी दर्शनीय हैं—

मयूर कूटी—यह ब्रह्माचल पर्वतके ऊपर स्थित है। यहाँ रासमण्डल है। रासमण्डलमें श्रीमती राधिका और कृष्ण मयूर एवं मयूरीके रूपमें नृत्य करते हुए दर्शनीय हैं।

प्रसंग—किसी समय सखियोंके साथ श्रीमती राधिका एवं कृष्ण यहाँ उपस्थित हुए। उन्हें देखकर मयूरोंका समूह आनन्दमें भरकर नृत्य करने लगा। आकाशमें उमड़–घुमड़कर बादल घिर आये थे। रिमझिम–रिमझिम वर्षा हो रही थी। वहाँकी प्रकृतिने मानो सोलह शृंगार और बत्तीस आभरण धारणकर रमणीय रमणीका सा बड़ा ही सुन्दर रूप धारणकर रखा था। श्रीराधाकृष्ण अपनेको सम्भाल नहीं सके। वे भी मयूर–मयूरियोंके साथ मयूर–मयूरी बनकर अद्भुत रूपसे नृत्य करने लगे। उनका वह नृत्यकौशल देखकर सभी सखियाँ आश्चर्यचकित हो गईं तथा वे भी मल्हार आदि नाना प्रकारके रागोंसे संगीतके द्वारा उन दोनोंका आनन्द वर्द्धन करने लगीं—

किरीटिने नमस्तुभ्यं मयूरप्रियवल्लभ ।
सुरम्यायै महाकुट्यै शिखण्डिपदवेश्मने ।।
नमः सखीसमेताय राधाकृष्णाय ते नमः ।
विमलोत्सवदेवाय व्रजमङ्गलहेतवे ।।

(ब्राह्मे)

विलासगढ़—यह विष्णुपर्वतके ऊपर स्थित है। यहाँ राधाकृष्ण दोनोंके विविध प्रकारके क्रीड़ा–विलास हुए थे। इसके पास ही श्रीराधाजीका सखियोंके साथ धूला खेलनेका स्थान है।

प्रसंग—एक दिन कुमारी राधिका अपनी सखियोंके साथ धूला खेल रही थीं। हठात् कौतुकी कृष्ण वहाँ उपस्थित होगये। सखियोंने उन्हें भीतर आनेके लिए मना किया परन्तु श्रीकृष्ण भला क्यों मानने लगे। वे बलपूर्वक भीतर प्रवेश करने लगे। उसी समय देव इच्छासे एक आँधी आई। सारा

आकाश धूलिसे व्याप्त हो गया। कहीं कुछ भी नहीं सूझ रहा था। सखियोंने डरकर हाथोंसे अपनी आँखें मूँद लीं। कृष्ण इस अवसरपर किशोरी राधिकाका आलिंगनकर उनका मुख चुम्बन करने लगे। वयःसन्धिके समय यह लीला सम्पन्न हुई थी। जहाँ यह लीला हुई, वहीं आज विलास-मन्दिर है—

विलास रूपिणे तुभ्यं नमः कृष्णाय ते नमः ।
सखीवर्गसुखाप्ताय क्रीड़ाविमलदर्शिने ।।

(आ.वा.पु.)

—सखीवर्गको आनन्दित करनेके लिए विमल क्रीड़ा करनेवाले क्रीड़ा-विलासरूपी श्रीकृष्णको नमस्कार है।

चिकसौली—साँकरी खोर और गह्वर वनके बीचमें ब्रह्माचल पर्वतके नीचे यह ग्राम स्थित है। अष्ट सखियोंमेंसे अन्यतम श्रीचित्रा सखीका यह जन्म स्थान है। चित्रा सखीके पिताका नाम चतुर गोप और माताका नाम चर्चिता गोपी था। इनका विवाह जावटमें पीठर गोपके साथ हुआ था। ये श्रीमती राधिकाकी नाना प्रकारकी विचित्र वेशभूषा, शृंगार आदि करनेमें अत्यन्त दक्ष हैं तथा ये चित्रकला, पशु-पक्षियोंकी भाषा समझने आदि विविध कलाओंमें पारंगत हैं।

प्रसङ्ग—किसी समय वृषभानु कुमारी राधिका अपनी सहेलियोंके साथ यहाँ खेल रहीं थीं। इतनेमें उन्होंने दूरसे श्रीकृष्णकी मुरलीकी बड़ी ही मधुर और आकर्षक स्वर-लहरीको श्रवण किया। इससे वे इतनी मुग्ध हो गयीं कि अपना तन-मन सबकुछ उस मधुर मुरलीवालेके ऊपर न्यौछावर कर दिया। वे उससे मिलनेके लिए आतुर हो उठीं। इसी समय चित्रासखीने श्रीकृष्णका बड़ा ही सुन्दर चित्र प्रस्तुत कर उन्हें दिखलाया। उस अद्भुत सुन्दर चित्रको देखकर राधिकाजी सबकुछ भूल गयीं और इस अद्भुत सुन्दर व्यक्तिपर अपनेको न्यौछावर कर दिया। इसी समय श्रीकृष्ण सखाओंके साथ गोचारण करते हुए जा रहे थे। उनके त्रिभङ्गललित परम मनोहर रूपछटाको देखकर वे अपनेको संभाल नहीं सकीं और इस परम सुन्दर युवक पर अपना सबकुछ न्यौछावर कर दिया। श्रीकृष्ण गोचारण करते हुए दूर निकल गये।

इधर श्रीमतीजी बड़ी व्याकुल होकर सखियोंसे अपने मनकी बात बताने लगीं। उन्होंने ललिताजीसे कहा—सखि री! अब मैं एक क्षणके लिए भी जीना नहीं चाहती। आर्य ललनाएँ एक ही पुरुषको अपना हृदय समर्पण

करती हैं। यहाँ तक कि माता–पिता द्वारा वाग्दान दिये जाने पर कन्या उसी पुरुषको अपना पति मान लेती हैं। परन्तु आज मैंने पहले एक वंशीवाले पुरुषको, तत्पश्चात् दूसरी बार चित्रा द्वारा प्रदर्शित चित्रवाले युवकको और तीसरी बार अभी–अभी गोचारण करते हुए सुन्दर युवकको—तीन पुरुषों पर आसक्त हो गयी हूँ। मेरा आर्यधर्म नष्ट हो चुका है। आज जीवित रहकर क्या करूँगी?

श्रीललिता यह सुनकर ठहाका मारते हुए हँसती हुई बोली—अरी मुग्धे! तुम्हें मरनेकी आवश्यकता नहीं। ये तीन पुरुष नहीं हैं, एक ही है। मधुर वंशी बजाने वाला और कोई नहीं, श्रीनन्दनन्दन श्रीकृष्ण ही हैं। उन्हीं का यह चित्र है तथा वे ही अभी गोचारण करते हुए इधरसे निकले हैं। अतः तुम्हें मरनेकी आवश्यकता कया है?

गह्वरवन—यह अपने नामके सर्वथा अनुकूल सघनवृक्षों, लताओं, केलिकुञ्जों तथा प्रिया–प्रियतमकी मधुर लीलाओंकी ऐकान्तिक विहार स्थली है। यह शंखके आकारमें स्थित है। इसमें वल्लभाचार्यजीकी बैठक है। यहाँपर वल्लभाचार्यजीने श्रीमद्भागवतका पारायण किया था। इसमें रासमण्डल और राधासरोवर भी विराजमान है। गह्वर वनमें बहुतसे भक्तोंकी भजन स्थलियाँ भी दर्शनीय हैं—

गह्वराख्याय रम्याय कृष्णलीलाविधायिने ।
गोपीरमणसौख्याय वनाय च नमो नमः ।।

एक प्रसिद्ध भक्त नागरीदासने अपने पदोंमें इस स्थानकी लीलाके विषयमें ऐसा वर्णन किया है कि एक समय श्रीकृष्ण सखाओंके साथ गोचारण कर रहे थे। पास ही खेतमें हरे–चनेके पौधे लग रहे थे। उसे देखकर श्रीकृष्णने सखाओंके साथ कुछ हरे–चनेके पौधोंको उखाड़ लिया। इधर खेतकी रखवालिनीको इसका पता चला तो उनको पकड़नेके लिए दौड़ी, परन्तु कन्हैया भला कब हाथ आते। बगलमें हरे बूट दबाए हुए भागे और टेढ़े–मेढ़े रास्तेसे गह्वरवनमें आकर रुके तथा वहाँ अन्य सखाओंके साथ होरा बनाकर खाने लगे। जब वे सखाओंके साथ हँसते–हँसाते क्रीड़ा विनोदपूर्वक होरा खा रहे थे कि इतनेमें ग्वालिनी भी वहाँ आ पहुँची। किन्तु कृष्णकी रूप–छटाका दर्शनकर अपनी सुध–बुध भूल गई तथा उसका क्रोध भी शान्त हो गया। वात्सल्य भावनामें मुग्ध होकर स्वयं ही चनोंके छिलके उतारकर कन्हैयाको खिलाने लगी। भक्त नागरीजीने इस प्रसंगको इस प्रकार गाया है—

चकसौलीके चना चुराए ।
गारी दे दौरी रखवारिन ग्वारिन सहित गुपाल भगए ।
हरे बूट दाबे बगलिनमें स्वास भरे वन गह्वर आए ।
कहत आतुरे बोल लोल दृग हँसत-हँसत सब बरन चढ़ाए ।।
हरे चबात, कोऊ होरा करि, वनकी लीला लाल लुभाए ।
नागरिया बैठी छकि हारी छील-छील नन्दलालहिं ख्वाये ।।

कृष्णकुण्ड—चारों ओरसे लताओंसे परिवेष्टित सघन वृक्षोंसे आच्छादित यह सरोवर गह्वरवनकी शोभा है। पासमें ही सुन्दर-सुन्दर रमणीय कुञ्ज हैं। वैष्णवगण श्रद्धापूर्वक इन कुञ्जोंकी परिक्रमा करते हैं तथा उनकी धूलमें लोट-पोट करते हैं। यह कुण्ड राधाकृष्णकी विविध लीला-विलासका स्मरण कराता है। इसे गह्वर कुण्ड भी कहते हैं।

चित्र सं.-27

कृष्ण कुण्ड

दोहनी कुण्ड—गह्वरवनकी पश्चिम-दिशामें समीप ही चिकसौली ग्रामके दक्षिणमें स्थित है। यहाँ प्रकट लीलाके समय गोदोहन सम्पन्न होता था। यह स्थान महाराज वृषभानुकी लाखों गायोंके रहनेका खिड़क (स्थान) है।

प्रसंग—एक समय गोदोहनके समय किशोरी श्रीराधिका खड़ी-खड़ी गोदोहनका कार्य देख रही थीं। देखते-देखते उनकी भी गोदोहनकी इच्छा हुई। वे भी एक मटकी लेकर एक गईयाका दूध दोहने लगीं। उसी समय कौतुकी कृष्ण भी वहाँ आ पहुँचे और बोले—सखि! 'तोपे दूध काढ़वो भी नहीं आवे है, ला मैं बताऊँ।' यह कहकर पास ही में बैठ गये। राधिकाजीने उनसे कहा—'अरे मोहन! मोए सिखा।' यह कहकर सामने बैठ गईं। कृष्णने कहा—'अच्छौ दो थन आप दुहो और दो मैं दुहों, आप मेरी ओर निगाह राखो।' कृष्ण ठिठोली करते हुए दूधकी धार निकालने लगे। उन्होंने हठात् एक धार राधाजीके मुख मण्डलमें ऐसी मारी कि राधाजीका मुखमण्डल दूधसे भर गया। फिर तो आप भी हँसने लगे और सखियाँ भी हँसने लगीं—

आमें सामें बैठ दोऊ दोहत करत ठठोर ।
दूध धार मुखपर पड़त दृग भये चन्द्र चकोर ।।

डभरारो—यहाँ श्रीमती राधिकाके दर्शनसे कृष्णकी दोनों आँखोंमें आँसू भर आये। डभरारो शब्दका अर्थ आँसुओंका डब-डबाना है। अब इस गाँवका नाम डभरारो है। यह स्थान बरसानासे दो मील दक्षिणमें है।

रसोली—डभरारोसे डेढ़ मील दूर नैऋत कोणमें रसोली स्थान है यहाँ राधाकृष्णका गोपियोंके साथ सर्वप्रथम प्रसिद्ध रास सम्पन्न हुआ था। यह तुंगविद्या सखीकी जन्मस्थली है। तुंगविद्याके पिताका नाम पुष्कर गोप, माताका नाम मेधा गोपी तथा पतिका नाम वालिश है। तुंगविद्याजी अष्टसखियोंमेंसे एक हैं। वे नृत्य-गीत-वाद्य, ज्योतिष, पद्यरचना, पाक क्रिया, पशु-पक्षियोंकी भाषाविद् राधाकृष्णका परस्पर मिलन कराने आदि विविध कलाओंमें पूर्ण रूपसे निपुण हैं।

मुक्ता कुण्ड—यहाँ श्रीमती राधिकाने कृष्णके साथ विवादकर मुक्ताओंका खेत बनाया था, जिसमें प्रचुर रूपसे मुक्ताओंको उगाया। यह चरित्र श्रीपाद रघुनाथ दास गोस्वामीके द्वारा रचित 'मुक्ताचरित' ग्रन्थमें विस्तार पूर्वक वर्णित है।

पीली पोखर—इसे पीली पोखर या पीयाल कुण्ड भी कहते हैं। इस कुण्डके चारों ओर पीलु फलके वृक्ष हैं, जहाँ प्रचुर रूपमें पीलु फल लगते हैं। श्रीमती राधिका यहाँ पीलु फल एकत्रित करनेके बहाने आकर सखियोंके साथ विविध प्रकारके क्रीड़ा-विलास करती थीं। श्रीकृष्ण भी नन्दगाँवसे यहाँ आकर श्रीमतीजीसे मिलकर विविध प्रकारकी लीलाएँ करते थे। एक ऐसा ही प्रसंग है कि एक समय कीर्तिका कुमारी श्रीमती राधिका सखियोंके साथ नन्दगाँवमें यशोदा मैयाके पास गई हुई थीं। यशोदा मैया उनके रूप, गुण पर मुग्ध हो गईं। उन्होंने मन-ही-मन अपने पुत्र श्रीकृष्णसे विवाह कराकर उन्हें अपनी बहू बनानेकी अभिलाषा की। इस विषयमें वे इतनी अग्रसर हो गईं कि उन्होंने किशोरी राधाजीके हाथ पीलेकर दिये। किशोरी राधिका भी मन-ही-मन बड़ी प्रसन्न हुईं। किन्तु जब वे बरसानेमें अपने पिताके घर लौट रहीं थीं, तो उन्हें बड़ी लज्जा आई। उन्होंने रास्तेमें इसी पोखरमें अपने हाथ मलमलकर धोये, जिससे इस पोखरका जल पीला हो गया। इसलिए इसका नाम पीरी पोखर या पीली पोखर हो गया। पियाल नामक वृक्षोंसे घिरे होनेके कारण इसे पियालकुण्ड भी कहते हैं।

कीर्तिदाकुण्ड—यह वृषभानुकुण्डके पास ही वायुकोणमें स्थित है। यहाँ श्रीराधिकाजीकी मैया श्रीकीर्तिदाजी नित्य स्नान करती थीं। यह कीर्ति सरोवरके नामसे भी विख्यात है।

नमः कीर्तिर्महाभागे! सर्वेषां गोव्रजौकसाम् ।
सर्वसौभाग्यदे तीर्थे सुकीर्तिसरसे नमः ।।

(ब्रजभक्तिविलास धृत वृहत्पाराशर)

व्रजेश्वर महादेव—भानु सरोवरके पास ही वृषभानु बाबा आदि गोपोंके द्वारा इष्ट सिद्धिके लिए स्थापित देवाधिदेव महादेवकी मूर्ति है। ब्रजवासी लोग अपने हितके लिए इनकी पूजा करते हैं। ऐसी एक जनश्रुति है कि किसी समय कुछ ब्रजवासियोंने इस देवमूर्तिको वहाँसे हटाकर किसी और प्रशस्त जगहमें ले जाना चाहा। जैसे-जैसे लोग खुदाई करते गये, वैसे-वैसे इस महादेवजीका स्वरूप और भी गहराईमें बढ़ता गया। वे लोग इसकी गहराईकी कोई थाह नहीं पा सके। अन्तमें उन लोगोंने इस स्वरूपको निकालनेका विचार छोड़ दिया तथा महादेवजीसे क्षमा प्रार्थनाकर इनका यहीं विराजमान रहना उचित समझा।

प्रेमसरोवर—बरसानासे नन्दगाँव जानेके रास्तेमें एक मील की दूरी पर यह कुण्ड विराजमान है। कुण्डका आकार नौकाकी भाँति है। चारों ओर हरे–भरे कदम्ब वृक्षोंसे ऐसे सुसज्जित हैं मानो प्रेम ही मूर्तिमान होकर कुण्डके रूपमें विराजमान हो। यह स्थान परम मनोहर तथा भक्तोंके चित्तको आकर्षित करनेवाला है। यह श्रीमती राधिका और श्रीकृष्णके क्रीड़ा–विनोदका स्थल है। विशेषतः यह श्रीमती राधिकाके प्रेमवैचित्र्य भावोदयका स्थान है।

प्रसंग—एक समय श्रीराधाकृष्ण–युगल ललिता आदि सखियोंसे परिवेष्टित होकर विविध प्रकारके प्रेममय लीलाविलासमें मग्न थे। उसी समय एक भ्रमर श्रीमती राधिकाजीके मुखकमलके पास इधर–उधर उड़ता हुआ उनके मुखमण्डल पर बैठना चाहता था। वह उनके मुखको कमल समझकर उसका मकरन्द पान करना चाहता था। इसलिए वह बार–बार मुखके चारों ओर मँडरा रहा था। श्रीमतीजी भयभीत होकर अपने मुखमण्डलको अपनी दोनों हथेलियोंसे ढककर उसे भगानेकी चेष्टा कर रही थीं, किन्तु वह भाग नहीं रहा था। श्रीमती राधिकाजीको उद्विग्न देखकर मधुमंगलजीने आकर अपनी लठियासे उसे बहुत दूर भगा दिया तथा वह लौटकर इस प्रकार कहने लगा कि मैंने मधुसूदनको यहाँसे बहुत दूर भगा दिया है। वह यहाँसे चला गया, अब नहीं लौटेगा। मधुमंगलकी बात सुनकर कृष्णकी गोदीमें बैठकर भी श्रीमती राधिकाजीने ऐसा समझा कि मधुसूदन (कृष्ण) मुझे यहाँ छोड़कर चले गये। वे हाय–हाय करती हुई विरहसे कातर हो गईं। उस समय वे यह समझ नहीं पायीं कि भ्रमरका भी एक नाम मधुसूदन है। वे बारम्बार हा प्राणनाथ! कहाँ चले गये। हा प्राणनाथ! कहाँ चले गये—इस प्रकार रोदन करने लगीं। राधिकाजीके इस अद्भुत प्रेमवैचित्र्य भावको देखकर कृष्ण भी यह भूल गये कि मेरी प्रियतमा राधिका मेरी गोदमें ही है। वे भी हा प्रिये! कहकर रोदन करने लगे। दोनोंके नेत्रोंसे अश्रुजल और शरीरसे पसीनेका जल इस प्रकार निकलकर बहने लगा कि उससे यह सरोवर पूर्ण हो गया तथा दोनों मूर्छित हो गये। उनकी ऐसी दशाको देखकर सखियाँ भी अचेतन हो गईं। उस समय श्रीमतीजीकी सारिका श्रीराधानाम और शुक श्रीकृष्णनामका जोर–जोरसे उच्चारण करने लगे। वाणीकार श्रीमाधुरीजीने इस लीलाका बहुत ही सरसताके साथ वर्णन किया है। इस प्रकार दोनोंका नाम एक दूसरेके कानोंमें प्रवेश किया। दोनों बाह्य ज्ञान प्राप्तकर वे परस्पर एक दूसरेको सतृष्ण नयनोंसे देखने लगे। क्रमशः सखियाँ

चित्र सं.–28

भी चेतन होकर जय-जय शब्द करने लगीं। फिर तो आनन्दकी सीमा ही नहीं रही।

यहींपर श्रीकृष्णने विचार किया—मैं निकट रहकर भी अपनी प्रियतमा श्रीमती राधिकाजीकी विरह वेदना शान्त करनेमें असमर्थ रहता हूँ। भावी विरहके तापसे वे सदा झुलसती रहती हैं। इन्हें समझानेका कोई उपाय नहीं देखता। जब मैं इनसे दूर होता हूँ, तो वे विप्रलम्भ अवस्थामें मेरा चिन्तन करते-करते भावमें विभोर हो जाती हैं तथा तमाल वृक्षसे हँसकर आलाप करती हैं, सखियोंके साथ विनोद करती हैं और कभी मान भी

करती हैं। इसके विपरीत मेरे अत्यन्त समीप रहनेपर भी विप्रलम्भकी स्फूर्ति होनेसे मेरे लिए विरहमें कातर होकर रोदन करती हैं। अतः निकट रहकर भी मैं इन्हें सांत्वना नहीं दे पाता हूँ। (यही श्रीमती राधिकाका सर्वोत्तम मादनभाव है, जो केवल श्रीमती राधिकामें ही देखा जाता है। ललिता इत्यादि सखियोंमें भी इसका प्रकाश नहीं देखा जाता। इस मादनभावमें आश्चर्यजनक रूपसे संभोग और विप्रलम्भ आदि परस्पर विरोधी सभी प्रकारके भावोंका भी समावेश देखा जाता है।)

अतः मेरा इनसे दूर रहना ही इनकी सांत्वनाका एकमात्र विषय हो सकता है, क्योंकि उस विप्रलम्भ अवस्थामें मेरी स्फूर्ति होनेसे अथवा मेरी कान्ति जैसे तमाल वृक्षादि वस्तुओंको देखनेसे 'ये मेरे प्रियतम हैं' ऐसा मानकर उनका विरह–ताप कुछ प्रशमित हो सकता है। ऐसा सोचकर कृष्णने मन–ही–मन कहीं दूरप्रवासका निश्चय किया। यही उनके वृन्दावनसे मथुरा या द्वारका जानेका प्रधान कारण हुआ।

प्रेम सरोवर प्रेमकी भरी रहे दिन रैन।
जँह जँह प्यारी पग धरत श्याम धरत तँह नैन ।।

इस सरोवरमें स्नान करनेसे राधाकृष्ण युगलके प्रेमकी प्राप्ति होती है इसमें कोई सन्देह नहीं है। यहाँ ललितामोहनजी, रासमण्डल, झूला–स्थल, प्रेमविहारीजीका मन्दिर, श्रीवल्लभाचार्य और श्रीविट्ठलनाथजीकी बैठकें तथा पूर्व दिशामें गाजीपुर गाँव है। भाद्र शुक्ला द्वादशीको यहाँ बूढ़ी लीला होती है।

विह्वल कुण्ड—यह कुण्ड संकेतके पास दक्षिण पूर्व कोणमें है। यहाँ श्रीकृष्ण श्रीराधानाम सुनकर परम विह्वल हो गये थे।

प्रसंग—एक दिन श्रीकृष्ण सुबलसखाके साथ इस मनोहर कुण्डके निकट एक रमणीय कुञ्जमें बैठे हुए रसालाप कर रहे थे। उसी समय एक सारिका पास ही एक वृक्षकी डालीपर बैठकर श्रीराधिकाजीके गुणोंका गान करने लगी। राधिकाजीके नाम और गुणोंका श्रवणकर कृष्णके हृदयमें नाना प्रकारके भावोंका उदय हुआ। उन्हें इधर–उधर सर्वत्र राधिकाकी स्फूर्ति होने लगी। उत्कण्ठित होकर वे उनको पकड़नेके लिए इधर–उधर भागने लगे। श्रीकृष्णके अङ्गोंमें महाभावके अत्यन्त उन्नत अष्टसात्त्विक भावोंका दर्शनकर सुबल सखा, कृष्णकी भाव–शान्तिके लिए विचार करने लगे। उन्होंने सोचा श्रीमती राधिकासे मिलन हुए बिना कृष्णके इन भावोंकी शान्ति नहीं हो सकती।

ऐसा सोचकर उन्होंने किसी प्रकार विशाखा सखी द्वारा कृष्णकी इस अद्भुत विह्वलताका संवाद भेजकर वहाँपर श्रीमती राधिकाको लानेकी प्रार्थना की। जिस समय विशाखादि सखियोंके साथ श्रीराधिकाका आगमन हुआ, उस समय सुबलने उन्हें दूरसे विरहातुर श्रीकृष्णको दिखलाया। उत्कण्ठित हो दोनों एकदूसरेको दर्शनकर परमानन्दित हुए। श्रीराधिकाके श्रीअंगका स्पर्श पाकर कृष्ण कृतकृतार्थ हो गये। जो साधक प्रीतिपूर्वक यहाँ भजन करता है, वह राधाकृष्णके प्रेममें अवश्य ही विह्वल होगा।

संकेत—नन्दगाँव और बरसाना दोनोंके बीचमें संकेत स्थित है। श्रीमती राधिका एवं श्रीकृष्ण इन युगलके पूर्व रागके पश्चात् सर्वप्रथम मिलन यहींपर हुआ था। श्रीमती राधिका अपनी ससुराल जावटसे और श्रीकृष्ण नन्दगाँवसे परस्पर इस स्थानपर मिलते थे। वृन्दादेवी, वीरादेवी और सुबलसखा ये दूत और दूतीका कार्यकर संकेतके द्वारा प्रिया-प्रियतम दोनोंका मिलन कराते थे। इसलिए इस स्थानका नाम संकेत है। कभी-कभी श्रीमती राधिकाजी और कभी-कभी कृष्ण इस स्थानपर परस्पर मिलनेके लिए अभिसार करते थे। कृष्णदास कविराज द्वारा रचित गोविन्दलीलामृत तथा श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर द्वारा रचित कृष्णभावनामृत ग्रन्थमें नैश एवं निशान्त लीलाका इस संकेत स्थलमें राधाकृष्णके मिलन एवं विलासका अद्भुत सरस रूपमें वर्णन किया गया है। योगमायाकी अभिलाषाके अनुसार श्रीवीरा एवं वृन्दादेवी ये दोनों प्रधान दूतियाँ श्रीराधाकृष्ण युगलका परस्पर मिलन कराती हैं। श्रीवृन्दादेवी निशान्तके समय युगलके मधुर जागरणकी व्यवस्था करती हैं। शुक-सारी अपने सुमधुर वचनोंसे उनका प्रबोधन कराते हैं। कोकिल अपने मधुर काकलि और कुहु-कुहु स्वरोंसे, मयूर-मयूरी अपने के-का शब्दोंसे उनको जगानेमें सहायक होते हैं। ललिता, विशाखादि सखियाँ उनकी आरती उतारती हैं। कक्खटी (बूढ़ी मरकटी या वानरी) के 'जटिला' शब्दके उच्चारणसे संकुचित हो श्रीराधा एवं श्रीकृष्ण अपने-अपने भवनमें पधारकर शयन करते हैं।

यहाँ संकेत विहाराजीका मन्दिर, रासमण्डलका चबूतरा और झूलामण्डप—ये स्थान दर्शनीय हैं। रास चबूतराके सामने पूर्व दिशामें श्रीगोपालभट्ट गोस्वामीकी भजन कुटी है। यहींपर श्रीचैतन्य महाप्रभुने द्वादश वन भ्रमणके समय बैठकर विश्राम किया था। रासमण्डल चबूतराके पास ही संकेत देवी (श्रीवीरादेवी) का दर्शन है। पास ही विह्वलादेवी, विह्वलकुण्ड, रंगमहल, शय्यामन्दिर तथा

गाँवके पश्चिममें कृष्णकुण्ड दर्शनीय हैं। कृष्णकुण्डके तटपर श्रीवल्लभाचार्यजीकी बैठक है।

कोई–कोई संकेत गाँवसे नन्दगाँवकी यात्रा करते हैं। कोई–कोई आसपासकी लीलास्थलियाँ रिठौर, भाण्डोखोर, श्रीमेहेरान, साँतोया, पाई, तिलोयार, श्रृंगारवट, बिछोर, अन्धोप, सोन्द, वनचारी, होडल, दईगाँव, लालपुर, हारोयान गाँव, साञ्चुली, गेण्डो गाँव आदिका दर्शन और परिक्रमाकर नन्दगाँवका दर्शन करते हैं।

रिठौर—संकेतवनसे डेढ़ मील पश्चिममें यह गाँव स्थित है। वृषभानु महाराजके ज्येष्ठ भ्राता श्रीचन्द्रभानु गोपका यह गाँव है। इन्हीं चन्द्रभानुकी लाड़ली बेटी चन्द्रावलीजी हैं। चन्द्रावलीजीका जन्म यहींपर हुआ था। गाँवके दक्षिण–पूर्वमें सघन वृक्षावलियोंके बीचमें चन्द्रावली कुण्ड है, जहाँ चन्द्रावलीजी अपनी सखियोंके साथ बाल्य–क्रीड़ाएँ, स्नान और जल–क्रीड़ाएँ भी करती थीं। यहाँ वल्लभाचार्यजीकी बैठक है।

भाण्डोखोर—रिठौरासे चार मील पश्चिम–उत्तर अथवा नन्दगाँवसे चार मील पश्चिममें यह स्थान स्थित है। महाराज नन्दकी पश्चिम दिशामें इसी जगह गोशाला थी। यहाँ दूधके भाण्ड गायोंके दूधसे भरे जाते थे या धोये जाते थे। इसलिए इस स्थानका नाम भाण्डोखोर हुआ है।

मेहेरान गाँव—यह स्थान भाण्डोखोरसे दो मील पश्चिममें स्थित है। यह श्रीकृष्णके चाचा अर्थात् ब्रजराजनन्दके द्वितीय ज्येष्ठ भ्राता अभिनन्दन गोपका गाँव है। ये यहींपर वास करते थे। पास ही इनकी गोशाला थी। कोई–कोई इस स्थानको यशोदाका पित्रालय भी मानते हैं। गाँवके पूर्वमें क्षीरसागर विराजमान है। कहा जाता है शिवरात्रिके दिन अर्द्धरात्रिके समय उस कुण्डके बीचमें दूधकी एक धारा निकलती है। इसलिए इसे क्षीरसागर कहते हैं।

प्रसंग—एक समय बालकृष्णको लेकर यशोदा मैया अपने जेठ अभिनन्दन गोपके यहाँ आई थीं। भोजनके पश्चात् रातमें यशोदा मैया पलंगपर कृष्णको गोदीमें लेकर सुला रही थीं। कृष्णने कहा मैया एक कहानी सुनाओ। यशोदाजी कहानी कहने लगीं और कृष्ण हूँ, हूँ करने लगे। यशोदाजी कहने लगीं, “दशरथ नामके एक राजा थे। उनके चार पुत्र थे—राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न। रामका विवाह महाराज जनककी बेटी जानकीसे हुआ। पिताके आदेशसे राम अपनी पत्नी सीता और छोटे भैया लक्ष्मणजीको साथ लेकर

वनमें चले गये। कृष्ण हूँ, हूँ कर हुंकारी भरते जा रहे थे। यशोदा मैयाने कहा—वनमें रावण नामक राक्षसने सीताजीका हरण कर लिया। इतना सुनते ही कृष्ण अपने पूर्व अवतार रामके आवेशमें आविष्ट होकर "लक्ष्मण! धनुष लाओ, लक्ष्मण! धनुष लाओ" कहते हुए पलंगसे कूद पड़े। ऐसा देखकर यशोदा मैया डर गईं। यह लीला यहींपर हुई थी।

सातोया—मेहेरान गाँवसे दो मील पश्चिममें यह गाँव स्थित है। इसका नामान्तर सत्वास भी है। यह श्रीकृष्णकी महिषी सत्यभामाके पिता महाराज सत्राजितकी सूर्य आराधनाका स्थल है। सत्रा शब्दका ही अपभ्रंश सत्वास है। गाँवके उत्तर-पूर्व कोणमें सूर्यकुण्ड विराजमान है। इसी कुण्डके उत्तर तटपर सूर्य मन्दिर है। यहीं कुण्डमें स्नानकर महाराज सत्राजित सूर्यकी आराधना करते थे। सूर्यदेवने प्रसन्न होकर उनको एक सूर्यकान्तमणि प्रदान की थी, जो प्रतिदिन महाराज सत्राजितको प्रचुर स्वर्ण प्रदान करती थी।

पाईगाँव—सत्वाससे साढ़े पाँच मील उत्तर-पश्चिम कोणमें पाईगाँव स्थित है। एक समय श्रीकृष्ण सखियोंके साथ लुका-छिपीकी लीला खेल रहे थे। कृष्ण कहीं छिप गये। राधिकाके साथ सखियाँ अत्यन्त व्याकुल हो उन्हें खोजने लगीं। बहुत प्रयत्न करनेपर गोपियोंने कृष्णको यहींपर ढूढ़ निकाला। कृष्णको पाकर सखियों सहित राधिका बड़ी प्रसन्न हुईं और बोलीं पाई-पाई! अर्थात् "पा लिया।" इसलिए इस गाँवका नाम पाई प्रसिद्ध हो गया। ये सभी गाँव ब्रजकी सीमापर अवस्थित हैं।

तिलोयार—यहाँ राधा और कृष्ण सखियोंके साथ लीला विलासमें इस प्रकार आविष्ट हो गये कि उन्हें भोजन-पानके लिए तिलमात्रका भी स्मरण नहीं रहा, घर लौटनेकी तो बात ही अलग रही। किसी प्रकारसे वृन्दादेवीने इन्हें घर लौटनेका स्मरण दिलाया। तिलमात्रका भी समय स्मरण न रहनेके कारण इस स्थानका नाम तिलोयार हुआ। इन गाँवोंमें मेव जातिके मुसलमान रहते हैं। यह गाँव भी ब्रजमण्डलकी सीमापर स्थित है।

श्रृंगारवट—तिलोयार गाँवसे दो मील उत्तरमें श्रृंगारवट अवस्थित है। यहाँ क्रीड़ा करते समय सखाओंने श्रीकृष्णके अंगोंमें सोलह श्रृंगार धारण कराये थे। कभी श्रीकृष्णने अपने हाथोंसे श्रीमती राधिकाको केश-संस्कार आदि सोलह श्रृंगार धारण कराये थे। अब वह वट वृक्ष अन्तर्धान हो गया है। वह गाँव आज भी श्रृंगारवट या श्रृंगारगाँवके नामसे प्रसिद्ध है।

बिछोर—शृंगारवटसे डेढ़ मील उत्तर–पूर्व तथा कोसीसे दस मील दक्षिण–पश्चिम कोणमें यह लीला स्थली अवस्थित है। श्रीकृष्णने यहाँपर सखियों सहित श्रीमती राधिकाके साथ विविध प्रकारका लीला–विलास किया था। लीला विलासके पश्चात् घर लौटते समय दोनों विरह–विच्छेदसे कातर हो गये थे। इसलिए यह गाँव बिछोर नामसे प्रसिद्ध है।

क्रीड़ावसानेते दोंहे चले निजालय।
विच्छेद–प्रयुक्त ए 'बिछोर' नाम हय।।

(भक्तिरत्नाकर)

अन्धोप—यह स्थान बिछोरसे दो मील उत्तर–पश्चिममें तथा शृंगारवटसे तीन मील उत्तरमें स्थित है। यह गाँव भी ब्रजकी सीमापर स्थित है।

सोन्द—अन्धोपसे चार मील उत्तर–पूर्वमें यह गाँव स्थित है। यह नन्द महाराजके छोटे भैया सनन्दका गाँव है। वे यहीं वास करते थे। ये कृष्णको अत्यन्त प्यार करते थे। कभी–कभी कृष्णको अपने पास भी बुलाकर इनको स्नान, वेश रचना आदिके उपरान्त अपने साथ बैठाकर स्वादिष्ट द्रव्योंका भोजन कराते थे।

वनचरी—यह स्थान सोंदसे दो मील उत्तर–पूर्वमें मथुरा दिल्ली राजमार्गपर स्थित है। यह भी ब्रजकी सीमापर स्थित है। यहाँ दाऊजी दर्शनीय हैं।

होडल—वनचरीसे चार मील दक्षिण–पूर्व दिल्ली–मथुरा राजमार्गपर यह स्थान अवस्थित है। गाँवके पास ही पाण्डव वन है। पाण्डवोंने वनवासके समय यहाँ निवास किया था। पासमें ही पाण्डव कुण्ड है, जहाँ वे लोग स्नान और जलपान करते थे। होड़लसे दक्षिण–पश्चिम एक मील दूर कुञ्जरवन है, जहाँ कृष्ण सखियोंके साथ कुञ्जोंमें नाना प्रकारकी क्रीड़ाएँ करते थे। कभी–कभी बहुतसी सखियाँ मिलकर कुंजर (हाथी) बन जातीं; श्रीकृष्ण उसके ऊपर चढ़कर बैठ जाते। इस क्रीड़ाके कारण भी इस लीलास्थलीका नाम कुंजरवन पड़ा है।

दईगाँव—यह स्थान होडलसे तीन मील दक्षिणमें स्थित है। यहाँ सखाओंके साथ कृष्णने दान लेनेके बहाने गोपियोंसे दधिको लूटा था। यहाँ दधिकुण्ड, मधुसूदनकुण्ड, शृंगारमन्दिर, शीतलकुण्ड, सप्तवृक्ष मण्डली दर्शनीय हैं। शीतलकुण्डके तटपर कदम्ब वृक्षके नीचे श्रीवल्लभाचार्यजीकी बैठक है।

लालपुर—दई गाँवसे डेढ़ मील पश्चिमकी ओर यह गाँव स्थित है। इस गाँवके उत्तरमें दुर्वाषामुनिका आश्रम है। वहाँ दुर्वाषा कुण्ड और दुर्वाषाजीका मन्दिर है।

हारोयान ग्राम—इस गाँवका वर्तमान नाम पीपरवार है। यहाँ श्रीमती राधिकाने पासाक्रीड़ामें कृष्णको हराकर उनकी वंशी जीत ली थी।

प्रसंग—किसी समय श्रीमती राधिकाजीने ललिता आदि सखियोंसे यह परामर्श किया कि कृष्ण शारीरिक शक्तिमें हम लोगोंसे अधिक बलवान होनेके कारण शारीरिक शक्तिवाली क्रीड़ाओंमें हमें पराजित कर देते हैं। तुम लोग बुद्धिसे सम्बन्धित एक ऐसी क्रीड़ाका आविष्कार करो, जिसमें हम कृष्णको सरलतासे पराजित कर सकें। ललिता सखीने श्रीमतीजीको पासाक्रीड़ाके द्वारा कृष्णको हरानेका परामर्श दिया। परामर्शके पश्चात् सखियोंने कृष्णको पासाक्रीड़ाके लिए चुनौती दे दी। खेल आरम्भ होते ही श्रीमती राधिकाजीने सहज रूपमें ही कृष्णको पराजितकर बाजीमें रखी हुई उनकी वंशी छीन ली। पास ही बैठे मधुमंगलने खिन्न होकर कहा—कन्हैया! गोपियोंने अभी तुम्हारी वंशी ले ली, फिर ये तुम्हारा सर्वस्व हरणकर लेंगी। तुम गोचारणमें ही प्रवीण हो। गऊओंको चराओ। तुम्हें इस प्रकार पराजित होता देखकर मुझे बड़ा दुःख होता है। ऐसा कहकर ही-ही-ही-हीकर हँसने लगा। कृष्णने उसे वाचाल ब्राह्मण कहकर डाँट-डपटकर चुप रहनेके लिए कहा। इस लीलाके (कृष्ण पासक्रीड़ामें हारने) कारण इस गाँवका नाम हारोयान पड़ा।

साञ्चुली—हारोयान ग्रामसे चार मील दक्षिण कोणमें अथवा नन्दगाँवसे छह मील उत्तर-पश्चिम कोणमें यह ग्राम स्थित है। इस ग्राममें चन्द्रावली सखीका मन्दिर तथा सूर्यकुण्ड दर्शनीय स्थान हैं। चन्द्रावली सखी यहीं सूर्यपूजाके बहाने कृष्णसे मिलती थी।

गेंडो—साञ्चुलि ग्रामसे तीन मील पूर्वमें यह गाँव स्थित है। यहाँ कृष्ण और बलदेव सखाओंके साथ गेंद खेलते थे। इस गाँवमें सात कुण्ड हैं। उत्तरमें गेंदकुण्ड, श्रीबलरामके खड़े होनेका स्थान, गाँवके ईशान कोणमें उत्तर-पूर्वमें गेंदखोर, कृष्णके खड़े होनेका स्थान, गाँवके पूर्वमें गैधरवन, दक्षिणमें बेलवनकुण्ड, दक्षिण-पश्चिममें गोपीकुण्ड, पश्चिममें जलभरकुण्ड (गोपियोंके जल भरनेका कुण्ड) तथा वायुकोणमें विहारकुण्ड है।

चित्र सं.-29

श्रीनन्दगाँवका श्रीमन्दिर

नन्दगाँव

नन्दगाँवमें ब्रजराज श्रीनन्दमहाराजजीका राजभवन है। यहाँ श्रीनन्दराय, उपानन्द, अभिनन्द, सुनन्द तथा नन्दने वास किया है, इसलिए यह नन्दगाँव सुखद स्थान है।[१] गोवर्धनसे १६ मील पश्चिम-उत्तर कोणमें, कोसीसे ८ मील दक्षिणमें तथा वृन्दावनसे २८ मील पश्चिममें नन्दगाँव स्थित है। नन्दगाँवकी प्रदक्षिणा चार मीलकी है। यहाँपर कृष्णलीलाओंसे सम्बन्धित ५६ कुण्ड हैं। जिनके दर्शनमें ३-४ दिन लग जाते हैं।

देवाधिदेव महादेव शंकरने अपने आराध्यदेव श्रीकृष्णको प्रसन्नकर यह वर माँगा था कि मैं आपकी बाल्य लीलाओंका दर्शन करना चाहता हूँ। स्वयं-भगवान् श्रीकृष्णने नन्दगाँवमें उन्हें पर्वताकारमें स्थित होनेका आदेश दिया। श्रीशंकर महादेव भगवानके आदेशसे नन्दगाँवमें नन्दीश्वर पर्वतके रूपमें स्थित होकर अपने आराध्यदेवके आगमनकी प्रतीक्षा करने लगे। श्रीकृष्ण परम वैष्णव शंकरकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिए नन्दीश्वर पर्वतपर ब्रजवासियों विशेषतः नन्दबाबा, यशोदा मैया तथा गोप सखाओंके साथ अपनी बाल्य एवं पौगण्ड अवस्थाकी मधुर लीलाएँ करते हैं।

द्वापरयुगके अन्तमें देवमीढ़ नामके एक मुनि थे। उनकी दो पत्नियाँ थीं। एक क्षत्रियवंशकी, दूसरी गोपवंशकी। पहली क्षत्रियपत्नीसे शूरसेन तथा दूसरी गोपपत्नीसे पर्जन्यगोप पैदा हुये।
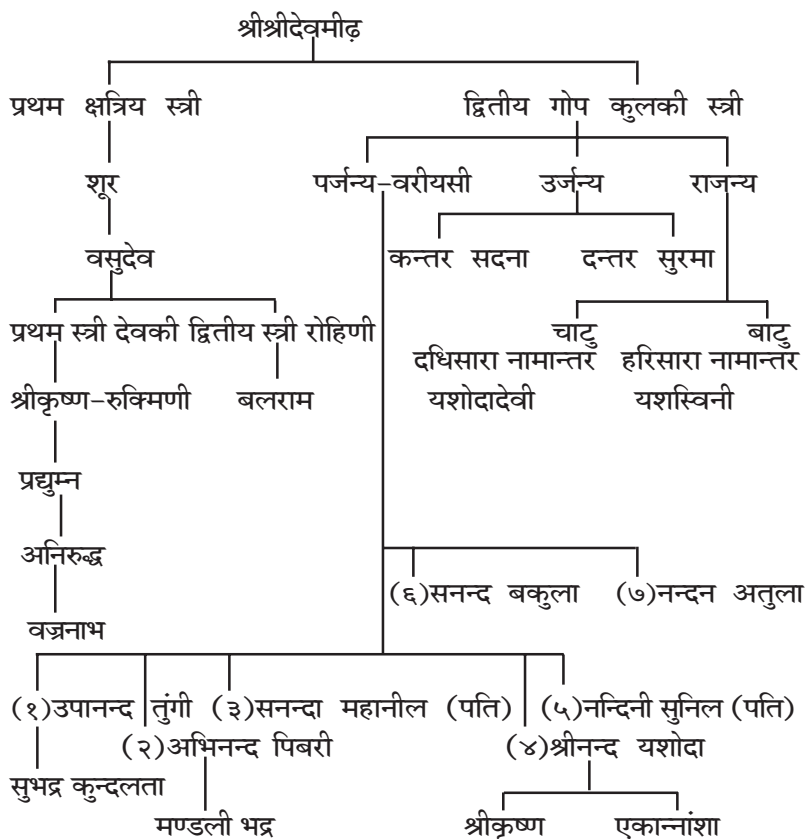
शूरसेनसे वसुदेव आदि क्षत्रिय पुत्र उत्पन्न हुए। पर्जन्यगोप कृषि और गोपालनके द्वारा अपना जीवन निर्वाह करते थे। पर्जन्यगोप अपनी पत्नी वरीयसी गोपीके साथ नन्दीश्वर पर्वतके निकट निवास करते थे। देवर्षि नारद भ्रमण करते-करते एक समय वहाँ आये। पर्जन्यगोपने विधिवत् पूजाके द्वारा उनको प्रसन्नकर उनसे उत्तम सन्तान प्राप्त करनेके लिए आशीर्वाद माँगा। नारदजीने उनको लक्ष्मीनारायण मन्त्रकी दीक्षा दी और कहा, इस मन्त्रका जप करनेसे तुम्हें उत्तम सन्तानकी प्राप्ति होगी। नारदजीके चले जानेपर वे पास ही तड़ाग तीर्थमें स्नानकर वहीं गुरुप्रदत्त मन्त्रका प्रतिदिन

---

(१) यत्र नन्दोपनन्दास्ते प्रति नन्दाधिनन्दनाः ।
चक्रुर्वासं सुखस्थानं यतोनन्दाभिधानकम् ।।
(आदिपुराण)

नियमानुसार जप करने लगे। एक समय मन्त्र जपके समय आकाशवाणी हुई कि "हे पर्जन्य! तुमने ऐकान्तिक रूपमें मेरी आराधना की है। तुम परम सौभाग्यवान् हो। समस्त गुणोंसे गुणवान् तुम्हारे पाँच पुत्र होंगे। उनमेंसे मध्यम पुत्र नन्द होगा, जो महासौभाग्यवान् होगा। सर्वविजयी, षड़ैश्वर्यसम्पन्न, प्राणीमात्रके लिए आनन्ददायक श्रीहरि स्वयं उनके पुत्रके रूपमें प्रकट होंगे।" ऐसी आकाशवाणी सुनकर पर्जन्यगोप बहुत प्रसन्न हुए। कुछ दिनोंके पश्चात् उन्हें पाँच पुत्र और दो कन्याएँ पैदा हुईं। वे कुछ और दिनोंतक नन्दीश्वर पर्वतके निकट रहे, किन्तु कुछ दिनोंके बाद केशी दैत्यके उपद्रवसे भयभीत होकर वे अपने परिवारके साथ गोकुल महावनमें जाकर बस गये। वहीं मध्यमपुत्र नन्दमहाराजके पुत्रके रूपमें स्वयं–भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र प्रकट हुए।

कुछ समय बाद वहाँ महावनमें भी पूतना, शकटासुर तथा तृणावर्त आदि दैत्योंके उत्पातको देखकर व्रजेश्वर श्रीनन्दमहाराज अपने पुत्रादि परिवारवर्ग तथा गो, गोप, गोपियोंके साथ छटीकरा ग्राममें, फिर वहाँसे काम्यवन, खेलनवन आदि स्थानोंसे होकर पुनः नन्दीश्वर (नन्दगाँव) में लौटकर यहीं निवास करने लगे। यहींपर कृष्णकी बाल्य एवं पौगण्डकी बहुतसी लीलाएँ हुईं। यहींसे गोपाष्टमीके दिन पहले बछड़ों और बछड़ियोंको तथा दो-चार वर्षोंके बाद गोपाष्टमीके दिनसे ही कृष्ण और बलदेव सखाओंके साथ गायोंको लेकर गोचारणके लिए जाने लगे।

यहाँ नन्दगाँवमें कृष्णकी बहुतसी दर्शनीय लीलास्थलियाँ हैं।

नन्दभवन—नन्दीश्वर पर्वतसे संलग्न दक्षिणकी ओर नन्दभवनकी पौढ़ीका भग्नावशेष नाममात्र अवशिष्ट है। यहींपर विशाल नन्दभवन था। इसमें नन्दबाबा, माँ यशोदा, माँ रोहिणी, कृष्ण और बलदेव सबके अलग-अलग शयनघर, रसोईघर, भाण्डारघर, भोजनस्थल, राधिका एवं कृष्णके विश्रामस्थल आदि कक्ष विराजमान थे। यहींपर कृष्ण और बलदेवने अपनी बाल्य, पौगण्ड और किशोर अवस्था तककी बहुतसी लीलाएँ की हैं। यहींपर माँ यशोदाके अत्यन्त आग्रह और प्रीतिपूर्वक अनुरोधसे सखियोंके साथ श्रीमती राधिका प्रतिदिन पूर्वाह्नमें जावटसे आकर परम उल्लासपूर्वक माँ रोहिणीके साथ कृष्णके लिए रुचिकर द्रव्योंका पाक करती थीं। कृष्ण पासके बृहत् भोजनागारमें सखाओंके साथ भोजन करते थे। भोजनके पश्चात् एक सौ पग चलकर शयनागारमें विश्राम करते थे।

राधिका विश्राम स्थल—रन्धनका कार्य समाप्त होनेके पश्चात् श्रीमती राधिका माँ यशोदाके अनुरोधसे श्रीधनिष्ठा सखीके द्वारा लाये हुए श्रीकृष्णके भुक्तावशेषके साथ प्रसाद पाकर इसी बगीचेमें विश्राम करती थीं। उसी समय सखियाँ दूसरोंसे अलक्षित रूपमें कृष्णका उनके साथ मिलन कराती थीं। इस स्थानका नाम राधाबाग है।

वनगमन स्थान—माँ यशोदा राम और कृष्णका प्रतिदिन नाना रूपसे श्रृंगारकर उन्हें गोचारणके लिए तैयार करती थीं तथा व्याकुल चित्तसे सखाओंके साथ गोचारणके लिए विदा करती थीं।

गोचारण गमन मार्ग—सखाओंके साथ नटवर राम-कृष्ण गोचारणके लिए इसी मार्गसे होकर निकलते थे।

राधिका बिदा स्थल—माँ यशोदा श्रीमती राधिकाको गोदीमें बैठाकर रोती हुई उसे जावटके लिए यहींसे विदा करती थीं।

दधिमन्थनका स्थान—यशोदाजी यहाँ नित्यप्रति प्रातःकाल दधिमन्थन करती थीं। आज भी यहाँ एक बहुत बड़ी दधिकी मटकी दर्शनीय है।

पूर्णमासीजीका आगमन पथ—बालकृष्णका दर्शन करनेके लिए योगमाया पौणमासी इसी पथसे नन्दभवनमें पधारती थीं।

ये सारे स्थान बृहदाकार नन्दभवनमें स्थित हैं।

श्रीरघुपति उपाध्यायने नन्दभवनका सरस शब्दोंमें वर्णन किया है—

श्रुतिमपरे स्मृतिमितरे भारतमन्ये भजन्तु भवभीताः ।
अहमिह नन्दं वन्दे यस्यालिन्दे परं ब्रह्म ।।

(पद्यावली)

—भवसागरसे भयभीत कोई श्रुतियोंका, कोई स्मृतियोंका और कोई भले ही महाभारतका भजन करता है तो वह वैसा करे, परन्तु मैं नन्दबाबाकी अहर्निश वन्दना करता हूँ, जिनके आँगनमें परम–ब्रह्म घुटनोंसे इधर- उधर चलते हैं।

नन्दकुण्ड—नन्दभवनसे थोड़ी दूर दक्षिणमें नन्दकुण्ड है। महाराज नन्द प्रतिदिन प्रातः काल यहाँ स्नान, सन्ध्या मन्त्रजप आदि करते थे। कभी–कभी कृष्ण और बलरामको भी अपने कन्धोंपर बिठाकर लाते थे और उन्हें भी स्नान कराते थे। कुण्डके तटपर स्थित मन्दिरमें नन्दबाबा और उनकी गोदमें बैठे बालस्वरूप कृष्ण एवं दाऊजीकी बड़ी मनोहर झाँकी है।

नन्द बैठक—ब्रजेश्वर महाराज नन्द यहाँपर अपने बड़े और छोटे भाईयों, वृद्ध गोपों तथा पुरोहित आदिके साथ समय–समयपर बैठकर कृष्णके कल्याणार्थ विविध प्रकारके परामर्श आदि करते थे। बैठकर परामर्श करनेके कारण इसे बैठक कहा गया है। चौरासी कोस ब्रजमें महाराज नन्दकी बहुतसी बैठकें हैं। नन्दबाबा गोकुलके साथ जहाँ भी विराजमान होते, वहींपर समयोचित बैठकें हुआ करती थीं। इसी प्रकारकी बैठकें छोटी और बड़ी बैठन तथा अन्य स्थानोंमें भी हैं। नन्दबाबा, गो, गोप, गोपी आदिके साथ जहाँ भी निवास करते थे, उसे नन्दगोकुल कहा जाता था। बैठकें कैसे होती थीं, उसका एक प्रसंग इस प्रकार है—

गिरिराज गोवर्धनको सात दिनोंतक अपनी कनिष्ठ अंगुलीपर धारणकर सप्त वर्षीय कृष्णने इन्द्रका घमण्ड चकनाचूर कर दिया था। इससे सभी

वृद्ध गोप बड़े आश्चर्यचकित हुए। उन्होंने एक बैठक की। ज्येष्ठ भ्राता उपानन्द उस बैठकके सभापति हुए। नन्दबाबा भी उस बैठकमें बुलाये गये। वृद्ध गोपोंने बैठकमें अपना-अपना यह मन्तव्य प्रकट किया कि श्रीकृष्ण एक साधारण बालक नहीं हैं। जन्मते ही पूतना जैसी भयंकर राक्षसीको खेल-ही-खेलमें मार डाला। तत्पश्चात् शकटासुर, तृणावर्त, अघासुर आदिको मार गिराया। कालीय जैसे भयंकर नागका भी दमनकर उसे कालीदहसे बाहर कर दिया। अभी कुछ ही दिन हुए गिरिराज जैसे विशाल पर्वतको सात दिनोंतक अपनी कनिष्ठ अंगुलीपर धारणकर मूसलाधार वृष्टि और आँधी-तूफानसे सारे ब्रजकी रक्षा की। यह साधारण बालकका कार्य नहीं है। हमें तो ऐसा लगता है कि यह कोई सिद्ध पुरुष, देवता अथवा स्वयं नारायण ही हैं। नन्द और यशोदाका पुत्र मानकर इसे डाँटना, डपटना, चोर, उद्दण्ड आदि सम्बोधन करना उचित नहीं है। अतः नन्द, यशोदा और गोप, गोपी सावधानीसे सदैव इसके साथ प्रीति और गौरवमय व्यवहार ही करें। उपस्थित सभी गोपोंने इस वक्तव्यको बहुत ही गम्भीर रूपसे ग्रहण किया। सभीने मिलकर नन्दबाबाको इस विषयमें सतर्क कर दिया।

नन्दबाबाने हँसते हुए उनकी बातोंको उड़ा दियो और कहा—"आदरणीय सज्जनो! आपका वक्तव्य मैंने श्रवण किया, किन्तु मैं कृष्णमें लेशमात्र भी किसी देवत्व या भगवत्ताका लक्षण नहीं देख रहा हूँ। मैं इसे जन्मसे जानता हूँ। भला भगवानको भूख और प्यास लगती है? यह मक्खन और रोटीके लिए दिनमें पचास बार रोता है। क्या भगवान् चोरी करता और झूठ बोलता है? यह गोपियोंके घरोंमें जाकर मक्खन चोरी करता है, झूठ बोलता है तथा नाना प्रकारके उपद्रव करता है। पड़ोसकी गोपियाँ इसे चुल्लूभर मट्ठेके लिए, लड्डूके लिए तरह-तरहसे नचाती और इसके साथ खिलवाड़ करती हैं। जैसा भी हो, जब इसने हमारे घरमें पुत्रके रूपमें जन्म ग्रहण किया है, तब इसके प्रति हमारा यही कर्तव्य है। भविष्यमें यह सदाचार आदि सर्वगुणसम्पन्न आदर्श व्यक्ति बने। हाँ एक बात है कि महर्षि गर्गाचार्यने नामकरणके समय यह भविष्यवाणी की थी कि तुम्हारा यह बालक गुणोंमें भगवान् नारायणके समान होगा। अतः चिन्ताकी कोई बात नहीं है।"

इसके अतिरिक्त कभी-कभी कृष्णके हितमें, उसकी सगाईके लिए तथा अन्य विषयोंके लिए समय-समयपर बैठकें हुआ करती थीं।

यशोदा कुण्ड—नन्दभवनके उत्तरमें यह कुण्ड अवस्थित है। माँ यशोदा यहाँ प्रतिदिन स्नान करती थीं। कभी–कभी कृष्ण और बलरामको भी साथ लाती थीं तथा उन दोनों बालकोंकी बाल क्रीड़ाका दर्शनकर अत्यन्त आनन्दित होती थीं। कुण्डके तटपर नृसिंहजीका मन्दिर है। माँ यशोदा स्नान करनेके पश्चात् नृसिंहदेवके निकट कृष्णके कुशल–क्षेमके लिए प्रार्थना करती थीं। यशोदाकुण्डके पास ही निर्जन स्थलमें एक प्राचीन गुफा है। जहाँ अनेक सन्त महानुभावोंने साधनाकर भगवद् प्राप्ति की है। सिद्ध महात्माओंकी यह भजन स्थली आजतक निरपेक्ष साधकोंको भजनके लिए आकर्षित करती है। यशोदाकुण्डके पास ही **कारोहरो कुण्ड** है।

हाऊबिलाऊ—यशोदा कुण्डके पश्चिमी तटपर सखाओंके साथ कृष्णकी बालक्रीड़ाका यह स्थान है। यहाँ सखाओंके साथ कृष्ण बलदेव दोनों भाई बालक्रीड़ा करनेमें इतने तन्मय हो जाते थे कि उन्हें भोजन–करनेका भी स्मरण नहीं रहता था। मैया यशोदा कृष्ण बलरामको बुलानेके लिए रोहिणीजीको पहले भेजतीं, किन्तु जब वे बुलाने जातीं तो उनकी पकड़में ये नहीं आते, इधर–उधर भाग जाते थे। इसके पश्चात् यशोदाजी स्वयं जातीं और नाना प्रकारकी भंगिमाके द्वारा बड़ी कठिनतासे दोनोंको पकड़कर घर लातीं और उन्हें स्नान आदि कराकर भोजन करातीं। कभी–कभी यहींपर राम कृष्णको हऊआका भय दिखाकर कृष्णको गोदीमें पकड़कर ले आतीं। उस समय कृष्ण मैयासे हऊआ दिखानेका हठ करते। मैया! मैं हऊआ देखूँगा। आज भी हऊआकी प्रस्तरमयी मूर्तियाँ कृष्णकी इस मधुर बाललीलाका स्मरण कराती हैं—

दूर खेलन मत जाउ लाल यहाँ हाऊ आये हैं ।
हँस कर पूछत कान्ह मैया यह किनै पठाये हैं ।।

मधुसूदनकुण्ड—नन्दीश्वरके उत्तरमें यशोदाकुण्डके पास ही नाना प्रकारके पुष्पोंसे लदे हुए वृक्ष और लताओंके बीचमें यह कुण्ड सुशोभित है। यहाँ मत्त होकर भ्रमरगण सदैव पुष्पोंका मकरन्द पान करते हुए सर्वत्र गुञ्जन करते हैं। कृष्ण सखाओंके साथ वनमें खेलते हुए भ्रमरोंके गुञ्जनका अनुकरण करते हैं। भ्रमरोंका दूसरा एक नाम मधुसूदन भी है तथा कृष्णका भी एक नाम मधुसूदन है। दोनोंके यहाँ गुञ्जनका स्थान होनेके कारण इस स्थानका नाम मधुसूदनकुण्ड है।

पानीहारीकुण्ड—इसका नामान्तर पनघट कुण्ड भी है। ब्रजवासी इसी कुण्डका विशुद्ध मीठाजल पान करते थे। गोपरमणियाँ इस कुण्डपर जल भरनेके लिए आती थीं। इसलिए इसे पनघट कुण्ड भी कहते हैं। कृष्ण भी गोपियोंके साथ मिलनेके लिए पनघटपर उपस्थित होते। विशेषकर गोपियाँ कृष्णसे मिलनेके लिए ही उत्कण्ठित हो कर यहाँ आती थीं। जल भरते समय कृष्णका दर्शनकर ऐसी तन्मय हो जातीं कि मटकी खाली है या जलसे भरी है इसका भी उन्हें ध्यान नहीं रहता। किन्तु उनकी हृदयरूपी मटकीमें प्रियतम अवश्य भर जाते। पनघटका एक निगूढ़ रहस्य यह भी है—गोपियाँ यहाँ कृष्णका यह पन (प्रतिज्ञा) स्मरण करके आतीं कि 'मैं वहाँ तुमसे अवश्य ही मिलूँगा'। कृष्ण उस पनको निभानेके लिए वहाँ उनकी प्रतीक्षा करते हुए निश्चित रूपमें मिलते। अतः कृष्ण और गोपियों दोनोंका पन यहाँ पूरा होता है, इसलिए इसे पनघट कहते हैं।

चरणपहाड़ी—नन्दगाँवके पश्चिममें चरणपहाड़ी स्थित है। कृष्णने यहाँ लाखों-लाखों गायोंको एकत्रित करनेके लिए गोचारणके समय इस पहाड़ीके ऊपर वंशीवादन किया था। वंशीके करुण और मधुर स्वरसे यह पहाड़ी गल गई तथा कृष्णके श्रीचरणोंके चिह्न यहाँपर अंकित हो गये।

परमभक्त अक्रूर जब कंसके आदेशसे कृष्ण और बलरामको ले जानेके लिए मथुरासे नन्दगाँव आ रहे थे, तब नन्दगाँवके निकट पहुँचनेपर यहाँ पहाड़ीके ऊपर तथा आसपास सर्वत्र ही रेतीमें कृष्णके चरण-चिह्नोंका दर्शन हुआ था। वे इन चरणोंमें लोट-पोट कर भाव विह्वल होकर रोदन करने लगे। आज भी भक्तलोग श्रीकृष्णके चरण-चिह्नोंको देखकर भावविह्वल हो जाते हैं।

गायोंका खूँटा—चरणपहाड़ीके निकट ही रोहिणीकुण्ड, मोहिनीकुण्ड तथा खेतमें गायोंके बाँधनेके खूँटे (पत्थरोंके खूँटे दर्शनीय हैं) यहाँ नन्दबाबाकी गोशाला थी, जिसमें गायोंको बाँधा जाता था। आज भी ब्रजवासी महिलाएँ किसी विशेष दिनमें खूँटोंका पूजन करती हैं।

वृन्दादेवी—चरणपहाड़ीसे थोड़ी ही दूर उत्तरदिशामें वृन्दाजीका कुञ्ज है। श्रीकृष्णकी प्रकटलीलाके समय वृन्दादेवी यहाँ निवास करती थीं। यहींसे वे संकेत आदि कुञ्जोंमें दोनोंका मिलन कराती थीं। कभी-कभी योगमाया पूर्णिमा देवीसे परामर्शकर उनके आदेशसे विविध युक्तियोंसे राधाकृष्ण युगलका मिलन कराकर आनन्दित होती थीं। यहाँपर वृन्दादेवीका कुण्ड भी है जहाँ

वे स्नान आदि करती थी। ये विचित्र वस्त्रोंको धारण करनेवाली, नाना प्रकारके आभूषणोंसे अलंकृत राधाकृष्णकी कुंज–लीलाओंकी अधिष्ठातृ वनदेवी हैं। वृन्दादेवीकी कृपाके बिना राधाकृष्णकी लीलाओंमें प्रवेश करना असम्भव है। इन्हीं मूल वृन्दादेवीका अर्चावतार तुलसीजी हैं, जिनके पत्तों

चित्र सं.–30

श्रीवृन्दाकुण्ड (नन्दगाँव)

चित्र सं.–31

पावन सरोवर (नन्दगाँव)

और मञ्जरियोंके बिना कृष्ण कोई भी नैवेद्य ग्रहण नहीं करते हैं। इसीके पास पूर्वमें **चौडोखर** है, जिसे **चरणकुण्ड** भी कहते हैं। इसीके निकट **रोहिणीकुण्ड, मोहिनीकुण्ड, गायोंका खूँटा गाढ़नेका स्थान, गायोंका खिड़क** और **दोहनीकुण्ड** हैं।

पावनसरोवर—यह सरोवर नन्दगाँवसे उत्तरमें नन्दीश्वर पर्वतसे उतरकर काम्यवन जानेके राजमार्गके बगलमें है। इस सरोवरमें स्नान करनेके पश्चात् पर्वतके ऊपर नन्द, यशोदा आदिके दर्शन करनेका नियम है कहते हैं विशाखा सखीके पिता पावन गोपने इस सरोवरका निर्माण किया था। इसलिए उनके नामपर इस सरोवरका नाम पावनसरोवर हुआ है। सखाओंके साथ गोचारणसे लौटते समय कृष्ण गायोंको इस सरोवरमें पानी पिलाते थे। उस समय गायोंको लक्ष्यकर नीरी-नीरी कहकर सरोवरमें प्रवेश कराते, चूँ-चूँ कहकर उन्हें पानी पिलाते तथा तीरी-तीरी कहकर पुनः उन्हें तटपर बुलाते। इस प्रकार गायोंको जल पिलाकर सन्तुष्टकर उनके ठहरनेके स्थान खिड़कमें पहुँचाकर अपने-अपने घरोंको लौटते थे। ब्रजवासी पावन सरोवरके निर्मल और सुगन्धित जलमें स्नान करते थे। कृष्ण भी सखाओंके साथ इस सरोवरमें स्नान और जलक्रीड़ा करते थे। सुदूर अन्य तटपर सहेलियोंके साथ श्रीमती राधिकाजी भी स्नान और जलकेलि करती थीं। कभी कृष्ण अपने तटसे डूबकर मगरकी भाँति सखियोंके घाटपर पहुँचकर सखियोंके पैरोंको पकड़ लेते तथा क्रीड़ा-विलास करते थे। महाराज वृषभानुने अपनी बेटी श्रीमती राधिकाके लिए पावन सरोवरके उत्तरी तटपर एक सुन्दर महलका निर्माण कराया था, जिसमें समय-समयपर श्रीमती राधिका अपनी सहेलियोंके साथ विविध प्रकारकी क्रीड़ाएँ करतीं एवं प्रियतम श्रीकृष्णका सहज ही यहाँसे दर्शन करतीं।

भजन-कुटी—सरोवरके दक्षिण-पूर्वी तटपर श्रीमन् चैतन्य महाप्रभुके परिकर श्रील सनातन गोस्वामीजीकी भजन-कुटी है। नन्दगाँवकी मधुर लीलाओंकी स्मृतिके लिए कभी-कभी वे यहाँ पावन सरोवरके तटपर भजन करते थे। यहींसे वे कभी-कभी कदम्बटेरके निकट श्रील रूपगोस्वामीजीकी भजनकुटीमें सत्संगके लिए जाया करते थे। श्रील रूप गोस्वामी भी यहाँ सनातन गोस्वामीके पास आते। अभी तक भजनकुटीमें श्रीसनातन गोस्वामीकी परम्परामें बहुतसे गौड़ीय भक्तगण इसमें भजन करते आ रहे हैं।

एक समय सनातन गोस्वामी कृष्णविरहमें अत्यन्त कातर होकर वनके भीतर इसी स्थानपर तीन दिन तक बिना खाये-पीये कृष्ण-दर्शनके लिए तड़प-तड़पकर रो रहे थे। उस समय यहाँ उनकी भजनकुटी नहीं थी। उस समय श्रीकृष्ण एक ग्वाल-बालका रूप धारणकर एक मटकीमें दूध लेकर सनातन गोस्वामीके पास पहुँचे और बोले—"तुम भूखे प्यासे यहाँ क्यों पड़े हो? यहाँ कोई भी भूखा-प्यासा नहीं रहता। मेरी मैयाने भूखा-प्यासा देखकर तुम्हें देनेके लिए यह दूधकी मटकी भेजी है, तुम इस दूधको अवश्य ही पान कर लेना। मैं बादमें आकर इस मटकीको ले जाऊँगा। देखो! मेरी मैयाने यह भी कहा है कि तुम्हें यहाँ कुटी बनाकर रहना चाहिए। तुम्हें जंगलमें इस प्रकार पड़ा देखकर ब्रजवासियोंको दुःख होता है।" ऐसा कहकर वह बालक चला गया। उसके चले जानेके पश्चात् सनातन गोस्वामीने जब दूध पान किया तो वे कृष्णप्रेममें अधीर हो उठे तथा हा कृष्ण! हा कृष्ण! मुझे दर्शन देकर भी वञ्चित कर दिया। इस प्रकार विलाप करने लगे। कृष्णने अलक्षित रूपमें उन्हें सात्वना देकर किसी ब्रजवासीके द्वारा उसी स्थानपर एक भजन कुटी बनवा दी। वे वहीं रहकर भजन कुटीमें भजन करने लगे। पास ही पावन विहारीका दर्शन है, जहाँ गाँवके ब्रजवासी पावन सरोवरमें प्रातःकाल स्नानकर उनका दर्शन करते हैं।

इसीके पासमें उत्तरी तटपर श्रीवल्लभाचार्यजीकी बैठक है। जहाँ उन्होंने एक माह तक श्रीमद्भागवतका पारायण किया था। पावन सरोवरके पश्चिममें **कदम्ब खण्डी** है। यहाँपर कदम्बवृक्षोंकी शोभा अपूर्व है। यहाँ भँवरे कदम्ब पुष्पोंके मकरन्दका पानकर चारों ओर मत्त होकर झंकार करते हैं। यह कदम्बखण्डी श्रीबलदेवजीकी विशेष प्यारी है, वे यहाँ पर छोटे भैया कृष्ण और सखाओंके साथ विविध-प्रकारकी क्रीड़ायें करते हैं। यह अनूठी कदम्बखण्डी कृष्ण और दाऊजीकी विविध क्रीड़ाओंकी स्फूर्ति कराती है। यहाँपर अनेकानेक साधु आज भी भजन करते हैं।

तडाग तीर्थ अथवा खुन्नाहार कुण्ड—यह पावन सरोवरके निकट उत्तर-पूर्वमें स्थित श्रीपर्जन्यगोपकी आराधना-स्थली है। पहले वे अपुत्रक थे। देवर्षि नारदसे लक्ष्मी-नारायण मन्त्रमें दीक्षित होकर यहींपर उन्होंने अन्नजल परित्यागकर कठोर रूपमें आराधना की थी। वे त्रिसन्ध्या इस सरोवरमें स्नानकर देवार्चन करते हुए अपने गुरु-प्रदत्त मन्त्रका जप करते थे। कुछ दिनोंके

बाद उन्हें एक आकाशवाणी सुनाई दी—"हे पर्जन्य! तुम्हारे सर्वगुण सम्पन्न पाँच पुत्र होंगे। उनमेंसे मध्यमपुत्र नन्दके पुत्रके रूपमें स्वयं भगवान् श्रीहरि जन्म ग्रहण करेंगे। वे असुरोंका ध्वंसकर विविध प्रकारकी क्रीड़ाएँ करेंगे।" पर्जन्यके अन्नजल त्यागकर आराधना करनेके कारण इस कुण्डका नाम खुन्नाहार कुण्ड भी है। खुन्नाहारका तात्पर्य ही अन्नजल त्यागसे है।

धोवनीकुण्ड—नन्दगाँवके उत्तर-पश्चिम कोणमें नन्दीश्वर पर्वतके नीचे तथा पावन सरोवरके कुछ निकट ही यह कुण्ड स्थित है। दूध-दहीके बर्तन उसमें धोये जाते थे, इसलिए इसका नाम धोवनीकुण्ड हुआ।

मोती या मुक्ता कुण्ड—नन्दीश्वर तड़ागके उत्तरमें लगभग एक मीलपर मुक्ता कुण्ड अवस्थित है। करील और पीलूके वृक्षोंसे परिवेष्टित बहुत ही रमणीय स्थान है। कृष्ण गोचारणके समय सखाओंके साथ इस कुण्डमें गायोंको जल पिलाकर स्वयं भी जलपानकर विविध प्रकारकी क्रीड़ाएँ करते थे। किसी समय कृष्णने यहाँपर मुक्ताओंकी खेतीकर प्रचुर रूपमें मुक्ताएँ पैदा की थीं।

प्रसंग—जब कृष्णने पौगण्ड अवस्थाको पारकर किशोर अवस्थामें प्रवेश किया, उस समय यशोदा मैया कृष्णकी सगाईके लिए चिन्ता करने लगीं। उनको वृषभानु महाराजकी कन्या सर्वगुणसम्पन्ना किशोरी राधिका बड़ी पसन्द थी। यह बात कीर्तिकाजीको मालूम हुई। उन्होंने अपने पति वृषभानुजीसे कहकर विविध प्रकारके कपड़े-लत्ते, अलंकार, प्रचुर मुक्ताओंको एक डलियामें भरकर नन्दभवनमें सगाईके लिए भेजा। ब्रजराजनन्द एवं ब्रजरानी यशोदा इसे देखकर बड़े प्रसन्न हुए, किन्तु सिरपर हाथ रखकर यह सोचने लगे कि हमें भी बरसानामें इसके बदले सगाईके लिए इससे भी अधिक मुक्ताएँ भेजनी पड़ेगीं। किन्तु घरमें उतनी मुक्ताएँ नहीं हैं। इस प्रकार बहुत चिन्तित हो रहे थे। इतनेमें कृष्णने कहींसे घरमें प्रवेशकर माता-पिताको चिन्तित देख चिन्ताका कारण पूछा। मैयाने अपनी चिन्ताका कारण बतलाया। कृष्णने कहा कोई चिन्ताकी बात नहीं। मैं शीघ्र ही इसकी व्यवस्था करता हूँ।

इसके पश्चात् कृष्णने अवसर पाकर उन मुक्ताओंको चुरा लिया और इसी कुण्डपर मिट्टी खोदकर उनको बो दिया। गायोंके दूधसे प्रतिदिन उन्हें सींचने लगे। इधर नन्दबाबा और मैया यशोदा मुक्ताओंको न देखकर और भी चिन्तित हो गयीं। उन्होंने कृष्णसे मुक्ताओंके सम्बन्धमें पूछा। कृष्णने

कहा—हाँ! मैंने उन मुक्ताओंकी खेती की है और उससे प्रचुर मुक्ताएँ निकलेंगी। ऐसा सुनकर बाबा और मैयाने कहा—अरे लाला! कहीं मुक्ताओंकी भी खेती होती है। कृष्णने मुस्कराकर कहा—हाँ, जब मेरी मुक्ताएँ फलेगीं तो तुम लोग देखना। बड़े आश्चर्यकी बात हुई। कुछ ही दिनोंमें मुक्ताएँ अंकुरित हुईं और उनसे हरे-भरे पौधे निकल आये। देखते-ही-देखते कुछ ही दिनोंमें उन पौधोंमें फल लग गये। अनन्तर उन फलोंके पुष्ट और पक जानेपर उनमेंसे अलौकिक प्रभा सम्पन्न उज्ज्वल दिव्य लावण्ययुक्त मुक्ताएँ निकलने लगीं। अब तो मुक्ताओंके ढेर लग गये। कृष्णने प्रचुर मुक्ताएँ मैयाको दीं। फिर तो मैयाने बड़ी-बड़ी सुन्दर ३-४ डलियाँ भरकर मुक्ता, स्वर्णालंकार और वस्त्र बरसानेमें राधाजीकी सगाईके उपलक्ष्यमें भेज दिये।

इधर श्रीमती राधिकाजी एवं उनकी सखियोंको यह पता चला कि श्रीकृष्णने मुक्ताओंकी खेती की है और उससे प्रचुर मुक्ताएँ पैदा हो रही हैं। तो उन्होंने कृष्णसे कुछ मुक्ताएँ माँगीं। किन्तु कृष्णने कोरा उ त्तर दिया कि जब मै मुक्ताओंको सींचनेके लिए तुमसे दूध माँगता था, तब तो तुम दूध देनेसे मना कर देती थीं। मैं अपनी गऊओंको इन मुक्ताओंके अलंकारसे सजाऊँगा, किन्तु तुम्हें मुक्ताएँ नहीं दूँगा। इसपर गोपियोंने चिढ़कर एक दूसरी जगह अपने-अपने घरोंसे मुक्ताओंकी चोरीकर जमीन खोदकर उन मुक्ताओंको बीजके रूपमें बो दिया। फिर बहुत दिनोंतक गऊओंके दूधसे उन्हें सींचा। वे अंकुरित तो हुईं, किन्तु उनसे मुक्ता-वृक्ष न होकर बिना फलवाले काटोंसे भरे हुए पौधे निकले।

गोपियोंने निराश होकर पुनः कृष्णके पास जाकर सारा वृत्तान्त सुनाया। कृष्णने मुस्कराकर कहा—चलो! मैं स्वयं जाकर तुम्हारे मुक्तावाले खेतको देखूँगा। कृष्णने वहाँ आकर पुनः सारे मुक्ताके पौधोंको उखाड़कर उसमें पुनः अपने पुष्ट मुक्ताओंको बो दिया और उसे गायोंके दूधसे सींचा। कुछ ही दिनोंमें उनमें भी मुक्ताएँ लगने लगीं। यह देखकर गोपियाँ भी अत्यन्त प्रसन्न हो गयीं।

फुलवारी कुण्ड—मुक्ता कुण्डके पास ही फुलवारी कुण्ड घने कदम्बके वृक्षोंके बीचमें स्थित है।

प्रसंग—कभी श्रीराधाजी सखियोंके साथ यहाँ पुष्प चयन कर रही थीं। अकस्मात् कृष्णने आकर कहा—तुम कौन हो? प्रतिदिन मेरे बगीचेके पुष्पोंकी चोरी करती हो। इतना सुनते ही श्रीमती राधिकाजीने डपटते हुए उत्तर

दिया—मुझे नहीं जानते, मैं कौन हूँ? यह सुनते ही कृष्ण अपने अधरोंपर मुरली रखकर बजाते हुए अपने मधुर कटाक्षोंसे राधाजीकी तरफ देखकर चलते बने। कृष्णको जाते देखकर राधिकाजी विरहमें कातर होकर मूर्च्छित हो गईं। ललिताजीने सोचा इसे किसी काले भुजंगने डँस लिया है। बहुत कुछ प्रयत्न करनेपर भी जब वे चैतन्य नहीं हुईं, तो सभी सखियाँ बहुत चिन्तित हो गईं। इतनेमें कृष्णने ही सपेरेके वेशमें अपने मन्त्र-तन्त्रके द्वारा उन्हें झाड़ा तथा श्रीमतीजीके कानमें बोले—'मैं आय गयो, देखो तो सही।' यह सुनना था कि श्रीमती राधिकाजी तुरन्त उठकर बैठ गयीं तथा कृष्णको पास ही देखकर मुस्कराने लगीं। फिर तो सखियोंमें आनन्दका समुद्र उमड़ पड़ा। यह लीला यहीं हुई थी।

साहसी कुण्ड—फुलवारी कुण्डसे थोड़ी ही दूर पूर्व दिशामें विलास वट और उसके पूर्वमें साहसी कुण्ड है। यहाँ सखियाँ राधिकाजीको ढाढ़स बँधाती हुई उनका कृष्णसे मिलन कराती थीं। पास ही वटवृक्षपर सुन्दर झूला डालकर सखियाँ श्रीराधा और कृष्णको मल्हार आदि रागोंमें गायन करती हुई झुलाती थीं। कभी-कभी कृष्ण यहाँ राधिकाके साथ मिलनेके लिए अभिसारकर उनके साथ विलास भी करते थे।

इस साहसी कुण्डका नामान्तर **सारसी कुण्ड** भी है। कृष्ण और बलदेव सदैव एक साथ रहते, एक साथ खाते, एक साथ खेलते और एक साथ सोते भी थे। एक समय यहाँपर दोनों भाई खेल रहे थे। यशोदा मैया दोनोंको ढूँढ़ती हुई यहाँ आईं और बड़े प्यारसे उन दोनोंको सारसका जोड़ा कहकर सम्बोधन किया। तबसे इस कुण्डका नाम सारस कुण्ड हो गया।

इसके पास ही अगल बगलमें **श्यामपीपरी कुण्ड**, **बट कदम्ब** और **क्यारी बट कुण्ड** आदि बहुतसे कुण्ड हैं। यहाँ वट वृक्षोंकी क्यारी थी।

टेर कदम्ब (रासमण्डल वेदी)—नन्दगाँव और जावटके ठीक बीचमें टेर कदम्ब स्थित है। रासस्थली होनेके कारण यहाँ रास मण्डलवेदी भी है। कृष्ण गोचारणके समय तृतीय प्रहरमें इस कदम्ब वृक्षके ऊपर चढ़कर अपनी मुरलीके द्वारा श्यामली, धौली, पीताम्बरी, कालिन्दी आदि प्रिय गायोंको टेरते अर्थात् पुकारते थे। उनकी बंशीकी टेरको सुनकर सारी गायें झटसे वहाँ उपस्थित हो जाती थीं। कृष्ण अपनी मणिमालाके ऊपर उनकी संख्या गिनते थे। दो एक बाकी रहनेपर पुनः उन गायोंका नाम लेकर पुकारते।

इस प्रकार जब सारी गायें एकत्रित हो जातीं, तब उन्हें लेकर निवास स्थलकी ओर लौटते।

कभी–कभी पूर्णिमाके छिटकते हुए प्रकाशपूर्ण रात्रिकालमें यहाँ स्थित कदम्बवृक्षके ऊपर चढ़कर बंशी द्वारा सखियोंका नाम ले–लेकर पुकारते और वे सारी गोपियाँ तन, मन एवं संसारकी सुध–बुध खोकर मन्त्रमुग्ध हो यहाँपर मिलतीं तथा उनका कृष्णके साथ नृत्य–गीतसे परिपूर्ण रासविलास

चित्र सं.–32

टेर कदम्ब

सम्पन्न होता। इसलिए भी इस स्थलको कदम्ब टेर कहते हैं। यहाँपर बहुतसे कदम्बके वृक्ष थे, किन्तु वर्षाका पानी भरा रहनेके कारण सारे कदम्ब अन्तर्धान हो गये हैं। समय-समयपर यहाँपर भजन करनेवाले सन्त महात्मा लोग यहाँ कदम्बके वृक्ष लगाते आये हैं।

गोपाष्टमीके दिन ब्रजवासी कृष्ण बलदेवको नन्दगाँवसे यहाँ पधराते हैं तथा यहाँपर समाज नामक गायन होता है। गायोंका पूजन और उन्हें घास, गुड़ आदि खिलानेका बहुत ही सुन्दर कार्यक्रम होता है।

श्रीरूप गोस्वामीकी भजन कुटी—कदम्ब टेरसे सटी हुई पश्चिममें श्रीरूप गोस्वामीकी भजनकुटी स्थित है। श्रील रूपगोस्वामी कृष्णकी मधुर लीलाओंकी स्मृतिके लिए प्रायः इस निर्जन स्थलीमें भजन करते थे। वे यहाँपर अपने प्रिय ग्रन्थोंकी रचना भी करते थे। उन्हें जब कभी-कभी महाभावमयी श्रीमती राधिकाके विप्रलम्भ भावोंकी स्फूर्ति होती, तो हठात् इनके मुखसे विप्रलम्भ भावमय श्लोक निकल आते थे। उस समय यहाँके कदम्ब वृक्षोंके सारे पत्ते उस विरहाग्निमें सूखकर नीचे गिर जाते तथा पुनः इनके हृदयमें युगल मिलनकी स्फूर्ति होते ही इनके पदोंको सुनकर कदम्ब वृक्षोंमें नई-नई कोपलें निकल आती थीं।

एक समय श्रील सनातन गोस्वामी श्रील रूप गोस्वामीसे मिलनेके लिए यहाँ आये। उन दोनोंमें कृष्णकी रसमयी कथाएँ होने लगीं। दोनों कृष्णकथामें इतने आविष्ट हो गये कि उन्हें समयका ध्यान नहीं रहा। दोपहरके पश्चात् आवेश कुछ कम होनेपर श्रील रूप गोस्वामीने सोचा "प्रसाद ग्रहण करनेका समय हो गया है, किन्तु मेरे पास कुछ भी नहीं है, जो श्रीसनातन गोस्वामीको खिला सकूँ।" इसलिए कुछ चिन्तित हो गये। इतनेमें ही साधारण वेशमें एक सुन्दरसी बालिका वहाँ उपस्थित हुई और रूप गोस्वामीको कहने लगी—"बाबा! मेरी मैयाने चावल, दूध और चीनी मेरे हाथोंसे भेजी है, तुम शीघ्र खीर बनाकर पा लेना।" यह कहकर वह चली गई। किन्तु थोड़ी देरमें वह पुनः लौट आई। बाबा! तुम्हें बातचीत करनेसे ही अवसर नहीं। अतः मैं स्वयं ही पाक कर देती हूँ। ऐसा कहकर उसने झट आसपाससे सूखे कण्डे लाकर अपनी फूँकसे ही आग पैदाकर थोड़ी ही देरमें अत्यन्त मधुर एवं सुगन्धित खीर प्रस्तुत कर दी और बोली—"बाबा! ठाकुरजीका भोग लगाकर जल्दीसे पा लो। मेरी मैया डाँटेगी। मैं जा रही हूँ।" ऐसा कहकर वह चली गई। श्रीरूप गोस्वामीने श्रीकृष्णको समर्पितकर खीर सनातन

गोस्वामीके आगे गोस्वामीके आगे धर दी। दोनों भाइयोंने जब खीर खाई तो उन्हें राधाकृष्णकी स्फूर्ति हो आई। वे हा राधे! हा राधे! कहकर विलाप करने लगे। सनातन गोस्वामीने कहा "मैंने ऐसी मधुर खीर जीवनमें कभी नहीं पायी। रूप, क्या भोजनके लिए तुमने मन–ही–मन अभिलाषा की थी? वह किशोरी और कोई नहीं महाभावमयी कृष्णप्रिया श्रीमती राधिकाजी ही थीं। भविष्यमें तुम उन्हें इस प्रकार कष्ट मत देना।" अपनी त्रुटि समझकर श्रीरूप गोस्वामी बड़ा ही खेद करने लगे। जब उन्हें कुछ झपकी आई तो सपनेमें श्रीराधिकाजीने उन्हें दर्शन देकर अपने मधुर वचनोंसे उन्हें सांत्वना दी।

नन्दबाग—श्रीरूप गोस्वामीकी भजन–कुटीके समीप ही दक्षिणमें नन्दबाग है। यहाँ महाराज नन्दका बगीचा था। तरह–तरहके फल और फूलोंसे लदे हुए हरे–भरे वृक्ष और लताएँ थीं। नन्द महाराजकी यहाँ एक खिड़क (गोशाला) भी थी। कृष्ण–बलदेव यहाँ गोदोहनका भी कार्य करते थे तथा सखाओंके साथ अखाड़ेमें मल्लक्रीड़ाका अभ्यास भी करते थे। श्रीमती राधिकाजी अपनी सहेलियोंके साथ जावटसे नन्दभवन जाते समय इसी मार्गसे जाती थीं।

प्रसङ्ग—एक समय श्रीमती राधिका सहेलियोंके साथ पाक क्रियाके लिए नन्दभवन आ रही थीं। यहाँ आनेसे पूर्व कुछ दूरसे सखियोंने ग्वाल बालोंके साथ कृष्णको गोदोहन करते देखा। ललिता सखीने कहा—हम इस मार्गको छोड़कर दूसरे मार्गसे चलें। ब्रजका लम्पट चूड़ामणि गोदोहन करते हुए सतृष्ण नयनोंसे हमारी ओर देख रहा है। वह कुछ–न–कुछ छेड़खानी करेगा ही। हम कुछ घूमकर दूसरे रास्तेसे चलें। किन्तु राधिकाजीने कहा—वह लम्पट क्या कर लेगा? हम निर्भय होकर इसी रास्तेसे चलें। ऐसा कहकर सखियोंके साथ वे इसी मार्गसे चलने लगीं। जब वे अग्रसर होकर अत्यन्त निकट आ गईं तब कृष्णने गोदोहन करते हुए श्रीमती राधिकाके मुखमण्डलपर दूधकी ऐसी धार मारी, जिससे श्रीमतीजीका सारा मुखमण्डल दुग्धमय हो गया। फिर तो सखा और सखियोंमें आनन्दकी हिलोंरे उठने लगीं। सभी हँसने लगे। श्रीमती राधिकाजीने भौंहे तानकर कृष्णकी ओर देखा। कुछ दूर आगे बढ़नेपर उनके गलेकी मुक्तामाला टूटकर पृथ्वीपर गिर गई। वे बैठकर बिखरी हुई मुक्ताओंका चयन करने लगीं। सखियोंने मन–ही–मन श्रीमतीजीका भाव भाँप लिया कि मुक्ता चयनके बहाने वे प्रियतमका कुछ क्षणोंके लिए दर्शन कर रही हैं।

श्रीरूप गोस्वामीने इन सब लीला-स्मृतियोंको अपने उज्ज्वलनीलमणि आदि ग्रन्थोंमें गागरमें सागरकी भाँति संजोकर रखा है।

आशीषेश्वर महादेव—नन्दबागसे ठीक पूर्वमें थोड़ी दूरपर ही आशीषेश्वर महादेव एवं आशीषेश्वर कुण्ड है। यहाँ स्नानकर पर्जन्य महाराज सर्वप्रकारकी मनोकामनाओंको पूर्ण करनेवाले आशीषेश्वर महादेवकी आराधना करते थे। थोड़ी सी आराधनाके द्वारा ही प्रसन्न होकर मनोवाञ्छित आशीर्वाद प्रदान करते हैं, इसलिए इनको आशीषेश्वर महादेव कहते हैं। कोई-कोई ब्रजवासी ऐसा भी कहते हैं कि इन्हींके आशीषसे पर्जन्य महाराजको सर्वगुणसम्पन्न पाँच पुत्र और श्रीकृष्ण जैसे सर्वगुण-सम्पन्न पौत्रकी प्राप्ति हुई थी।

जलविहार कुण्ड—आशीषेश्वर कुण्डके पश्चिममें जलविहार कुण्ड है। यहाँ कृष्ण सखाओंके साथ जलविहार करते हैं।

जोगिया स्थल—कृष्णकुण्डके उत्तर-पूर्वमें स्थित वृक्ष और लताओंसे परिवेष्टित यह एक मनोरम स्थल है। यहाँ महादेव शंकर कृष्णकी आराधना करते हैं। इसलिए इसको महादेवजीकी बैठक भी कहते हैं। कृष्णका दर्शन पानेके लिए वे ब्रजमें पागलसे होकर इधर-उधर डोल रहे थे। परन्तु बहुत चेष्टा करनेपर भी कृष्णका दर्शन नहीं पा सके। क्योंकि कृष्ण कभी सोते रहते तो कभी यशोदाका स्तन पान करते रहते। विशेषकर माँ यशोदा जटा-जूट धारण किये, सर्पोंकी माला पहने, बैल पर सवार, त्रिशूलधारी विचित्रवेश वाले जोगीको देखकर कहीं मेरे बालकको नजर नहीं लग जाये, इसलिए बालकृष्णका दर्शन कराना भी चाहती थीं।

अन्तमें हारकर यहींपर आसन लगाकर शिवने अलख जगाई अर्थात् डमरू बजाते हुए जोर-जोरसे 'अलख निरञ्जन'-'अलख निरञ्जन' पुकारने लगे। वे जितने ही जोरसे अलख निरञ्जन कहते हुए डमरू बजाते, नन्दभवनमें बालकृष्ण उतने ही जोरसे क्रन्दन करने लगते। न डमरू बजना थमता, न कृष्णका क्रन्दन ही। अन्तमें सयानी वृद्ध गोपियोंने यशोदाजीको परामर्श दिया, 'हो न हो यह उसी जोगीकी करतूत है। वह निश्चित ही कोई मन्त्र जानता है, अतः क्यों न उस जोगीको बुलाकर बच्चेको शान्त किया जाय। गोपियोंके परामर्शसे वृद्ध गोपियाँ शिवरूपी योगीके पास आईं और उनसे बोलीं—अरे जोगी! नन्दरानी यशोमती तुम्हें नन्दभवनमें बुला रही हैं, चलो। इतना सुनते ही शंकरजी बड़े आनन्दित होकर नन्दभवनमें पधारे। वहाँ उन्होंने राई और नमक हाथोंमें लेकर बालकृष्णके सिरपर स्पर्शकर आशीर्वाद दिया।

शंकरके हाथोंका स्पर्श पाते ही नन्दलालाका रोदन रुक गया और वे हँसकर किलकारी मारने लगे। जोगीकी आश्चर्यजनक महिमा देखकर नन्दरानी बड़ी प्रसन्न हुईं और अपनी मोतियोंकी माला उन्हें दानमें दी और जोगीसे बोलीं—"जोगी! तुम इसी नन्दभवनमें रहो और जब–जब मेरा लाला रोए, तब–तब दर्शन देकर उसे शान्त करते रहना। सूरदासने इस विषयका अपने पदमें भावपूर्ण वर्णन किया है—

चल रे जोगी नन्दभवनमें यसुमति तोहि बुलावे ।
लटकत लटकत संकर आवै मनमें मोद बढ़ावे ।।
नन्दभवनमें आयो जोगी राई नोन कर लीनो ।
बार फेर लालाके ऊपर हाथ शीश पर दीनो ।।
विथा भई अब दूर बदनकी किलक उठे नन्दलाला ।
खुशी भई नन्दजूकी रानी दीनी मोतियन माला ।।
रहुरे जोगी नन्दभवनमें ब्रजको बासो कीजै ।
जब जब मेरो लाला रोवै तब तब दर्शन दीजै ।।
तुम तो जोगी परम मनोहर तुमको वेद बखाने ।
(शिव बोले) बूढ़ो बाबा नाम हमारो सूरश्याम मोहि जानें ।।

कृष्णकुण्ड—यह सघन कदम्ब वृक्षोंके भीतर एक अत्यन्त रमणीय सरोवर है जो नन्दीश्वर पर्वतकी पूर्वदिशामें निकट ही अवस्थित है। श्रीकृष्ण सखाओंके साथ यहाँ जलक्रीड़ा करते थे। इसी कुण्डके उत्तरी तटपर गोचारणके लिए जाने–आनेका मार्ग है। यहाँ प्यासी गऊओंको कृष्ण जलपान भी कराते थे। छीत स्वामीने गोचारणका अपने पदोंमें बहुत ही मार्मिक वर्णन किया है।

आगें गाय पाछैं गाय इत गाय उत गाय ।
गोविन्दको गायनहोंमें बसवोको भावै ।।
गायनके संग धावें गायनमें सचुपावें ।
गायनकी खुर रज अंगसों लगावें ।।
गायन सों व्रजछायौ वैकुण्ठ हु बिसरायौ ।
गायनके हेत कर लै उठावें ।।
छीत स्वामी गिरिधारी विट्ठलेष वपुधारी ।
ग्वारियाको भेष धरें गायनमें आवें ।।

उद्धवजी जब नन्दगाँव पधारे तो रातभर नन्दभवनमें श्रीनन्द-यशोदाको सांत्वना देते रहे। ब्राह्म मुहूर्तके समय उद्धवजी वहाँसे आकर इसी कुण्डमें स्नानकर कुण्डके दक्षिणी तटपर प्रातःकालीन सन्ध्या आह्निक करने बैठे। उसी समय उन्होंने कुछ दूरीपर कदम्ब-क्यारीमें अलक्षित गोपियोंको देखा वे सन्ध्या-आह्निकके पश्चात् कदम्ब-क्यारीमें गोपियोंसे मिले।

छाछ कुण्ड और झगड़ाकी कुण्ड—कृष्णकुण्डके पश्चिम और कुछ उत्तरकी ओर थोड़ी ही दूरपर कृष्ण एवं सखा गोपियोंसे छाछ माँगकर पीते थे। गोपियाँ इन्हें प्रेमसे छाछ पिलाती थीं। कभी-कभी वे, मुझे पहले लेने दो, मुझे पहले लेने दो! ऐसा कहकर परस्पर लड़ते-झगड़ते थे। इस बाल लीलाके कारण इस कुण्डका नाम छाछ कुण्ड और झगड़ाकी कुण्ड पड़ा।

सूर्यकुण्ड—यह कृष्णकुण्डसे दक्षिणकी ओर राजमार्गपर दाहिनी ओर अवस्थित है। यहाँ सूर्यनारायण कृष्णका त्रिभंग ललितरूप दर्शनकर अधीर होगये थे तथा कुछ देरके लिए अपनी गति भी भूल गये।

ललिता कुण्ड—सूर्यकुण्डसे पूर्व दिशामें हरे-भरे वनोंके भीतर एक बड़ा ही रमणीय सरोवर है। यह ललिताजीके स्नान करनेका स्थान है। कभी-कभी ललिताजी किसी छल-बहानेसे राधिकाको यहाँ लाकर उनका कृष्णके साथ मिलन कराती थीं। यह कुण्ड नन्दगाँवके पूर्व दिशामें है।

प्रसंग—एक समय कृष्णने श्रीमती राधिकाको देवर्षि नारदसे सावधान रहनेके लिए कहा। उन्होंने कहा—देवर्षि बड़े अटपटे स्वभावके ऋषि हैं। कभी-कभी ये बाप-बेटे, माता-पिता या पति-पत्नीमें विवाद भी करा देते हैं। अतः इनसे सावधान रहना ही उचित है। किन्तु श्रीमतीजीने इस बातको हँसकर टाल दिया।

एक दिन ललिताजी वनसे बेली, चमेली आदि पुष्पोंका चयनकर कृष्णके लिए एक सुन्दर फूलोंका हार बना रहीं थीं। हार पूर्ण हो जानेपर वह उसे बिखेर देतीं और फिरसे नया हार गूँथने लगतीं। वे ऐसा बार-बार कर रही थीं। कहीं वृक्षोंकी ओटसे नारदजी ललिताजीके हार गूँथनका दृश्य देख रहे थे। उन्हें बड़ा ही आश्चर्य हुआ। वे ललिताजीके पास पहुँचे और उनसे पुनः-पुनः हारको गूँथने और बिखेरनेका कारण पूछा। ललिताजीने कहा कि मैं हार गूँथना पूर्णकर लेती हूँ तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यह हार कृष्णके लिए या तो छोटा है, या बड़ा है। इसलिए मैं ऐसा

कर रही हूँ। कौतुकी नारदजीने कहा–कृष्ण तो पास ही में खेल रहे हैं। अतः क्यों न उन्हें पास ही बिठाकर उनके गलेका माप लेकर हार बनाओ? ऐसा सुनकर ललिताजीने कृष्णको बुलाकर कृष्णके अनुरूप सुन्दर हार गूँथकर कृष्णको पहनाया। अब कृष्ण ललिताजीके साथ राधाजीकी प्रतीक्षा करने लगे। क्योंकि श्रीमती राधिकाने ललितासे पहले ही ऐसा कहा था कि तुम हार बनाओ, मैं तुरन्त आ रही हूँ। किन्तु उनके आनेमें कुछ विलम्ब हो गया। सखियाँ उनका श्रृंगार कर रही थीं।

नारदजीने पहलेसे ही श्रीकृष्णसे यह वचन ले लिया था कि वे श्रीललिता और श्रीकृष्ण युगलको एक साथ झूले पर झूलते हुए दर्शन करना चाहते हैं। अतः आज अवसर पाकर उन्होंने श्रीकृष्णको वचनका स्मरण करा कर ललिताजीके साथ झूलेपर झूलनेके लिए पुनः–पुनः अनुरोध करने लगे। नारदजीके पुनः–पुनः अनुरोधसे राधिकाकी प्रतीक्षा करते हुए दोनों झूलेमें एकसाथ बैठकर झूलने लगे। इधर देवर्षि, 'ललिता–कृष्णकी जय हो, ललिता–कृष्णकी जय हो', कीर्तन करते हुए श्रीमती राधिकाके निकट उपस्थित हुए। श्रीमती राधिकाने देवर्षि नारदजीको प्रणाम कर पूछा—देवर्षि! आज आप बड़े प्रसन्न होकर ललिता–कृष्णका जयगान कर रहे हैं। कुछ आश्चर्यकी बात अवश्य है। आखिर बात क्या है? नारदजी मुस्कुराते हुए बोले—'अहा! क्या सुन्दर दृश्य है। कृष्ण सुन्दर वनमाला धारणकर ललिताजीके साथ झूल रहे हैं। आपको विश्वास न हो तो आप स्वयं वहाँ पधारकर देखें। परन्तु श्रीमतीजीको नारदजीके वचनोंपर विश्वास नहीं हुआ। मेरी अनुपस्थितिमें ललिताजीके साथ झूला कैसे सम्भव है? वे स्वयं उठकर आईं और दूरसे उन्हें झूलते हुए देखा। अब तो उन्हें बड़ा रोष हुआ। वे लौट आईं और अपने कुञ्जमें मान करके बैठ गईं। इधर कृष्ण राधाजीके आनेमें विलम्ब देखकर स्वयं उनके निकट आये। उन्होंने नारदजीकी सारी करतूतें बतलाकर किसी प्रकार उनका मान शान्त किया तथा उन्हें साथ लेकर झूलेपर झूलने लगे। ललिता और विशाखा उन्हें झुलाने लगीं। यह मधुर लीला यहींपर सम्पन्न हुई थी। कुण्डके निकट ही झूला झूलनेका स्थान तथा नारद कुण्ड है।

उद्धव क्यारी या विशाखा–कुण्ड—ललिताकुण्डसे दक्षिण–पूर्व दिशामें कुछ ही दूर कदम्ब–क्यारी या उद्धव–क्यारी स्थित है। यथार्थमें यह विशाखाजीका कुञ्ज है। पास ही विशाखा कुण्ड है। विशाखाजी कदम्ब वृक्षोंसे

घिरे हुए निर्जन रमणीय वनमें राधाकृष्ण युगलका परस्पर मिलन कराती थीं। कभी-कभी यहाँ कृष्ण सहेलियोंको लेकर राधाजीके साथ रास भी करते थे। रासवेदी भी यहाँ दर्शनीय है। सरोवरके स्वच्छ एवं सुगन्धित जलमें नाना-प्रकारसे जलविहार भी करते थे।

श्रीकृष्णके मथुरा चले जानेपर सारा ब्रज विरह-समुद्रमें डूब गया। गोप-गोपियोंकी तो बात ही क्या? पशु, पक्षी भी भोजन-पान सबकुछ त्यागकर कृष्णविरहमें व्याकुल हो गये। कृष्णकी प्रियतम गोपियाँ अक्रूरके रथके साथ कृष्णके पीछे-पीछे यहाँतक आकर बेसुध होकर गिर पड़ीं। वे फिर कभी घर नहीं लौटीं। अलक्षित रूपमें विरहसे व्याकुल होकर राधाजी इसी गहन वनमें किसी प्रकार कृष्णके आनेकी आशामें दिन गिनती थीं। उनके प्राण कण्ठतक आ गये थे। उसी समय कृष्णके दूत उद्धवजी विरहव्यथित गोपियोंको सांत्वना देनेके लिए यहाँ पधारे। किन्तु श्रीमती राधिकाकी विरह-दशा देखकर उन्होंने उन्हें दूरसे ही प्रणाम किया। परन्तु कुछ कह नहीं सके। इसी समय विरह व्याकुल श्रीमती राधिका एक भँवरेको कृष्णका दूत समझकर दिव्योन्मादमें चित्रजल्प, प्रजल्प आदि करने लगीं। वे भँवरेको कृष्णका दूत समझकर कभी डाँटती-फटकारतीं, कभी उलाहना देतीं, कभी उपदेश देती, कभी दूतका सम्मान करतीं तो कभी उससे प्रियतमका कुशलक्षेम पूछतीं। उसे देख-सुनकर उद्धवजी आश्चर्यचकित हो गये। आये थे गुरु बनकर उपदेश देनेके लिए किन्तु, शिष्य बन गये। उन्होंने सांत्वना देनेके लिए कृष्णके कुछ सन्देश गोपियोंको सुनाये। किन्तु, उससे गोपियोंकी विरह वेदना और भी तीव्र हो गई। गोपियोंने कहा—"ऊधो मन न भयो दस बीस, एक हुतो सो गयो श्याम संग, को आराधे ईश।" और भी, "ऊधो जोग कहाँ राखें, यहाँ रोम रोम श्याम है।"

अन्तमें उद्धवजीने गोपियोंके चरणोंकी धूल ग्रहण करनेके लिए ब्रजमें गुल्म, लता, घासके रूपमें जन्म ग्रहण करनेकी अभिलाषा करते हुए गोपियोंकी चरण धूलिकी वन्दना की—

आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम् ।
या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथञ्च हित्वा भेजुमुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम् ।। [१]

---

[१] मेरे लिये तो यह परम सौभाग्यकी बात होगी कि मैं इस वृन्दावनधाममें कोई झाड़ी, लता अथवा औषधि—जड़ी-बूटी ही बन जाऊँ। अहा! यदि मैं ऐसा बन जाऊँगा, तो मुझे इन ब्रजाङ्गनाओंकी

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभीक्ष्णशः ।
यासां हरिकथोद्गीतं पुनाति भुवनत्रयम् ।।[२]

(श्रीमद्भ. १०/४७/६१,६३)

यह लीला स्थली एक ओर महासम्भोग रसमयी तथा दूसरी ओर महाविप्रलम्भ रसमयी भूमि है। इसके दर्शन और स्पर्शनसे साधकका जीवन कृतार्थ हो जाता है।

पूर्णमासीजीकी गुफा—विशाखा कुञ्ज या कदम्ब–क्यारीके दक्षिण–पूर्वमें नन्दगाँवसे एक मीलकी दूरीपर पूर्णमासीजीका कुण्ड है। यहाँ पूर्णमासीजीकी कुटीर है। ये कृष्णलीलाके समय वृद्ध तपस्विनीके रूपमें गेरुए वस्त्र धारण कर गाँवसे दूर निर्जन स्थानमें रहती थीं। नन्दादि सभी ब्रजवासी इनके प्रति बड़ी ही श्रद्धा रखते थे तथा इनका आशीर्वाद लेकर ही कोई कार्य करते थे। ये पहले अवन्तीपुरीमें अपने पति पुत्रके साथ रहती थी। सान्दीपनि मुनि इनके पुत्र हैं। मधुमंगल सान्दीपनिके पुत्र और नान्दीमुखी सान्दीपनि मुनिकी कन्या थी। पूर्णमासीजी कृष्णके जन्मसे पूर्व ही अपने पौत्र मधुमंगल और पौत्री नान्दीमुखीको साथ लेकर नन्दगाँवमें चली आई थीं। वे प्रतिदिन प्रातःकाल नन्दभवनमें आकर कृष्णका दर्शन करती थीं तथा कृष्णको आशीर्वाद देती थीं। ये श्रीकृष्णकी स्वरूपशक्तिगत समष्टि लीलाशक्तिकी मूर्त्त विग्रह–स्वरूपिणी हैं। प्रकट लीलामें देवर्षि नारदजीकी शिष्या हैं तथा श्रीराधाकृष्ण युगलकी सारी लीलाओंकी पुष्टि करती हैं।

नान्दीमुखीका निवास–स्थान—पूर्णमासी गुफाके पास ही नान्दीमुखीका

चरणधूलि निरन्तर सेवन करनेके लिये मिलती रहेगी। इनकी चरण–रजमें स्नान करके मैं धन्य हो जाऊँगा। धन्य हैं ये गोपियाँ! देखो तो सही, जिनको छोड़ना अत्यन्त कठिन है, उन स्वजन–सम्बन्धियों तथा लोक–वेदकी आर्य–मर्यादाका परित्याग करके, इन्होंने भगवान्‌की पदवी—उनके साथ तन्मयता, उनका परम प्रेम प्राप्त कर लिया है।

[२] नन्दबाबाके ब्रजमें रहनेवाली ब्रजाङ्गनाओंकी चरण–धूलिको मैं बारंबार प्रणाम करता हूँ। अहा इन गोपियोंने भगवान् कृष्णकी लीलाओंके सम्बन्धमें जो कुछ गान किया है, वह तीनों लोकोंको पवित्र कर रहा है और पवित्र करता रहेगा।

निवास स्थान है। ये पूर्णमासीजीकी पौत्री हैं तथा कृष्णलीलाकी विविध प्रकारसे पुष्टिकारिणी हैं।

डोमन वन और रुनकी–झुनकी कुण्ड—पूर्णमासीजीकी गुफासे लगा हुआ डोमनवन है। डोमनवनमें ही रुनकी–झुनकी कुण्ड हैं। डोमनका तात्पर्य दो मनसे है। यहाँ रुनकी–झुनकी सखियोंका कुञ्ज है। ये दोनों सखियाँ नाना प्रकारके बहाने बनाकर यहाँपर राधाकृष्णका मिलन कराती थीं तथा दोनोंको झूलेपर बैठाकर आनन्दसे झुलाती थीं। यहाँ राधाकृष्ण दोनोंका मन मिलनेके कारण यह डोमन नामसे प्रसिद्ध है। किसी भक्तने प्रेम भरे अपने पदमें इसका वर्णन किया है—

इत सों आई कुमरि किशोरी उत सों नन्दकिशोर ।
दो मिल वन क्रीड़ा करत बोलत पंछी मोर ।।

जावट (याव ग्राम)

नन्दगाँवसे पूर्वमें लगभग दो मीलकी दूरीपर जावट या याव ग्राम स्थित है। यह राधाकृष्ण युगलके अत्यन्त रहस्यपूर्ण विलासका स्थान है। उन सबका वर्णन करना सम्भव नहीं है। कभी विलासके समय श्रीराधिकाजीके चरणकमलोंका जावक (महावर) रसिक श्रीकृष्णने अपने वक्ष स्थलपर जहाँ धारण किया था, उस वटवृक्षसे सुशोभित स्थानका नाम याव गाँव या जावट गाँव प्रसिद्ध है।[१]

इसी गाँवमें जटिला गोपी अपने पुत्र अभिमन्यु एवं कन्या कुटिलाके साथ निवास करती थी। महाराज वृषभानु गोपने योगमाया पूर्णिमासीकी आज्ञानुसार अपनी लाड़ली बेटी श्रीराधिकाका विवाह जटिलाके पुत्र अभिमन्युके साथ किया था। अभिमन्यु अपनेको श्रीराधिकाका पति होनेका अभिमान तो रखता था, किन्तु भगवती योगमायाके प्रभावसे वह राधिकाजीकी छायाको भी स्पर्श करनेमें समर्थ नहीं था। वह सदैव किसी विशेष संकोचवश गोशालामें अपनी गऊओंको संभालने अथवा अपने समवयस्क गोपोंके संगमें मग्न रहता था। जटिला और कुटिला गृहकार्योंमें संलग्न रहती थी। इधर विदग्ध सखियाँ नाना प्रकारके छल-बहानोंका आश्रय लेकर श्रीमती राधिकासे श्रीकृष्णका मिलन कराती थीं। वास्तवमें यह परकीया भाव रसपोषणके लिए योगमाया द्वारा सिद्ध है। क्योंकि श्रीमती राधिका श्रीकृष्णकी ह्लादिनीशक्तिकी मूर्त्त विग्रह तथा नित्य कृष्णकान्ता-शिरोमणि हैं। जिस प्रकार आग और उसकी दाहिका शक्ति अथवा सूर्य और उसका प्रकाश नित्य अभिन्न हैं। उन्हें कभी भी अलग-अलग नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार श्रीकृष्ण और उनकी पराशक्ति श्रीराधाजी अभिन्न और अविछिन्न हैं। केवल रस विलासके आस्वादनके लिए ही एक ही आत्मा दो स्वरूपोंमें प्रकाशित है। जिस प्रकार रावण छाया सीताका ही अपहरणकर सका था, मूल सीताका स्पर्श भी नहीं कर पाया था, उसी प्रकार यहाँ अभिमन्युके साथ श्रीमती राधिकाके सम्बन्धमें विचार किया जाता है।

---

(१) राधापादतलाद्यत्र जावकः स्वलतोऽभवत् ।
ग्रसताज्जाव वटं नाम विख्यातं पृथ्वी तले ।।

(वृहद्गौतमीय)

महाराज वृषभानुने अपनी प्यारी बेटीके लिए जावटमें एक सुन्दर राजभवनका निर्माण करवा दिया था। इसमें श्रीमती राधिकाजी अपनी सहेलियोंके साथ आनन्दपूर्वक निवास करती थीं। मुखराजी प्रतिदिन प्रातःकाल अपनी प्यारी पौत्रीको देखनेके लिए आती थीं। भक्तिरत्नाकरमें इन सब लीलाओंका बड़ा ही मर्मस्पर्शी मधुर वर्णन है—

अभिमन्यु रहे निज गो-गोप-समाजे ।
जटिला कुटिला सदा रहे गृहकार्ये ।।
सखी सुचतुरा कृष्णे आनिया एथाए ।
दोंहार विलासे देखे उल्लास हियाय ।।
जटिला, कुटिला, अभिमन्यु भाड़ाईया ।
विलासे कौतुके कृष्ण एथाई आसिया ।।
मुखरा नातिनी एथा देखिया उल्लासे ।
जटिलार प्रति कत कहे मृदुभाषे ।।
एई खाने कुटिला हईया महाहर्ष ।
राधिकाय दूषिते करये परामर्श ।।
एई पथे राधिका चलेन सूर्यालये ।
कदम्ब कानने रहि कृष्ण निरिखये ।।
पथे आसि राधिकार वस्त्र आकर्षय ।
राईकानु दोहार कौतुक अतिशय ।।

(भक्तिरत्नाकर)

प्रसङ्ग—किसी समय राधिकाके मानके कारण श्रीकृष्ण राधिकासे मिल नहीं सके। वे अत्यन्त विरहसे कातर होगये। एकदिन कृष्ण विशाखासे परामर्शकर एक विप्र बटुकका (छात्र) वेश धारण करके—बगलमें पोथी, कन्धेपर यज्ञोपवीत, पैरोंमें खड़ाउँ, हाथोंमें दण्ड और भिक्षा पात्र धारणकर जावट गाँवमें कुटिलाके द्वारपर उपस्थित होकर अलख जगाने लगे। प्रातःकालका समय था। जटिला, कुटिला दोनों गोबरके कण्डे बना रही थीं। स्नान इत्यादि नहीं किया था। (अपवित्र अवस्थामें भिक्षा न दे सकनेके कारण) जटिलाने पुकारकर बहू राधिकाको भिक्षा देनेके लिए आदेश दिया। किन्तु उन्होंने परपुरुषके सामने आनेसे निषेधकर दिया। किन्तु वह भिक्षु वटु भी निराले ढंगका था, बोला—मैया! मैं अधिक देर नहीं ठहर सकता। केवल एक गोदोहन काल तक ही मैं प्रतीक्षाकर सकता हूँ। अब मैं लौट रहा हूँ।

जटिलाजीने सोचा यदि यह विप्र वटु खाली हाथ लौट गया तो मेरे कुलके लिए बहुत ही अशुभ होगा। गऊएँ मर जाएँगी अथवा किसीकी मृत्यु भी हो सकती है। इसलिए गृहमें प्रवेशकर बहूको बहुत प्यारसे समझाकर कुछ भिक्षा देनेके लिए बारम्बार अनुरोध किया और स्वयं पुनः कण्डे थापने चली गईं। इधर ललिता, विशाखा आदि सखियोंके साथ श्रीमती राधिका घूँघट निकालकर हाथोंमें आटा, दाल, सब्जीसे भरे एक पात्रको लेकर भिक्षा देनेके लिए द्वारपर उपस्थित हुईं। उन्होंने घूँघट काढ़े हुए अवस्थामें ही भिक्षुकको भिक्षा देनी चाही, किन्तु भिक्षुकने अनुनय विनयके स्वरमें कहा—मुझे इन भिक्षाओंकी आवश्यकता नहीं है। आप प्रसन्न होकर मेरी इस झोलीमें अपने दुर्लभ मानको प्रदान करें। ऐसा सुनते ही प्रियाजी समझ गईं। उन्होंने मुस्कराते हुए घूँघटको कुछ ऊपर उठाकर बटुके सिरपर भिक्षाके द्रव्य उड़ेल दिये। बटु निहाल होकर राधिकाकी इस भिक्षाका स्मरण करता हुआ आनन्दसे लौट गया।

दूसरा प्रसङ्ग—एक समय माँ यशोदा अपने भण्डारघरमें एक बड़े से सन्दूकमें मूल्यवान वस्त्र—लहँगे, चोलियाँ, ओढ़नी तथा विविध प्रकारके अलंकार सजाकर रख रही थीं। इतनेमें नटखट कृष्ण वहाँ आ धमके। वे पीछेसे मैयाके गलेमें हाथ डालकर बड़े आग्रहसे पूछने लगे—मैया! क्या आज मेरा जन्म दिवस है जो आप मेरे लिए इन वस्त्रों एवं अलंकारोंको सजा रही हो। मैयाने जरा खीजकर कहा—जाओ अभी खेलो। मुझे तंग मत करो। यह सुनकर कृष्ण कुछ अनमने होकर वहाँसे चले तो गये किन्तु छिपकर देखने लगे। मैया जावटमें श्रीमती राधिकाको भेजनेके लिए इस सन्दूकको प्रस्तुत कर रही थीं। कठोरहृदय जटिलाको प्रसन्न रखनेके लिए बीच-बीचमें वे ऐसे ही उपहार वहाँ भेजा करती थीं, जिससे वह अपनी बहूको यहाँ आनेसे निषेध न करे।

श्रीकृष्ण बहुत चतुर थे। वे इस विषयको समझ गये। जब मैया इससे निपटकर किसी दूसरे काममें संलग्न हो गईं, तो कृष्ण सुबल सखाको साथ लेकर वहाँ पहुँचे। सन्दूकसे सारा सामान निकालकर स्वयं उसमें बैठ गये। सुबलने पूर्ववत् सन्दूकको बन्दकर पूर्ववत् ताले जड़ दिये। इधर यशोदाजीके अनुरोधसे अभिमन्यु उस सन्दूकको लेने आया; क्योंकि बहुमूल्य द्रव्योंसे भरे सन्दूकको किसी दूसरेको नहीं दिया जा सकता था। अभिमन्यु सन्दूकको सिरपर रखकर बड़े कष्टसे जावट ग्राममें अपनी मैयाके पास

ले गया। मैयाने कहा—बेटा, इस सन्दूकमें बहूके लिए अत्यन्तमूल्यवान वस्त्र एवं अलंकार भरे हुए हैं। तुम उसीके पास रख आओ। वह प्रसन्नतासे श्रीमती राधिकाके पास इस सन्दूकको रख आया। उसके वहाँसे चले जानेके बाद सखियोंने बड़ी उत्सुकतासे सन्दूकको खोला और कौतुकी श्यामसुन्दरको उसमें बैठे हुए देखकर खिलखिलाकर हँस पड़ी। फिर तो आनन्दकी सीमा नहीं रही। राधा और कृष्ण दोनों बड़े प्रेमसे मिले। सखियाँ भी निहाल हो गईं।

तीसरा प्रसङ्ग—किसी समय श्रीमती राधिका मान करके बैठ गईं और कुछ दिनोंतक कृष्णसे नहीं मिलीं। सखियाँ उनको विविध प्रकारसे मान परित्याग करनेके लिए समझा रही थीं। किन्तु इसबार उनका मान बड़ा ही दुर्जेय था। इधर श्रीकृष्ण, राधाके विरहमें अत्यन्त कातर हो रहे थे। उनको अत्यन्त विरहातुर देखकर सुबलसखा उनका राधाजीसे मिलन करानेका उपाय सोचने लगा। वह वयस तथा रूप, बोली आदिमें ठीक श्रीमती राधिकाके समान था। तथा अनेक कलाओंमें पारदर्शी था। उसने कृष्णको सांत्वना देते हुए कहा—तुम इतने व्याकुल क्यों हो रहे हो? तुम इसी कुञ्जमें थोड़ी देर प्रतीक्षा करो, मैं प्रियाजीके साथ तुम्हारा मिलन कराता हूँ। ऐसा कहकर वह याव ग्राम चला गया। वहाँ जटिलाने उसे देखकर कहा—अरे सुबल! तू तो लम्पट कृष्णका सखा है। इधर हमारी हवेलीके पास क्यों मँडरा रहा है? जल्दी यहाँसे भाग जा। सुबलने कहा—मैया! मेरा एक बछड़ा खो गया है। वह कहीं मिल नहीं रहा है। मैं उसको खोजनेके लिए आया हूँ। जटिलाने कहा—यहाँ तेरा कोई बछड़ा-पछड़ा नहीं आया। तू शीघ्र भाग जा। किन्तु सुबलके बारम्बार अनुरोध करनेपर उसने कहा—मैं अभी कण्डे बना रही हूँ। तुम खिड़कमें जाकर देख लो। यदि तुम्हारा बछड़ा हो तो ले जाओ।

सुबलजी प्रसन्न होकर खिड़कसे होते हुए राधिकाकी अटारीमें पहुँचे। उन्होंने कृष्णके विरहका ऐसा वर्णन किया कि श्रीमतीजीका हृदय पिघल गया तथा वे तुरन्त कृष्णको सांत्वना देनेके लिए (जानेके लिए) प्रस्तुत हो गईं। किन्तु जाएँ तो कैसे? सुबलने अपने वस्त्र देकर राधिकाजीका ठीक अपने जैसा वेश बना दिया। सिरपर टेढ़ी पाग, कमरमें धोती, हाथमें लठिया, गलेमें गुञ्जा माला और गोदीमें एक छोटासा बछड़ा मानो सुबल ही अपने खोये हुए बछड़ेको अपनी गोदीमें लेकर मुस्कराता हुआ जा रहा

है। गोदीमें बछड़ा इसलिए कि कोई भी उनका वक्षस्थल देखकर शंका न कर सके। इधर सुबल राधिकाका वेश धारणकर सखियोंके साथ बातें करने लगा। जब श्रीमतीजी सुबलके वेशमें खिड़कसे निकल रही थीं, उस समय जटिलाने उन्हें देखकर कहा—क्या बछड़ा मिल गया? राधिकाजीने सुबलके स्वरमें कहा—मैया! बछड़ा मिल गया, देखो—यही मेरा बछड़ा है। जटिलाको तनिक भी सन्देह नहीं हुआ। श्रीमती राधिका सुबलके बतलाये हुए संकेतोंसे कृष्णके निकट पहुँचीं तो कृष्णने विरहमें दुःखी होकर पूछा—सखे! मेरी प्रियाजीको नहीं ला सके, मेरे प्राण निकल रहे हैं। मैं क्या करूँ? कहाँ जाऊँ? कृष्णकी ऐसी दशा देखकर श्रीमतीजीसे रहा नहीं गया। उन्होंने बछड़ेको रख दिया और कृष्णसे लिपट गईं।

श्रीमती राधाजीका कोमल स्पर्श और अङ्गोंका सौरभ पाकर कृष्ण सबकुछ समझ गये। उनका सारा खेद दूर हो गया। वे सुबलकी बुद्धिकी पुनः-पुनः प्रशंसा करते हुए प्रियाजीके साथ क्रीड़ा-विनोद करने लगे। कुछ देर बाद सुबल भी यहाँ उपस्थित होगया और दोनोंका मिलन देख बड़ा ही प्रसन्न हुआ।

चतुर्थ प्रसङ्ग—एक समय श्रीकृष्ण राधिकासे मिलनेके लिए अत्यन्त उत्कण्ठित हो विह्वल हो गये। वे रातके समय जावट पहुँचकर जटिलाकी हवेलीके पास ही एक बेरके पेड़के नीचे खड़े होकर राधिकाजीसे मिलनेकी प्रतीक्षा करने लगे तथा इसी पेड़की डालपर बैठकर ठीक कोयलकी भाँति कुहकने लगे। श्रीमती और उनकी सहेलियाँ समझ गईं कि यह कोकिल और कोई नहीं श्रीकृष्ण ही मिलनेकी उत्कण्ठामें बेरके पेड़के नीचे प्रतीक्षा कर रहे हैं। कृष्ण जैसे ही भवनमें प्रवेशके लिए चेष्टा करते सतर्क जटिला थोड़ीसी आहट पाकर ही चिल्ला उठती 'को ऐ रे'। ऐसा सुनकर कृष्ण पुनः झाड़ियोंके बीचमें छिप जाते। इस प्रकार कृष्ण सारी रात श्रीमती राधिकासे मिलनेकी प्रतीक्षा करते रहे। किन्तु मिल नहीं सके। ज्योंही वे हवेलीके भीतर प्रवेश करना चाहते, जटिलाके शब्द सुनकर पुनः छिप जाते। अन्तमें हताश होकर लौट आये। श्रीरूप गोस्वामीने उज्ज्वलनीलमणि नामक ग्रन्थके एक प्रसंगमें ऐसा लिखा है—

संकेतीकृतकोकिलादिनिनदं कंसद्विषः कुर्वतो
द्वारोन्मोचनलोलङ्खवलयक्वाणं मुहुः श्रृण्वतः।
केयं केयमिति प्रगल्भजरतीवाक्येन दूनात्मनो
राधाप्राङ्गणकोणकोलिविटपिक्रोड़े गता शर्वरी॥

(उज्ज्वलनीलमणि १/१८)

एक सखी अपनी प्रिय सखीको बीती रात श्रीराधाकृष्णकी पराधीनतापूर्ण चरित्रका वर्णन कर रही है। पिछली रातको श्रीकृष्ण श्रीमती राधिकाके आँगनमें बेरके नीचे खड़े होकर बार-बार कोयल पक्षीकी भाँति निनाद (कुहू-कुहू) करने लगे। इस संकेतको समझकर श्रीमतीजी जब-जब कपाट खोलनेके लिए प्रस्तुत होतीं; तब-तब उनकी चूड़ियों एवं नुपूरोंकी ध्वनि होती और श्रीकृष्ण भी उसे सुनते थे। किन्तु गृहके भीतरसे प्रगल्भा वृद्धा जटिलाके पुनः-पुनः 'को ए रे' चिल्लाहटको सुनकर श्रीकृष्णने रातभर व्यथित चित्तसे उस बेर-वृक्षके नीचे ही व्यतीत कर दी।

ऐसी बहुतसी मधुर स्मृतियोंको अपने अङ्कमें छिपाये हुए श्रीयाव ग्राम जययुक्त हों।

यहाँके दर्शनीय स्थान

(१) जटिलाकी हवेली—गाँवके पश्चिम भागमें ऊँचे टीलेपर जटिलाकी हवेली है। इसमें जटिला, कुटिला और अभिमन्युकी मूर्तियाँ हैं। अब यहाँपर वर्तमान समयमें श्रीराधाकान्तजीका मन्दिर है, जिसमें राधा एवं कृष्णके दर्शन हैं। सखियाँ यहींपर जटिला कुटिला और अभिमन्युको वञ्चितकर श्रीमतीजीसे कृष्णका मिलन कराती थीं।

(२) खिड़क या वत्सखोर—सुबल सखाने अपने बछड़ेके खो जानेके बहाने जटिलाजीको वञ्चितकर श्रीमती राधिकाको अपने वेशमें कृष्णसे मिलनेके लिए भेजा था। आज भी अभिमन्युका यह खिड़क वत्सखोरके नामसे प्रसिद्ध है।

(३) बेरिया—खिड़कके पास ही बेरिया स्थित है। यहींपर सघन कुञ्जोंके बीचमें एक बेरका पेड़ था। जहाँ किसी समय कृष्ण रातभर श्रीमती राधिकासे मिलनेकी प्रतीक्षा करते रहे।

(४) पानिहारी कुण्ड—बेरियाके उत्तरमें पास ही पानिहारी कुण्ड स्थित है। जहाँ गोपियाँ पानी भरनेके लिए जाती थीं। कभी-कभी कृष्ण इस पानिहारी कुण्डपर गोपियोंसे मिलते थे।

(५) मुखरा मार्ग—इसी मार्गसे मुखराजी अपनी पौत्री राधिकासे मिलकर उन्हें आशीर्वाद देनेके लिए प्रतिदिन प्रातःकाल उल्लासपूर्वक आती थीं तथा उन्हें आशीर्वाद देकर इसी मार्गसे लौट जाती थीं।

(६) कुटिला दूषण स्थान—यहाँ जटिलाकी कन्या कुटिला अपने कुटिल स्वभावके कारण सदैव श्रीमती राधिकापर नाना प्रकारसे आक्षेप करती थी। झूठ–मूठ राधिकापर दोषोंका आरोप लगाती थी। उसने किसी समय यहींपर कृष्णको राधिकासे मिलते हुए देखा तो उसने उस कमरेका दरवाजा बन्द कर दिया तथा हो–हल्ला मचाकर अपनी मैया जटिला, भैया अभिमन्यु, छोटा भैया दुर्मद और पूर्णिमा सबको एकत्रकर लिया तथा उनसे कहने लगी—इसी कोठरीमें मैंने कलंकिनी बहूको कृष्णके साथ बन्दकर रखा है। परन्तु सबके सामने जब कपाट खोला गया तो वहाँ सबने राधाजीको काली मूर्तिकी पूजा करते हुए देखा। फिर क्या था? सभी लोग कुटिलाको व्यर्थ ही किसीपर कलंक लगानेके लिए डाँटने लगे। वह बेचारी मुँह लटकाये हुए वहाँसे चली गई।

(७) राधिकागमन पथ—सखियोंके साथ राधिकाजी इसी मार्गसे होकर सूर्यकी पूजा करनेके लिए जाती–आती थीं। मार्गमें पास ही कदम्ब कानन है, जहाँ श्रीकृष्ण बड़ी उत्सुकतासे आती–जाती हुई श्रीमती राधिकाका दर्शन करते तथा भागती हुई उनके वस्त्राञ्चलको खींचते थे—

कदम्ब कानने रहि कृष्ण निरिखये ।।
पथे आसि राधिकारवस्त्र आकर्षय ।
राइ कानु दोहार कौतुक अतिशय ।।

(भक्तिरत्नाकर)

(८) पीवन कुण्ड—कदम्ब काननके बीचमें पीवन कुण्ड है, जहाँ कौतुकी कृष्णने सखियोंके इङ्गितसे श्रीमती राधिकाके अधरसुधाका पान किया था। इसलिए इस कुण्डका नाम पीवनकुण्ड हुआ है। यह कुण्ड दोनोंके प्रीतिमय विलासका स्थान है—

ए पीवन कुण्ड नदी कदम्ब कानने ।
सुखे राधाकृष्ण विलासये सखीसने ।।
परम कौतुकी कृष्ण सखीङ्गित पाईया ।
राधिकार अधरसुधा पिये मत्त हईया ।।

(भक्तिरत्नाकर)

(९) कृष्ण कुण्ड—सघन वटवृक्षोंसे परिवेष्टित यह स्थान राधाकृष्ण युगलके नाना प्रकारकी क्रीड़ा–विलासको अपने अङ्कमें छिपाकर अवस्थित है। यह कुण्ड गाँवके दक्षिणमें है।

प्रसंग—एक समय इस सघन वटवृक्षोंके नीचे श्रीकृष्ण, सहेलियोंके साथ श्रीमती राधिकाके संगमें झूला-झूलनेके लिए पधारे। सखियाँ कुछ विलम्बसे पहुँचीं। रसिक कृष्णको कुछ कौतुक सूझा। सखियोंकी प्रतीक्षा किये बिना आज स्वयं ही एक वृक्षकी डालमें झूला डाल दिया और श्रीमतीजीको झूले पर पधारनेके लिए निवेदन किया। किन्तु झूला कुछ ऊँचा होनेके कारण वे उस पर चढ़ नहीं सकीं। श्रीकृष्णने अपनी दोनों भुजाओंसे श्रीमतीजीको उठाकर झूले पर पधरानेके बहाने अपने अङ्कमें भर लिया। इस प्रकार हिंडोलोत्सवसे पूर्व ही युवयुगल रस हिलोरोंमें लहराने लगे। इसी समय पीछेसे हँसती-खिलखिलाती सखियाँ भी इस—हिंडोलोत्सवमें सम्मिलित होकर रसमें सराबोर हो गयीं।

(९) लाड़ली कुण्ड—यहाँ ललिताजी गुप्तरूपसे राधाकृष्ण युगलका मिलन कराती थीं।

(१०) नारद कुण्ड या वर प्राप्ति स्थल—यहाँपर दुर्वासा ऋषिने श्रीमती राधिकाजीको अमृत-हस्त होनेका वर दिया था अर्थात् तुम अपने हाथोंसे जो कुछ पाक करोगी वह सब द्रव्य अमृत-स्वरूप हो जायेगा। जो कोई तुम्हारे हाथसे पके अन्न-व्यञ्जन आदिको ग्रहण करेगा, वह चिरजीवी; सुर-असुर सबको पराजित करनेवाला महापराक्रमी और अजेय होगा। पद्मपुराणमें इस आख्यानका वर्णन है।

(११) गोचारण पथ—सखाओंके साथ श्रीकृष्ण इसी मार्गसे गोचारणके लिए जाते और गोचारणसे लौटते थे। उस समय अलक्षित रूपमें यहींपर राधाकृष्ण युगल एक दूसरेका दर्शन करते थे।

फुल्लेन्दिवर-कान्तिमिन्दु-वदनं बर्हावतंसप्रियं
श्रीवत्साङ्कमुदार कौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम्।
गोपीनां नयनोत्पलार्चित तनुं गोगोप-संघावृतं
गोविन्दं कलवेणु-वादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे॥
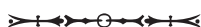
(१२) किशोरी कुण्ड या राधाकुण्ड—गाँवके पूर्वमें किशोरीजीका मन्दिर और किशोरी कुण्ड है। कभी-कभी श्रीकृष्ण यहाँ सखियों एवं श्रीराधिकाजीके साथ इस कुण्डमें जल-क्रीड़ा करते थे। सखियोंके अङ्गोंमें लगी हुई कुङ्कुम, केसर तथा अन्यान्य अङ्गरागसे सिञ्चित होकर यह कुण्ड अभी भी उन माधुर्यमय लीलाओंको अपनेमें संजोये हुए है।

(१३) रासमण्डल—यहाँ सखियोंके साथ राधिकाजीने सप्त वर्षीय कृष्णके साथ अत्यन्त विह्वल होकर रासादि लीलाएँ की हैं।[१]

(१४) पद्मावती विवाह स्थल—यहाँपर रङ्गीली ब्रजबालाओंने चन्द्राकी सखी पद्मावतीजीके साथ नन्दनन्दनका विवाह रचाया था। किशोरी श्रीमती राधिकाजी बड़ी उदार हृदयकी हैं। उन्हींके इशारे पर ललिता आदि सखियोंने पद्मावतीको वधूके रूपमें सजाकर पहलेसे ही आसनपर बैठे हुए कृष्णके बायीं ओर बैठा दिया तथा कृष्णके पीताम्बरके छोरसे उसके वस्त्राञ्चलको बाँधकर विवाहके गीत गाने लगीं। पद्मावती अत्यन्त संकोचमें पड़ी हुई कृष्णकी ओर निहारने लग गईं।

(१५) चीर कुण्ड और हिण्डोला स्थान—ये किशोरी कुण्डके पास ही अत्यन्त रमणीय स्थान है।

(१६) पारल गङ्गा—यह जावटके उत्तर–पश्चिमकोणमें स्थित है। इस कुण्डके पश्चिम तटपर एक प्राचीन पारिजात नामक वृक्ष है। वैशाख माहमें इस पर फूल लगते हैं। ऐसी मान्यता है कि इसे राधाजीने स्वयं अपने हाथोंसे आरोपित किया था। तभीसे यह वृक्ष शाखा–प्रशाखाओंके माध्यमसे अभी तक विराजमान है। कहते हैं यह पारल–गङ्गा एक सिद्ध सरोवर है। श्रीमती राधिकाजीने यहाँ भगवती गङ्गाकी एक धाराको प्रकटित किया था।

---

[१] यत्र राधाकरोद्रासं कृष्णेन सह विह्वला ।
सप्तवर्ष स्वरूपेण सखिभिर्बहुधा सुखम् ।।

(व्रजभक्तिविलास)

कोकिलावन

कोकिला वन—नन्दगाँवसे तीन मील उत्तर और जावटसे एक मील पश्चिममें कोकिलावन स्थित है। यहाँ अभी भी इस सुरक्षित रमणीय वनमें मयूर-मयूरी, शुक-सारी, हंस-सारस आदि विविध प्रकारके पक्षी मधुर स्वरसे कलरव करते रहते हैं तथा हिरण, नीलगाय आदि पशु भी विचरते हैं। ब्रजवासी लोग झुण्डके झुण्डमें अपनी गायोंको चराते हैं। विशेषतः इस वनमें सैकड़ों कोकिलें मीठे स्वरसे कुहू-कुहू शब्दके द्वारा वन प्रान्तको गुञ्जार कर देती हैं। ब्रजके अधिकांश वन नष्ट हो जानेपर भी यह वन कुछ सुरक्षित है। इस वनकी प्रदक्षिणा पौने दो कोसकी है। ब्रजभक्ति विलासके अनुसार कोकिलावनमें रत्नाकर सरोवर और रासमण्डल अवस्थित हैं।

प्रसङ्ग—एक समय महाकौतुकी श्रीकृष्ण राधिकाजीसे मिलनेके लिए बड़े उत्कण्ठित थे, किन्तु सास जटिला, ननद कुटिला और पति अभिमन्युकी बाधाके कारण वे इस संकेत स्थलपर नहीं आ सके। बहुत देरतक प्रतीक्षा करनेके पश्चात् कृष्ण वहाँ किसी ऊँचे वृक्षपर चढ़ गये और कोयलके समान बारम्बार मधुर रूपसे कुहकने लगे। इस अद्भुत कोकिलके मधुर और ऊँचे स्वरको सुनकर सखियोंके साथ श्रीमती राधिका कृष्णके संकेतको समझ गयीं और उनसे मिलनेके लिए अत्यन्त व्याकुल हो उठीं। उस समय जटिलाने विशाखाको सम्बोधित करते हुए कहा—विशाखे! मैंने कोकिलोंकी मधुर कूक बहुत सुनी है, किन्तु आज तो यह कोयल अद्भुत रूपसे बड़ी देरतक कुहक रही है। ऐसा कभी नहीं सुना। विशाखाजीने कहा—दादीजी, हमने भी ऐसा कभी नहीं सुना। यह तो कोई अद्भुत कोयल है। यदि आदेश हो तो हम इस निराली कोकिलको देख आएँ। वृद्धाने प्रसन्न होकर उन्हें जानेका आदेश दे दिया। सखियाँ बड़ी प्रसन्न हुईं और इस कोकिल वनमें प्रवेश किया तथा यहाँ श्रीकृष्णसे मिलकर बड़ी प्रसन्न हुईं। इसलिए इसे कोकिला वन कहते हैं। भक्तिरत्नाकरमें इसका बड़ा ही सरस वर्णन है—

जावटेर पश्चिमे ए वन मनोहर।
लक्ष-लक्ष कोकिल कूहरे निरन्तर॥
एकदिन कृष्ण एई वनेते आसिया।
कोकिल-सदृश शब्द करे हर्ष हईया॥

सकल कोकिल हईते शब्द सुमधुर ।
ये सुने बारेक तार धैर्य जाय दूर ।।
जटिला कहये विशाखारे प्रियवाणी ।
कोकिलेर शब्द ऐछे कभु नाहि शुनि ।।
विशाखा कहये–एई मो सभार मने ।
यदि कह ए कोकिले देखि गिया वने ।।
वृद्धा कहे—जाओ! शुनि उल्लास अशेष ।
राई सखीसह वने करिला प्रवेश ।।
हईल महाकौतुक सुखेर सीमा नाई ।
सकलेई आसिया मिलिला एक ठाँई ।।
कोकिलेर शब्दे कृष्ण मिले राधिकारे ।
ए हेतु 'कोकिलावन' कहये इहारे ।।

(भक्तिरत्नाकर)

रत्नाकर कुण्ड—सखियोंने अपने–अपने घरोंसे दूध लाकर इस सरोवरको प्रकट किया था। इस सरोवरसे नाना प्रकारके रत्न निकलते थे, जिससे सखियाँ श्रीमतीजीका शृंगार करती थीं।[१] समस्त पापोंको क्षय करने वाला तथा धन–धान्य प्रदान करने वाला यह सरोवर भक्तोंको श्रीराधाकृष्ण युगलकी अहैतुकी भक्ति रूप महारत्न प्रदान करने वाला है।

रास मण्डल—श्रीकृष्णने यहाँ गोपियोंके साथ रासलीला सम्पन्न की थी तथा रासकी समाप्तिके पश्चात् इस कुण्डमें परस्पर जल सिञ्चन आदि क्रीड़ाएँ की थीं।

आँजनौक—यह अष्ट सखियोंमेंसे एक विख्यात श्रीविशाखा सखीका निवास–स्थान है। इनके पिताका नाम श्रीपावनगोप और माताका नाम देवदानी गोपी है।[२] नन्दगाँवसे पाँच मील पूर्व–दक्षिण कोणमें यह अवस्थित है। यहाँ

---

(१) सख्याः क्षीरसमुद्भूत रत्नाकरसरोवरे ।
नाना प्रकाररत्नानामुद्भवे वरदे नमः ।।

(नारद पञ्चरात्र)

(२) अञ्जपुरे समाख्याते सुभानुर्गोपः संस्थितः ।
देवदानीति विख्याता गोपिनी निमिषसुता ।
तयोः सुता समुत्पन्ना विशाखा नाम विश्रुता ।।

कौतुकी कृष्णने अपनी प्राणवल्लभा श्रीराधाजीके नेत्रोंमें अञ्जन लगाया था। इसलिए यह लीला-स्थली आँजनौक नामसे प्रसिद्ध है।

प्रसङ्ग—एक समय श्रीमती राधिका ललिता-विशाखादि सखियोंके साथ किसी निर्जन कुञ्जमें बैठकर सखियोंके द्वारा वेश-भूषा धारणकर रही थीं। सखियोंने नाना प्रकारके अलंकारों एवं आभूषणोंसे उन्हें अलंकृत किया। केवल नेत्रोंमें अञ्जन लगाने जा रही थीं कि उसी समय अचानक कृष्णने मधुर बंशी बजाई। कृष्णकी बंशी ध्वनि सुनते ही श्रीमती राधिका उन्मत्त होकर बिना अञ्जन लगाये ही प्राण वल्लभसे मिलनेके लिए परम उत्कण्ठित होकर चल दीं। कृष्ण भी उनकी उत्कण्ठासे प्रतीक्षा कर रहे थे। जब वे प्रियतमसे मिलीं तो कृष्ण उन्हें पुष्प आसनपर बिठाकर तथा उनके गलेमें हाथ डालकर सतृष्ण नेत्रोंसे उनके अङ्ग-प्रत्यङ्गकी शोभाका निरीक्षण करने लगे। परन्तु उनके नेत्रोंमें अञ्जन न देखकर सखियोंसे इसका कारण पूछा। सखियोंने उत्तर दिया कि हम लोग इनका श्रृंगार कर रही थीं। प्रायः सभी श्रृंगार हो चुका था, केवल नेत्रोंमें अञ्जन लगाना बाकी था, किन्तु इसी बीच आपकी बंशीकी मधुर ध्वनि सुनकर आपसे मिलनेके लिए इतनी उत्कण्ठित हो गईं कि हमारे बार-बार अञ्जन धारण करनेके लिए अनुरोध करनेपर भी बिना एक क्षण रुके चल पड़ीं। ऐसा सुनकर कृष्ण रसावेशमें आकर स्वयं अपने हाथोंसे उनके नेत्रोंमें अञ्जन लगाकर दर्पणके द्वारा उनकी रूप माधुरीका उनको आस्वादन कराकर स्वयं भी आस्वादन करने लगे। इस लीलाके कारण इस स्थानका नाम आँजनौक है। यहाँ रासमण्डल है, जहाँ रासलीला हुई थी। गाँवके दक्षिणमें किशोरी कुण्ड है। कुण्डके पश्चिम तटपर अञ्जनी शिला है, जहाँ श्रीकृष्णने श्रीराधाजीको बैठाकर अञ्जन लगाया था।

'रसेर आवेशे कृष्ण अञ्जन लईया।
दिलेन राधिका नेत्रे महा हर्ष हईया।।'

बिजवारी—नन्दगाँवसे डेढ़ मील दक्षिण-पूर्व तथा खायरो गाँवसे एक मील दक्षिणमें यह गाँव स्थित है। इस स्थानका वर्तमान नाम बिजवारी है।

प्रसङ्ग—जब अक्रूरजी श्रीराम और कृष्ण दोनों भाईयोंको मथुरा ले जा रहे थे, तब यहींपर दोनों भाई रथपर बैठे। उनके विरहमें गोपियाँ व्याकुल होकर एक ही साथ 'हा प्राणनाथ!' ऐसा कहकर मूर्छित होकर भूतलपर

गिर गईं। उस समय सबको ऐसा प्रतीत हुआ, मानो आकाशसे विद्युतपुञ्ज गिर रहा हो। विद्युतपुञ्जका अपभ्रंश शब्द बिजवारी है। अक्रूरजी दोनों भाईयोंको लेकर बिजवारीसे पिसाई, साहार तथा जैंत आदि गाँवोंसे होकर अक्रूर घाट पहुँचे और वहाँ स्नानकर मथुरा पहुँचे थे। बिजवारी और नन्दगाँवके बीचमें अक्रूर–स्थान है, जहाँ शिलाखण्डके ऊपर श्रीकृष्णके चरण चिह्न हैं।

परसों—रथपर बैठे हुए श्रीकृष्णने गोपियोंकी विरह दशासे व्याकुल होकर उनको यह संदेश भेजा कि मैं शपथ खाकर कहता हूँ कि परसों यहाँ अवश्य ही लौट आऊँगा। तबसे इस गाँवका नाम परसों हो गया। गोवर्धन–बरसानेके रास्तेमें यह गाँव स्थित है। सी और परसों दोनों गाँव पास–पासमें हैं। 'शीघ्र ही आऊँगा' बार–बार कहा था। इस शीघ्र शब्दसे ही इस लीला–स्थलीका नाम 'सी' पड़ा है।

मथुरा हईते शीघ्र करिब गमन।
एई हेतु शीघ्र सी, कहये सर्वजन।।

—भक्तिरत्नाकर

कामई—यह अष्टसखियोंमें प्रमुख सखी विशाखाजीका जन्म स्थान है। यह गाँव बरसानासे पाँच मील तथा उमराव गाँवसे साढ़ेचार मील दक्षिण–पश्चिममें अवस्थित है। कामईके दक्षिणमें सी और परसों गाँव हैं।

करेहला—यह ललिताजीका जन्मस्थान है। करहाला गोपीके पुत्र गोवर्धन मल्ल अपनी पत्नी चन्द्रावलीके साथ यहाँ कभी–कभी रहता था। कभी–कभी सखीथरा (सखी–स्थली गोवर्धनके निकट) में रहता था। चन्द्रावलीके पिताका नाम चन्द्रभानु गोप और माताका नाम इन्दुमती गोपी था। चन्द्रावलीजी श्रीमती राधिकाकी ज्येठी बहन हैं। वृषभानु महाराज पाँच भाई थे—वृषभानु, चन्द्रभानु, रत्नभानु, सुभानु और श्रीभानु। वृषभानुजी सबसे बड़े थे। श्रीमती राधिका इन्हीं वृषभानुजीकी कन्या होनेके कारण राधिका और चन्द्रावली दोनों बहनें लगती थीं। पद्मा आदि यूथेश्वरियाँ इस स्थानपर रहकर चन्द्रावलीसे कृष्णका मिलन करानेके लिए प्रयत्न करती थीं। यहाँ कंकण कुण्ड, कदम्ब खण्डी, झूला, श्रीवल्लभाचार्य, श्रीविट्ठलेश तथा श्रीगोकुलनाथजीकी बैठकें हैं। यह स्थान कामईसे एक मील उत्तरमें है। भाद्रपूर्णिमा तिथिमें बूढ़ीलीला प्रसङ्गमें यहाँ रासलीला होती है।

लुधौली—यह पीसाई गाँवसे आधा मील पश्चिममें है। यहाँपर ललिताजीने श्रीराधा और कृष्ण दोनोंका मिलन कराया था। दोनों परस्पर मिलकर यहाँ

अत्यन्त लुब्ध हो गये थे। लुब्ध होनेके कारण इस स्थानका नाम लुधौली पड़ा। गाँवके बाहर उत्तरमें ललिताकुण्ड है, जहाँ दोनोंका मिलन हुआ था। कुण्डके पूर्वी तटपर ललितबिहारीजीका दर्शन है।

पीसाई—गोचारणके समय कृष्णको प्यास लगनेपर बलदेवजीने जल लाकर उनको पिलाया था। इसीलिए इस गाँवका नाम प्यासाई अर्थात् प्यास आई पड़ा है। यहाँ तृष्णा कुण्ड और विशाखा कुण्ड हैं। गाँवके पास ही उत्तर-पश्चिममें मनोहर कदम्ब खण्डी है। यह गाँव करेहलासे डेढ़ मील उत्तरमें स्थित है।

सहार—यह नन्दजीके सबसे बड़े भाई उपानन्दजीका निवास स्थान है। ये परमबुद्धिमान और सब प्रकारसे महाराज नन्दके परामर्शदाता थे। ये नन्दनन्दन श्रीकृष्णको अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यार करते थे। इन्हीं उपानन्दके पुत्र सुभद्र थे, जिन्हें श्रीकृष्ण अपने सहोदर ज्येष्ठ भ्राताके समान आदर करते थे। सुभद्र सखा ज्योतिष आदि समस्त कलाओंमें पारदर्शी और कृष्णके प्रति अत्यन्त स्नेहशील थे। ये गोचारणके समय सब प्रकारकी विपदाओंसे कृष्णकी रक्षा करनेके लिए सदैव प्रयत्नशील रहते थे। इन्हीं सुभद्रकी पत्नीका नाम कुन्दलता है। कृष्ण इनके जीवन सर्वस्व थे। ये बड़ी परिहासप्रिया थीं तथा राधाकृष्णका परस्पर मिलन करानेमें अत्यन्त पटु थीं। यशोदाके आदेशसे ये श्रीमती राधिकाको जावटसे रंधन कार्यके लिए अपने साथ लाती थीं।

साँखी—यह लीलास्थान नरीसे एक मील पश्चिम तथा सहारसे दो मील उत्तरमें है। यहींपर श्रीकृष्णने शंखचूड़का बधकर उसके मस्तकसे मणि निकालकर श्रीबलदेवजीको दी थी।

प्रसङ्ग—एक दिन गोवर्धनकी तलहटीमें राधाकुण्डके निकट सखा मण्डलीके साथ कृष्ण तथा सखीमण्डलीके साथ राधाजी परस्पर रङ्गीली होली खेलनेमें व्यस्त थीं। उसी समय शंखचूड़ नामक असुर गोपियोंको पकड़कर ले भागा। श्रीकृष्ण और बलदेवने शालके वृक्षोंको हाथमें लेकर उसे मारनेके लिए पीछा किया। इन दोनोंको प्रचण्ड वेगसे आते हुए देखकर वह गोपियोंको छोड़कर अकेले ही बड़े वेगसे भागा, किन्तु कृष्णने दाऊ भैयाको गोपियोंकी रक्षाके लिए वहाँ रखकर अकेले ही उसका पीछा किया तथा यहाँ आनेपर शंखचूड़का बधकर उसके मस्तकसे मणि निकाल ली। उन्होंने वह मणि बलदेवजीको दे दी। बलदेवजीने उस मणिको धनिष्ठाके

माध्यमसे श्रीमती राधिकाके पास भिजवा दिया। श्रीमती राधिकाजीने उसे बड़े आदरके साथ ग्रहण कर लिया। इसके पास ही रामकुण्ड है। जिसको रामतला भी कहते हैं।

छत्रवन (छाता)—मथुरा–दिल्ली राज मार्गपर मथुरासे लगभग २० मील उत्तर–पश्चिम तथा पयगाँवसे चार मील दक्षिण–पश्चिममें अवस्थित है। छत्रवनका वर्तमान नाम छाता है। गाँवके उत्तर–पूर्व कोनेमें सूर्यकुण्ड, दक्षिण–पश्चिम कोणमें चन्द्रकुण्ड स्थित है। चन्द्रकुण्डके तटपर दाऊजीका मन्दिर विराजमान है। यहींपर श्रीदाम आदि सखाओंने श्रीकृष्णको सिंहासनपर बैठाकर ब्रजका छत्रपति महाराजा बनाकर एक अभूतपूर्व लीला अभिनयका कौतुक रचा था। श्रीबलरामजी कृष्णके बाएं बैठकर मंत्रीका कार्य करने लगे। श्रीदामने कृष्णके सिरके ऊपर छत्र धारण किया, अर्जुन चामर ढुलाने लगे, मधुमङ्गल सामने बैठकर विदूषकका कार्य करने लगे, सुबल ताम्बूल बीटिका देने लगे तथा सुबाहु और विशाल आदि कुछ सखा प्रजाका अभिनय करने लगे। छत्रपति महाराज कृष्णने मधुमङ्गलके माध्यमसे सर्वत्र घोषणा करवा दी कि "महाराज छत्रपति नन्दकुमार" यहाँके एकछत्र राजा हैं। यहाँ अन्य किसीका अधिकार नहीं है। गोपियाँ प्रतिदिन मेरे इस बागको नष्ट करती हैं, अतः वे सभी दण्डनीय हैं। इस प्रकार श्रीकृष्णने सखाओंके साथ यह अभिनयलीला कौतुकी क्रीड़ा की थी। इसलिए इस गाँवका नाम छत्रवन या छाता हुआ।

उमराओ—छत्रवनसे लगभग चार–पाँच मील पूर्व दिशामें उमराओ गाँव अवस्थित है। श्रीकृष्णकी दुहाई सुनकर सखियोंने ललिताके पास कृष्णके विरुद्ध शिकायत की।

ललितादि सखी क्रोधे कहे बार बार। राधिकार राज्य के करये अधिकार।।
ऐछे कत कहि ललितादि सखीगण। राधिकारे उमराओ कैला ईक्षण।।

(भक्तिरत्नाकर)

ललिताजीने क्रोधित होकर कहा ऐसा कौन है? जो राधिकाके राज्यको अपने अधिकारमें कर सकता है। हम इसका प्रतिकार करेंगी। ऐसा कहकर राधिकाजीको एक सुन्दर सिंहासनपर पधराकर उमराव होनेकी घोषणा की। उमराओका तात्पर्य राज्यके अधिपतिसे है। चित्रा सखीने उनके सिरपर छत्र धारण किया, विशाखा चामर ढुलाने लगी। ललिताजी राधिकाके बाँए बैठकर मंत्रीका कार्य करने लगी। कोई सखी उन्हें पानका बीड़ा देने लगी तथा

अवशिष्ट सखियाँ प्रजाका अभिनय करने लगीं। राधिकाजीने सिंहासनपर बैठकर सखियोंको आदेश दिया—"जाओ, जो मेरे राज्यपर अधिकार करना चाहता है, उसे पराजित कर तथा बाँधकर मेरे सामने उपस्थित करो।"

मोर राज्य अधिकार करे येई जन ।
पराभव करि तारे आन एई क्षण ।।

(भ.र.–१७)

उमरावका आदेश पाकर सहस्र–सहस्र सखियोंने हाथोंमें पुष्प छड़ी लेकर युद्धके लिए यात्रा की। अर्जुन, लवंग, भृङ्ग, कोकिल, सुबल और मधुमङ्गल उन्हें देखकर इधर–उधर भागने लगे, परन्तु किसी चतुर सखीने मधुमङ्गलको पकड़ लिया और उसे पुष्प माला द्वारा बाँधकर उमरावके चरणोंमें उपस्थित किया तथा कुछ गोपियाँ मधुमङ्गलको दो–चार गुल्चे भी जड़कर बोलीं—हमारे उमरावके राज्यपर अधिकार करनेका इतना साहस? अभी हम तुम्हें दण्ड देती हैं। मधुमङ्गल पराजित सेनापतिकी भाँति सिर नीचे कर कहने लगा—"ठीक है! हम पराजित हैं, किन्तु दण्ड ऐसा दो कि हमारा पेट भरे।" ऐसा सुनकर महारानी राधिका हँसकर बोली—यह कोई पेटू ब्राह्मण है, इसे मुक्त कर दो। सखियोंने उसे पेटभर लड्डू खिलाकर छोड़ दिया। मधुमङ्गल लौटकर छत्रपति महाराजा कृष्णको अपने बँध जानेका विवरण सुनाकर रोनेका अभिनय करने लगा। ऐसा सुनकर कृष्णने मधुमङ्गल और सखाओंको लेकर उमराओके ऊपर आक्रमण कर दिया। जब श्रीमती राधिकाने अपने प्राण वल्लभ श्रीकृष्णको देखा, तब बड़ी लज्जित होकर अपने उमराव वेशको दूर करनेके लिए चेष्टा करने लगीं। सखियाँ हँसती हुई उन्हें ऐसा करनेसे रोकने लगीं। मधुमङ्गलने छत्रपति बने हुए श्रीकृष्णको उमराव राधिकाके दक्षिणमें बैठा दिया। दोनोंमें संधि हुई तथा कृष्णने राधिकाजीका आधिपत्य स्वीकार किया। मधुमङ्गलने श्रीमती राधिकाके प्रति हाथ जोड़कर कहा—"कृष्णका अङ्गरूपी राज्य अब तुम्हारे अधिकारमें है। अब जो चाहो इनसे भेंट ग्रहण कर सकती हो।" सारी सखियाँ और सखा इस अभिनय क्रीड़ा–विलासको देखकर बड़े आनन्दित हुये। उमराव लीलाके कारण इस गाँवका नाम उमराओ है। यह स्थान राधास्थलीके रूपमें भी प्रसिद्ध है। तत्पश्चात् पूर्णमासीजीने यहाँपर राधिकाको ब्रजेश्वरीके रूपमें अभिषिक्त किया। यहाँ किशोरी कुण्ड भी है। श्रीलोकनाथ गोस्वामी यहींपर भजन करते थे। किशोरी कुण्डसे ही श्रीराधाविनोद–विग्रह प्रकट हुए थे। ये श्रीराधाविनोदजी

ही लोकनाथ गोस्वामीके आराध्यदेव हैं। अब यह श्रीविग्रह जयपुरमें विराजमान है।

धनशिंगा—उमराओ गाँवके पास ही धनशिंगा गाँव है। धनशिंगा धनिष्ठा सखीका गाँव है। धनिष्ठाजी कृष्णपक्षीय सखी हैं। ये सदैव यशोदाजीके घरमें विविध प्रकारकी सेवाओंमें नियुक्त रहती हैं। विशेषतः दूतीका कार्य करती हुई कृष्णसे राधिकाजीको मिलाती हैं।

कोसी या कुशस्थली—मथुरा–दिल्ली राजमार्गपर, मथुरासे लगभग ३५ मील और छत्रवनसे लगभग १० मीलकी दूरीपर यह स्थित है। यहाँ श्रीकृष्णने नन्दबाबाको कुशस्थलीका (द्वारका धाम) दर्शन कराया था। जहाँ द्वारकाधामका दर्शन कराया था, वहाँ गोमती कुण्ड है, जो गाँवके पश्चिममें विराजमान है।

यहाँ किसी समय श्रीमती राधिकाने विशेष भङ्गिके द्वारा कृष्णसे पूछा था—"कोऽसि?" तुम कौन हो? इसीलिए इस स्थानका नाम कोऽसि–कोसीवन है।

प्रसङ्ग—किसी समय श्रीकृष्ण श्रीमती राधिकासे मिलनेके लिए बड़े उत्कण्ठित होकर श्रीमती राधिकाके भवनके कपाटको खट–खटा रहे थे।

भीतरसे श्रीमती राधिकाने पूछा—कोऽसि?

श्रीकृष्णने उत्तर दिया—मैं कृष्ण हूँ।

राधिका—(कृष्ण शब्दका एक अर्थ काला नाग भी होता है) यदि तुम कृष्ण अर्थात् काले नाग हो तो तुम्हारी यहाँ क्या आवश्यकता है? क्या मुझे डँसना चाहते हो? तुम वनमें जाओ। यहाँ तुम्हारी कोई आवश्यकता नहीं।

श्रीकृष्ण—नहीं प्रियतमे! मैं घनश्याम हूँ।

राधिका—(घनश्यामका अर्थ काला बादल ग्रहणकर) यदि तुम घनश्याम हो तो तुम्हारी यहाँ आवश्यकता नहीं है। यहाँ बरस कर मेरे आङ्गनमें कीचड़ मत करो। तुम वन और खेतोंमें जाकर वहीं बरसो।

श्रीकृष्ण—प्रियतमे! मैं चक्री हूँ।

राधिका—(चक्री शब्दका अर्थ कुलाल अथवा मिट्टीके बर्तन बनाने वाला कुम्हार ग्रहणकर) यहाँ चक्री (कुम्हार) की आवश्कता नहीं है। मेरे घरमें कोई विवाह उत्सव नहीं है। जहाँ विवाह–उत्सव इत्यादि हों वहाँ तुम अपने मिट्टीके बर्तनोंको लेकर जाओ।

श्रीकृष्ण—प्रियतमे! मैं मधुसूदन हूँ।

राधिका—(मधुसूदनका दूसरा अर्थ भ्रमर ग्रहणकर) यदि तुम मधुसूदन (भ्रमर) हो तो शीघ्र ही यहाँसे दूर कहीं पुष्पोद्यानमें पुष्पोंके ऊपर बैठकर उनका रसपान करो। यहाँपर पुष्पोद्यान नहीं है।

श्रीकृष्ण—अरे! मैं तुम्हारा प्रियतम हरि हूँ।

राधिकाने हँसकर कहा—(हरि शब्दका अर्थ बन्दर या सिंह ग्रहणकर) यहाँ बन्दरों और सिंहोंकी क्या आवश्यकता है? क्या तुम मुझे नोचना चाहते हो? तुम शीघ्र किसी गम्भीर वनमें भाग जाओ। हम बन्दरों और सिंहोंसे डरती हैं।

इस प्रकार श्रीमती राधिका प्रियतम हरिसे नाना प्रकारका हास-परिहास करती हैं। वे हमपर प्रसन्न हों। इस हास-परिहासकी लीलाभूमिको कोसी वन कहते हैं।

रणवाड़ी—आरबाड़ीसे एक मील उत्तर और छातासे तीन मील दक्षिण-पश्चिममें रणवाड़ी गाँव स्थित है। नन्दनन्दन श्रीकृष्ण साक्षात् मन्मथ-मन्मथ हैं। श्रीमती राधिकाजी महाभावकी साक्षात् मूर्ति स्वरूपा हैं। कृष्णके कामको पूर्ण करना ही उनका कार्य है। एक दूसरेको आनन्दित करनेके लिए यहाँ दोनों विविध प्रकारकी केलिद्वारा स्मरयुद्धमें संलग्न रहते हैं। रणवाड़ीका तात्पर्य स्मरविलास या विविध प्रकारके क्रीड़ाविलासके स्थानसे है।

प्रसङ्ग—आजसे लगभग डेढ़ सौ वर्ष पहले यहाँ कृष्णदास नामक बंगाली बाबा भजन करते थे। एक समय इनके मनमें भारतके तीर्थोंका दर्शन करनेकी उत्कट अभिलाषा हुई। संयोगवश यहाँके कोई ब्राह्मण द्वारका जा रहे थे। उन्होंने कृष्णदास बाबासे अपने साथ चलनेके लिए आग्रह किया। इनके मनमें पहलेसे ही कुछ ऐसी ही लालसा थी, अतः ये भी द्वारका जानेके लिए प्रस्तुत हो गये। दोनों बहुत-से तीर्थोंका दर्शन करते हुए अंतमें द्वारका धाम पहुँचे। द्वारकामें प्रवेश करनेके लिए तप्तमुद्रा—(तपाये हुए चक्रका चिह्न) धारण करना पड़ता है। कृष्णदास बाबाजीने भी तप्तमुद्रा धारण कर ली। फिर अन्यान्य तीर्थोंका भ्रमण करते हुए रणबाड़ीमें लौटे, किन्तु बड़े आश्चर्यकी बात है कि अब उनका मन भजनमें आविष्ट नहीं हो रहा था। चेष्टा करनेपर भी अष्टकालीय लीलाओंका स्मरण नहीं हो पाता। वे बड़े व्याकुल हो गये। वे राधाकुण्डपर स्थित अपने मित्र सिद्ध कृष्णदास

बाबाजीके पास इसका कारण जाननेके लिए गये, किन्तु सिद्ध बाबाजीने उनको देखकर अपना मुख फेर लिया और बोले आप श्रीमती राधिकाकी कृपासे वञ्चित हो गये हैं। आपने उनका ऐकान्तिक आनुगत्य छोड़कर द्वारकाकी तप्तमुद्रा धारण की है। इसका तात्पर्य यह है कि आपने श्रीरुक्मिणी, सत्यभामा आदि द्वारकाकी महिषियोंका आनुगत्य स्वीकार कर लिया है। अतः इस शरीरमें श्रीमती राधिकाकी कृपा असम्भव है। आप यहाँसे तुरन्त चले जाइए। अन्यथा श्रीमती राधिकाकी कृपासे मुझे भी वञ्चित होना होगा। हताश होकर ये रणबाड़ी लौट आये। अपनी भजनकुटीका कपाट बंदकर लिया तथा अन्न–जलका त्याग कर दिया। विरहाग्निसे इनके शरीरमें दाह उत्पन्न हुआ। भीतरकी अग्नि फूट पड़ी तथा तीन दिनोंमें उनकी पार्थिव देह भस्मीभूत हो गई। गाँवके लोगोंने तीन दिनोंके बाद भजनकुटीका कपाट तोड़ दिया। उन्होंने बाबाजीको नहीं, बल्कि उनके भस्मको ही देखा। सभी लोग ठगे–से रह गये। तबसे प्रतिवर्ष पौष मासकी अमावस्याके दिन यहाँके ब्रजवासी इनका तिरोभाव उत्सव बड़े उल्लासके साथ मनाते हैं।

नरीसेमरी—इसका शुद्ध एवं पूर्व नाम किन्नरी श्यामरी है। छातासे चार मील दक्षिण–पूर्वमें सेमरी गाँव स्थित है। सेमरीके पास ही दक्षिण दिशामें एक मील दूर नरी गाँव है। सेमरी गाँवमें यूथेश्वरी श्यामला सखीका निवास था।

प्रसङ्ग—किसी समय मानिनी श्रीराधिकाका मान भङ्ग नहीं हो रहा था। ललिता, विशाखादि सखियोंने भी बहुत चेष्टाएँ कीं, किन्तु मान और भी अधिक बढ़ता गया। अन्तमें सखियोंके परामर्शसे श्रीकृष्ण श्यामरी सखी बनकर वीणा बजाते हुए यहाँ आये। श्रीमती राधिका श्यामरी सखीका अद्भुत रूप तथा वीणाकी स्वर लहरियोंपर उतराव और चढ़ावके साथ मूर्छना आदि रागोंसे अलंकृत संगीतको सुनकर ठगी–सी रह गईं। उन्होंने पूछा—सखि! तुम्हारा नाम क्या है? और तुम्हारा निवास–स्थान कहाँ है? सखी बने हुए कृष्णने उत्तर दिया—मेरा नाम श्यामरी है। मैं स्वर्गकी किन्नरी हूँ। श्रीमती राधिका श्यामरी किन्नरीका वीणावाद्य एवं सुललित संगीत सुनकर अत्यन्त विह्वल हो गईं और अपने गलेसे रत्नोंका हार श्यामरी किन्नरीके गलेमें अर्पण करनेके लिए प्रस्तुत हुईं, किन्तु श्यामरी किन्नरीने हाथ जोड़कर उनके श्रीचरणोंमें निवेदन किया कि आप कृपाकर अपना मान रूपी रत्न मुझे प्रदान करें। इतना सुनते ही श्रीमती राधिकाजी समझ गईं कि ये मेरे

प्रियतम ही मुझसे मान रत्न मांग रहे हैं। फिर तो प्रसन्न होकर उनसे मिलीं। सखियाँ भी उनका परस्पर मिलन कराकर अत्यन्त प्रसन्न हुईं। इस मधुर लीलाके कारण ही इस स्थानका नाम किन्नरीसे नरी तथा श्यामरीसे सेमरी हो गया है। वृन्दावनलीलामृतके अनुसार हरि शब्दके अपभ्रंशके रूपमें इस गाँवका नाम नरी हुआ है।

दूसरा प्रसङ्ग—जिस समय कृष्ण-बलदेव ब्रज छोड़कर मथुराके लिए प्रस्थान करने लगे, अक्रूरने उन दोनोंको रथपर चढ़ाकर बड़ी शीघ्रतासे मथुराकी ओर रथको हाँक दिया। गोपियाँ खड़ी हो गईं और एकटकसे रथकी ओर देखने लगी। किन्तु धीरे-धीरे रथ आँखोंसे ओझल हो गया, धीर-धीरे उड़ती हुई धूल भी शान्त हो गई। तब वे हा हरि! हा हरि! कहती हुईं पछाड़ खाकर धरतीपर गिर पड़ीं। इस लीलाकी स्मृतिकी रक्षाके लिए महाराज वज्रनाभने वहाँ जो गाँव बैठाया, वह गाँव ब्रजमें हरि नामसे प्रसिद्ध हुआ। धीर-धीरे हरि शब्दका ही अपभ्रंश नरी हो गया। नरीगाँवमें किशोरी कुण्ड, सङ्कर्षण कुण्ड और श्रीबलदेवजीका दर्शन है।

खदिरवन (खायरो)—इसका वर्तमान नाम खायरो है। छातासे तीन मील दक्षिण तथा जावटसे तीन मील दक्षिण-पूर्वमें खायरो ग्राम स्थित है। यह कृष्णके गोचारणका स्थान है। यहाँ सङ्गम कुण्ड है, जहाँ गोपियोंके साथ कृष्णका सङ्गम अर्थात् मिलन हुआ था। इसीके तटपर लोकनाथ गोस्वामी निर्जन स्थानमें साधन-भजन करते थे। कभी-कभी भूगर्भ गोस्वामी भी लोकनाथ गोस्वामीके साथ यहाँ भजन करते थे। पास में ही कदम्बखण्डी है। यह परम मनोरम स्थल है। यहाँ कृष्ण एवं बलराम सखाओंके साथ तरह-तरहकी बाल्य लीलाएँ करते थे। खजूर पकनेके समय कृष्ण सखाओंके साथ यहाँ गोचारणके लिए आते तथा पके हुए खजूरोंको खाते थे।

प्रसङ्ग—एक समय कंसका भेजा हुआ बकासुर बड़े डीलडोल वाले बगलेका रूप धारणकर कृष्णको ग्रास करनेके लिए यहाँ उपस्थित हुआ। उसने अपना एक निचला चोंच पृथ्वीमें तथा ऊपरका चोंच आकाश तक फैला दिया तथा कृष्णको ग्रास करनेके लिए बड़ी तेजीसे दौड़ा। उस समय उसकी भयंकर आकृतिको देखकर समस्त सखालोग डरकर बड़े जोरसे चिल्लाये 'खायो रे! खायो रे! किन्तु कृष्णने निर्भीकतासे अपने एक पैरसे उसकी निचली चोंचको और एक हाथसे ऊपरी चोंचको पकड़कर उसको घास फूसकी भाँति चीर दिया। सखालोग बड़े उल्लसित हुए। 'खायो रे! खायो

रे!' इस लीलाके कारण इस गाँवका नाम खायारे पड़ा है। यहाँ खदीरके पेड़ होनेके कारण भी इस गाँवका नाम खदीर वन पड़ा है। खदीर (कत्था) पानका एक प्रकारका मसाला है। कृष्णने बकासुरको मारनेके लिए खदेड़ा था। खदेड़नेके कारण भी इस गाँवका नाम खदेड़वन या खदीरवन है।

बकथरा—जावटके पास खायरो और आँजनौकके बीचमें यह गाँव स्थित है। यहाँ कृष्णने बकासुरको मारा था। इस गाँवका नाम चिल्ली भी है। बकासुरकी चोंचको पकड़कर कृष्णने बीचसे चीर दिया था। इसलिए इस गाँवका नाम चिल्ली भी है।

नेओछाक—यहाँ गोचारणके समय सखाओंके साथ श्रीकृष्ण दोपहरमें भोजन करते थे। माँ यशोदा कृष्ण–बलदेवके लिए और अन्यान्य माताएँ अपने–अपने पुत्रोंके लिए दोपहरका कलेवा भेजती थीं तथा कृष्ण बलराम क्रीड़ा–कौतुक, हास–परिहासपूर्वक उन्हें पाते थे। छाक शब्दका अर्थ कलेवा या भोजन सामग्रीसे है। नेओछाकका तात्पर्य है छाक लो।

भण्डागोर—रणबाड़ीसे दो मील उत्तर–पश्चिममें यह स्थान स्थित है। इसका वर्तमान नाम भादावली है। यहाँ भी श्रीनन्दमहाराजका भण्डार गृह था। यह गोचारणका भी स्थान है।

खाँपुर—भादावलीसे एक मील दक्षिणमें यह स्थान स्थित है। रणबाड़ीमें फाग (होली) खेलनेके पश्चात् सखियोंके साथ श्रीराधाकृष्णने विविध प्रकारके खाद्य पदार्थोंको खाया था।

बैठान (बैठन)—कोकिलवनसे ढाई मील उत्तरमें बड़ी बैठन गाँव स्थित है। इससे आधा मील उत्तरमें छोटी बैठन है। दोनों ग्राम पास–पासमें है। यहाँ नन्दमहाराज उपानन्द आदि सभी वृद्धगोप एक साथ बैठकर श्रीकृष्ण बलरामके हितके लिए विविध प्रकारका परामर्श करते थे। परामर्श वाले स्थानको बैठक भी कहते हैं।

कभी–कभी श्रीसनातन गोस्वामी लीला स्मृतिके लिए कुछ दिन यहाँ रहकर भजन करते थे। ब्रजवासी उनके प्रीतियुक्त व्यवहारसे मुग्ध होकर बड़े आग्रहसे उन्हें कुछ दिन और वहाँ रहनेके लिए अनुरोध करने लगते। श्रील सनातन गोस्वामी उनके आग्रहसे कुछ दिन और ठहर जाते। बड़ी बैठनके दक्षिण–पूर्वमें कृष्णकुण्ड है, जो कृष्णको अत्यन्त प्रिय है। कृष्ण सखाओंके साथ इसमें स्नान और जल क्रीड़ाएँ करते थे। छोटी बैठनमें

कुन्तल कुण्ड है। जहाँ सखालोग कृष्णका श्रृंगार करते थे। बड़ी बैठनमें दाऊजीका मन्दिर और छोटीमें साक्षी गोपालजीका मन्दिर है।

बड़ोखोर—पूर्व नाम बड़ो खोर है। यह बैठन ग्रामके पश्चिममें है। यहाँ राधाकृष्ण दोनोंने कुञ्जका द्वार रुद्धकर क्रीड़ा विलास किया था। यहाँ चरणगङ्गा और चरणपहाड़ी है। गाँवका वर्त्तमान नाम बैन्दोखर है।

चरणपहाड़ी—छोटी बैठनसे एक मील उत्तरमें चरणपहाड़ी है। यहाँ गो, गोप, श्रीकृष्ण एवं बलदेवके चरण चिह्न हैं, इसलिए इसे चरणपहाड़ी कहते हैं।

प्रसंग—एक समय श्रीकृष्ण सखामण्डलीके साथ गोचारण करते हुए यहाँ उपस्थित हुए। गाएँ दूर घास चर रही थीं। सखालोग भी दूर थे। कृष्णको कौतुक सूझा। उन्होंने चरणपहाड़ीके ऊपर एक वृक्षके नीचे त्रिभङ्ग ललित मुद्रामें खड़े होकर अपनी वंशीमें ऐसा राग छेड़ दिया कि वंशीध्वनिको सुनकर पर्वत तक भी पिघल गया। ग्वालबाल और गऊओंकी तो बात ही क्या, हिरण-हिरणियाँ तथा अन्य पशु-पक्षी भी आकृष्ट होकर कृष्णकी ओर भागे। इसलिए यहाँ गोप, गोपी, हिरण एवं ऊँट आदिके भी चरणचिह्न अङ्कित हो गये। ये सब चरणचिह्न एक ओर केवल आते समयके ही हैं, जाते समयके नहीं हैं, क्योंकि कृष्णकी वंशीध्वनि बन्द होनेपर पत्थरोंके फिर जैसेके तैसे पूर्व स्थितिमें हो जानेपर लौटते समय उनके चरणोंके चिह्न अति नहीं हुए। कृष्णकी वंशीध्वनिके प्रभावका स्मरणचिह्न आज भी यहाँ अङ्कित है।

पास ही चरणगङ्गा है। जहाँपर कृष्णने चरण धोये हैं।

श्रीकृष्णेर पादपद्मचिह्न ए रहिल ।
एई हेतु चरण पहाड़ी नाम हईल ।।

(भक्तिरत्नाकर)

रसौली—चरणपहाड़ी और कोटवनके बीचमें रसौली गाँव है। यहाँपर कृष्ण और गोपियोंकी प्रसिद्ध शारदीय रासलीला सम्पन्न हुई थी।

कामर—यहाँ श्रीकृष्ण काम (प्रेम) में व्याकुल होकर श्रीमती राधिकाके आगमन पथकी ओर निहार रहे थे। काममें व्यस्त होनेके कारण इस स्थानका नाम कामर हुआ है। इसमें गोपी कुण्ड, गोपी जलविहार, हरिकुण्ड, मोहन कुण्ड, मोहनजीका मन्दिर और दुर्वासाजीका मन्दिर है।

प्रसङ्ग—एक समय श्रीकृष्ण श्रीमती राधिकासे मिलनेके लिए अत्यन्त विह्वल हो गये। वे श्रीमती राधिकाके आगमन–मार्गकी ओर व्याकुल होकर बार–बार देखने लगे। अंतमें उन्होंने अपनी मधुर मुरलीमें उनका नाम पुकारा, जिससे श्रीमती राधिका सखियोंके साथ आकर्षित होकर चली आईं। कृष्ण बड़े आनन्दसे उनसे मिले। गोपियोंको एक कौतुक सूझा। उन्होंने प्रियतमकी कारी कामर (कम्बल) चुपकेसे उठाकर छिपा दी। श्रीकृष्ण अपनी प्रिय कामर खोजने लगे। भक्त कविवर श्रीसूरदासजीने इस झाँकीका सरस चित्रण किया है। कन्हैया मैयासे उलाहना दे रहे हैं—

मैया मेरी कामर चोर लई।
मैं बन जात चरावन गैया सूनी देख लई ।।
एक कहे कान्हा तेरी कामर जमुना जात बही ।
एक कहे कान्हा तेरी कामर सुरभि खाय गई ।।
एक कहे नाचो मेरे आगे लै देहुँ जु नई ।
सूरदास जसुमतिके आगे अँसुवन धार बही ।।

—मैया री! मैं गऊओंको चरानेके लिए वनमें गया था। गायोंके बहुत दूर निकल जानेपर मैं भी अपनी कामरको वहीं छोड़कर उनके पीछे–पीछे चला गया। परन्तु पीछेसे किसी सखीने चुपकेसे मेरी कामर चुरा ली। जब मैं लौटा तो अपनी कामर न पाकर मैंने सखियोंसे पूछा—मेरी कामर कहाँ गई? यदि तुम लोगोंने लिया है तो उसे लौटा दो, किन्तु वे कहती हैं—कन्हैया! तेरी कामर तो जमुनामें बहती हुई जा रही थी। मैंने खुद ही उसे बहते हुए देखा है। दूसरी कहती है—कन्हैया! मैंने देखा तेरी कामरको एक गईया खा गई। मैया! बता भला गईया मेरी कामर कैसे खाय सके है। दूसरी कहती है—कन्हैया तू मेरे सामने नाचेगा, तो तुझे दूसरी नई कामर मँगा दूँगी। मैया! ये सखियाँ मुझे नाना प्रकारसे खिजाती हैं। ऐसा कहते–कहते कन्हैयाके आँखोंमें आँसू उमड़ आये। मैयाने लालाको उठाकर अपने हृदयसे लगा लिया। कामर–कामर पुकारनेसे ही इस गाँवका नाम कामर पड़ा है। कामरसे तात्पर्य काले कम्बलसे है।

बासोसि—शेषशाईसे दो मील उत्तरमें बासोसि गाँव स्थित है। यहाँपर श्रीकृष्णके श्रीअङ्गका सुन्दर सुगन्ध ग्रहणकर भँवरे उन्मत्त हो उठते थे तथा वे कृष्णके चारों ओर उन्मत्त होकर गुञ्जार करने लगते थे। बास शब्दका अर्थ सुगन्धसे है। इसीलिए इस स्थानका नाम बासोसि हुआ है। सखियोंके

साथ राधाकृष्ण यहाँ क्रीड़ा-विलासमें उन्मत्त हो जाते थे। उनके श्रीअङ्गोंकी सुगन्धसे, फागमें उड़े अबीर, गुलाल, चन्दन आदिसे वहाँ सर्वत्र सुगन्ध भर जाता था।

पयगाँव—यह स्थान कोसीसे छह मील पूर्वमें है। यद्यपि माताएँ कृष्ण बलराम और अपने-अपने पुत्रोंके लिए दोपहरके लिए घरसे छाक भेज देती थीं, फिर भी एक समय जब छाक मिलनेमें विलम्ब होनेके कारण श्रीकृष्ण और सखाओंको बड़ी भूख लगी तो उन्होंने इस गाँवमें जाकर पय अर्थात् दूध पान किया था, इसलिए यह गाँव पयगाँवके नामसे प्रसिद्ध हुआ। गाँवके उत्तरमें पयसरोवर तथा कदम्ब और तमाल वृक्षोंसे सुसज्जित मनोहर कदम्बखण्डी है।

कोटवन—कोसी तथा होडलके बीचमें दिल्ली-मथुरा राजमार्गके आसपास कोटवन है। इसका पूर्व नाम कोटरवन है। यह स्थान चरण पहाड़ीसे चार मील उत्तर और कुछ पूर्वमें है। यहाँ शीतल कुण्ड और सूर्यकुण्ड दर्शनीय हैं। यह कृष्णके गोचारण और क्रीड़ा-विलासका स्थान है।

शेषशाई—वासोलीसे डेढ़ मील दक्षिण तथा कुछ पूर्व दिशामें यह लीला स्थली विराजमान है। पासमें ही क्षीरसागर ग्राम है। क्षीरसागरके पश्चिमी तटपर मन्दिरमें भगवान् अनन्त शैय्यापर शयन कर रहे हैं तथा लक्ष्मीजी उनकी चरण सेवा कर रही हैं।

प्रसङ्ग—किसी समय कौतुकी कृष्ण श्रीमती राधिका एवं सखियोंके साथ यहाँ विलास कर रहे थे। किसी प्रसङ्गमें उनके बीचमें अनन्तशायी भगवान् विष्णुकी कथा-चर्चा उठी। श्रीमती राधिकाके हृदयमें अनन्तशायी विष्णुकी शयन लीला देखनेकी प्रबल इच्छा हो गयी। अतः कृष्णने स्वयं उन्हें लीलाका दर्शन कराया। अनन्तशायीके भावमें आविष्ट हो श्रीकृष्णने क्षीरसागरके मध्य सहस्र दल कमलके ऊपर शयन किया और श्रीमती राधिकाने लक्ष्मीके आवेशमें उनके चरणोंकी सेवा की। गोपी-मण्डली इस लीलाका दर्शनकर अत्यन्त आश्चर्यचकित हुई।

श्रील रघुनाथ दास गोस्वामीने ब्रजविलास स्तवमें इस लीलाको इंगित किया है। अतिशय कोमलाङ्गी श्रीमती राधिका श्रीकृष्णके अतिशय कोमल सुमनोहर चरणकमलोंको अपने वक्षस्थलके समीप लाकर भी उन्हें अपने वक्षस्थलपर इस भयसे धारण नहीं कर सकीं कि कहीं हमारे कर्कश कुचाग्रके स्पर्शसे

उन्हें कष्ट न हो। उन शेषशायी कृष्णके मनोरम गोष्ठमें मेरी स्थिति हो।[१]

श्रीचैतन्य महाप्रभु ब्रजदर्शनके समय यहाँपर उपस्थित हुए थे तथा इस लीलास्थलीका दर्शनकर प्रेमाविष्ट हो गये। यहाँ मनोहर कदम्ब वन है, यहीं पर प्रौढ़नाथ तथा हिण्डोलेका दर्शन है। पास ही श्रीवल्लभाचार्यजीकी बैठक है।

खामी गाँव—इसका अन्य नाम खम्बहर है। यह गाँव ब्रजकी सीमापर स्थित है। श्रीवज्रनाभ महाराजने ब्रजकी सीमाका निर्णय करनेके लिए यहाँपर पत्थरका एक खम्बा गाढ़ा था। पास ही वनचरी गाँव भी है। ये दोनों गाँव ब्रजकी उत्तर–पश्चिम सीमापर होड़लसे चार मील उत्तर–पूर्वमें स्थित हैं। यहाँ लक्ष्मीनारायण और महादेवजीके दर्शन हैं।

खयेरो—इसका दूसरा नाम खरेरो भी है। द्वारकापुरीसे आकर यहाँ बलदेवजीने सखाओंसे खैर अर्थात मङ्गल समाचार पूछा था। यह गोचारणका स्थान है। यह स्थान शेषशाईसे चार मील दक्षिणमें (कुछ पूर्वमें) स्थित है।

बनछौली—यह गाँव खरेरोसे ढ़ाई मील पूर्व तथा पयगाँवसे चार मील उत्तर–पश्चिममें स्थित है। यहाँपर कृष्णकी रासलीला हुई थी।

ऊजानी—यह स्थान पयगाँवसे चार मील उत्तर–पूर्वमें छाता–शेरगढ़ राजमार्गके निकट स्थित है। श्रीकृष्णकी सुमधुर वंशीध्वनिको सुनकर यमुनाजी उल्टी बहने लगी थीं। ऊजानी शब्दका अर्थ उल्टी बहनेसे है। आज भी यह दृश्य यहाँ दर्शनीय है।

खेलन वन—इसका नामान्तर शेरगढ़ है। यह स्थान ऊजानीसे दो मील दक्षिण–पूर्वमें अवस्थित है। यहाँपर गोचारणके समय श्रीकृष्ण और श्रीबलराम सखाओंके साथ विविध प्रकारके खेल खेलते थे। श्रीमती राधिका भी यहाँ अपनी सखियोंके साथ खेलती थीं। इन्हीं सब कारणोंसे इस स्थानका नाम खेलन वन है।

---

(१) 'यस्य श्रीमच्चरणकमले कोमले कोमलापि'
श्रीराधाचैर्निजसुखकृते सन्नयन्ती कुचाग्रे ।
भीतापयारादय नहि दधातयस्य कार्कशयदोषात
स श्रीगोष्ठे प्रथयतु सदा शेषशायी स्थिति नः।।
(स्तवावली ब्रजविलास, श्लोक—९१)

प्रसङ्ग—एक समय नन्दबाबा गोप, गोपी और गऊओंके साथ यहींपर निवास कर रहे थे। वृषभानु बाबा भी अपने पूरे परिवार और गोधनके साथ इधर ही कहीं निवास कर रहे थे। 'जटिला और कुटिला' दोनों ही अपनेको ब्रजमें पतिव्रता नारी समझती थीं। राधिका पतिव्रता नहीं है, दोनों उनके विरुद्ध तरह-तरहसे अप-प्रचार करती थीं। ऐसा देखकर एक दिन कृष्णने अस्वस्थ होनेका बहाना किया। उन्होंने इस प्रकार दिखलाया कि मानो उनके प्राण निकल रहे हों। यशोदाजीने वैद्यों तथा मंत्रज्ञ ब्राह्मणोंको बुलवाया, किन्तु वे कुछ भी नहीं कर सके। अंतमें योगमाया पूर्णिमाजी वहाँ उपस्थित हुईं। उन्होंने कहा—यदि कोई पतिव्रता नारी मेरे दिये हुए सैंकड़ों छिद्रोंसे युक्त इस घड़ेमें यमुनाका जल भर लाये और मैं मंत्रद्वारा कृष्णका अभिषेक कर दूँ तो कन्हैया अभी स्वस्थ हो सकता है, अन्यथा बचना असंभव है। यशोदाजीने जटिला-कुटिलाको बुलवाया और उनसे उस विशेष घड़ेमें यमुना जल लानेके लिए अनुरोध किया। बारी-बारीसे वे दोनों यमुनाके घाटपर जल भरनेके लिए गईं, किन्तु जलकी एक बिन्दु भी उस घड़ेमें लानेमें असमर्थ रहीं। वे यमुना घाटपर उक्त कलसको रखकर उधर-से-उधर ही घर लौट गयीं।

अब योगमाया पूर्णिमाजीके परामर्शसे मैया यशोदाजीने श्रीमती राधिकासे सहस्र छिद्रयुक्त उस घड़ेमें यमुनाजल लानेके लिए अनुरोध किया। उनके बार-बार अनुरोध करनेपर श्रीमती राधिका उस सहस्र छिद्रयुक्त घड़ेमें यमुनाजल भरकर ले आईं। एक बूंद जल भी उस घड़ेमेंसे नीचे नहीं गिरा। पूर्णमासीजीने उस जलसे कृष्णका अभिषेक किया। अभिषेक करते ही कृष्ण सम्पूर्णरूपसे स्वस्थ हो गये। सारे ब्रजवासी इस अद्भुत घटनाको देखकर विस्मित हो गये। फिर तो सर्वत्र ही राधिकाजीके पातिव्रत्य धर्मकी प्रशंसा होने लगी। यहाँ बलराम कुण्ड, खेलनवन, गोपी घाट, श्रीराधागोविन्दजी, श्रीराधागोपीनाथ और श्रीराधामदनमोहन दर्शनीय हैं।

रामघाट—शेरगढ़से दो मील पूर्वमें यमुनाके तटपर रामघाट स्थित है। इस गाँवका वर्त्तमान नाम ओबे है। यहाँ बलदेवजीने रासलीला की थी। द्वारकामें रहते-रहते श्रीकृष्ण-बलरामको बहुत दिन बीत गये। उनके विरहमें ब्रजवासी बड़े ही व्याकुल थे। उनको सांत्वना देनेके लिए श्रीकृष्णने श्रीबलदेवको ब्रजमें भेजा था। उस समय नन्दगोकुल यहीं आस-पास निवास कर रहा था। बलदेवजीने चैत्र और वैशाख दो मास नन्द ब्रजमें रहकर माता-पिता, सखा और गोपियोंको सांत्वना देनेकी भरपूर चेष्टा की।[१]

अंतमें गोपियोंकी विरह–व्याकुलताको दूर करनेके लिए उनके साथ नृत्य और गीत पूर्ण रासका आयोजन भी किया, किन्तु उनका यह रास अपने यूथकी ब्रजयुवतियोंके साथ ही सम्पन्न हुआ।[२]

उस समय वरुणदेवकी प्रेरणासे परम सुगन्धमयी वारुणी (वृक्षोंका मधुर रस) बहने लगी। प्रियाओंके साथ बलदेवजी उस सुगन्धमयी वारुणी (मधु) का पानकर रास–विलासमें प्रमत्त हो गये। जल–क्रीड़ा तथा गोपियोंकी पिपासा शान्त करनेके लिए उन्होंने कुछ दूर पर बहती हुई यमुनाजीको बुलाया, किन्तु न आनेपर उन्होंने अपने हलके द्वारा यमुनाजीको आकर्षित किया। फिर गोपियोंके साथ यमुनाजलमें जलविहार आदि क्रीड़ाएँ कीं। आज भी यमुना अपना स्वाभाविक प्रवाह छोड़कर रामघाट पर प्रवाहित होती हैं।

यहाँ शंका होती है कि श्रीकृष्णकी प्रियतमा गोपियोंके साथ बलदेवजीने कैसे रास किया? रसकी दृष्टिसे यह सर्वथा अनुचित है। साथ ही कृष्ण प्रिया यमुना जो विशाखास्वरूप हैं, उन्हें बलदेवजीका आकर्षण करना अनुचित जान पड़ता है। तत्त्व–ज्ञानके अभावमें ही ऐसी शंकाएँ उठती हैं। साधारण लोग अप्राकृत रासका तत्त्व नहीं समझ पाते। श्रीकृष्ण–बलरामके रासमें प्राकृत लाम्पट्य अथवा लौकिक भोगमय कामना लेशमात्र भी संभव नहीं है। दूसरी बात बलदेवजीने केवल अपने यूथकी प्रियाओंके साथ ही रास किया था। फुटनोटके श्लोकमें यह बात स्पष्ट है। यमुनाजी स्वयं विशाखाजी हैं। वे कृष्ण प्रिया हैं तथा श्रीमती राधिकाकी प्रधान सहेली हैं। समुद्रगामिनी यमुना विशाखास्वरूपिणी यमुनाजीका प्रकाश हैं। उन्हींको बलदेवजीने अपने हलकी नींकसे खींचा था, श्रीकृष्णप्रिया यमुनाको

---

(१) द्वौ मासौ तत्र चावात्सीन्मधुं माधवमेव च ।
रामः क्षपासु भगवान् गोपीनां रतिमावहन् ।।
(श्रीमद्भा. १०/६५/१७)

(२) ततश्च पश्यात्र वसन्तवेषौ श्रीरामकृष्णौ ब्रजसुन्दरीभिः ।
विक्रीडतुः स्व स्व यूथेश्वरीभिः समं रसज्ञौ कल धौत मण्डितौ ।।
नृत्यनतौ गोपीभिः सार्द्ध गायन्तौ रसभावितौ ।
गायन्तीभिश्च रामाभिर्नृत्यन्तीभिश्च शोभितौ ।।
(श्रीमुरारिगुप्तकृत श्रीकृष्णचैतन्यचरित)

नहीं। इस प्रकार भी इस शंकाका समाधान किया जा सकता है।

श्रीनित्यानन्द प्रभु ब्रजमण्डल भ्रमणके समय यहाँ पधारे थे। इस विहार भूमिका दर्शनकर वे भावाविष्ट हो गये थे। यहाँ बलरामजीके मन्दिरके पास ही एक अश्वत्थ वृक्ष है, जो बलरामजीके सखाके रूपमें प्रसिद्ध है। यहीं वह रासलीला हुई थी।

ब्रह्मघाट—रामघाटके पास ही अत्यन्त मनोरम ब्रह्मघाट स्थित है, जहाँ ब्रह्माजीने श्रीकृष्ण-आराधनाके द्वारा बछड़े चुरानेका अपराध क्षमा कराया था।

कच्छवन—रामघाटके पास ही कच्छवन है। यहाँपर कृष्ण सखाओंके साथ कछुए बनकर खेला करते थे।

भूषणवन—कच्छवनके पास ही भूषणवन है। यहाँ गोचारणके समय सखाओंने विविध प्रकारके पुष्पोंसे कृष्णको भूषित किया था। इसलिए इसका नाम भूषणवन है।

गुञ्जावन—भूषणवनके पास ही गुञ्जावन है। यहाँ गोपियोंने गुञ्जाकी मालासे कृष्णका अद्भुत श्रृंगार किया था तथा कृष्णने गुञ्जामालाके द्वारा श्रीमती राधिकाका श्रृंगार किया था।

बिहारवन—रामघाटसे डेढ़ मील दक्षिण-पश्चिममें बिहारवन है। यहाँ बिहारीजीका दर्शन और बिहारकुण्ड है। यहाँपर ब्रजबिहारी कृष्णने राधिकाके सहित गोपियोंके साथ रासविहार किया एवं अन्यान्य नाना प्रकारके क्रीड़ा-विलास किये थे। श्रीयमुनाके पास ही यह एक रमणीय स्थल है। ब्रजके अधिकांश वनोंके कट जानेपर भी अभी तक बिहारवनका कुछ अंश सुरक्षित है। अभी भी इसमें हजारों मयूर 'के-का' रव करते हैं, वर्षाके दिनोंमें पंख फैलाकर नृत्य करते हैं, कोयलें कुहकती हैं। इसमें अभी भी सुन्दर-सुन्दर कुञ्ज, कदम्बखण्डी तथा नाना प्रकारकी लताएँ वर्तमान हैं। इनका दर्शन करनेसे कृष्णलीलाकी मधुर स्मृतियाँ जग उठती हैं। यहाँकी गोशालामें बड़ी सुन्दर-सुन्दर गऊएँ, फुदकते हुए बछड़े और मत्त साँड़ श्रीकृष्णकी गोचारण लीलाकी मधुर स्मृति जागृत करते हैं।

अक्षयवट—इसे भाण्डीरवट भी कहते हैं। यह रामघाटसे दो मील दक्षिणमें स्थित है। वटवृक्षकी छायामें श्रीकृष्ण-बलराम सखाओंके साथ विविध प्रकारकी क्रीड़ाएँ विशेषतः मल्लयुद्ध करते थे तथा यहाँपर बलदेवजीने प्रलम्बासुरका वध किया था।

प्रसङ्ग—किसी समय गोचारण करते हुए श्रीकृष्ण–बलराम गऊओंको हरे–भरे मैदानमें चरनेके लिए छोड़कर सखाओंके साथ दो दलोंमें विभक्त होकर खेल रहे थे। एक दलके अध्यक्ष कृष्ण तथा दूसरे दलके बलदेवजी बने। इस खेलमें यह शर्त थी कि जो दल पराजित होगा वह जीतने वाले दलके सदस्योंको अपने कंधोंपर बैठाकर भाण्डीरवटसे नियत स्थानकी दूरीतक लेकर जायेगा तथा वहाँसे लौटकर भाण्डीरवट तक लायेगा। कंस द्वारा प्रेरित प्रलम्बासुर भी सुन्दर सखाका रूप धारणकर कृष्णके दलमें प्रविष्ट हो गया। कृष्णने भी जान–बूझकर नये सखाको प्रोत्साहन देकर अपने दलमें रखा। खेलमें श्रीकृष्ण श्रीदामके द्वारा और प्रलम्बासुर श्रीबलरामके द्वारा पराजित हुए। शर्तके अनुसार श्रीकृष्ण श्रीदामको और प्रलम्बासुर बलरामको कंधेपर बैठाकर नियत स्थानकी तरफ भागने लगे। कृष्ण अपने गन्तव्य स्थानकी ओर चल रहे थे किन्तु दुष्ट प्रलम्बासुर बलदेवको कंधेपर बैठाकर नियत स्थानकी ओर न जाकर गम्भीर निर्जन स्थानकी ओर भागने लगा। कुछ ही देरमें उसने अपना विकराल राक्षसका रूप धारण कर लिया। वह कंसके आदेशानुसार पहले बलदेवजीका बधकर बादमें कृष्णका भी बध करना चाहता था। बलदेवप्रभु पहले तो कुछ किंकर्तव्य विमूढ़–से दीखे, किन्तु कृष्णका इशारा पाकर अपने मुष्टिकाके आघातसे असुरका मस्तक विदीर्ण कर दिया। वह रुधिर वमन करता हुआ पृथ्वीपर लोटने लगा। सखाओंके साथ कृष्ण वहाँ उपस्थित हुए तथा बलरामको आलिङ्गन करते हुए उनके बल और धैर्यकी प्रशंसा करने लगे।

दूसरा प्रसङ्ग—एक दिन सखियोंके साथ श्रीमती राधिका श्रीकृष्णके साथ लील–विलास कर रहीं थीं। उन्होंने श्रीकृष्णसे कहा—"प्राणवल्लभ! आप बड़ी डीगें हाँकते हैं कि मल्लविद्या–विशारदोंको भी मैंने परास्त किया है। इतना होनेपर भी आप श्रीदामसे कैसे पराजित हो गये।" श्रीकृष्णने उत्तर दिया—"यह सम्पूर्ण रूपसे मिथ्या है। सम्पूर्ण विश्वमें मुझे कोई भी नहीं जीत सकता। मैं कभी भी श्रीदामसे नहीं हारा।" ऐसा सुनकर राधिकाजीने कहा—"यदि ऐसी बात है तो हम गोपियाँ आपसे मल्लयुद्ध करनेके लिए प्रस्तुत हैं। यदि आप हमें पराजित कर देंगे तो हम समझेंगी कि आप यथार्थमें सर्वश्रेष्ठ मल्ल हैं।" फिर गोपियोंने मल्लवेश धारण किया। श्रीमती राधिकाके साथ कृष्णका मल्लयुद्ध हुआ, जिसमें कृष्ण सहज ही परास्त हो गये। सखियोंने ताली बजाकर श्रीमतीजीका अभिनन्दन किया। मल्लयुद्ध

और श्रीकृष्ण तथा सखाओंके कसरत करनेका स्थान होनेके कारण अक्षयवटके पासके गाँवका नाम काश्रट हो गया। काश्रट शब्दका अर्थ है—कसरत करना या कुश्ती करना। प्राचीन वटवृक्षके अन्तर्हित होनेपर उसके स्थानपर और नया वटवृक्ष लगाया गया। भाण्डीरवन स्थित भाण्डीरवट दूसरी लीला-स्थली है, जो यमुनाके दूसरे तटपर अवस्थित है।

आगियारा गाँव नामान्तर आरा—काश्रट गाँवसे दो मील दक्षिण-पश्चिममें आगियारा गाँव है। इसका नामान्तर आरा या आगियारा गाँव है। कृष्णके गोचारण स्थलीमें मुञ्जाटवीके मध्य यह स्थान स्थित है।

प्रसङ्ग—सखाओंके साथ श्रीकृष्ण भाण्डीरवटकी छायामें खेल रहे थे। पास ही गऊएँ यमुनाजल पानकर हरी-भरी घासोंसे पूर्ण मैदानमें चर रहीं थीं। चरते-चरते वे कुछ दूर मुञ्जाटवीमें पहुँचीं। गर्मीके दिन थे। चिलचिलाती हुई धूप पड़ रही थी। मुञ्जके पौधे सूख गये थे। नीचे बालू तप रही थी। कृष्णको पीछे छोड़कर जल तथा छाया विहीन इस मुञ्जवनमें गऊओंने प्रवेश किया। सघन मुञ्जोंके कारण वे मार्ग भी भूल गईं। प्यास और गर्मीके मारे गऊएँ छटपटाने लगीं।

सखा लोग भी कृष्ण और बलरामको छोड़कर गऊओंको ढूँढ़ते हुए वहीं पहुँचे। इनकी अवस्था भी गऊओं जैसी हुई। वे भी गर्मी और प्याससे छटपटाने लगे। इसी बीच दुष्टकंसके अनुचरोंने मुञ्जवनमें आग लगा दी। आग हवाके साथ क्षणभरमें चारों ओर फैल गई। आगकी लपटोंने गऊओं और ग्वाल बालोंको घेर लिया। वे बचनेका और कोई उपाय न देख कृष्ण और बलदेवको पुकारने लगे। उनकी पुकार सुनकर कृष्ण और बलदेव वहाँ झट उपस्थित हुए। श्रीकृष्णने सखाओंको एक क्षणके लिए आँख बंद करनेके लिए कहा। उनके आँख बंद करते ही श्रीकृष्णने पलक झपकते ही उस भीषण दावाग्निको पान कर लिया। सखाओंने आँख खोलते ही देखा कि वे सभी भाण्डीरवटकी सुशीतल छायामें कृष्ण बलदेवके निकट खड़े हैं तथा पासमें गऊएँ भी आरामसे बैठीं हुईं जुगाली कर रहीं हैं। कृष्णके शरणागत होनेपर संसाररूपी दावाग्निसे प्रपीड़ित जीवका उससे सहज ही उद्धार हो जाता है। यह लीला यहींपर हुई थी।

मुञ्जाटवीका दूसरा नाम ईषिकाटवी भी है। यमुनाके उसपार भाण्डीर गाँव है। यह भाण्डीर गाँव ही मुञ्जाटवी है।

तपोवन—यह स्थान अक्षयवटकी पूर्व दिशामें एक मील दूर यमुनाके तटपर अवस्थित है। गोप कन्याओंने 'श्रीकृष्ण ही हमारे पति हों' इस कामनासे आराधना की थी। कहते हैं ये गोपकन्याएँ वे हैं जो पूर्व जन्ममें दण्डकारण्यमें श्रीकृष्णको पानेकी लालसासे तपस्यामें रत थे तथा श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे द्वापरमें गोपीगर्भसे जन्मे थे। इनमें जनकपुरकी राजकन्याएँ भी सम्मिलित थीं, जो सीताकी भाँति श्रीरामचन्द्रजीसे विवाह करना चाहती थीं। वे भी श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे द्वापरयुगके अंतमें ब्रजमें गोपकन्याओंके रूपमें जन्मी थीं। इन्हीं गोपकुमारियोंकी श्रीकृष्ण प्राप्तिके लिए आराधनाका स्थल है यह तपोवन। ब्रजकी श्रीललिता–विशाखा आदि नित्यसिद्धा गोपियाँ अन्तरङ्गस्वरूपशक्ति श्रीमती राधिकाजीकी कायव्यूह स्वरूपा हैं। उन्हें तप करनेकी कोई भी आवश्यकता नहीं।

गोपीघाट—यहाँ उपरोक्त गोपियाँ यमुनामें स्नान करती थीं। इसलिए इसका नाम गोपी घाट है।

चीरघाट—यह लीलास्थली अक्षयवटसे दो मील पश्चिममें स्थित है। गोपकुमारियोंने 'श्रीकृष्ण पतिके रूपमें प्राप्त[१] हों', इस आशयसे एक मास तक नियमित रूपसे नियम व्रतादिका पालन करते हुए कात्यायनी देवीकी पूजा की थी।[२] व्रतके अंतमें कुछ प्रियनर्म सखाओंके साथ श्रीकृष्णने गोपियोंके वस्त्र हरण किये तथा उन्हें उनकी अभिलाषा पूर्ण होनेका वरदान दिया था। यमुनाके तटपर यहाँ कात्यायनी देवीका मन्दिर है। गाँवका वर्त्तमान नाम सियारो है।

नन्दघाट—यह स्थान गोपी घाटसे दो मील दक्षिण और अक्षयवटसे एक मील दक्षिण–पूर्वमें स्थित है।

प्रसङ्ग—एक बार महाराज नन्दने एकादशीका व्रत किया और द्वादशी लगनेपर रात्रिकी बेलामें ही वे इसी घाटपर स्नान कर रहे थे। यह आसुरिक

---

(१) कात्यायनि महामाये महायोगिन्यधीश्वरि ।
नन्दगोपसुतं देवि पतिं मे कुरु ते नमः ।।
(श्रीमद्भा. १०/२२/४)

(२) एवं मासं व्रतं चेरुः कुमार्यः कृष्णचेतसः ।
भद्रकालीं समानर्चुर्भूयान्नन्दसुतः पतिः ।।
(श्रीमद्भा. १०/२२/५)

चित्र सं.-33

चीरघाट

बेला थी। इसलिए वरुणके दूत उन्हें पकड़कर वरुणदेवके सामने ले गये। यमुनाजीमें महाराज नन्दके अदृश्य होनेका समाचार पाकर ब्रजवासी लोग बड़े दुःखी हुए। ब्रजवासियोंका क्रन्दन देखकर श्रीकृष्ण, बलरामजीको उनकी देखरेख करनेके लिए वहीं छोड़कर स्वयं वरुणलोकमें गये। वहाँ वरुणदेवने कृष्णको देखकर नाना-प्रकारसे उनकी स्तव-स्तुति की और उपहारस्वरूप नानाप्रकारके मणि-मुक्ता रत्नालंकार आदि भेंटकर अपने इस कृत्यके लिए

क्षमा याचना की। श्रीकृष्ण पिता श्रीनन्द महाराजजीको लेकर इसी स्थानपर पुनः ब्रजवासियोंसे मिले।

दूसरा प्रसङ्ग—एक समय जीव गोस्वामीने किसी दिग्विजयी पण्डितको शास्त्रार्थमें पराजित कर दिया था। वह दिग्विजयी पण्डित श्रील रूपगोस्वामीके ग्रन्थोंका संशोधन करना चाहता था। बालक जीव गोस्वामी इसे सह नहीं सके। वृन्दावनमें यमुनाके घाटपर पराजित होनेपर दिग्विजयी पण्डित बालककी विद्वत्ताकी भूयसी प्रशंसा करता हुआ व श्रील रूपगोस्वामीसे परिचय पूछा। श्रील रूपगोस्वामीने नम्रताके साथ उत्तर दिया—"यह मेरे भाईका पुत्र तथा मेरा शिष्य है।" श्रील रूप गोस्वामी समझ गये कि जीवने इसके साथ शास्त्रार्थ किया है। दिग्विजयी पण्डितके चले जानेके बाद श्रील रूपगोस्वामीने कहा—"जीव! तुम इतनीसी बात भी सहन नहीं कर सकते? अभी भी तुम्हारे अन्दर प्रतिष्ठाकी लालसा है। अतः तुम अभी यहाँसे चले जाओ।"

श्रील जीवगोस्वामी, श्रील रूपगोस्वामीके कठोर शासन वाक्यको सुनकर बड़े दुःखी हुए। वे वृन्दावनसे नन्दघाटके निकट यमुनाके किनारे सघन निर्जनवनमें किसी प्रकार बड़े कष्टसे रहने लगे। वे यमुनाके तटपर मगरोंकी माँदमें रहते। कभी-कभी आटामें जल मिलाकर वैसे ही पी लेते, तो कभी उपवास रहते। इस प्रकार श्रीगुरुदेवके विरहमें तड़फते हुए जीवन यापन करने लगे। कुछ ही दिनोंमें शरीर सूखकर काँटा हो गया। उन्हीं दिनों श्रील सनातन गोस्वामी ब्रजपरिक्रमाके बहाने नन्दघाटपर उपस्थित हुए। वहाँ ब्रजवासियोंके मुखसे एक किशोर गौड़ीय बालक साधुकी कठोर आराधना एवं उसकी भूरी-भूरी प्रशंसा सुनकर वे जीव गोस्वामीके पास पहुँचे तथा सांत्वना देकर उसे अपने साथ वृन्दावन ले आये। अपनी भजनकुटीमें जीवको छोड़कर वे अकेले ही रूप गोस्वामीके पास पहुँचे। श्रील रूप गोस्वामी उस समय जीवोंपर दयाके संबन्धमें उपस्थित वैष्णवोंके सामने व्याख्या कर रहे थे। श्रील सनातन गोस्वामीने उस व्याख्याके बीचमें ही श्रीरूप गोस्वामीसे पूछा—तुम दूसरोंको तो जीवपर दया करनेका उपदेश दे रहे हो, किन्तु स्वयं जीवपर दया क्यों नहीं करते? श्रील रूप गोस्वामीने बड़े भाई और गुरु श्रील सनातन गोस्वामीकी पहेलीका रहस्य जानकर श्रीजीवको अपने पास बुलाकर उनकी चिकित्सा कराई तथा पुनः अपनी सेवामें नियुक्तकर उन्हें अपने पास रख लिया। नन्दघाटमें रहते हुए श्रीजीव गोस्वामीने अपने

षट्सन्दर्भ रूप प्रसिद्ध ग्रन्थका प्रणयन किया था। यहाँ पर अभी भी श्रीजीव गोस्वामीका स्थान जीव गोस्वामीकी गुफाके रूपमें प्रसिद्ध है।

भैया भयगाँव—श्रीनन्द महाराज वरुणके दूतोंको देखकर यहाँ भयभीत हो गये थे। इसलिए वज्रनाभने इस गाँवका नाम भयगाँव रखा। भयगाँव नन्दघाटसे संलग्न है।

गांग्रली—चीरघाटसे दो मील दक्षिण और कुछ पूर्व दिशामें तथा भय गाँवसे दो मील उत्तरमें गांग्रली अवस्थित है।

बसई गाँव या वत्सवन—नन्दघाटसे चार मील दक्षिण-पश्चिममें यह स्थान स्थित है। ब्रह्माजीने यहाँ बछड़ों और ग्वालबालोंका हरण किया था। इसलिए इस स्थानका नाम वत्सवन या बच्छवन है। गाँवका वर्तमान नाम बसई गाँव है। यहाँ श्रीवत्सविहारीजीका मन्दिर, ग्वाल मण्डलीजीका स्थान, ग्वालकुण्ड, हरिबोल तीर्थ और श्रीवल्लभाचार्यजीकी बैठक दर्शनीय स्थल हैं।

प्रसङ्ग—एक समय श्रीकृष्ण ग्वाल-बालोंके साथमें यमुनातटपर बछड़ोंको चरा रहे थे। बछड़े चरते-चरते इस वनमें पहुँच गये। इधर कृष्ण सखाओंके साथ यमुनातटकी कोमल बालुकामें नाना प्रकारकी क्रीड़ाएँ करने लगे। उधर बछड़े चरते-चरते जब इस वनमें पहुँचे तो चतुर्मुख ब्रह्माजीने, जो इससे पूर्व अघासुरकी आत्माको कृष्णके चरणोंमें प्रवेशकर मुक्त होते देख बड़े आश्चर्यचकित हुए थे, भगवान् श्रीकृष्णकी कुछ और भी मधुर लीलाओंका दर्शन करने की इच्छासे उन बछड़ोंको एक गुफामें छिपा दिया।

बछड़ोंको न देखकर कृष्ण और ग्वाल-बाल बड़े चिन्तित हुए। कृष्ण सखाओंको वहीं छोड़कर बछड़ोंको खोजनेके लिए चल पड़े। जब बछड़े नहीं मिले, तब कृष्ण पुनः यमुनातटपर पहुँचे, जहाँ सखाओंको छोड़कर गये थे। इधर ब्रह्माजीने कृष्णकी अनुपस्थितिमें सखाओंको भी कहीं छिपा दिया। षडैश्वर्यपूर्ण सर्वशक्तिमान श्रीकृष्ण ब्रह्माजीकी करतूत समझ गये। इसलिए वे साथ-ही-साथ अपने-आप सारे बछड़े, ग्वाल बाल, उनकी लकुटियाँ, वस्त्र, वेणु, श्रृंग आदिका रूप धारणकर पूर्ववत् क्रीड़ा करने लगे। यह क्रम एक वर्ष तक चलता रहा। यहाँ तक कि बलदेवजी भी इस रहस्यको नहीं जान सके। वर्ष पूरा होनेपर बलदेवजीने कुछ अलौकिक बातोंको देखकर भाँप लिया कि स्वयं कृष्ण ही ये सारे बछड़े, ग्वाल-बाल बनकर लीला कर रहे हैं। उसी समय ब्रह्माजी यह देखकर चकित हो गये कि गुफामें

बंद ग्वाल–बाल और बछड़े ज्योंके त्यों शयन अवस्थामें हैं। इधर कृष्ण बछड़ों और ग्वाल–बालोंके साथ पूर्ववत् लीला कर रहे हैं। ऐसा देखकर वे भौंचक्केसे रह गये। श्रीकृष्णने योगमायाका पर्दा हटा दिया। ब्रह्माजी श्रीकृष्णकी स्वयं भगवत्ता एवं उनकी आश्चर्यमयी लीला देखकर उनके चरणोंमें साष्टांग प्रणामकर स्तव–स्तुति करने लगे[१]। उन्होंने ब्रज गोकुलमें जन्म पानेके लिए तथा ब्रजरजसे अभिसिक्त होनेके लिए प्रार्थना की। इसीलिए इस वनका नाम वत्सवन है।

उनाई अथवा जनाई गाँव—यह स्थान बाजनासे डेढ़ मील दक्षिणमें स्थित है। यहाँ श्रीकृष्ण सखाओंके साथ बैठकर भोजन लीला कर रहे थे, जिससे ब्रह्माको मोह उत्पन्न हुआ। अंतमें कृष्णने अनुग्रहकर ब्रह्माजीका मोह दूर किया और अपनेको जना दिया। उस समय ब्रह्माने इस विश्वको कृष्णमय देखा (जाना)। इसलिए इस स्थानका नाम जनाई गाँव है।

बालहारा—यहाँ ब्रह्माजीने ग्वालबालोंका हरण किया था। अतएव इस स्थानका नाम बालहारा है।

परखम—यह स्थान जनाई गाँवसे एक मील पश्चिममें है। यहाँ ब्रह्माजीने कृष्णकी परीक्षा ली थी। अतएव इस स्थानका नाम परखम पड़ा है। सखाओंके साथ बैठकर कृष्णको उनका उच्छिष्ट भोजन करते देखकर उनकी भगवत्ताकी परीक्षाके लिए ब्रह्माजीकी इच्छा हुई। परीक्षाकी इच्छाके लिए इस स्थानका नाम परखम हुआ।

सेई—परखमसे डेढ़ मील दक्षिण–पूर्व तथा पसौलीसे चार मील दूरीपर यह स्थान स्थित है। कृष्णकी मायासे मोहित ब्रह्माजीने गोप–बालकों और बछड़ोंका हरणकर किसी गुप्त स्थानमें रख दिया था। किन्तु एक वर्ष बाद कृष्णके निकट आनेपर उन्होंने गोपबालकों कृष्णके साथ पहलेकी भाँति गोचारण करते देखा। उस समय वे विचार करने लगे कि कन्दरामें रखे हुए गोपबालक और बछड़े सेई (वही हैं) या नहीं। फिर सोये हुए ग्वालबालोंको

---

(१) नौमीड्य तेऽभ्रवपुषे तडिदम्बराय
गुञ्जावतंसपरिपिच्छलसन्मुखाय ।
वन्यस्रजे कवलवेत्रविषाणवेणु
लक्ष्मश्रिये मृदुपदेपशुपाङ्गजाय ।।
(श्रीमद्भा. १०/१४/१)

देखा। वे सन्देहग्रस्त हो गये कि क्या सेई (वही हैं)। बार-बार सेई कहनेसे इस स्थानका नाम सेई अथवा ग्वालबाल और बछड़ोंके सहित पूर्ववत् कृष्णको देखकर निश्चित किया कि सेई—ये वही स्वयं-भगवान् कृष्ण हैं।

चौमा—यहाँ ब्रह्माजीने भयभीत होकर अनुताप करते हुए अपने चार मुखोंसे श्रीकृष्णकी स्तुति की थी। इसलिए इस स्थानका नाम चौमुँहा हुआ। यह स्थान परखमसे एक मील पश्चिम तथा मथुरासे चार कोस पश्चिममें मथुरा दिल्ली मार्गपर स्थित है। चौमुँहासे एक मील दूर अझई नामक गाँव है। यहाँ प्राचीन ब्रह्माजीका दर्शन है। यह बहुत ही रमणीय स्थान है। चौमुँहाका वर्तमान नाम चौमा (चार मुखोंवाला) है।

पसौली—सपौली, अघवन और सर्पस्थली इसके नामान्तर हैं। अजगर सर्परूप धारी अघासुरको श्रीकृष्णने यहाँ मारकर उसका उद्धार किया था। परखमसे दो मील दूर उत्तर-पश्चिममें यह स्थान स्थित है।

चौमुहाँ ग्रामे ब्रह्माआंसि कृष्णपाशे।
करये कृष्ण स्तुति अशेष विशेषे।।

—भक्तिरत्नाकर

प्रसङ्ग—एक समय श्रीकृष्ण ग्वालबालकोंके साथ बछड़े चराते-चराते इस वनमें पहुँचे। पूतनाका भाई अघ(पाप)की प्रतिमूर्ति अघासुरअपनी बहनकी मृत्युका बदला लेनेके लिए वहाँ पहुँचा। भयानक विशालकाय अजगरका रूप धारणकर मार्गमें लेट गया। उसका एक जबड़ा जमीनपर तथा दूसरा आकाशको छू रहा था। उसका मुख एक गुफाके समान तथा जिह्वा उसमें घुसनेके मार्गके समान दीख रही थी। ग्वालबाल, बछड़ोंको लेकर खेल-ही-खेलमें उसके मुखमें प्रवेश कर गये। किन्तु उसने अपना मुख बंद नहीं किया; क्योंकि वह विशेषरूपसे कृष्णको निगलना चाहता था, किन्तु कृष्ण कुछ पीछे रह गये थे। श्रीकृष्णने ग्वालबालोंको दूरसे संकेत किया कि इसमें प्रवेश न करें। किन्तु ग्वालबाल श्रीकृष्णके बलपर निशंक होकर उसमें प्रवेश कर ही गये। श्रीकृष्ण भी सखाओंको बचानेके लिए पीछेसे उसके मुखमें प्रवेश कर गये। ऐसा देखकर अघासुरने अपना मुख बंद कर लिया। श्रीकृष्ण अपने शरीरको बढ़ाकर उसके गलेमें ऐसे अटक गये, जिससे उसका कण्ठ अवरुद्ध हो गया और श्वास रुक गया। थोड़ी देरमें ही उसका ब्रह्मरन्ध्र फट गया और उसमेंसे एक ज्योति निकलकर आकाशमें स्थित हो गई।

इधर श्रीकृष्ण गोपबालक और बछड़ोंको अपनी अमृतमयी दृष्टिसे जीवन प्रदानकर जैसे ही अघासुरके मुखसे निकले, त्योंहि ब्रह्माजी और देवताओंके देखते–देखते वह ज्योति कृष्णके चरणोंमें प्रवेश कर गई। अघासुरका उद्धारकर कृष्ण ग्वालबालोंके साथ वृन्दावन लौट आये। वही स्थली सर्पस्थली, सँपौली, पसौली या अघवनके नामसे जानी जाती है।

जैंत—अघासुरका वध हो जानेके बाद आकाशमें स्थित देवताओंने 'भगवान् श्रीकृष्णकी जय हो! जय हो!'[१] की ध्वनिसे आकाश और आस पासके वन प्रदेशको गुञ्जा दिया था। ग्वालबालोंने भी आनन्दसे उनके स्वरमें स्वर मिलाकर 'जय हो! जय हो!' की ध्वनिसे आकाश मण्डलको परिव्याप्त कर दिया । इस प्रकार श्रीकृष्णकी अघासुरपर विजयगाथाकी स्मृतिको अपने अंकमें धारणकर यह स्थली जैंत नामसे प्रसिद्ध है। यहाँके एक तालाबमें सर्पकी मूर्ति है। उसे इस प्रकार कलासे निर्मित किया गया है कि कुण्डमें पानी चाहे जितना भी बढ़े–घटे वह सर्पमूर्ति सदैव पानीके ऊपरमें ही दिखाई देती है। छट्टीकरासे यह स्थान तीन मील दूर है।

सेयानो—इसका वर्तमान नाम सिहोना है। अघासुर बधका समाचार जब वृद्ध ब्रजवासियोंको मिला तो वृद्ध–वृद्ध गोप और गोपियाँ कृष्णकी प्रशंसा करते हुए बार–बार कहने लगें 'कृष्ण सेयानो होय गयो है, सेयानो होय गयो है।' इस सेयानोका तात्पर्य बुद्धिमान और बलवानसे है। महाराज वज्रनाभने सेयानो है, इस शब्दके अनुसार इस स्थानका नाम सेयानो गाँव रख दिया। अझईसे दो मील दूर यह स्थान स्थित है। यहाँ सनक, सनन्दन, सनत, सनातन—इन चार कुमारोंके श्रीविग्रह दर्शनीय हैं।

तरौली—यह गाँव बसोलीसे दो मील उत्तर–पश्चिममें तथा श्यामरी गाँवसे एक मील पूर्व कुछ उत्तर दिशामें तथा बरोलीसे एक मील पूर्वमें स्थित है।

बरौली—तरोली और बरौली गाँव पास–पास हैं। ये कृष्णलीलाके स्थान

---

(१) ततोऽतिदृष्टाः स्वकृतोऽकृतार्हणं,
पुष्पै सुरा अप्सरसश्च नर्तनैः ।
गीतैः सुगा वाद्यधराश्च वाद्यकैः
स्तवैश्च विप्रा जयनिःस्वनैर्गणाः ।।
(श्रीमद्भा. १०/१२/३४)

हैं। यहाँसे जानेके समय आगे पीठर गाँव पड़ता है।

तमालवन तथा कृष्णकुण्ड टीला—तमाल वृक्षोंके सघनवनसे परिमण्डित, श्रीश्रीराधाकृष्णके मिलन और रसमयी क्रीड़ाओंका स्थान है। एक समय रसिकबिहारी श्रीकृष्ण सखियोंके साथ राधाजीसे इसी तमालकुञ्जमें मिले। तमालवृक्षोंसे लिपटी हुई ऊपर तक फैली नाना प्रकारकी लताएँ वल्लरियाँ बड़ी सुहावनी लग रही थीं। श्रीकृष्णने प्रियाजीको इंगित कर पूछा—'यह लता तमाल वृक्षसे लिपटी हुई क्या कह रही हैं?' श्रीमती राधिकाने मुस्कराकर उत्तर दिया—'स्वाभाविकरूपसे इस लताने तमालवृक्षका अवलम्बनकर उसे अपनी बेलों, पत्तों और पुष्पोंसे आच्छादित कर रखा है। यह वृक्षका सौभाग्य है कि वृक्षमें फल और पुष्प नहीं रहनेपर भी लताएँ अपने पल्लवों और पुष्पोंसे इस वृक्षका सौन्दर्य अधिक बढ़ा रही हैं।' इसी समय पवनके एक झोंकेने लताको झकझोर दिया। यह देखकर किशोर-किशोरी दोनों युगल भावमें विभोर हो गये। यह तमालवन इस स्मृतिको संजोए हुए अभी भी वर्तमान है।

आटस—कृष्णकी परमानन्दमय मधुर लीलाओंका दर्शन और आस्वादन करनेके पूर्ण अधिकारी तो ब्रजवासी ही हैं। फिर भी चतुर्मुख ब्रह्मा, महादेव शंकर, देवर्षि नारद तथा बहुतसे ऋषि-महर्षि स्वयं भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना करनेके लिए ब्रजभूमिकी बहुतसी लीलास्थलियोंमें निवास कर रहे हैं। अष्टावक्रमुनिकी आराधनाका यह स्थल आटस गाँवके नामसे प्रसिद्ध है। अष्टावक्र शब्दसे अपभ्रंश होकर आटस नाम हुआ है। यह जनाई गाँवसे चार मील तथा वृन्दावनसे छह मीलकी दूरीपर है।

देवीआटस—आटससे एक मील दूरीपर यह गाँव स्थित है। यह गाँव यशोदाके गर्भसे एक साथ उत्पन्न कृष्णकी अनुजा एकांशा देवीका स्थान है। वसुदेवजी इन्हें गोकुलसे अपने साथ कंस कारागारमें लाये थे। देवकीके सन्तान होनेका समाचार पाकर कंस कारागारमें देवकीकी गोदसे एकांशाको छीनकर पृथ्वीपर पटक देनेके लिए जब उसे हाथोंसे आकाशकी तरफ उठाया तो देवी अष्टभुजा दुर्गारूप धारणकर कंसका तिरस्कारकर आकाशमें अन्तर्धान हो कर इस स्थानमें प्रकट हुई। वज्रनाभजीने इस लीलाकी स्मृतिमें यह गाँव बसाया था।

मघेरा—जब कृष्ण और बलदेव अक्रूरके साथ रथपर बैठकर ब्रजसे मथुरा जा रहे थे, उस समय ब्रजवासी लोग उनके विरहमें व्याकुल होकर मार्गकी ओर देख रहे थे तथा रथके चले जानेपर उसकी धूलको देखते

रहे। धूलके शान्त हो जानेपर भी उस मार्गकी ओर देखते रहे। मग हेरा अथवा मार्गकी ओर देखनेसे महाराज वज्रनाभने इस लीलाकी स्मृतिके लिए इस गाँवका नाम मघेरा रखा था।

छूनराक—सौभरीऋषिका यहींपर आश्रम था। यह स्थान वृन्दावन स्थित कालीयह्रदके समीप ही एक मील पश्चिममें अवस्थित है।

शकरोया—देवराजइन्द्र श्रीकृष्ण और ब्रजवासियोंके चरणोंमें अपराध करनेके कारण अपराधी थे। उन्होंने अपने अपराधको क्षमा करानेके लिए इस स्थानपर श्रीकृष्णकी आराधना की थी। इसलिए इन्द्रकी आराधनाका यह स्थल शकरोया नामसे प्रसिद्ध है। देवराज इन्द्रका एक नाम शक्र भी है। शक्रसे शकरोया नाम पड़ा है।
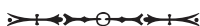
बराहर—इस स्थानपर गोचारणके समय श्रीकृष्णने सखाओंके साथ वराह रूपके आवेशमें क्रीड़ा की थी। इस गाँवका वर्तमान नाम बरारा है। यह हाजरा गाँवसे एक मील दक्षिण–पश्चिममें स्थित है।

एई बराहर ग्रामे वराहरूपे ते।
खेलाईला कृष्णप्रिया सखार सहिते।।

(भक्तिरत्नाकर)

हारासली—यहाँ श्रीकृष्णकी रासलीला स्थली है। पास ही सुरुखुरू गाँव है। सेईसे डेढ़ मील उत्तर–पूर्वमें माई–बसाई नामक दो गाँव हैं। माईके उत्तर–पूर्वमें बसाई गाँव है।

श्रीभद्रवन

भद्राय भद्रारूपाय सदा कल्याणवर्द्धने।
अमङ्गलच्छिदे तस्मै नमो भद्रावनाय च।।

(भविष्योत्तरे)

—हे भद्रस्वरूप भद्रवन! आप सर्वदा सबका कल्याणकारी तथा अमङ्गल नाश करनेवाले हो, आपको पुनः पुनः नमस्कार है।

नन्दघाटसे दो मील दक्षिण-पूर्वमें यमुनाके उसपार यह लीलास्थली है। यह श्रीकृष्ण और श्रीबलरामके गोचारणका स्थान है। श्रीबलभद्रके नामानुसार इस वनका नाम भद्रवन पड़ा है। यहाँ भद्रसरोवर और गोचारण स्थल दर्शनीय हैं।

भद्रसरोवर—

यज्ञस्नानस्वरूपाय राज्याखण्डप्रदे ।
तीर्थराज नमस्तुभ्यं भद्राख्यसरसे नमः।।

(भविष्योत्तरे)

—हे भद्र सरोवर! हे तीर्थराज! आपको नमस्कार है। आप यज्ञ-स्वरूप हैं तथा अखण्ड राज्यपदको देनेवाले हैं। इस सरोवरमें स्नान करने वाला व्यक्ति अनन्त वैभव प्राप्त करता है तथा अन्तमें श्रीकृष्ण-बलदेवकी प्रेमभक्ति प्राप्तकर कृतार्थ हो जाता है।

इस सरोवरमें स्नान करनेवाला व्यक्ति अनन्त वैभव-सुखभोग कर अन्तमें श्रीकृष्ण-श्रीबलदेवकी प्रेमभक्ति प्राप्तकर कृतार्थ हो जाता है।

भाण्डीरवन

भाण्डीरवन श्रीकृष्णकी विविध प्रकारकी मधुर लीलाओंकी स्थली है। बारह वनोंमेंसे यह एक प्रमुख वन है। यहाँ भाण्डीरवट, वेणुकूप, रासस्थली, वंशीवट, मल्लक्रीड़ा स्थान, श्रीदामजीका मन्दिर, श्याम तलैया, छायेरी गाँव और आगियारा गाँव आदि लीला स्थलियाँ दर्शनीय हैं। जहाँ सब प्रकारके तत्त्वज्ञान तथा ऐश्वर्य-माधुर्यपूर्ण लीला-माधुरियोंका सम्पूर्ण रूपसे प्रकाश हो, उसे भाण्डीरवन कहते हैं। नीचे श्रीकृष्णलीला-स्थलियोंका वर्णन किया जा रहा है—

भाण्डीरवट—भाण्डीरवनके अन्तर्गत भाण्डीरवट एक प्रसिद्ध लीलास्थली है। यहाँ श्रीश्रीराधाकृष्ण युगलकी विविध लीलाएँ सम्पन्न होती हैं। श्रीकृष्णकी प्रकट-लीलाके समय यहाँ पर एक बहुत बृहत् वटका वृक्ष था। उसकी अनेकों लम्बी शाखाएँ ऊपर-नीचे चारों ओर बहुत दूर-दूर तक फैली हुईं थीं। पासमें ही श्रीयमुना मधुर किल्लोल करती हुई वक्रगतिसे प्रवाहित हो रही थी, जिसपर श्रीकृष्ण-बलदेव सखाओंके साथ विविध-प्रकारकी क्रीड़ाएँ करते हुए डालियोंके ऊपर-ही-ऊपर श्रीयमुनाको पार कर जाते थे। इसकी विस्तृत शाखाओं पर शुक-सारी, मयूर-मयूरी, कोयलें, पपीहे सदा सर्वदा चहकते रहते थे तथा इसके फलोंसे तृप्त रहते थे। इसकी स्निग्ध एवं सुशीतल छायामें हिरण-हिरणियाँ तथा वनके अन्य प्राणी यमुनाका मधुर जलपान कर विश्राम करते थे। श्रीमती यशोदा आदि ग्वालबालोंकी माताएँ अपने-अपने पुत्रोंके लिए दोपहरका 'छाक' गोपोंके माध्यमसे अधिकांश इसी निर्दिष्ट भाण्डीरवट पर भेज दिया करती थीं। श्रीकृष्ण-बलदेव सखाओंके साथ गोचारण करते हुए यमुनामें गायोंको जलपान कराकर निकटकी हरी-भरी घासोंसे पूर्ण वनमें चरनेके लिए छोड़ देते। वे स्वयं यमुनाके शीतल जलमें स्नान एवं जलक्रीड़ा कर इस वटकी सुशीतल छायामें बैठकर माताओंके द्वारा प्रेरित विविध प्रकारके सुस्वादु अन्न व्यंजनका सेवन करते थे। श्रीकृष्ण सबके मध्यमें बैठते। सखालोग चारों ओरसे घेरकर हजारों पंक्तियोंमें अगल-बगल एवं आगे-पीछे बैठ जाते। ये सभी सखा पीछे या दूर रहने पर भी अपनेको श्रीकृष्णके सबसे निकट सामने देखते थे। ये परस्पर सबको हँसते-हँसाते हुए विविध प्रकारकी क्रीड़ाएँ करते हुए भोजन सम्पन्न करते थे। आकाशसे ब्रह्मा आदि देवगण उनके भोजन क्रीड़ा-कौतुक देखकर

आश्चर्यचकित हो जाते थे। इसी वट वृक्षके नीचे श्रीराधाकृष्ण युगलका ब्रह्माजी द्वारा गान्धर्व विवाह सम्पन्न हुआ था।

प्रसङ्ग—गर्गसंहिता एवं गीतगोविन्दके अनुसार एक समय नन्दबाबा श्रीकृष्णको लेकर गोचारण हेतु भाण्डीरवनमें पधारे। सघन तमाल, कदम्ब वृक्षों और हरी-भरी लताओंसे आच्छादित यह वन बड़ा ही रमणीय था। सघन वन होनेके कारण इसमें सूर्यकी रश्मियाँ भी बहुत ही कम प्रवेश करती थीं। सहसा चारों ओर काले-काले मेघ घिर आये तथा प्रचण्ड आँधीके साथ कुछ-कुछ वर्षा भी प्रारम्भ हो गई। चारों तरफ अंधकार हो गया। नन्दबाबा दुर्योग देखकर भयभीत हो उठे। उन्होंने कन्हैयाको अपने अङ्कमें सावधानीसे छिपा लिया।

इसी समय वहाँ शिखसे सिरतक श्रृंगार धारण की हुई अपूर्व सुन्दरी वृषभानु कुमारी श्रीराधिकाजी उपस्थित हुईं। उन्होंने नन्दबाबाके आगे अपने दोनों हाथोंको पसार दिया, मानो कृष्णको अपनी गोदमें लेना चाहती हो। नन्दबाबाको बहुत ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने कृष्णको उनके हाथोंमें समर्पित कर दिया। श्रीमती राधिका कृष्णको लेकर भाण्डीरवनके अन्तर्गत इसी भाण्डीरवटकी छायामें ले गईं। वहाँ पहुँचते ही श्रीकृष्ण मन्मथ-मन्मथ किशोरके रूपमें प्रकट हो गये। इतनेमें ललिता, विशाखा आदि सखियाँ तथा चतुर्मुख ब्रह्मा भी वहाँ उपस्थित हुए। दोनोंकी अभिलाषा जानकर ब्रह्माजीने वेद मंत्रोंके द्वारा किशोर-किशोरीका गान्धर्व विवाह सम्पन्न कराया। श्रीमती राधिका और श्रीकृष्णने परस्पर एक दूसरेको सुन्दर फूलोंके हार अर्पण किये। सखियोंने प्रसन्नतापूर्वक विवाहकालीन गीत गाये और देवताओंने आकाशसे पुष्पोंकी वृष्टि की। देखते-देखते कुछ क्षणोंके पश्चात् ब्रह्माजी चले गये । सखियाँ भी अन्तर्धान हो गईं और कृष्णने पुनः बालकका रूप धारण कर लिया। श्रीमती राधिकाने कृष्णको पूर्ववत् उठाकर प्रतीक्षामें खड़े नन्दबाबाकी गोदीमें सौंप दिया। इतनेमें बादल छट गये, आँधी भी शान्त हो गई। नन्दबाबा कृष्णको लेकर अपने नन्दब्रजमें लौट आये।

दूसरा प्रसङ्ग— एक समय गर्मीके दिनोंमें सखाओंके साथ श्रीकृष्ण गायोंको यमुनामें जलपान कराकर उन्हें चरनेके लिए छोड़ दिया तथा वे मण्डली बद्ध होकर भोजन क्रीड़ा-कौतुकमें इतने मग्न होगये कि उन्हें यह पता नहीं चला कि गायें उन्हें छोड़कर बहुत दूर निकल गईं हैं। चारों ओर सूखे हुए मुञ्जावन, जिसमें हाथी भी मार्ग न पा सके, जेठकी चिलचिलाती

भाण्डीरवट (भाण्डीरवन)

चित्र सं.–34

वेणुकुप

हुई धूप, नीचे तप्त बालुका, दूर तक कहीं भी छाया नहीं, गायें उस वीहड़ मुञ्जवनसे निकलनेका मार्ग भूल गईं, प्यासके मारे उनकी छाती फटने लगी। इधर सखालोग भी कृष्ण-बलदेवको सूचित किये बिना ही गायोंको खोजते हुए उसी मुञ्जवनमें पहुँचे। इनकी भी गायों जैसी विकट अवस्था हो गई। इतनेमें दुष्ट कंसके अनुचरोंने मुञ्जवनमें आग लगा दी। आग हवाके साथ क्षणभरमें चारों ओर फैल गई। आगकी लपलपाती हुई लपटोंने गायों एवं ग्वालबालोंको घेर लिया। बचनेका और कोई उपाय न देखकर वे कृष्णको पुकारने लगे। श्रीकृष्णने वहाँ पहुँचकर सखाओंको आँख बन्द करनेको कहा। श्रीकृष्णने पलभरमें उस दावाग्निको पान कर लिया। सखाओंने आँख खोलते ही देखा कि सभी भाण्डीरवटकी सुशीतल छायामें कृष्ण-बलदेवके साथ पूर्ववत् भोजन क्रीड़ा-कौतुकमें मग्न हैं, पासमें गौएँ भी आरामसे बैठी हुई जुगाली कर रही हैं। दावाग्निकी विपत्ति उन्हें स्वप्नकी भाँति प्रतीत हुई। श्रीकृष्णने जहाँ दावाग्निका पान किया था वह मुञ्जाटवी या ईषिकाटवी है, उसका वर्तमान नाम अगियारा है। जिसका हम पहले वर्णन कर चुके हैं। वह यमुनाके उस पार भाण्डीर गाँवमें है। जहाँ कृष्ण सखाओंके साथ भोजन क्रीड़ा-कौतुक कर रहे थे, दावाग्नि-पानके पश्चात् जहाँ पुनः सखालोग भोजन क्रीड़ा-कौतुक करने लगे तथा गायोंको सुखसे जुगाली करते हुए देखा, वह यही लीला- स्थली भाण्डीरवट है। श्रीमद्भागवतमें इस लीलाका वर्णन है—

तथेति मीलिताक्षेषु भगवानग्निमुल्बणम् ।
पीत्वा मुखेन तान कृच्छ्राद् योगाधीशो व्यमोचयत् ।।
(१०/१९/१२)

वेणुकूप—भाण्डीरवटके पास ही वेणुकूप है। यहाँ श्रीकृष्णने अपनी वेणुसे एक कूपको प्रकट किया था।

प्रसङ्ग—वत्सासुरका बध करनेके पश्चात् श्रीकृष्ण अपने बलकी डींग हाँकते हुए भाण्डीरवटके पास गोपियोंसे मिले, किन्तु गोपियोंने श्रीकृष्णके ऊपर गोबधका आरोप लगाकर श्रीकृष्णका स्पर्श करनेसे मना कर दिया। कृष्णने कहा कि मैंने गोबध नहीं किया, बल्कि बछड़ेके रूपमें एक असुरका बध किया है। किन्तु गोपियाँ कृष्णके तर्कसे सहमत नहीं हुईं। तब कृष्णने उनसे पवित्र होनेका उपाय पूछा। गोपियोंने कहा—'यदि तुम पृथ्वीके सारे तीर्थोंमें स्नान करोगे तब पवित्र होओगे, तभी हमें स्पर्श कर सकते हो।'

गोपियोंकी बात सुनकर कृष्णने अपने वेणुसे एक सुन्दर कूपका निर्माणकर उसमें पृथ्वीके सारे तीर्थोंका आह्वान किया। फिर उस कूपके जलमें स्नानकर गोपियोंसे मिले।

यहाँ भाण्डीरवटके निकट ही यह वेणुकूप है। उसमें स्नान करनेसे सब तीर्थोंमें स्नान करनेका फल प्राप्त होता है। आज भी ब्रजकी महिलाएँ किसी विशेष योगमें इस कूपका पूजन करती हैं तथा जिनको सन्तान उत्पन्न नहीं होती अथवा जिनकी सन्तानें अकाल मृत्युको प्राप्त होती हैं, वे यहाँ मनौती करती हैं इस प्रकार उनकी मनोवाञ्छा पूर्ण होती है।

श्रीबलदेवजीका मन्दिर—श्रीबलभद्रजी, छोटे भैया कन्हैया और सखाओंको लेकर भाण्डीरवनमें गोचारणके लिए आते थे। यमुनासे पूर्वकी ओर स्थित भद्रवन, भाण्डीरवन, बेलवन, गोकुल–महावन, लोहवन आदि वनोंमें श्रीबलभद्रजीकी प्रमुखता है। इसलिए इन सभी स्थानोंमें श्रीबलदेवजीके मन्दिर हैं। यहाँ भाण्डीरवटमें भी इनका यह मन्दिर दर्शनीय है।

छाहेरी गाँव—भाण्डीरवट एवं वंशीवटके बीचमें बसे हुए गाँवका नाम छाहेरी गाँव है। श्रीकृष्ण सखाओंके साथ भाण्डीरवनमें विविध प्रकारकी क्रीड़ाओंके पश्चात् पेड़ोंकी छायामें बैठकर नाना प्रकारकी भोजन–सामग्री क्रीड़ा–कौतुकके साथ ग्रहण करते थे। इसे छाहेरी गाँव कहते हैं। छाया शब्दसे छाहेरी नाम बना है। इस ग्रामका नामान्तर बिजौली भी है। भाण्डीरवटके पास ही बिजौली ग्राम है।

रासस्थली वंशीवट—भाण्डीरवटसे थोड़ी दूर समीप ही श्रीकृष्णकी रासस्थली वंशीवट है। यह वृन्दावन वाले वंशीवटसे पृथक् है। श्रीकृष्ण इधर गोचारण करते समय इसी वटवृक्षके ऊपर चढ़कर अपनी वंशीमें गायोंका नाम पुकार कर उन्हें एकत्र करते और उन सबको एकसाथ लेकर अपने गोष्ठमें लौटते। कभी–कभी सुहावनी रात्रिकालमें यहींसे प्रियतमा गोपियोंके नाम राधिके! ललिते! विशाखे! पुकारते। इन सखियोंके आने पर इस वंशीवटके नीचे रासलीलाएँ सम्पन्न होतीं।

श्रीदामवट—इसी वंशीवटके नीचे श्रीदाम भैयाका दर्शन है। श्रीकृष्णके मथुरा चले जाने पर विरहमें अनुतप्त होकर श्रीदाम सखा इस निर्जन वंशीवट पर चले आये। वे श्रीकृष्णकी मधुर लीलाओंका स्मरणकर बड़े दुःखी रहते थे। बहुत दिनोंके बाद दन्तवक्रको बधकर जब श्रीकृष्ण गोकुलमें लौटे,

तब इनसे मिले और इनको अपने साथ ले आये। श्रीदामका मन्दिर यहाँ दर्शनीय है।

श्याम तलैया—वंशीवटके पास ही श्याम तलैया है। रासके समय गोपियोंको प्यास लगने पर श्रीश्यामसुन्दरने अपनी वंशीसे इस तलैयाको प्रकटकर उसके सुस्वादु जलसे उन सबको तृप्त किया था। आजकल यह तलैया टूटी-फूटी खण्डहरके रूपमें वर्त्तमान है। थोड़ासा जल है। लोग श्रद्धासे यहाँ आचमन करते हैं।

माटवन

माटवन ब्रजमण्डलके प्रमुख वनोंमेंसे एक अन्यतम वन है। यमुनाके तटपर दूर-दूर तक विस्तृत है। यह हरे-भरे वृक्ष-वल्लरियों और हरी-भरी घासों, फल-फुलोंसे लदा हुआ मनोरम वन होनेके कारण श्रीकृष्ण और श्रीबलभद्रके गोचारणका स्थान है। इस माटवनके अन्तर्गत माट या मांटगाँव, कृष्णकुण्ड, डाँगोली गाँव, मानसरोवर, पानी गाँव और दुर्वासा आश्रम आदि लीला-स्थलियाँ अवस्थित हैं।

माटगाँव—'माट' शब्दका अर्थ दधिमन्थन आदिके लिए मिट्टीसे निर्मित बड़े-बड़े पात्रोंसे है। कृष्णलीलाके समय यहाँ उस प्रकारके माट निर्मित होते थे, जिन्हें ब्रजवासी अपने-अपने कामोंमें लगाते थे। इसीसे इस गाँवका नाम माट प्रसिद्ध हुआ। भाण्डीरवटसे दो मील दक्षिणमें तथा वृन्दावनसे पांच मील उत्तरमें यह गाँव स्थित है। यहाँ बलदेवजीका प्रसिद्ध मन्दिर तथा गोचारणका स्थान है। भक्तिरत्नाकर ग्रन्थमें माटगाँवके विषयमें ऐसा वर्णन किया गया है—

एई 'माठग्राम'—महाआनन्द एखाने ।
नाना क्रीड़ा करे रामकृष्ण सखासने ।।
मृत्तिका-निर्मित बृहत् पात्र—माठ नाम ।
माठोत्पत्ति-प्रसस्त-ए हेतु माठ ग्राम ।।
दधिमन्थनादि लागि ब्रजवासीगण ।
लयेन असंख्य माठ—ऐसे सबे कन ।।

पानी गाँव—मान सरोवरसे दो मील दक्षिण तथा वृन्दावनसे सवा मील दक्षिण-पूर्व यमुना तटपर पानी गाँव स्थित है। यह गाँव पानीघाटके नामसे भी प्रसिद्ध है।

प्रसङ्ग—कृष्णलीलाके समय महर्षि दुर्वासा पानी गाँवके निकट ही अपने दुर्वासा-आश्रममें विराजमान थे। एक समय वृन्दावनकी गोपियाँ वृन्दावनसे विविध प्रकारकी सुस्वादु भोज्य सामग्री लेकर यमुनापार दुर्वासा आश्रममें जाकर महर्षि दुर्वासाको भोजनके द्वारा परितृप्त करना चाहती थीं। किन्तु वर्षाके समय यमुना लबालब भरी हुई थी। उसमें उत्ताल तरङ्गें उठनेके कारण गोपियोंको कोई भी नाविक उसपार ले जानेका साहस नहीं कर सका। ऐसे समय अकस्मात् कृष्ण वहाँ उपस्थित हुए और उन्होंने मुस्कराते

हुए गोपियोंसे उनकी चिन्ताका कारण पूछा। गोपियोंने पार जानेकी समस्या बतलाई। कृष्णने कहा—तुम लोग सहज ही पार उतर सकती हो। यमुनाके तटपर पहुँचकर तुम सभी यमुनासे कहो "कृष्णने यदि किसी स्त्रीका मुख कभी भी दर्शन न किया हो तो उनकी ब्रह्मचर्यनिष्ठाके प्रभावसे हम सहज ही यमुनाको पैदल पार कर जाएँ।" गोपियोंने ऐसा ही किया तथा भोज्य सामग्रियोंके साथ यमुनाजलके ऊपर पैदल ही चलकर पार हो गईं और महर्षि दुर्वासाके आश्रमपर पहुँचीं। लाखों गोपियोंने महर्षि दुर्वासाको विविध प्रकारके सुस्वादु भोजन सामग्रियोंके द्वारा सन्तुष्ट किया। दुर्वासाजीने सन्तुष्ट होकर उनको मनोवाञ्छित वरदान प्रदान किया। जब वे लौटनेके लिए प्रस्तुत हुईं तो अपनी पार जानेकी समस्या महर्षि दुर्वासाजीको बतलाई। दुर्वासाजीने कहा—"यमुनाजीसे कहना, यदि दुर्वासाजीने जीवनभर कभी भी अन्न-व्यञ्जन कुछ भी नहीं खाया हो तो उनके तपके प्रभावसे ही यमुनाजीको पैदल ही पारकर वृन्दावन पहुँच जाएँ।" उन्होंने ऐसा ही किया और वे यमुनाको पैदल पारकर वृन्दावन पहुँच गईं।

गोपियाँ इस घटनासे बड़ी आश्चर्यचकित थीं। जन्मसे अब तक स्त्रियोंके साथ रहनेवाले श्रीकृष्णके स्त्रीदर्शन न करने की बात तथा उनके सारे अन्न-व्यञ्जन आदिको हड़पनेवाले महर्षि दुर्वासा जीवनभर कुछ नहीं खाये और उनके प्रभावसे वे यमुनाको पैदल ही पार कर गईं; इसका रहस्य उन्होंने श्रीकृष्णसे पूछा। श्रीकृष्णने बड़ी गम्भीरतासे उन्हें कहा—मैं दिन रात तुम सबके साथ रहनेपर भी अखण्ड ब्रह्मचारी हूँ, क्योंकि मुझमें तनिक भी भोक्ताका अभिमान नहीं है। दुर्वासाजीको भी भोक्ताका तनिक भी अभिमान नहीं है, इसलिए वे सबकुछ खाकर भी कुछ भी नहीं खाते। भोक्ताका अभिमान ही मनुष्यको संसारमें आसक्त कर देता है। गोपियोंने बड़े आश्चर्यके साथ कृष्णको देखा। यमुनाके जिस घाटसे गोपियाँ पार हुई थीं, उसे पानीगाँव या पानीघाट कहते हैं।

दुर्वासा आश्रम—यह आश्रम मथुरा विश्रामघाटसे उसपार उत्तरकी ओर एक मीलपर स्थित है। यह महर्षि दुर्वासाकी तपस्थली है। यहींसे दुर्वासा यमुना पारकर मथुरामें अम्बरीष महाराजके राजभवनमें द्वादशी पारणके दिन उपस्थित हुए थे। इस कथाका श्रीमद्भागवतमें विस्तृत रूपसे वर्णन किया गया है। दुर्वासा आश्रमके पास ही महर्षि पराशरका आश्रम था, जहाँपर श्रीव्यासादि ऋषि-मुनि उनके पास आया-जाया करते थे। पास ही यमुनाके

किनारे दत्तात्रेयजीका भी आश्रम था। यहाँ श्रीव्यासदेवकी माता सत्यवती (मत्स्यगन्धा) अपने भरणपोषण करनेवाले केवट पिताके पास रहती थीं। पास ही यमुनाके द्वीपमें कृष्ण–द्वैपायन श्रीवेदव्यासका जन्म हुआ था। यहींपर गोपियोंने महर्षि दुर्वासाको विविध प्रकारके सुस्वादु अन्न–व्यञ्जनोंसे परितृप्त किया था।

आज यहाँ पर एक भव्य एवं विशाल मन्दिरका निर्माण हुआ है, जो ब्रजमें अपने आपमें एक अनूठा मन्दिर है, जिसका निर्माण श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके प्रतिष्ठाता ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके मनोऽभीष्ट पूर्ण करनेवाले अन्तरङ्ग कृपापात्र श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराजने करवाया है। यहाँ इस मन्दिरमें महर्षि दुर्वासाजी, श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीराधाकृष्ण आदिके श्रीविग्रह दर्शनीय हैं।

कृष्णकुण्ड—बेलवन और मांटके बीचमें गाँग्रली गाँवमें यह कुण्ड वर्त्तमान है। श्रीकृष्ण सखाओंके साथ इस कुण्डमें जलपान करते, गऊओंको जलपान कराते तथा सखाओंके साथमें जलविहार करते थे।

चित्र सं.–35

श्रीदुर्वासा ऋषि गौड़ीय आश्रम

मानसरोवर—यमुना पुलिनपर शारदीय रासके समय प्रियतम कृष्णको अन्यान्य गोपियोंके साथ नृत्य करते देखकर श्रीमती राधिकाजीको दुर्जय मान हो गया। वे अकेली ही रासस्थलीका परित्यागकर यमुनापार इस निर्जन वनमें चली आईं। कृष्णविरहमें अधीर होकर रोनेसे उनके नेत्रोंसे इस प्रकार अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी, जिससे यह सरोवर बन गया। रसिकशेखर श्रीकृष्णने, श्रीमतीजीको ढूढ़ते-ढूढ़ते यहाँ मानिनी राधिकाजीके श्रीचरणोंमें अपना वेणु और मस्तक रखकर अपना दोष स्वीकार किया तथा पुनः ऐसा न करनेका आश्वासन देकर उन्हें मनाया।

यहाँ चारों तरफ पीलू, कदम्ब और तमाल वृक्षोंकी सघन छायासे सुशोभित तथा मयूर, कोकिल, हंस, हिरण आदि पशु-पक्षियोंसे सुशोभित ब्रजमें यह एक रमणीय स्थल है, जो श्रीराधाकृष्ण युगलके विहारकी स्मृति संजोये हुए आज भी विराजमान है।

यहाँ मानसरोवरके तटपर प्राचीन श्रीमन्दिरमें रसिकशेखर श्रीकृष्ण मानिनी किशोरीजीका मान भङ्ग करनेके लिए उनके श्रीचरणोंमें अपनी मुरली और मस्तक अर्पण करते हुए इस प्रकारसे उनकी ओर देख रहे हैं कि मानो कह रहे हों—'स्मर गरल खण्डनं मम् शिरसि मण्डनम् देहि पद पल्लवमुदारम्।' दर्शनीय है।

चित्र सं.-36

मानसरोवर (राधारानी)

बेलवन

तपः सिद्धि प्रदायैव नमो बिल्ववनाय च ।
जनार्दन नमस्तुभ्यं बिल्वेशाय नमोस्तु ते ।।

(भविष्योत्तर पुराण)

—तपस्या-सिद्धि प्रदानकारी हे बिल्ववन! आपको नमस्कार है। हे जनार्दन! हे बिल्ववनके स्वामी! आपको नमस्कार है।

श्रीकृष्णकी प्रकट-लीलाके समय इस वनमें बेलके पेड़ोंकी प्रचुरता रहनेके कारण इसे बेलवन कहते हैं। श्रीकृष्ण सखाओंके साथ गोचारण करते हुए इस परम मनोहर बेलवनमें विविध प्रकारकी क्रीड़ाएँ करते तथा पके हुए बेल फलोंका आस्वादन करते हैं। यहाँ श्रीलक्ष्मीजीका मन्दिर है।

चित्र सं.-36

बेलवन

प्रसङ्ग—एक समय नारदजीके मुखसे ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णकी मधुर रासलीला और गोपियोंके सौभाग्यका वर्णन सुनकर श्रीलक्ष्मीजीके हृदयमें रासलीला दर्शनकी प्रबल उत्कण्ठा हुई। अनन्य प्रेमकी स्वरूपभूता विशुद्ध प्रेम वाली गोपियोंके अतिरिक्त और किसीका भी रासमें प्रवेश करनेका अधिकार नहीं है। वह प्रवेश केवल महाभाव-स्वरूपा कृष्णकान्ता शिरोमणि श्रीमती राधिका और उनकी स्वरूपभूता गोपियोंकी कृपासे ही सुलभ है। अतः यहींपर उन्होंने कठोर तपस्या की, फिर भी उन्हें रासलीलामें प्रवेश संभव नहीं हो सका। वे आज भी रासमें प्रवेशके लिए यहाँ तपस्या कर रही हैं। श्रीमद्भागवतके दशम स्कन्धमें इसका वर्णन किया गया है। कालीयनागकी पत्नियाँ श्रीकृष्णकी स्तव-स्तुति करती हुई कह रही हैं—'भगवन्! हम समझ नहीं पातीं कि यह इसकी (कालीयनागकी) किस साधनाका फल है, जो यह आपके श्रीचरणोंकी धूलि पानेका अधिकारी हुआ है। आपके श्रीचरणोंकी रज इतनी दुर्लभ है कि उसके लिए आपकी अर्द्धाङ्गिनी श्रीलक्ष्मीजीको भी बहुत दिनोंतक समस्त भोगोंका त्याग करके तथा नियमोंका पालन करते हुए तपस्या करनी पड़ी थी फिर भी वह दुर्लभ श्रीचरणरज प्राप्त नहीं कर सकीं।'[1] यहाँ पास में ही कृष्णकुण्ड और श्रीवल्लभाचार्यजीकी बैठक भी है।

रामकृष्ण सखा सह ए बिल्ववनेते।
पक्क बिल्वफल भुञ्जे महाकौतुकेते।।

---

(१) कस्यानुभावोऽस्य न देव विद्महे
तवाङ्घ्रिरेणुस्पर्शाधिकारः ।
यद्वाञ्छया श्रीर्ललनाऽऽचरत्तपो
विहाय कामान् सुचिरं धृतव्रता ।।
(श्रीमद्भा. १०/१६/३६)

लोहवन

यह स्थान मथुरासे यमुनापार होकर मथुरा–गोकुल राजमार्गपर एक कोस उत्तर–पूर्वमें स्थित है। नाना प्रकारके वृक्षों और पुष्पोंसे सुशोभित यह वन कृष्णकी गोचारण स्थली है। श्रीकृष्णने यहींपर गोचारण करते समय लोहजंघासुरका वध किया था। इसलिए इस वनका नाम लोहवन है।

लोहवने कृष्णेर अद्‌भुत–गोचारण ।।
नानापुष्प सुगन्धे व्यापित रम्यस्थान ।
एथा लोहजंघासुरे बधे भगवान् ।।
लोहजंघवन नाम हयत इहार ।

(भक्तिरत्नाकर)

यहाँ पास ही यमुनाके घाटपर श्रीकृष्णने गोपियोंके साथ नौकाविहार किया था। भक्तिरत्नाकर ग्रन्थमें इसका सुन्दर एवं सरस वर्णन है—

यमुना–निकटे याइ श्रीनिवासे कय ।
एई घाटे कृष्ण नौका–क्रीड़ा आरम्भय ।।
से अति कौतुक राई सखीर सहिते ।
दुग्धादि लईया आईसेन पार हैते ।।
देखि, से अपूर्व शोभा कृष्ण मुग्ध हईया ।
एक भिते रहिलेन जीर्ण नौका लईया ।।
श्रीराधिका सखीसह कहे बारे–बारे ।
'पार कर नाविक–याईब शीघ्र पारे ।।

लोहवन नाना प्रकारके पुष्पोंसे सुशोभित एक रमणीय स्थान है। पास में ही पुण्यतोया यमुनाजी प्रवाहित होती हैं, जिसमें कृष्ण गोपियोंके साथ नौकाविहारकी लीला करते हैं। वे नाविक बनकर गोप–रमणियोंको अपनी नौकामें बिठाकर बीच प्रवाहमें कहते मेरी नौका पुरानी और जीर्ण–शीर्ण है, इसमें पानी भर रहा है। तुम लोग अपने दूध, दहीके बर्तनोंको यमुनामें फेंक दो अन्यथा मेरी नौका डूब जाएगी। गोपियाँ इस नाविकको जल्दीसे पार करनेके लिए पुनः–पुनः प्रार्थना करतीं। इस लीलाको अपने हृदयमें संजोए हुए यह लीलास्थली आज भी विराजमान है।

यहाँ कृष्णकुण्ड, लोहासुरकी गुफा तथा श्रीगोपीनाथजीका दर्शन है।

आयोरे ग्राम—लोहवनके पास ही आयोरे ग्राम है। इसका वर्तमान नाम अलीपुर है। जिस समय कृष्णने दन्तवक्रका बधकर यमुना पारकर गोकुलमें पिता–माता सखा एवं गोप–गोपियोंसे मिलनेके लिए गोकुलमें जा रहे थे, उस समय ब्रजवासी लोग बड़े प्रेमसे 'आयोरे–आयोरे कन्हैया' सम्बोधनकर यहींपर उनसे मिले थे। भक्तिरत्नाकरमें इस स्थानके सम्बन्धमें लिखा है—

कृष्ण देखि धाय गोप आनन्दे विह्वल।
'आयोरे आयोरे' बलि करे कोलाहल।।
मिलिया सबारे कृष्ण, कृष्ण सबे लइया।
निजालये आइला यमुनापार हईया।।
हइला परमानन्द ब्रजे घरे–घरे।
पूर्वमत सबा–सह श्रीकृष्ण विहरे।।
'आयोरे' बलिया गोप येखाने मिलिल।
आयोरे नामेते ग्राम तथाय हईल।।

गोराई या गौरवाईगाँव—आयोरे ग्रामके निकट ही गोराई ग्राम अवस्थित है। नन्द आदि गोप–गोपियोंने कुरुक्षेत्रसे लौटकर कुछ दिनोंके लिए यहाँ वास किया था। भक्तिरत्नाकरके अनुसार कृष्णलीलाके समय यहीं आस–पासमें टाना नामका एक प्रसिद्ध गाँव था। उस समय टाना ग्रामसे एक विशेष समृद्ध जमींदार रहते थे। श्रीनन्दमहाराजके प्रति उनकी गाढ़ी प्रीति थी। जिस समय नन्दबाबा गोप–गोपियोंके साथ लौटकर गोकुलके मार्गसे यहाँ पहुँचे, तब वह जमींदार बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने बड़े आनन्द और गौरवके साथ नन्द महाराजका स्वागत किया और अपने गाँवमें कुछ दिनों तक रखकर गौरव अर्थात् सम्मानके साथ उनकी सेवा परिचर्या की। नन्द महाराजजीको गौरव देनेके कारण इस स्थानका नाम गौरवाई या गोराई प्रसिद्ध है।

बन्दी–आनन्दी—लोहवनसे कुछ ही दूर दक्षिणमें बन्दी–आनन्दी गाँव हैं। ये दोनों देवियाँ श्रीनन्दबाबाके यहाँ गोबरके कण्डे थापती थीं और इसी बहाने श्रीकृष्णका दर्शन करती थीं। उनकी स्मृतिके लिए आज भी बन्दी–आनन्दी दोनों कुण्ड विराजमान हैं।

दाऊजी या बलदेव स्थान—रायासे सोलह किलोमीटर पूर्वमें तथा मथुरासे २४ किलोमीटरकी दूरीपर दाऊजी नामक ग्राम विराजमान है। इस गाँवका नाम रीढ़ा है। किन्तु वर्तमानमें यह दाऊजीके नामसे प्रसिद्ध है। मन्दिरमें दाऊजीका श्यामवर्णका श्रीविग्रह अत्यन्त मनोहर है। पीछेकी ओर रेवतीजी

विराजमान हैं। पीछे रहनेका गूढ़ रहस्य यह है कि श्रीदाऊजीका विवाह द्वारकामें रहते समय हुआ था; ब्रजमें रहते समय नहीं हुआ था। इसलिये रेवतीजी अलक्षित रूपमें पीछे दीखती हैं। मन्दिरके पश्चिममें क्षीरसागर नामान्तर सङ्कर्षण–कुण्ड स्थित है। श्रीदाऊजीका विग्रह वज्रनाभके द्वारा प्रतिष्ठित है। ब्रजके सभी प्रसिद्ध विग्रह ब्रजसे बाहर जानेपर भी दाऊजी यवनोंको चमत्कार दिखलाकर ब्रजसे बाहर नहीं गये। यह स्थान विद्रुमवनके अन्तर्गत है।

दाऊजीका जन्म स्थान गोकुल महावनमें है। वहीं पर श्रीकृष्ण–जन्मसे आठ दिन पूर्व श्रीरोहिणी माताके गर्भसे उनका जन्म हुआ था। बालक श्रीकृष्णके साथ ही उनका भी नाम करण, चूड़ाकरण आदि संस्कार हुआ था। वे कृष्णके साथ ही घुटुरअन पर चलते–फिरते और बाल्य क्रीड़ाएँ करते थे।

रीढ़ा या दाऊजी गाँव श्रीबलदाऊजीके गोचारणका स्थान है। प्रकट–लीलाके समय वहाँ गोचारणका स्थान वन था। कहते हैं कि मन्दिरके पास ही क्षीरसागर या संकर्षण कुण्डमें श्रीदाऊजीका विग्रह औंधा पड़ा था। श्रद्धालु लोगोंने उसे कुण्डसे निकालकर इस मन्दिरका निर्माण कराकर इसमें उक्त विग्रहको पधरा दिया। हो सकता है कि धर्मान्ध औरङ्गजेबके आक्रमणके भयसे पुजारियोंने ऐसा किया हो।

महावन गोकुल

महावन समस्त वनोंसे आयतनमें बड़ा होनेके कारण इसे बृहद्वन भी कहा गया है। इसको महावन, गोकुल या वृहद्वन भी कहते हैं। गोलोकसे यह गोकुल अभिन्न है।[१] गोपराज नन्दबाबाके पिता पर्जन्य गोप पहले नन्दगाँवमें ही रहते थे। वहीं रहते समय उनके उपानन्द, अभिनन्द, श्रीनन्द, सुनन्द, और नन्दन—ये पाँच पुत्र तथा सनन्दा और नन्दिनी दो कन्याएँ पैदा हुईं। उन्होंने वहीं रहकर अपने सभी पुत्र और कन्याओंका विवाह दिया। मध्यम पुत्र श्रीनन्दको कोई सन्तान न होनेसे बड़े चिन्तित हुए। उन्होंने अपने पुत्र नन्दको सन्तानकी प्राप्तिके लिए नारायणकी उपासना की और उन्हें आकाशवाणीसे यह ज्ञात हुआ कि श्रीनन्दको असुरोंका दलन करने वाला महापराक्रमी सर्वगुणसम्पन्न एक पुत्र शीघ्र ही पैदा होगा। इसके कुछ ही दिनों बाद केशी आदि असुरोंका उत्पात आरम्भ होने लगा। पर्जन्य गोप पूरे परिवार और सगे सम्बन्धियोंके साथ इस बृहद्वनमें उपस्थित हुए। इस बृहद् या महावनमें निकट ही यमुना नदी बहती है। यह वन नाना प्रकारके वृक्षों, लता-वल्लरियों और पुष्पोंसे सुशोभित है, जहाँ गऊओंके चरानेके लिए हरे-भरे चारागाह हैं। ऐसे इस स्थानको देखकर सभी गोप ब्रजवासी बड़े प्रसन्न हुए तथा यहींपर बड़े सुखपूर्वक निवास करने लगे। यहींपर नन्दभवनमें यशोदा मैयाने कृष्ण कन्हैया तथा योगमायाको यमज सन्तानके रूपमें अर्द्धरात्रिको प्रसव किया। यहीं यशोदाके सूतिकागारमें नाड़ीच्छेदन आदि जातकर्मरूप वैदिक संस्कार हुए। यहीं पूतना, तृणावर्त, शकटासुर नामक असुरोंका बधकर कृष्णने उनका उद्धार किया। पास ही नन्दकी गोशालामें कृष्ण और बलदेवका नामकरण हुआ। यहीं पासमें ही घुटनोंपर राम कृष्ण चले, यहींपर मैया यशोदाने चञ्चल बाल कृष्णको ओखलसे बाँधा, कृष्णने यमलार्जुनका उद्धार किया। यहीं ढाई-तीन वर्षकी अवस्था तककी कृष्ण और रामकी बालक्रीड़ाएँ हुईं। नीचे हम संक्षेपमें इनका वर्णन कर रहे हैं।

वृहद्वन या महावन गोकुलकी लीलास्थलियोंका ब्रह्माण्ड पुराणमें इस प्रकार वर्णन किया गया है—

---

(१) गोलोकरूपिणे तुभ्यं गोकुलाय नमो नमः ।
अतिदीर्घाय रम्याय द्वाविंशद्योजनायते ।।

(भविष्योत्तरे)

एकविंशति तीर्थानां युक्तं भूरिगुणान्वितम।
यमलार्जुन पुण्यात्मानम्, नन्दकूपं तथैव च ।।
चिन्ताहरणं ब्रह्मण्डं, कुण्डं सारस्वतं तथा ।
सरस्वतीशिला तत्र, विष्णुकुण्डं समन्वितम्।।
कर्णकूपं, कृष्णकुण्डं गोपकूपं तथैव च ।
रमणं रमणस्थानं तृणावर्ताख्यपातनम्।।
पूतनापातनस्थानं तृणावर्ताख्यपातनम् ।
नन्दहर्म्य नन्दगेह घाटं रमणसंज्ञकम्।।
मथुरानाथोद्भवं क्षेत्रं पुण्यं पापप्रनाशनम् ।
जन्मस्थानं तु शेषस्य जन्म योगमायया।।

(ब्रह्माण्ड पुराण)

मथुरासे लगभग छह मील पूर्वमें महावन विराजमान है। ब्रजभक्तिविलासके अनुसार महावनमें श्रीनन्दमन्दिर, यशोदा शयनस्थल, ओखलस्थल, शकटभञ्जन–स्थान, यमलार्जुन उद्धारस्थल, सप्तसामुद्रिक कूप, पास ही गोपीश्वर महादेव, योगमाया जन्मस्थल, बाल गोकुलेश्वर, रोहिणी मन्दिर, पूतना बधस्थल दर्शनीय हैं। भक्तिरत्नाकर ग्रन्थके अनुसार यहाँके दर्शनीय स्थल हैं—जन्मस्थान, जन्मसंस्कारस्थान, गोशाला, नामकरण स्थान, पूतना वधस्थान, अग्निसंस्कार स्थल, शकटभञ्जन स्थल, स्तन्यपान स्थल, घुटुअनोंपर चलनेका स्थान, तृणावर्तवध स्थल, ब्रह्माण्डघाट, यशोदाजीका आङ्गन, नवनीतचोरी स्थल, दामोदरलीला स्थल, यमलार्जुन–उद्धार–स्थल, गोपीश्वर महादेव, सप्तसामुद्रिक कूप, श्रीसनातन गोस्वामीकी भजनस्थली, मदनमोहनजीका स्थान, रमणरेती, गोपकूप, उपानन्द आदि गोपोंके वासस्थान, श्रीकृष्णके जातकर्म आदिका स्थान, गोप–बैठक, वृन्दावन गमनपथ, सकरौली आदि।

वर्तमान दर्शनीय स्थल

(१) नन्दमहाराजजीका दन्तधावन टीला—यहाँ नन्द महाराजजी बैठकर दातुनके द्वारा अपने दाँतोंको साफ करते थे।

(२) नन्दबाबाकी हवेली तथा अन्यान्य गोप–गोपियोंकी हवेली—दन्त धावन टीलाके नीचे और आसपास नन्द और उनके भाईयोंकी हवेलियाँ तथा सगे–संबन्धी गोप, गोपियोंकी हवेलियाँ थीं। आज उनका भग्नावशेष दूर–दूर तक देखा जाता है।

(३) नन्दभवन या कृष्णका जन्मस्थान—नन्द हवेलीके भीतर ही श्रीयशोदा मैयाके कक्षमें भादों माहके रोहिणी नक्षत्रयुक्त अष्टमी तिथिको अर्द्धरात्रिके समय स्वयं-भगवान् श्रीकृष्ण और योगमायाने यमज सन्तानके रूपमें माँ यशोदाजीके गर्भसे जन्म लिया था। यहाँ योगमायाका दर्शन है। श्रीमद्भागवतमें भी इसका स्पष्ट वर्णन मिलता है कि महाभाग्यवान् नन्दबाबा भी पुत्रके उत्पन्न होनेसे बड़े आनन्दित हुए। उन्होंने नाड़ीछेद-संस्कार, स्नान आदिके पश्चात् ब्राह्मणोंको बुलाकर जातकर्म आदि संस्कारोंको सम्पन्न कराया।[१] श्रीरघुपति उपाध्यायजी कहते हैं कि संसारमें जन्म-मरणके भयसे भीत कोई श्रुतियोंका आश्रय लेते हैं तो कोई स्मृतियोंका और कोई महाभारतका ही सेवन करते हैं तो करें, परन्तु मैं तो उन श्रीनन्दरायजीकी वन्दना करता हूँ कि जिनके आंगनमें परब्रह्म बालक बनकर खेल रहा है।[२]

(४) पूतना उद्धार स्थल—माताका वेश बनाकर पूतना अपने स्तनोंमें कालकूट विष भरकर नन्दभवनमें इस स्थलपर आयी। उसने सहज ही यशोदा-रोहिणीके सामने ही पलनेपर सोये हुए शिशु कृष्णको अपनी गोदमें उठा लिया और स्तन पान कराने लगी। कृष्णने कालकूट विषके-साथ ही-साथ उसके प्राणोंको भी चूसकर राक्षसी शरीरसे उसे मुक्तकर गोलोकमें धातृके समान गति प्रदान की।

पूतना पूर्व जन्ममें महाराज बलिकी कन्या रत्नमाला थी। भगवान् वामनदेवको अपने पिताके राजभवनमें देखकर वैसे ही सुन्दर पुत्रकी कामना की थी। किन्तु जब वामनदेवने बलि महाराजका सर्वस्व हरणकर उन्हें नागपाशमें बाँध दिया तो वह रोने लगी। उस समय वह यह सोचने लगी कि ऐसे क्रूर बेटेको मैं विषमिश्रित स्तन-पान कराकर मार डालूँगी। वामनदेवने उसकी अभिलाषाओंको जानकर 'एवम् अस्तु' ऐसा ही हो वरदान दिया था। इसीलिए श्रीकृष्णने उसी रूपमें उसका वधकर उसको धात्रोचित गति प्रदान की।

---

(१) नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने जाताह्लादो महामनाः ।
आहूय विप्रान् वेदज्ञान् स्नातःशुचिरंकृतः ।।
(श्रीमद्भा. १०/५/१)

(२) श्रुतिमपरे स्मृतिमितरे भारतमन्ये भजन्तु भवभीताः ।
अहमिह नन्दं वन्दे यस्यालिन्दे परंब्रह्म ।।
(श्रीपद्यावली पृष्ठ ६७)

(५) शकटभञ्जन स्थान—एक समय बाल–कृष्ण किसी छकड़ेके नीचे पलनेमें सो रहे थे। यशोदा मैया उनके जन्मनक्षत्र उत्सवके लिए व्यस्त थीं। उसी समय कंस द्वारा प्रेरित एक असुर उस छकड़ेमें प्रविष्ट हो गया और उस छकड़ेको इस प्रकारसे दबाने लगा जिससे कृष्ण उस छकड़ेके नीचे दबकर मर जाएँ। किन्तु चञ्चल बालकृष्णने किलकारी मारते हुए अपने एक पैरकी ठोकरसे सहज रूपमें ही उसका वध कर दिया। छकड़ा उलट गया और उसके ऊपरमें रखे हुए दूध, दही, मक्खन आदिके बर्तन चकनाचूर हो गये। बच्चेका रोदन सुनकर यशोदा मैया दौड़ी हुई वहाँ पहुँची और आश्चर्यचकित हो गई। बच्चेको सकुशल देखकर ब्राह्मणोंको बुलाकर बहुतसी गऊओंका दान किया। वैदिक रक्षाके मंत्रोंका उच्चारणपूर्वक ब्राह्मणोंने काली गायके मूत्र और गोबरसे कृष्णका अभिषेक किया। यह स्थान इस लीलाको संजोये हुए आज भी वर्तमान है।

शकटासुर पूर्व जन्ममें हिरण्याक्ष दैत्यका पुत्र उत्कच नामक दैत्य था। उसने एक बार लोमशऋषिके आश्रमके हरे–भरे वृक्षों और लताओंको कुचलकर नष्ट कर दिया था। ऋषिने क्रोधसे भरकर श्राप दिया—'दुष्ट तुम देह–रहित हो जाओ।' यह सुनकर वह ऋषिके चरणोंमें गिरकर क्षमा माँगने लगा। ऋषिने कहा—वैवस्वत मन्वन्तरमें कृष्णके चरणस्पर्शसे तू मुक्त हो जायेगा।' उसी असुरने छकड़ेमें आविष्ट होकर कृष्णको पीस डालना चाहा, किन्तु भगवान् कृष्णके श्रीचरणकमलोंके स्पर्शसे मुक्त हो गया। श्रीमद्भागवतमें इसका वर्णन है।

(६) तृणावर्त वधस्थल—एक समय कंसने कृष्णको मारनेके लिए गोकुलमें तृणावर्त नामक दैत्यको भेजा। वह कंसकी प्रेरणासे बवण्डरका रूप धारणकर गोकुलमें आया और यशोदाके पास ही बैठे हुए कृष्णको उड़ाकर आकाशमें ले गया। बालकृष्णने स्वाभाविक रूपमें उसका गला पकड़ लिया, जिससे उसका गला रुद्ध हो गया, आँखें बाहर निकल आईं और वह पृथ्वीपर गिरकर मर गया।[१]

(७) दधिमन्थन स्थल—यहाँ यशोदाजी दधिमन्थन करती थीं। एक

---

(१) दैत्यो नाम्ना तृणावर्तः कंसभृत्यः प्रणोदितः ।
चक्रवातरूपेण जहारासीनमर्भकम् ।।
(श्रीमद्भा. १०/७/२०)

समय बालकृष्ण निशाके अंतिम भागमें पलंगपर सो रहे थे। यशोदा मैयाने पहले दिन शामको दीपावलीके उपलक्ष्यमें दास, दासियोंको उनके घरोंमें भेज दिया था। सवेरे स्वयं कृष्णको मीठा मक्खन खिलानेके लिए दधिमन्थन कर रही थीं तथा ऊँचे स्वर एवं ताल–लयसे कृष्णकी लीलाओंका आविष्ट होकर गायन भी कर रही थीं। उधर भूख लगनेपर कृष्ण मैयाको खोजने लगे। पलङ्गसे उतरकर बड़े कष्टसे ढुलते–ढुलते रोदन करते हुए किसी प्रकार माँके पास पहुँचे। यशोदाजी बड़े प्यारसे पुत्रको गोदीमें बिठाकर स्तनपान कराने लगीं। इसी बीच पास ही आगके ऊपर रखा हुआ दूध उफनने लगा। मैयाने अतृप्त कृष्णको बलपूर्वक अपनी गोदीसे नीचे बैठा दिया और दूध की रक्षाके लिए चली गईं। अतृप्त बालकृष्णके अधर क्रोधसे फड़कने लगे और उन्होंने लोढ़ेसे मटकेमें छेद कर दिया। तरल दधि मटकेसे चारों ओर बह गया। कृष्ण उसीमें चलकर घरके अन्दर उलटे ओखलपर चढ़कर छींकेसे मक्खन निकालकर कुछ स्वयं खाने लगे और कुछ बंदरों तथा कौवोंको भी खिलाने लगे। यशोदाजी लौटकर बच्चेकी करतूत देखकर हँसने लगीं और उन्होंने छिपकर घरके अन्दर कृष्णको पकड़ना चाहा। मैयाको देखकर कृष्ण ओखलसे कूदकर भागे, किन्तु यशोदाजीने पीछेसे उनकी अपेक्षा अधिक वेगसे दौड़कर उन्हें पकड़ लिया, दण्ड देनेके लिए ओखलसे बाँध दिया।[१] फिर गृहकार्यमें लग गयीं। इधर कृष्णने सखाओंके साथ ओखलको खींचते हुए पूर्व जन्मके श्रापग्रस्त कुबेर पुत्रोंको स्पर्शकर उनका उद्धार कर दिया। यह कथा श्रीमद्भागवतमें विस्तृत रूपसे वर्णित है।

यहींपर नन्दभवनमें यशोदाजीने कृष्णको ओखलसे बाँधा था। नन्दभवनसे बाहर पास ही नलकुबेर और मणिग्रीवके उद्धारका स्थान है।

आजकल जहाँ चौरासी खम्बा हैं, वहाँ कृष्णका नाड़ीछेदन हुआ था। उसीके पासमें नन्दकूप है।

(८) नन्दबाबाकी गोशाला—गोशालामें कृष्ण और बलदेवका नामकरण हुआ था। गर्गाचार्यजीने इस निर्जन गोशालामें कृष्ण और बलदेवका नामकरण किया था। नामकरणके समय श्रीबलराम और कृष्णके अद्भुत पराक्रम,

---

(१) स्वमातुः स्विन्नगात्राया विस्रस्तकबरस्रजः।
दृष्ट्वा परिश्रमं कृष्णः कृपयाऽऽसीत् स्वबन्धने ।।
(श्रीमद्भा. १०/९/१९)

दैत्यदलन एवं भागवतोचित लीलाओंके संबन्धमें भविष्यवाणी भी की थी। कंसके अत्याचारके भयसे नन्द महाराजने बिना किसी उत्सवके नामकरण संस्कार कराया था।

(९) मल्ल तीर्थ—यहाँ नङ्गे बाल कृष्ण और बलराम परस्पर मल्लयुद्ध करते थे। गोपियाँ लड्डूका लोभ दिखलाकर उनको मल्लयुद्धकी प्रेरणा देतीं तथा युद्धके लिए उकसातीं। ये दोनों बालक एक दूसरेको पराजित करनेकी लालसासे मल्लयुद्ध करते थे। यहाँपर वर्तमान समयमें गोपीश्वर महादेव विराजमान हैं।

(१०) नन्दकूप—महाराज नन्दजी इस कुएँका जल व्यवहार करते थे। इसका नामान्तर सप्तसामुद्रिक कूप भी है। ऐसा कहा जाता है कि देवताओंने भगवान् श्रीकृष्णकी सेवाके लिए इसे प्रकट किया था। इसका पानी शीतकालमें उष्ण तथा उष्णकालमें शीतल रहता था। इसमें स्नान करनेसे समस्त पापोंसे मुक्ति मिल जाती है।

(११) महावनमें श्रीचैतन्य महाप्रभुजी—श्रीरूपसनातनके ब्रज आगमनसे पूर्व श्रीचैतन्य महाप्रभु वनभ्रमणके समय यहाँ पधारे थे। वे महावनमें कृष्ण–जन्मस्थानमें श्रीमदनमोहनजीका दर्शनकर प्रेममें विह्वल होकर नृत्य करने लगे। उनके नेत्रोंसे अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। भक्तिरत्नाकरमें लिखा है—

अहे श्रीनिवास! कृष्ण चैतन्य एथाय ।
जन्मोत्सव स्थान देखि उल्लास हियाय ।।
भावावेशे प्रभु नृत्य, गीते मग्न हैला ।
कृपा करि सर्वचित्त आकषर्ण कैला ।।

(१२) श्रीसनातन गोस्वामीका भजनस्थल—

सनातन मदनगोपाल दर्शने। महासुख पाईया रहे महावने।।

(भक्तिरत्नाकर)

चौरासी खम्बा मन्दिरसे नीचे उतरनेपर सामुद्रिक कूपके पास ही गुफाके भीतर सनातन गोस्वामीकी भजनकुटी है। सनातन गोस्वामी कभी–कभी यहाँ गोकुलमें आनेपर इसी जगह भजन करते थे और श्रीमदनगोपालजीका प्रतिदिन दर्शन करते थे।

एक समय सनातन गोस्वामी यमुना पुलिनके रमणीय बालूमें एक अद्भुत बालकको खेलते हुए देखकर आश्चर्यचकित हो गये। खेल समाप्त होनेपर वे बालकके पीछे–पीछे चले, किन्तु मन्दिरमें प्रवेश करते ही वह बालक

दिखाई नहीं दिया, विग्रहके रूपमें श्रीमदनगोपाल दीखे। वही श्रीमदनगोपाल कुछ समय बाद पुनः मथुराके चौबाइनके घरमें उसके बालकके साथमें खेलते हुए मिले। श्रीमदनगोपालने सनातनजीसे उनके साथ वृन्दावनमें ले चलनेके लिए आग्रह किया। सनातन गोस्वामी उनको अपनी भजनकुटीमें ले आये और विशाल मन्दिर बनवाकर उनकी सेवा-पूजा आरम्भ करवाई।

(१३) ब्रह्माण्डघाट, प्रसङ्ग—जन्मस्थली नन्दभवनसे प्रायः एक मील पूर्वमें ब्रह्माण्डघाट विराजमान है। यहाँपर बालकृष्णने गोप-बालकोंके साथ खेलते समय मिट्टी खाई थी। कृष्णको मिट्टी खाते देखकर गोप बालकोंने यशोदा मैयासे कह दिया। माँ यशोदाने बलरामसे इस विषयमें पूछा। बलरामने भी कन्हैयाके मिट्टी खानेकी बातका समर्थन किया। मैयाने घटनास्थलपर पहुँचकर कृष्णसे पूछा—'क्या तुमने मिट्टी खाई है?' कन्हैयाने उत्तर दिया—'नहीं मैया! मैंने मिट्टी नहीं खाई।' यशोदा मैयाने कहा—'कन्हैया! अच्छा तू मुख खोलकर दिखा।' कन्हैयाने मुख खोलकर कहा—'देख ले मैया।' मैया तो स्तब्ध रह गई। अगणित ब्रह्माण्ड, अगणित ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा चराचर सबकुछ कन्हैयाके मुखमें दिखाई पड़ा। भयभीत होकर उन्होंने आँखें बन्द कर लीं तथा सोचने लगीं, मैं यह क्या देख रही हूँ? क्या यह मेरा भ्रम है या किसीकी माया है? आँखें खोलनेपर देखा कन्हैया उसकी गोदमें बैठा हुआ है। यशोदाजीने घर लौटकर ब्राह्मणोंको बुलाया। इस दैवी प्रकोपकी शान्तिके लिए स्वस्ति वाचन कराया और ब्राह्मणोंको गोदान तथा दक्षिणा दी।

श्रीकृष्णके मुखमें भगवत्ताके लक्षण स्वरूप अखिल सचराचर विश्व ब्रह्माण्डको देखकर भी यशोदा मैयाने कृष्णको स्वयं-भगवानके रूपमें ग्रहण नहीं किया। उनका वात्सल्य प्रेम शिथिल नहीं हुआ, बल्कि और भी समृद्ध हो गया। दूसरी ओर कृष्णका चतुर्भुजरूप दर्शनकर देवकी और वसुदेवका वात्सल्य-प्रेम और विश्वरूप दर्शनकर अर्जुनका सख्य-भाव शिथिल हो गया। ये लोग हाथ जोड़कर कृष्णकी स्तव-स्तुति करने लगे। इस प्रकार ब्रजमें कभी-कभी कृष्णकी भगवत्तारूप ऐश्वर्यका प्रकाश होनेपर भी ब्रजवासियोंका प्रेम शिथिल नहीं होता। वे कभी भी श्रीकृष्णको भगवान्‌के रूपमें ग्रहण नहीं करते। उनका कृष्णके प्रति मधुरभाव कभी शिथिल नहीं होता।

दूसरा प्रसङ्ग—बालकृष्ण एक समय यहाँ सहचर ग्वालबालोंके साथ खेल रहे थे। अकस्मात् बाल-टोली ताली बजाती और हँसती हुई कृष्णको चिढ़ाने लगी। पहले तो कन्हैया कुछ समझ नहीं सके, किन्तु क्षणभरमें

उन्हें समझमें आ गया। दाम, श्रीदाम, मधुमङ्गल आदि ग्वालबाल कह रहे थे कि नन्दबाबा गोरे, यशोदा मैया गोरी किन्तु तुम काले क्यों? सचमुचमें तुम यशोदा मैयाकी गर्भजात सन्तान नहीं हो। किसीने तुम्हें जन्म के बाद पालन–पोषण करनेमें असमर्थ होकर जन्मते ही किसी वटवृक्षके कोटरेमें रख दिया था। परम दयालु नन्दबाबाने वहाँपर असहाय रोदन करते हुए देखकर तुम्हें उठा लिया और यशोदाजीकी गोदमें डाल दिया। किन्तु यथार्थतः तुम नन्द–यशोदाके पुत्र नहीं हो।

कन्हैया खेलना छोड़कर घर लौट गया और आँगनमें क्रन्दन करता हुआ लोटपोट करने लगा। माँ यशोदाने उसे गोदमें लेकर बड़े प्यारसे रोनेका कारण पूछना चाहा, किन्तु आज कन्हैया गोदमें नहीं आया। तब मैया जबरदस्ती अपने अङ्कमें धारणकर अङ्गोंकी धूल झाड़ते हुए रोनेका कारण पूछने लगी। कुछ शान्त होनेपर कन्हैयाने कहा—दाम, श्रीदाम आदि गोपबालक कह रहे हैं कि तू अपनी मैयाकी गर्भजात सन्तान नहीं है। 'बाबा गोरे, मैया गोरी और तू कहाँसे काला' निकल आया। यह सुनकर मैया हँसने लगी और बोली—'अरे लाला! ऐसा कौन कहता है?' कन्हैयाने कहा—'दाम, श्रीदाम आदिके साथ दाऊ भैया भी ऐसा कहते हैं।' मैया गृहदेवता श्रीनारायणकी शपथ लेते हुए कृष्णके मस्तकपर हाथ रखकर बोली—'मैं श्रीनारायणकी शपथ खाकर कहती हूँ कि तुम मेरे ही गर्भजात पुत्र हो।' अभी मैं बालकोंको फटकारती हूँ। इस प्रकार कहकर कृष्णको स्तनपान कराने लगी। इस लीलाको संजोए हुए यह स्थली आज भी विराजमान है।

यथार्थतः नन्दबाबाजी गौर वर्णके थे। किन्तु यशोदा मैया कुछ हल्की सी साँवले रङ्गकी बड़ी ही सुन्दरी गोपी थीं। नहीं तो यशोदाके गर्भसे पैदा हुए कृष्ण इतने सुन्दर क्यों होते? किन्तु कन्हैया यशोदाजीसे कुछ अधिक साँवले रङ्गके थे। बच्चे तो केवल चिढ़ानेके लिए वैसा कह रहे थे।

(१४) चिन्ताहरणघाट—ब्रह्माण्डघाटसे सटे हुए पूर्वकी ओर श्रीयमुनाजीका चिन्ताहरण घाट है। यहाँ चिन्ताहरण महादेवका दर्शन है। ब्रजवासी इनका पूजन करते हैं। कन्हैयाके मुखमें ब्रह्माण्ड दर्शनके पश्चात् माँ यशोदाने अत्यन्त चिन्तित होकर चिन्ताहरण महादेवसे कृष्णके कल्याणकी प्रार्थना की थी।

(१५) कोलेघाट—ब्रह्माण्डघाटसे यमुनापार मथुराकी ओर कोलेघाट विराजमान है। श्रीवसुदेवजी नवजात कृष्णको लेकर यहींसे यमुनापार होकर गोकुल नन्दभवनमें पहुँचे थे। जिस समय वसुदेवजी यमुनापार करते समय बीचमें उपस्थित हुए, उस समय यमुना श्रीकृष्णके चरणोंको स्पर्श करनेके लिए बढ़ने लगी। वसुदेवजी कृष्णको ऊपर उठाने लगे। जब वसुदेवजीके गले तक पानी पहुँचा तो वे बालककी रक्षा करनेकी चिन्तासे घबड़ाकर कहने लगे इसे 'को लेवे' अर्थात् इसे कौन लेकर बचाये। इसलिए वज्रनाभजीने यमुनाके इस घाटका नाम कोलेघाट रखा।

यमुनाके स्तरको बढ़ते देखकर बालकृष्णने पीछेसे अपने पैरोंको यमुनाजीके कोलमें (गोदीमें) स्पर्श करा दिया। यमुनाजी कृष्णके चरणोंका स्पर्श पाकर झट नीचे उतर गईं। पीछेसे वहाँ टापू हो गया और वहाँ कोलेगाँव बस गया।

कोलेघाटके तटपर उथलेश्वर और पाण्डेश्वर महादेवजीके दर्शन हैं।

दाऊजीसे पांच कोस उत्तरकी तरफ देवस्पति गोपका निवास स्थान देवनगर है। वहाँ रामसागरकुण्ड, प्राचीन बृहद् कदम्ब वृक्ष और देवस्पति गोपके पूजनकी गोवर्धन शिला दर्शनीय है। दाऊजीके पास ही हातौरा ग्राम है। वहाँ नन्दरायजीकी बैठक है।

(१६) कर्णछेदन स्थान—यहाँ बालकृष्ण और बलरामका कर्णछेदन संस्कार हुआ था। इसका वर्तमान नाम कर्णावल गाँव है। यहाँ कर्णबेध कूप, रत्नचौक और श्रीमदनमोहन तथा माधवरायजीके श्रीविग्रहोंके दर्शन हैं।

गोकुल

यथार्थमें महावन और गोकुल एक ही है। नन्दबाबा अपने परिजनोंको लेकर नन्दगाँवसे वृहद्वन या महावनमें बस गये। गो, गोप, गोपी आदिका समूह वास करनेके कारण महावनको ही गोकुल कहा गया है। नन्दबाबाके समय गोकुल नामका कोई पृथक् रूपमें गाँव या नगर नहीं था। यथार्थमें यह गोकुल आधुनिक बस्ती है। यहाँपर नन्दबाबाकी गऊओंका खिड़क था। आजसे लगभग पाँच सौ पच्चीस वर्ष पहले श्रीचैतन्य महाप्रभुके ब्रज आगमनके पश्चात् श्रीवल्लभाचार्यने यमुनाके इस मनोहर तटपर श्रीमद्भागवतका पारायण किया था। इनके पुत्र श्रीविट्ठलाचार्य और उनके पुत्र श्रीगोकुलनाथजीकी बैठकें भी यहाँ पर है। असलमें श्रीविट्ठलनाथजीने औरंगजेबको चमत्कार दिखलाकर इस स्थानका अपने नामपर पट्टा लिया था। उन्होंने ही इस गोकुलको बसाया। उनके पश्चात् श्रीगोकुलनाथके पुत्र, परिवारोंके सहित इस गोकुलमें ही रहते थे। श्रीवल्लभकुलके गोस्वामी गोकुलमें ही रहते थे। उन्होंने यहाँपर मथुरेशजी, विट्ठलनाथजी, द्वारिकाधीशजी, गोकुलचन्द्रमाजी, बालकृष्णजी तथा श्रीमदनमोहनजीके श्रीविग्रहोंकी प्रतिष्ठा की थी। पीछेसे श्रीमथुरेशजी कोटा, श्रीविट्ठलनाथजी नाथद्वारा, श्रीद्वारिकाधीशजी कांकरौली, गोकुलचन्द्रमाजी कामवन, श्रीबालकृष्णजी सूरत और मदनमोहनजी कामवन पधार गये। श्रीवल्लभकुलके गोस्वामी गोकुलमें रहनेके कारण गोकुलिया गोस्वामीके नामसे प्रसिद्ध हैं।

यहाँके दर्शनीय स्थान

(१) श्रीठाकुरानीघाट—गोकुलका यह मुख्य घाट है। श्रीवल्लभाचार्यजीको यहींपर श्रीयमुना महारानीका दर्शन प्राप्त हुआ था। उन्होंने यहींपर सर्वप्रथम दीक्षा देना आरम्भ किया। इसलिए वल्लभ सम्प्रदायके वैष्णवोंके लिए यह घाट बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है।

(२) गोविन्दघाट—श्रीवल्लभाचार्यजी जब ब्रजमें आये, तब यमुनाके इस घाटका दर्शन कर बड़े आकर्षित हुए। उन्होंने बड़े-बूढ़े ब्रजवासियोंसे सुना कि पास ही नन्दबाबाकी खिड़क थी और यह घाट जहाँ वह बैठे हैं, वह घाट गोविन्दघाटके नामसे विख्यात है। श्रीवल्लभाचार्यजी उस स्थानका

दर्शनकर इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने इस घाटपर शमीवृक्षके नीचे श्रीमद्भागवतका सप्ताह-पारायण किया।

इसके अतिरिक्त यहाँ—(३) गोकुलनाथजीका बाग, (४) बाजनटीला, (५) सिंहपौड़ी, (६) यशोदाघाट, (७) पास ही में श्रीविट्ठलनाथजीका मन्दिर, (८) श्रीमदनमोहनजीका मन्दिर, (९) श्रीमाधवरायजीका मन्दिर, (१०) श्रीगोकुलनाथजीका मन्दिर, (११) श्रीनवनीतप्रियजीका मन्दिर, (१२) श्रीद्वारकानाथजीका मन्दिर, (१३) पासमें ब्रह्मछोकरावृक्ष, (१४) श्रीगोकुलचन्द्रमाजीका मन्दिर, (१५) श्रीमथुरानाथजीका मन्दिर तथा (१६) श्रीनन्दमहाराजजीके छकड़ा रखने आदि स्थान दर्शनीय हैं।

गोकुलके सामने यमुनाके उसपार नौरंगाबाद गाँव है। उसमें श्रीगङ्गाजीका मन्दिर तथा दूसरे दर्शनीय स्थान हैं।

अक्रूर घाट

मथुरासे चार मील उत्तर तथा वृन्दावनसे एक मील दक्षिणमें अक्रूरघाट है। पासमें ही अक्रूरगाँव है।

प्रसङ्ग—जिस समय अक्रूरजी नन्दगाँवसे श्रीकृष्ण और श्रीबलदेवजीको रथमें बिठाकर मथुरा ला रहे थे, उस समय अक्रूरने रथको वहीं रोक दिया। रथपर ही कृष्ण-बलदेवको छोड़कर स्वयं स्नान और सन्ध्या आह्निक करनेके लिए यमुनाह्रदमें उतरे। वे स्नानकर जलमें ही अपने उपास्य सनातन ब्रह्मका मंत्र जपने लगे तथा उनका ध्यान करने लगे। किन्तु, आज उनके ध्यानमें अपने इष्ट सनातन ब्रह्मके बदले श्रीराम-कृष्णके रूपका ही दर्शन हुआ। उधर रथके ऊपर भी श्रीराम-कृष्णको देखा। फिर पानीमें डुबकी लगाकर राम-कृष्णको ही देखा। तब उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया कि ये श्रीराम-कृष्ण ही सनातन पूर्ण-ब्रह्म हैं।

गौड़ीय गोस्वामियोंने इस विषयमें एक सुन्दर सिद्धान्तकी अवतारणा की है। नन्दनन्दन श्रीकृष्ण और रोहिणीनन्दन श्रीराम ब्रजको छोड़कर अन्यत्र कहीं भी नहीं जाते। इसलिए अक्रूरके साथ ब्रज और मथुराकी सीमापर इस अक्रूरघाटतक नन्दनन्दन श्रीकृष्ण और रोहिणीनन्दन श्रीराम आये। तत्पश्चात् वहींसे वे दोनों अप्रकटरूपमें ब्रजमें ही रहे। इस अक्रूरघाटसे अक्रूरके साथ जो रथपर मथुरा गये और वहाँकी लीलाएँ कीं, वे देवकी या वसुदेवनन्दन श्रीबलराम और देवकी या वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण ही थे।

यशोदानन्दन और देवकीनन्दन तत्त्वतः एक ही हैं, फिर भी रसकी दृष्टिसे इनमें वैशिष्ट्य वर्तमान है।

दूसरा प्रसङ्ग—एक समय नन्दबाबाने एकादशीके दिन निर्जल उपवास कर उसी रातमें द्वादशी लग जाने पर रात्रिकालमें ही स्नान करनेके लिए यमुनामें प्रवेश किया। आसुरी बेलामें स्नान करनेके कारण वरुणदेवके अनुचरोंने श्रीनन्दबाबाको पकड़ कर उन्हें वरुणलोकमें उपस्थित किया। कुछ ही देरमें भगवान् श्रीकृष्ण भी वरुणलोकमें पहुँचे। श्रीवरुणदेवने सर्वेश्वर श्रीकृष्णकी उपहारके साथ पूजा-अर्चना करके श्रीनन्दबाबाको आदरपूर्वक उन्हें समर्पण कर दिया।

श्रीनन्दबाबा इसे देखकर बड़े ही आश्चर्यचकित हुए। उन्होंने दूसरे दिन यह घटना ब्रजवासियोंको सुनाई। वे लोग भी श्रीकृष्णसे उनके परम- धामका

दर्शन करानेका अनुरोध करने लगे। महाकारुणिक भगवान्‌ने उन ब्रजवासियोंको यहीं पर अपने सनातन ब्रह्मलोकका दर्शन कराया, जहाँ इससे पूर्व उन्होंने भक्त अक्रूरजीको उनके इष्टदेवका दर्शन कराया था—

इति सञ्चिन्त्य भगवान् महाकारुणिको हरिः।
दर्शयामास लोकं स्वं गोपानां तमसः परम्॥
ते तु ब्रह्महृदं नीता मग्नाः कृष्णेन चोद्धृताः।
ददृशुब्रह्मणो लोकं यत्राक्रूरोऽध्यगात् पुरा॥
(श्रीमद्भ. १०/२८/१४,१६)

यहाँ अक्रूरघाटमें करोड़ों तीर्थ विद्यमान रहते हैं। सूर्यग्रहणके समय यहाँ स्नान करनेकी विधि है।

विष्णुलोकप्रद तीर्थ मुक्ताक्रूरा प्रदायिने।
कृष्णोक्षणप्रसादाय नमस्ते विष्णुरूपिणे॥
(आदि वाराह पुराण)

श्रीचैतन्य महाप्रभु जब जगन्नाथपुरीसे झाड़खण्डके पथसे वृन्दावन पधारे थे, उस समय वृन्दावनमें कोई बस्ती नहीं थी। केवल चारों ओर गभीर वन-ही-वन था। वे रातमें अक्रूरघाटमें ही वास करते थे। प्रातःकाल होनेपर वे वृन्दावनमें यमुनाके किनारे इमलीतला घाटपर बैठकर प्रेममें आविष्ट होकर तृतीय प्रहर तक हरिनाम करते थे। उनके नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा प्रवाहित होती रहती तथा उनके अङ्गोंमें सुदीप्त अष्टसात्त्विक विकार दृष्टिगोचर होते। उस समय इनके साथ केवल श्रीबलभद्र भट्टाचार्य थे। श्रीचैतन्य चरितामृतमें इस प्रसङ्गका बड़ा ही हृदयग्राही वर्णन है।

यहाँपर प्राचीनकालमें बृहदसेन राजाके लिए शान्त ऋषिने यज्ञ करवाया था। अक्रूरघाटका दूसरा नाम ब्रह्महृद भी है। क्योंकि कृष्णने गोपोंको यहाँ ब्रह्मधामका दर्शन कराया था। अक्रूरजीको भी यहींपर सनातन पूर्णब्रह्मका दर्शन हुआ था।

यज्ञस्थल—अक्रूरघाटके पास ही माथुरब्राह्मणोंके यज्ञ करनेका स्थान है।

प्रसङ्ग—एक समय गोप सखाओंके साथ श्रीकृष्ण कहीं पास ही गोचारण कर रहे थे। भूख लगनेपर कृष्णने सखाओंको यहीं यज्ञ करनेवाले ब्राह्मणोंके पास भोज्य-द्रव्य माँगनेके लिए भेजा, किन्तु यज्ञ करनेमें संलग्न भक्ति-रहित उन ब्राह्मणोंने उन्हें भोज्य पदार्थ नहीं दिये। सखा लोग तिरस्कृत होकर कृष्णके पास लौट आये। श्रीकृष्णने उन्हें समझा-बुझाकर पुनः ब्राह्मणोंकी पत्नियोंके पास कुछ माँगनेके लिए भेजा।

भोजनस्थल या भातरोल गाँव—यहाँपर कृष्णने यज्ञ पत्नियोंके द्वारा लाये हुए नाना प्रकारके सुस्वादु अन्न–व्यञ्जनोंका आस्वादन किया था।

प्रसङ्ग—कृष्णके समझाने–बुझानेसे ग्वालबाल यज्ञपत्नियोंके निवास स्थानपर गये और कृष्ण बलदेवके लिए कुछ अन्न माँगा। राम और कृष्णका नाम सुनते ही यज्ञपत्नियाँ भावविह्वल हो गईं। वे थालोंमें नाना प्रकारके सुस्वादु अन्न–व्यञ्जन लेकर कृष्णके दर्शनोंके लिए बड़ी उत्कण्ठित होकर चल पड़ीं। अपने पतियोंके द्वारा बाधा दिये जानेपर भी वे रुकी नहीं। कुछ याज्ञिक विप्रोंने अपनी पत्नियोंको घरोंमें बलपूर्वक बंद कर दिया। किन्तु वे भी विरहतापसे अपने शरीरको छोड़कर श्रीकृष्णसे जा मिलीं। जब ब्राह्मणियाँ श्रीकृष्णके निकट पहुँचीं, तब उनका नवीन मेघके समान श्यामवर्ण रूप देखकर मुग्ध हो गईं। उनके श्याम अङ्गोंपर पीताम्बर स्थिर विद्युत्की भाँति फहरा रहा था।[१]

वे कृष्णका दर्शनकर प्रेममें इस प्रकार आविष्ट हो गईं कि अपने पतियोंके पास वापस घर लौटना नहीं चाहतीं थीं। किन्तु कृष्णके द्वारा समझाये जानेपर किसी प्रकार घर लौटनेके लिए तैयार हुईं। उनके घर लौटनेपर उनके पतियोंके भाव सम्पूर्ण रूपसे बदल गये। वे अपने तीन प्रकारके जन्म, विद्या और वैदिक क्रियाओंमें अपनी दक्षता आदिको धिक्कार देते हुए अपनी पत्नियोंकी अलौकिक कृष्णभक्तिकी प्रशंसा करने लगे।[२]

यहाँ एक विचारणीय विषय है कि इन द्विज–पत्नियोंको कृष्णने लौटा दिया और वे लौट गईं। किन्तु गोपरमणियाँ कृष्णकी मुरलीकी तान सुनकर कृष्णके पास आईं। कृष्णने इनको भी अपने पतियोंके पास लौट जानेके लिए कहा, किन्तु वे लौटी नहीं। श्रीकृष्णने उनके साथ नृत्य और गीतमय

---

(१) श्यामं हिरण्यपरिधिं वनमाल्यबर्हधातुप्रवालनटवेषमनुव्रतांसे।
विन्यस्तहस्तमितरेण धुनानमब्जं कर्णोत्पलालककपोलमुखाब्जहासम ।।
(श्रीमद्भा. १०/२३/२२)

(२) दृष्ट्वा स्त्रीणां भगवति कृष्णे भक्तिमलौकिकीम्।
आत्मानं च तथा हीनमनुतप्ता व्यगर्हयन् ।।
धिग् जन्म नस्त्रिवृद् विद्यां धिग् व्रतं धिग् बहुज्ञाता्।
धिक् कुलं धिक् क्रियादाक्ष्यं विमुखा ये त्वधोक्षजे ।।
(श्रीमद्भा. १०/२३/३८–३९)

रासलीला की। यहाँ प्रश्न हो सकता है कि ऐसा क्यों? क्योंकि, कृष्णकी रास आदि लीलाओंमें एकमात्र गोपियोंका ही अधिकार है। श्रीकृष्णका भी ब्रजमें गोपवेश और गोप–आवेश रहता है। इसलिए ब्रजमें गोपीगर्भजात गोपियोंका ही ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णकी रास आदि तथा निकुञ्ज–लीलाओंमें अधिकार है। वैकुण्ठगत लक्ष्मी तथा द्विजपत्नियोंका इन निकुञ्ज आदि लीलाओंमें अधिकार नहीं है। इसलिए वे लौटा दी गईं। हो सकता है कि बहुत जन्मों तक रागात्मिक गोपियोंके आनुगत्यमें कठोर आराधना करनेपर वे प्रकटब्रजमें गोपीगर्भसे जन्म ग्रहण करें तथा नित्यसिद्ध गोपियोंके सङ्गके प्रभावसे कभी निकुञ्ज आदि सेवाओंमें अधिकार प्राप्त कर सकें।

चित्र सं.– 37A

श्रीवृन्दावन

श्रीवृन्दावन

श्रीवृन्दादेवीके द्वारा परिसेवित परम रमणीय विविध प्रकारके सेवाकुञ्जों और केलिकुञ्जों द्वारा परिव्याप्त इस रमणीय वनका नाम वृन्दावन है। यहाँ वृन्दादेवीका सदा-सर्वदा अधिष्ठान है। वृन्दादेवी श्रीवृन्दावनकी रक्षयित्री, पालयित्री, वनदेवी हैं। वृन्दावनके वृक्ष, लता, पशु-पक्षी सभी इनके आदेशवर्ती और अधीन हैं। श्रीवृन्दादेवीकी अधीनतामें अगणित गोपियाँ नित्य-निरन्तर कुञ्जसेवामें संलग्न रहती हैं। इसलिए ये ही कुञ्जसेवाकी अधिष्ठात्री देवी हैं।

यह समझ लेना आवश्यक है कि पौर्णमासी योगमाया पराख्या महाशक्ति हैं। गोष्ठ और वनमें लीलाकी सर्वाङ्गिकताका सम्पादन करना योगमायाका कार्य है। योगमाया समष्टिभूता स्वरूप शक्ति हैं। इन्हीं योगमायाकी लीलावतार हैं—भगवती पौर्णमासीजी। दूसरी ओर राधाकृष्णके निकुञ्ज-विलास और रास-विलास आदिका सम्पादन करानेवाली वृन्दादेवी हैं।

वृन्दादेवीके पिताका नाम चन्द्रभानु, माताका नाम फुल्लरा गोपी तथा पतिका नाम महीपाल है। ये सदैव वृन्दावनमें निवास करती हैं। ये वृन्दा, वृन्दारिका, मैना, मुरली आदि दूती सखियोंमें सर्वप्रधाना हैं। विविध प्रकारके उपाय और कौशलके द्वारा युगल-मिलनका सम्पादन ही इनका कार्य है। अतः ये ही वृन्दावनकी वनदेवी तथा श्रीकृष्णकी लीलाख्या महाशक्तिकी विशेष मूर्त्तिस्वरूपा हैं। इन्हीं वृन्दाने अपने परिसेवित और परिपालित वृन्दावनके साम्राज्यको महाभाव स्वरूपा वृषभानु नन्दिनी श्रीमती राधिकाके चरणकमलोंमें समर्पण कर रखा है। इसीलिए श्रीमती राधिकाजी ही वृन्दावनेश्वरी हैं।

पुराणोंमें महाराज केदारकी जिस कन्या वृन्दादेवीका वर्णन है, ब्रह्मवैवर्तमें राजा कुशध्वजकी पुत्री जिस तुलसीका शंखचूड़से विवाह आदिका वर्णन है, तथा पृथ्वी लोकमें हरिप्रिया वृन्दा या तुलसी जो वृक्ष रूपमें देखी जाती हैं—ये सभी सर्वशक्तिमयी श्रीमती राधिकाकी कायव्यूहा स्वरूपा, सदा-सर्वदा वृन्दावनमें निवासकर और सदैव वृन्दावनके निकुञ्जोंमें युगलकी सेवा करने वाली वृन्दादेवीकी अंश, प्रकाश या कला स्वरूपा हैं। इन्हीं वृन्दादेवीके नामसे यह वृन्दावन प्रसिद्ध है।

प्रमाण-शिरोमणि श्रीमद्भागवतमें यत्र-तत्र सर्वत्र ही श्रीवृन्दावनकी प्रचुर महिमाका वर्णन प्राप्त होता है। श्रीनन्दबाबाके मंत्री एवं ज्येष्ठ भ्राता

श्रीउपानन्दजी कह रहे हैं—उपद्रवोंसे भरे हुए इस गोकुल महावनमें न रहकर, तुरन्त सब प्रकारसे सुरम्य, तृणोंसे आच्छादित, नाना प्रकारकी वृक्ष–वल्लरियों तथा पवित्र पर्वतसे सुशोभित, गो आदि पशुओंके लिए सब प्रकारसे सुरक्षित इस परम रमणीय वृन्दावनमें हम गोप, गोपियोंके लिए निवास करना कर्तव्य है।

वनं वृन्दावनं नाम पशव्यं नवकाननम् ।
गोपगोपीगवां सेव्यं पुण्याद्रितृणवीरुधम् ।।

(श्रीमद्भा. १०/११/२८)

चतुर्मुख ब्रह्मा श्रीकृष्णकी अद्भुत लीला–माधुरीका दर्शनकर बड़े विस्मित हुए और हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगे—

तद् भूरिभाग्यमिह जन्म किमप्यटव्यां
यद् गोकुलेऽपि कतमाङ्घ्रिरजोऽभिषेकम् ।
यज्जीवितं तु निखिलं भगवान् मुकुन्द–
स्त्वद्यापि यत्पदरजः श्रुतिमृग्यमेव ।।

(श्रीमद्भा. १०/१४/३४)

ब्रह्माजी कह रहे हैं—'अहो! आज तक भी श्रुतियाँ जिनके चरणकमलोंकी धूलिको अन्वेषण करके भी नहीं पा सकी हैं, वे भगवान् मुकुन्द जिनके प्राण एवं जीवन सर्वस्व हैं, इस वृन्दावनमें उन ब्रजवासियोंमेंसे किसीकी चरणधूलिमें अभिषिक्त होने योग्य तृण, गुल्म या किसी भी योनिमें जन्म होना मेरे लिए महासौभाग्यकी बात होगी। यदि इस वृन्दावनमें किसी योनिमें जन्म लेनेकी सम्भावना न हो, तो नन्दगोकुलके प्रान्तभागमें भी किसी शिलाके रूपमें जन्म ग्रहण करूँ, जिससे वहाँकी मैला साफ करनेवाली जमादारनियाँ भी अपने पैरोंको साफ करनेके लिए उन पत्थरोंपर पैर रगड़ें, जिससे उनकी चरणधूलिको स्पर्श करनेका भी सौभाग्य प्राप्त हो।'

प्रेमातुरभक्त उद्धवजी तो यहाँ तक कहते हैं कि जिन्होंने दुस्त्यज्य पति–पुत्र आदि सगे–सम्बन्धियों, आर्यधर्म और लोकलज्जा आदि सबकुछका परित्यागकर श्रुतियोंके अन्वेषणीय स्वयं–भगवान् ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णको भी अपने प्रेमसे वशीभूत कर रखा है—मैं उन गोप–गोपियोंकी चरण–धूलिसे अभिषिक्त होनेके लिए इस वृन्दावनमें गुल्म, लता आदि किसी भी रूपमें जन्म प्राप्त करनेपर अपना अहोभाग्य समझूँगा—

आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां
वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम् ।
या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा
भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम् ।।

(श्रीमद्भा. १०/४७/६१)

रङ्गभूमिमें उपस्थित माथुर रमणियाँ वृन्दावनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करती हुई कह रही हैं—अहा! इन तीनों लोकोंमें श्रीवृन्दावन और वृन्दावनमें रहने वाली गोप-रमणियाँ ही धन्य हैं, जहाँ परम पुराणपुरुष श्रीकृष्ण योगमायाके द्वारा निगूढ़ रूपमें मनुष्योचित लीलाएँ कर रहे हैं। विचित्र वनमालासे विभूषित होकर बलदेव और सखाओंके साथ मधुर मुरलीको बजाते हुए गोचारण करते हैं तथा विविध प्रकारके क्रीड़ा-विलासमें मग्न रहते हैं—

पुण्या बत ब्रजभुवो यदयं नृलिङ्ग-
गूढः पुराणपुरुषो वनचित्रमाल्यः ।
गाः पालयन् सहबलः क्वणयंश्चवेणुं
विक्रीड़याञ्चति गिरित्ररमार्चिताङ्घ्रिः ।।

(श्रीमद्भा. १०/४४/१३)

कृष्ण प्रेममें उन्मत्त एक गोपी दूसरी गोपीको सम्बोधित करती हुई कह रही है—

वृन्दावनं सखि भुवो वितनोति कीर्तिं
यद् देवकीसुतपदाम्बुजलब्धलक्ष्मि ।
गोविन्दवेणुमनुमत्तमयूरनृत्यं
प्रेक्ष्याद्रिसान्वपरतान्यसमस्तसत्वम् ।।

(श्रीमद्भा. १०/२१/१०)

अरी सखि! यह वृन्दावन, वैकुण्ठ लोकसे भी अधिक रूपमें पृथ्वीकी कीर्तिका विस्तार कर रहा है, क्योंकि यह यशोदानन्दन श्रीकृष्णके चरणकमलोंके चिह्नोंको अपने अङ्कमें धारणकर अत्यन्त सुशोभित हो रहा है। सखि! जब रसिकेन्द्र श्रीकृष्ण अपनी विश्व-मोहिनी मुरलीकी तान छेड़ देते हैं, उस समय वंशीध्वनिको मेघगर्जन समझकर मयूर अपने पंखोंको फैलाकर उन्मत्तकी भाँति नृत्य करने लगते हैं। इसे देखकर पर्वतके शिखरोंपर विचरण करनेवाले पशु-पक्षी सम्पूर्ण रूपसे निस्तब्ध होकर अपने कानोंसे मुरलीध्वनि तथा नेत्रोंसे मयूरोंके नृत्यका रसास्वादन करने लगते हैं।

औरोंकी तो बात ही क्या, परम रसिक एवं भावुक स्वयं शुकदेव गोस्वामीजी परम पुलकित होकर वृन्दावनकी पुनः–पुनः प्रशंसा करते हैं—अपने सिरपर मयूर पिच्छ, कानोंमें पीले कनेरके सुगन्धित पुष्प, श्याम अङ्गोंपर स्वर्णिम पीताम्बर, गलेमें पञ्चरङ्गी पुष्पोंकी चरणलम्बित वनमाला धारणकर अपनी अधर–सुधाके द्वारा वेणुको प्रपूरितकर उसके मधुर नादसे चर–अचर सबको मुग्ध कर रहे हैं तथा ग्वालबाल जिनकी कीर्तिका गानकर रहे हैं, ऐसे भुवनमोहन नटवर वेश धारणकर श्रीकृष्ण अपने श्रीचरण चिह्नोंके द्वारा सुशोभित करते हुए परम रमणीय वृन्दावनमें प्रवेश कर रहे हैं—

बर्हापीडं नटवरवपुः कर्णयोः कर्णिकारं
बिभ्रद् वासः कनककपिशं वैजयन्तीं च मालाम् ।
रन्ध्रान् वेणोरधरसुधया पूरयन् गोपवृन्दैर्वृन्दारण्यं
स्वपदरमणं प्राविशद्
गीतकीर्तिः ।।

(श्रीमद्भा. १०/२१/५)

इसलिए अखिल चिदानन्द रसोंसे आप्लावित मधुर वृन्दावनको छोड़कर श्रीकृष्ण कदापि अन्यत्र गमन नहीं करते हैं।

'वृन्दावनं परित्यज्य पादमेकं न गच्छति'

(ब्रह्मयामल)

एक रसिक और भक्त कविने वृन्दावनके सम्बन्धमें श्रुति–पुराणोंका सार गागरमें सागरकी भाँति सङ्कलनकर ठीक ही कहा है—

ब्रज समुद्र मथुरा कमल वृन्दावन मकरन्द ।
ब्रज वनिता सब पुष्प हैं मधुकर गोकुलचन्द ।।

विशेष महिमा

श्रीवृन्दावन केवल तीर्थ ही नहीं, भगवान्‌का निजधाम या निजगृह है। यदि वृन्दावनको कृष्णका स्वरूप कहा जाए, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी, क्योंकि कृष्ण और उनका धाम स्वरूपतः अभिन्न हैं।

पुराणोंके अनुसार एक बार देवर्षि नारद अपनी वीणाकी तानपर हरि गुण गान करते हुए तीर्थराज प्रयागमें पहुँचे। तीर्थराजने उनका बहुत ही स्वागत–सत्कार किया तथा अपने तीर्थराज होनेकी सारी घटना कह सुनाई। श्रीनारदजीने कहा—भगवान्‌ने आपको तीर्थराजके पदपर अभिषिक्त तो किया है, किन्तु मुझे इस विषयमें कुछ शंका है। क्या वृन्दावन भी अन्य तीर्थोंकी

भाँति आपको कभी भी भेंट देनेके लिए उपस्थित होते हैं? तीर्थराजजीने उत्तर दिया—नहीं तो।

श्रीनारदजीने पूछा—फिर आप कैसे तीर्थराज हैं? यह बात तीर्थराजजीके हृदयमें चुभ गई। सोचा बात तो ठीक है। मैं फिर तीर्थराज कैसे हुआ? वे भगवान्‌के पास पहुँचे।

तीर्थराजको आते हुए देखकर भगवान्‌ने उनको यथोचित सम्मान दिया तथा उनके आनेका कारण पूछा। तीर्थराजने नम्रतासे कहा—प्रभो आपने मुझे तीर्थराजके पदपर अभिषिक्त तो किया है, किन्तु वृन्दावन तीर्थ तो कभी भी मुझे भेंट देनेके लिए नहीं आते। फिर मैं तीर्थराज हुआ कैसे? यदि वृन्दावन जैसा एक छोटा-सा तीर्थ मेरी अधीनता स्वीकार न करे तो मेरा तीर्थराज होना सर्वथा अनुचित है।

प्रयागराजकी बात सुनकर भगवान् क्षणभर तक मौन हो गये। उनके नेत्रोंसे अश्रुबिन्दु छलक पड़े। उन्हें ब्रजका स्मरण हो आया। सखाओंके साथ गोचारण, नन्दबाबा और यशोदाका स्नेह तथा अपनी प्रियतमा किशोरी श्रीराधा, गोपाङ्गनाएँ तथा उनके साथ रास-विलास आदि अनेक चित्र उनके हृदयमें क्रमशः स्फुरित होने लगे। उनका हृदय द्रवित हो गया। तत्पश्चात् कुछ स्वस्थ होनेपर गम्भीर होकर कहने लगे—तीर्थराज! मैंने ठीक ही तुम्हें तीर्थोंका राजा बनाया है। परन्तु अपने घरका राजा नहीं बनाया है। श्रीवृन्दावन मेरा अपना घर है। घर ही नहीं मेरी प्राणप्रिया श्रीराधाकी परम विहार स्थली भी है। वहाँकी अधिपति और ईश्वरी तो वे ही हैं। वे ही वृन्दावनेश्वरी हैं। मैं भी सदा वहीं निवास करता हूँ। अतः तुम तीर्थराज ही हो इसमें कोई सन्देह नहीं है। वृन्दावन केवल तीर्थ नहीं हैं, तुम भी किसी प्रकार वृन्दावनकी सेवा करनेके लिए आराधना कर सकते हो।

यही नहीं पद्मपुराणमें श्रीमद्भागवत माहात्म्यमें श्रीनारदजीने भक्तिदेवीको श्रीवृन्दावनका माहात्म्य समझाते हुए कहा है—

वृन्दावनस्य संयोगात्पुनस्त्वं तरुणी नवा।
धन्यं वृन्दावनं तेन भक्तिर्नृत्यति यत्र च॥

(श्रीमद्भागवत माहात्म्य १/६१)

हे देवि! वृन्दावनके संयोगसे तुम फिर नवीन तरुणी हो गई हो। अतः यह वृन्दावन धाम धन्य है। यहाँ भक्ति यत्र-तत्र-सर्वत्र नृत्य करती है।

स्कन्दपुराणके मथुरा खण्डमें श्रीवृन्दावनकी महिमाका उल्लेख है—

तस्मिन् वृन्दावने पुण्यं गोविन्दस्य निकेतनम् ।
तत्सेवकसमाकीर्णं तत्रैव स्थीयते मया।।
भुवि गोविन्दवैकुण्ठं तस्मिन् वृन्दावने नृप ।
यत्र वृन्दादयो भृत्याः सन्ति गोविन्दलालसाः।।
वृन्दावने महासद्म यै दृष्टं पुरुषोत्तमैः।
गोविन्दस्य महीपाल ते कृतार्था महीतले।।

आदिवराहपुराणमें भी—

वृन्दावने तु गोविन्दं ये पश्यन्ति वसुन्धरे ।
न ते यमपुरं यान्ति यान्ति पुण्यकृतां गतिम् ।।

श्रीचैतन्य महाप्रभु एवं श्रीवृन्दावन

पहले ही कहा जा चुका है कि कृष्ण–लीलाके अप्रकट होनेपर ब्रजमण्डलकी सारी कृष्णलीलास्थलियाँ प्रायः लुप्त हो गई थीं। रासस्थली, वंशीवटसे युक्त वृन्दावन सघन वनोंमें लुप्त हो गया था। कुछ वर्षोंके पश्चात् शाण्डिल्य एवं भागुरी ऋषि आदिकी सहायतासे श्रीवज्रनाभ महाराजने कहीं श्रीमन्दिर, कहीं सरोवर, कहीं कुण्ड आदिकी स्थापनाकर लीला–स्थलियोंका प्रकाश किया। किन्तु लगभग साढ़े चार हजार वर्षोंके बाद ये सारी लीला–स्थलियाँ पुनः लुप्त हो गईं, राधाभावद्युति सुवलित श्रीकृष्ण, श्रीचैतन्य महाप्रभुके रूपमें इस जगतीतलपर पधारे। उन्होंने स्वयं तथा श्रीरूप–सनातन आदि अपने परिकरोंके द्वारा लुप्त श्रीवृन्दावन और ब्रजमण्डलकी लीला–स्थलियोंको पुनः प्रकाशित किया। उनके इस महान कार्यके लिए सारा विश्व, विशेषतः वैष्णव जगत् उनका चिरऋणी रहेगा। यदि ये लोग धराधाममें अवतीर्ण नहीं होते, तो मधुर वृन्दावनको कौन जानता? उस वृन्दावनकी माधुरीमें भला कौन प्रवेश कर सकता था? यदि गौराङ्गदेव नहीं आते तो प्रेमरसकी सीमा, राधाकी महिमा कौन बतलाता?

(यदि) गौराङ्ग नहित, तबे कि हइत
केमने धरित दे?
राधार महिमा, प्रेमरस सीमा,
जगते जानात के?
मधुर वृन्दा विपिन माधुरी,

प्रवेश चातुरी सार।
बरज-युवती, भावेर भकति,
शकति हइत कार?

श्रीचैतन्य महाप्रभुके पश्चात् उन्हींकी विशेष आज्ञासे श्रीलोकनाथ और श्रीभूगर्भ गोस्वामी, श्रीसनातन गोस्वामी, श्रीरूप गोस्वामी, श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी, श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामी, श्रीरघुनाथदास गोस्वामी, श्रीजीव गोस्वामी आदि गौड़ीय वैष्णवाचार्योंने विभिन्न शास्त्रोंकी सहायतासे, अपने अथक परिश्रम द्वारा ब्रजकी लीला-स्थलियोंको प्रकाशित किया है।

वृन्दावनकी लीला-स्थलियाँ

भगवती यमुना

श्रीराधाकृष्ण युगलके केलि-विलासमें सब प्रकारसे सहायिका श्रीकृष्ण-स्वरूपिणी भगवती कृष्णा या महारानी यमुनाजीने वृन्दावनको तीन ओरसे घेर रखा है। ये अपने सुरम्य तटपर दोनों ओर नाना-प्रकारके पुष्पों और फलोंसे लदे हुए सघन-वृक्षों और लताओंसे असंख्य रमणीय निकुञ्जोंका सृजनकर प्रिया-प्रियतमके रस-विलासमें सम्पूर्ण रूपसे अपना सहयोग प्रदान करती हैं।

दिव्य मणिमय घाटोंसे सुसज्जित, कदम्ब, तमाल, आम्र, बकुल आदि वृक्षों और उनसे निर्मित विविध कुञ्जोंसे परिमण्डित, सप्तदल-कमलोंसे सर्वदा सुशोभित श्रीयमुनाकी प्रेममय वारिमें सखियोंके साथ श्रीराधाकृष्ण युगल जलकेलि और नौकाविहार करते हैं। ऐसी भगवती यमुना सदैव युगल किशोरकी सेवाकर परम वन्दनीय हैं—

चिदानन्दभानोः सदा नन्दसूनोः परप्रेमपात्री द्रवब्रह्मगात्री ।
अघानां लवित्री जगत्क्षेमधात्री पवित्री क्रियान्नो वपुर्मित्र पुत्री ।।

चिदानन्द-सूर्य-स्वरूप नन्दनन्दन श्रीकृष्णके उन्नत उज्ज्वल प्रेमको प्रदान करने वाली साक्षात् परब्रह्मकी द्रवितविग्रह-स्वरूपा, अपने स्मरण मात्रसे सम्पूर्ण प्रकारके अघों, महापापोंको दूरकर हृदयको पवित्र बनाने वाली, जगत् मङ्गलकारिणी, मरु हृदयमें भी ब्रज-रसका सञ्चार करनेवाली सूर्यपुत्री श्रीयमुनाजीकी पुनः-पुनः वन्दना करता हूँ। वे हमें पवित्र करें।

गङ्गादि-तीर्थ-परिषेवित-पादपद्मां गोलोक-सौख्यरस-पूरमहिं महिम्ना ।
आप्लाविताखिल-सुधासु-जलां सुखाब्धौ राधामुकुन्द-मुदितां यमुनां नमामि ।।

गंगा, गोदावरी, नर्मदा, सिन्धु आदि तीर्थोंके द्वारा जिनके श्रीचरणकमल सर्वदा परिसेवित होते हैं, जो गोलोक-वृन्दावनके श्रीश्रीराधाकृष्ण-युगलकी रसपरिपाटी युक्त सेवाको प्रदान करनेवाली महिमासे युक्त हैं; जो अपने अमृतपूर्ण जल-प्रवाहके द्वारा श्रीराधा-मुकुन्दको सुख-समुद्रमें निमग्न रखती हैं, उन कृष्ण प्रिया श्रीयमुनाजीको पुनः-पुनः प्रणाम है।

सोनरक—यहाँ सौभरि ऋषिका आश्रम था। यह स्थान वर्तमान कालीय दहके निकट है। सौभरि ऋषिने कृष्णलीलासे पूर्व यमुनाके जलमें खड़े होकर ग्रीष्म, शीत आदि सभी ऋतुओंमें अपनी इन्द्रियोंको जीतकर हजारों वर्षोंतक तपस्या की थी। उन्हीं दिनों भगवत् परिकर गरुड़जी वहाँपर पहुँचे। पक्षीके स्वभावसे वे देखते-ही-देखते एक बड़े पुरुष-मछलीको निगल गये। ऐसा देखकर मछलियोंने विलाप करते हुए सौभरि ऋषिके पास प्रतिकार करनेके लिए प्रार्थना की। भगवद् भक्तोंकी महिमासे अनभिज्ञ शुष्क तपस्यामें निरत सौभरिने गरुड़जीको श्राप दिया कि यहाँ पुनः आनेसे उनका मस्तक उड़ जायेगा।

परमभक्तके प्रति इस अभिसम्पातके कारण सौभरि ऋषिके हृदयमें संसार भोगकी कामना पैदा हो गई। उन्होंने यमुनाजलसे बाहर आकर अपने योगके प्रभावसे सुन्दर नवयुवक बनकर महाराज मान्धाताकी बहुत-सी नवयौवन-सम्पन्न परम सुन्दरी कन्याओंके साथ विवाह किया और हजारों वर्षोंतक सांसारिक भोगोंमें लिप्त रहे। इधर भगवद् इच्छासे कालीय नाग अपने परिवारके साथ महापराक्रमी गरुड़से अपनी सुरक्षाके लिए यमुनाके उसी ह्रदमें निवास करने लगा। वहाँ रहनेवाली सारी मछलियाँ भी गरुड़के प्रति अपराध करनेके कारण विषजलके प्रभावसे मर गईं। इस प्रकार भक्तके प्रति अपराधके कारण सौभरि ऋषि एवं उनके आश्रित मछलियोंका सर्वनाश हुआ। इसलिए शास्त्रोंमें वैष्णव-अपराधसे सर्वथा बचनेकी बात कही गई है।

कालीय ह्रद या दह—इसका वर्तमान नाम कालीय दह है। श्रीकृष्णने कालीय नागका यहीं दमन किया था। पासमें ही केलि-कदम्ब है, जिसपर चढ़कर श्रीकृष्ण कालीयह्रदमें बड़े वेगसे कूदे थे। कालीय नागके विषसे आस-पासके वृक्ष-लता सभी जलकर भस्म हो गये थे। केवल यही एक केलि-कदम्ब बच गया था। इसका कारण यह है कि महापराक्रमी गरुड़ अपनी माता विनताको अपनी विमाता कद्रूके दासीपनसे मुक्त करानेके लिए देवलोकसे अमृतका कलश लेकर इस केलि-कदम्बके ऊपर कुछ देरके

लिए बैठे थे। उसके गंध या छींटेके प्रभावसे यह केलिकदम्ब बच रहा था।

कालीय नाग भी बड़ा पराक्रमी था। जब उसने कृष्णको अपने फेंटेमें बाँध लिया, उस समय कृष्ण कुछ असहाय एवं निश्चेष्ट हो गये। उस समय नागपत्नियाँ, जो कृष्णकी परम भक्त थीं, प्रार्थना करने लगीं कि भगवद् विरोधी पतिकी स्त्री होनेके बदले हम विधवा होना ही अधिक पसन्द करती

चित्र सं.–37

श्रीकालीयदह

हैं। किन्तु, ज्योंही कृष्ण नागके फेंटेसे निकलकर उसके मस्तकपर पदाघात करते हुए नृत्य करने लगे, उस समय कालीय अपने सहस्रों मुखोंसे रक्त उगलते हुए भगवान्के शरणागत हो गया। उस समय नाग–पत्नियाँ उसके शरणागत भावसे अवगत होकर, हाथ जोड़कर कृष्णसे उसे जीवन–दानके लिए प्रार्थना करने लगीं। श्रीकृष्णने उनकी स्तव–स्तुतिसे प्रसन्न होकर कालीय नागको अभय प्रदानकर सपरिवार रमणक द्वीपमें जानेके लिए आदेश दिया तथा उसे अभय देते हुए बोले—अब तुम्हें गरुड़जीका भय नहीं रहेगा। वे तुम्हारे फणोंपर मेरे चरणचिह्नको देखकर तुम्हारे प्रति शत्रुता भूल जायेंगे। नाग–पत्नियोंने यह प्रार्थनाकी थी—

हे देव! आपके जिस पदरजकी प्राप्तिके लिए श्रीलक्ष्मीदेवीने अपनी सारी अन्य अभिलाषाओंको छोड़कर चिरकाल तक व्रत धारण करती हुई तपस्या की थी, किन्तु वे विफल–मनोरथ हुई, उसी दुर्लभ चरणरेणुको कालीय नाग न जाने किस पुण्यके प्रभावसे प्राप्त करनेका अधिकारी हुआ है[१]।

श्रीमद्भागवतके गौड़ीय टीकाकारोंका यहाँ सुसिद्धान्तपूर्ण विचार है। कालीयपर भगवान्की अहैतुकी कृपाका कारण और कुछ नहीं बल्कि कालीयनागकी पत्नियोंकी श्रीकृष्णके प्रति अहैतुकी भक्ति ही है। क्योंकि भगवद्–कृपा भक्त–कृपाकी अनुगामिनी है।

श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतीकी भजनकुटी और समाधि—सुप्रसिद्ध 'राधारससुधानिधि', 'वृन्दावनमहिमामृत', 'श्रीचैतन्यचन्द्रामृत' और 'संगीत–माधव' आदि ग्रन्थोंके रचयिता श्रीप्रबोधानन्द अपने पूर्व जीवनमें श्रीरङ्गम निवासी एवं श्रीलक्ष्मीनारायणके उपासक थे। वे प्रसिद्ध गोपाल भट्ट गोस्वामीके पितृव्य एवं गुरु भी थे।

श्रीमन्महाप्रभुकी कृपासे ये श्रीराधाकृष्ण युगलरसमें उन्मत्त हो उठे। पूर्व लीलामें ये तुगंविद्या सखी थीं। श्रीमन्महाप्रभुके श्रीरङ्गमसे प्रस्थानके कुछ समय पश्चात् वे वृन्दावन चले आये और यहींपर भजन करने लगे।

---

(१) कस्यानुभावोऽस्य न देव विद्महे
तवाङ्घ्रिरेणुस्पर्शाधिकारः ।
यद्वाञ्छया श्रीर्ललनाऽऽचरत्तपो
विहाय कामान् सुचिरं धृतव्रता ।।
(श्रीमद्भा. १०/१६/३६)

वे कुछ समय काम्यवनमें भी रहे। अंतिम समयमें वे भजन करते-करते यहीं समाधिस्थ हो गये। कुछ अर्वाचीन लोगोंका यह कहना है कि प्रबोधानन्द सरस्वती और काशीवासी अद्वैतवादी प्रकाशानन्द सरस्वती एक ही व्यक्ति हैं। यह सर्वथा अयौक्तिक है। एक ही व्यक्ति पहले भक्त प्रबोधानन्द सरस्वती बीचमें मायावादी प्रकाशानन्द और फिर प्रबोधानन्द सरस्वती हो गया—यह कोरी कल्पना मात्र है। श्रीगौड़ीय वैष्णवाचार्योंने इस अर्वाचीन मतका खण्डन किया है।

चित्र सं.- 38

श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतीकी भजनस्थली और समाधि मन्दिर

द्वादशादित्य टीला—शीतकालका समय था। कालीयका दमनकर जिस समय कृष्ण ह्रदसे बाहर निकले, नर–लीलाके कारण उनको बड़ी ठण्ड प्रतीत हुई। वे पासके ही टीलेपर चढ़कर सूर्यके प्रचण्ड तापमें खड़े हो गये। भक्त सूर्यदेवने कृष्णकी सेवाके लिए द्वादश कलाओंके सम्पूर्ण तापसे कृष्णकी कंपकंपी दूर कर दी। इसलिए इस स्थानको द्वादशादित्य टीला कहते हैं।

चित्र सं.– 39

मदनमोहन, प्रस्कन्दन तीर्थ, द्वादश आदित्य टीला

प्रस्कन्दन क्षेत्र—सूर्यके तापसे कृष्णकी कंपकंपी दूर तो हुई, किन्तु अधिक तापके कारण उनके अङ्गोंसे पसीना निकल आया। प्रस्कन्दनका अर्थ पसीनेसे है। इसलिए इस स्थानका नाम प्रस्कन्दन तीर्थ प्रसिद्ध हुआ है।

अद्वैत वट—प्रस्कन्दन तीर्थमें ही अद्वैतवट विराजमान है।

श्रीचैतन्य महाप्रभुके पूर्व ही श्रीअद्वैताचार्य ब्रजमें भ्रमण करते समय यहाँ उपस्थित हुए थे और उन्होंने इसी वटके नीचे कुछ दिनों तक निवास किया। इन्हें महावन गोकुलमें श्रीमदनगोपालजी प्राप्त हुए थे। ये उन्हींकी सेवा करते थे। यवनोंके भयसे और कुछ अपनी इच्छासे ये श्रीमदनगोपालजीको किसी एक भक्त चौबेके पास गुप्तरूपसे रखकर शान्तिपुर चले गये, क्योंकि शीघ्र ही नदिया नगरमें शचीनन्दन श्रीगौरहरि अवतीर्ण होने वाले हैं, ऐसा उनको पता था। कालान्तरमें वे ही मदनगोपाल सनातन गोस्वामीके निकट पधारे। सनातन गोस्वामीने पास ही एक बृहत् मन्दिरका निर्माण कराकर उसमें उनको पधराया। तबसे यह श्रीमदनमोहनके नामसे प्रसिद्ध हुये।

दान, मान, गुमान और कुञ्जगलियाँ—प्रसिद्ध सेवाकुञ्जके पास ही दान गली, मान गली, गुमान गली और कुञ्ज गली—ये चार सँकड़ी गलियाँ प्रसिद्ध हैं। श्रीमती राधिकाको मान होनेपर वे इसी मानगलीसे मानसरोवरपर पधारी थीं। कृष्णने सखाओंके साथ दान गली नामक सँकड़ी गलीमें गोपियोंसे और गोपियोंने कृष्णसे परस्पर प्रेमका आदान-प्रदान किया था, इसलिए यह दानगलीके नामसे प्रसिद्ध है। जिस गलीमें किशोर-किशोरीजीका प्रथम मिलन हुआ था, उसी समय परस्पर नयनोंकी भंगिसे ही दोनोंमें प्रेमका सम्बन्ध स्थापित हुआ और वह पल-पल बढ़ता ही गया। इसलिए इसे प्रेमगली कहते हैं। कोई-कोई इसको गुमान गली भी कहते हैं, क्योंकि कृष्णके द्वारा दान माँगनेपर श्रीप्रियाजीने बड़े गुमानके साथ दान देना अस्वीकार किया था। इसलिए प्रेम गलीको गुमान गली भी कहते हैं। जिस गलीसे होकर सखियाँ सेवा-कुञ्जमें पधारती थीं, जहाँ श्रीकृष्ण स्वाधीनभर्तृका श्रीराधाजीकी चरण-सेवा करते थे, उसे सेवा कुञ्ज कहते हैं। ये चारों गलियाँ जहाँ परस्पर मिली हैं, उसी चौराहेपर वर्तमानमें श्रीदानबिहारी और श्रीरूप सनातन गौड़ीय मठ विराजमान हैं।

सेवा कुञ्ज—इसे निकुञ्ज वन भी कहते हैं। श्रीराधादामोदर मन्दिरके निकट ही कुछ पूर्व-दक्षिण कोणमें यह स्थान स्थित है। यहाँ एक छोटे-से मन्दिरमें श्रीमती राधिकाके चित्रपटकी पूजा होती है। चित्रमें श्रीकृष्ण श्रीमती

राधिकाके चरणोंको पलोट रहे हैं।

ब्रजवासियोंका कहना है कि आज भी प्रत्येक रात्रिमें श्रीराधाकृष्ण–युगल साक्षात् रूपसे यहाँ विहार करते हैं। अतः रात्रिकालके आरम्भमें ही इस कुञ्जसे सभीको हटा दिया जाता है। यहाँ तक कि उद्दण्ड बन्दर भी अपने–आप शाम होते ही इस कुञ्जसे निकल जाते हैं। कभी–कभी ऐसी घटनाएँ घटी हैं, जब किसी व्यक्तिने हठपूर्वक रातमें यहाँ रहनेका प्रयास किया। परन्तु प्रातःकाल उसका मरा हुआ शरीर ही देखा गया। कोई–कोई किसी प्रकारसे न मरनेपर भी सम्पूर्ण रूपसे पागल हो गये।

भक्त रसखान ब्रजमें सर्वत्र कृष्णका अन्वेषण कर हार गये, तो अन्तमें यहींपर उन्हें रसिक कृष्णका दर्शन हुआ। उन्होंने उसको अपने सरस पदोंमें इस प्रकार व्यक्त किया है—

देख्यो दुर्‌यो वह कुञ्ज कुटीरमें।
बैठ्यो पलोटत राधिका पायन।।

सेवा कुञ्जमें ललिता–कुण्ड है। जहाँ रासके समय ललिताजीको प्यास लगनेपर कृष्णने अपनी वेणुसे खोदकर एक सुन्दर कुण्डको प्रकट किया। जिसके सुशीतल मीठे जलसे सखियोंके साथ ललिताजीने जलपान किया था। पास ही केलि कदम्ब नामक एक वृक्ष है, जिसकी प्रत्येक गाँठमें शालग्राम जैसे कुछ उभरे हुए दाग दीख पड़ते हैं।

चित्र सं.– 40

सेवाकुंज

चित्र सं.- 41

श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठमें सेवा-कुंज

श्रीरूपसनातन गौड़ीय मठ (श्रीविनोद कुञ्ज)—श्रीधाम वृन्दावनके हृदय-स्थल श्रीसेवाकुञ्जके सन्निकट दानगलीमें यह मठ अवस्थित है, श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठ वर्तमान समयमें एक प्रसिद्ध दर्शनीय स्थान है। प्रेम पुरुषोत्तम करुणावरुणालय श्रीचैतन्य महाप्रभुने श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी दोनों भाईयोंको (१) श्रीवृन्दावनधामकी लुप्त लीलास्थलियोंको प्रकाश करनेके लिए, (२) श्रीविग्रह-प्रकाश, (३) भक्ति-ग्रन्थ प्रणयन, (४) वैष्णव सदाचार (स्मृति) प्रकाश करनेके लिए श्रीवृन्दावनमें भेजा था। श्रीमन्महाप्रभुकी अहैतुकी कृपा और प्रेरणासे श्रीरूप-सनातन गोस्वामियोंने यथाक्रमसे श्रीगोविन्ददेव एवं श्रीमदनमोहनको प्रकाश किया, लुप्त तीर्थोंका उद्धार किया, बृहद्भागवतामृत, लघुभागवतामृत, भक्तिरसामृतसिन्धु, उज्ज्वलनीलमणि और हरिभक्तिविलास रूप वैष्णव-स्मृति आदि ग्रन्थोंको प्रकाश किया। श्रीमन्महाप्रभुके मनोभीष्ट संस्थापक श्रीरूप गोस्वामी एवं श्रीसनातन गोस्वामीकी स्मृति रक्षाके लिए श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके प्रतिष्ठाता नित्यलीला प्रविष्ट ॐविष्णुपाद १०८ श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीकी प्रेरणासे श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके सदस्यवृन्दकी ओरसे श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन महाराज एवं श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराज द्वारा यह मठ प्रकाशित हुआ।

इस मठका एक विशेष वैशिष्ट्य यह है कि—गर्भमन्दिरके तीन प्रकोष्ठमेंसे एकमें श्रीवृन्दादेवीका दर्शन, श्रीगौरसुन्दर श्रीश्रीराधाविनोदविहारीजी एवं अस्मदीय गुरुपादपद्म जगद्गुरु श्रीलभक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके दर्शन हैं। आजकल केवल काम्यवनमें ही श्रीमती वृन्दादेवीका श्रीविग्रह है।

इमलीतला—यह ब्रजलीलाके समयका प्राचीन इमलीका महावृक्ष था। अब यह अन्तर्धान हो गया है। उसके बदलेमें नया इमलीका वृक्ष विराजमान है। रासलीलाके बीचमें अन्यान्य गोपियोंका सौभाग्यमद दूर करने तथा प्रियाजीके मानका प्रसाधन करनेके लिए श्रीकृष्ण राससे अन्तर्धान हो गये। वे प्रियाजीके साथ ही पीछे-पीछे श्रृंगार वटमें उपस्थित हुए और पुष्पोंसे उनका श्रृंगार करने लगे। उसी समय दूसरी गोपियाँ कृष्णको ढूढ़ती हुईं निकटमें आ पहुँचीं। श्रीकृष्णने प्रियाजीको वहाँसे चलनेका अनुरोध किया। किन्तु उन्होंने कहा 'मैं चल नहीं सकती। आप मुझे कन्धेपर लेकर चल सकते हैं।' कृष्ण बैठ गये और अपने कन्धेपर प्रियाजीको बैठनेके लिए संकेत किया। ज्योंही वे बैठने लगीं, कृष्ण पुनः अन्तर्धान हो गये। फिर ये भी विरहमें

हा नाथ! हा रमण! कहती हुईं बेसुध होकर गिर पड़ीं। उन्हें इस अवस्थामें देखकर अन्यान्य गोपियाँ भी बड़ी व्याकुल हो गईं। उस समय श्रीकृष्ण यमुनाके निकट इमली वृक्षके नीचे श्रीमती राधिकाके विरहमें तन्मय हो गये। राधिकाकी चिन्तामें इस प्रकार तन्मय हो गये कि उनकी अङ्गकांति श्रीमती राधिका जैसी गौर–वर्णकी हो गई। परमाराध्य ॐ विष्णुपाद

चित्र सं.– 42

इमलीतला

श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीने कृष्णके गौरवर्ण होनेका बड़ा ही सरस हृद्‌गत पद प्रस्तुत किया है—

राधा–चिन्ता निवेशेण यस्य कान्तिर्विलोपिता ।
श्रीकृष्णचरणं वन्दे राधालिंगित विग्रहम् ।।

(श्रीश्रीराधा–विनोदविहारी–तत्त्वाष्टकम्—१)

श्रीगुरुपादपद्मके हृदयका भाव अत्यन्त गम्भीर और सुसिद्धान्त पूर्ण है। श्रीमती राधिकाकी परिचारिका मञ्जरियोंका हृद्‌गत भाव ऐसा होता है कि श्रीमती राधिकाके विरहमें कृष्ण ही व्याकुल हों। ऐसा होनेपर वे आनन्दित होती हैं तथा वे राधा विरहकातर श्रीकृष्णका राधाजीके निकट अभिसार कराती हैं। श्रीरूपानुग गौड़ीय वैष्णवोंमें यही भाव प्रधान होता है।

लगभग साढ़े पांच सौ वर्ष पहले श्रीचैतन्य महाप्रभुने ब्रज–भ्रमणके समय अक्रूर घाट पर कुछ दिनों तक निवास किया था। वहीं से वे प्रतिदिन यमुनाके तट पर स्थित परम मनोहर इस इमलीतला घाट पर आकर भावाविष्ट होकर हरिनाम कीर्तन करते थे। यहींपर उन्होंने कृष्णदास राजपूत पर कृपा की थी। यहीं रहते समय एक दिन कुछ लोगोंने महाप्रभुजीसे निवेदन किया कि कालीय ह्रदमें रातके समय श्रीकृष्ण पुनः वही लीला प्रकाश कर रहे हैं, आप भी चलकर कृष्णका दर्शन करें। महाप्रभुजीने उन लोगोंको दो–चार दिन प्रतीक्षा करनेके लिए कहा। रातके समय कालीयदहपर लोगोंकी भीड़ उमड़ने लगी। अन्तमें यह पर्दाफाश हुआ कि रातमें एक नौकापर बैठकर कुछ मुसलमान मछलियाँ पकड़ते थे। नौकाके अग्रभागमें एक प्रदीप जलता था। जब मछुआरा नावके अग्रभागमें खड़ा होकर हिलता–डुलता था तो वह लोगोंको नृत्यके समान लगता था। नौका सर्पके समान तथा जलता हुआ प्रदीप सर्पकी मणिकी भ्रान्ति उत्पन्न करती है। रहस्यके उद्‌घाटन होनेपर महाप्रभुजीने लोगोंसे कहा—कलियुगमें भगवान् श्रीकृष्ण साधारण लोगोंके सामने ऐसी लीला प्रकट नहीं करते। केवल शुद्धभक्तोंके हृदयमें ही ऐसी लीला स्फुरित होती है।

श्रीचैतन्य महाप्रभु कुछ दिनोंके बाद श्रीवल्लभ भट्टाचार्यके साथ यहाँसे सौरों और प्रयाग होकर नीलाचल पधारे।

कहते हैं कि कुछ वर्षों पूर्व प्राचीन इमली वृक्षकी एक शाखाको काटनेपर उसमेंसे रक्त निकलने लगा। काटने वाला व्यक्ति इस कृत्यको अपराध समझकर पुनः–पुनः क्षमाप्रार्थना करने लगा। वृन्दावनमें सभी वृक्ष–लताके

रूपमें सिद्ध महात्मा लोग अभी भी भजन कर रहे हैं, ऐसी धामवासियोंकी मान्यता है।

झाड़ूमण्डल—प्रसिद्ध श्रील जीव गोस्वामीके समयकी बात है। श्रील श्यामानन्द, श्रील नरोत्तम ठाकुर और श्रील श्रीनिवासाचार्य—ये तीनों किशोर बालक श्रीजीव गोस्वामीके निकट श्रीमद्भागवत और गोस्वामी-ग्रन्थोंका अध्ययन करते थे। श्रीजीव गोस्वामीने श्यामानन्दको इस प्राचीन कृष्ण-लीलास्थलीमें झाड़ू देने की आज्ञा दी थी। एक दिन ब्राह्म-मुहूर्त्तमें जब श्यामानन्दजी झाड़ू देने लगे तो उन्हें स्वर्णका एक नूपुर मिला। जीव गोस्वामीने उन्हें पहलेसे ही निर्देश दे रखा था कि कोई भी द्रव्य मिलनेपर किसीको न दें और उन्हें सूचित करें। इसलिए श्यामानन्दजीने उस स्वर्ण नूपुरको बड़ी सावधनीसे अपने उत्तरीयके कोनेमें बाँधकर रख लिया। थोड़ी ही देरमें दो ब्रज बालाएँ उनके पास आईं और बोलीं—यह हमारी सखीका नूपुर है, तुम दे दो। हम इसे ढूँढ़ रही थीं। श्रीश्यामानन्दजीने नम्रतासे उत्तर दिया—जिसका नूपुर है वे स्वयं ले जाएँ, तुम्हें नहीं दूँगा। दोनों किशोरियाँ बोलीं—तुम्हें लज्जा नहीं आती, तुम किस साहससे किशोरी बहूका मुख देखना चाहते हो? किन्तु श्यामानन्दजी अपनी बातपर अटल रहे। फिर ये दोनों अपनी सहेलीको ले आईं और बोलीं—इनके चरणोंमें नूपुर बाँध दो। श्रीश्यामानन्दजीने प्रेमसे काँपते हुए हाथोंसे उनके पैरोंमें नूपुर बाँध दिया।

ये और कोई नहीं स्वयं श्रीमती राधिकाजी और उनकी दोनों सखियाँ ललिता और विशाखा थीं। अपने अनुरागी भक्तके ऊपर कृपा करनेके लिए ऐसे ही ये आतुर रहती हैं। श्यामानन्दजीका जीवन कृतार्थ हो गया। पहले इनका नाम दुःखी कृष्णदास था। श्रीमतीजीकी कृपा पाकर इनका नाम श्यामानन्द दास हो गया। श्रीमती ललिताजीने इनके ललाटपर उस नूपुरकी छाप लगा दी। श्यामानन्द परिवारमें आज तक ललाटके ऊपर तिलकके भीतर नूपुरका चिह्न अंकित रहता है।

दूसरा प्रसङ्ग—यह प्रसङ्ग एक प्राचीन घटना है। झाड़ूमण्डलमें एक बुढ़िया रहती थी। अपने घरमें चक्कीपर दूसरोंका गेहूँ पीसकर उससे अपनी जीविका चलाती थी। किन्तु थी ऐकान्तिक कृष्ण भक्त। चक्की चलाते समय कृष्णके मधुर नामोंका सुस्वरसे कीर्तन किया करती थी।

एक दिन ब्राह्ममुहूर्त्तके समय घर्र-घर्र करती हुई चक्की चला रही थी तथा तन्मय होकर कृष्णके मधुर नामोंका गायन भी कर रही थी। इतनेमें

एक साँवला–सलोना किशोर अपने एक पैरको चक्कीपर रखकर बोला—मैया! क्या घर्र–घर्र चक्की चला रही हो? तुम्हारे घर्र–घर्र शब्दके कारण मैं सो नहीं सकता। बुढ़िया कुछ सहमकर बोली—बेटा यदि मैं चक्की नहीं चलाऊँ तो मेरी जीविकाका निर्वाह कैसे होगा? अलबेले साँवलेने उत्तर दिया—मैं अपने चरणकी छाप तुम्हारी चक्कीमें लगा देता हूँ। लोग इसे दर्शन करने आवेंगे और भरपूर प्रणामी देंगे। उससे तुम्हारी जीविकाका सहज ही निर्वाह हो जायेगा। तुम्हें चक्की चलानेकी आवश्यकता नहीं रहेगी। ऐसा कहकर वह साँवलिया अन्तर्धान हो गया। सवेरा हुआ, बुढ़ियाने देखा कि उसकी चक्कीके ऊपर उस सांवलेके पैरकी छाप पूर्णरूपसे उभर आई है। दर्शनार्थियोंकी भीड़ लग गई और प्रतिदिन यह भीड़ बढ़ने लगी। उनके न्यौछावरके पैसेसे ही बुढ़ियाके जीवनका भरण–पोषण आसानीसे चलने लगा। बुढ़िया उस लीलाकी स्मृतिमें सदा उन्मत्त रहने लगी।

चित्र सं.– 43

श्रीझाडूमण्डल

शृंगार वट—यह स्थान इमलीतलासे कुछ पूर्वमें यमुनाके तटपर स्थित है। गोचारणके समय सुबल आदि सखा उल्लासके साथ यहाँ कृष्णका विविध प्रकारसे शृंगार किया करते थे।

विशेष रूपसे श्रीकृष्णने यहाँ अपने हाथोंसे पुष्पोंका चयनकर श्रीमती राधिकाका विविध प्रकारसे शृंगारकर उनका मान भङ्ग किया था।

चित्र सं.- 44

शृंगारवट

प्रसङ्ग—अपने समान ही अन्यान्य गोपिकाओंके साथ श्रीकृष्णका रास नृत्य देखकर श्रीमानवती राधिका राससे निकल आईं और इस निर्जन स्थानमें छिप कर बैठ गईं। रसिक कृष्णने यहींपर अपने हाथोंसे बेली, चमेली आदिके पुष्पोंका चयनकर श्रीमतीजीका शृंगार कर उन्हें प्रसन्न किया था। श्रीमद्भागवतमें इस विषयका बड़ा ही सरस वर्णन है। श्रीकृष्णको अन्वेषण करती हुई सखियोंमेंसे एकने दूसरी सखियोंसे कहा—अरी सखियो! देखो-दखो! यहाँ प्रियाके लिए प्रिय श्रीकृष्णने पुष्पचयन किये हैं। उनके उचक-उचककर पुष्प चयनके कारण यहाँ उनके चरणोंके अग्रभागसे भूमि दबीसी दीख रही है तथा ऐड़ीका पता नहीं है।[१]

उधर कृष्ण अभी शृंगार कर ही रहे थे कि निकटमें गोपियोंका उच्चस्वर सुनाई पड़ा। कृष्णने श्रीमतीजीसे शीघ्र ही यहाँसे चलनेका अनुरोध किया, किन्तु उन्होंने क्लान्त होनेका बहाना बनाकर चलनेसे निषेध कर दिया। जब कृष्णने उन्हें अपने कन्धेपर बैठनेका अनुरोध किया तो जैसे ही वे बैठे हुए कृष्णके कन्धेपर चढ़नेके लिए प्रस्तुत हुईं, श्यामसुन्दर तत्क्षणात् अन्तर्धान होगये। फिर तो श्रीमतीजी विरहमें कातर होकर—

हा नाथ रमण प्रेष्ठ क्वासि क्वासि महाभुज।
दास्यास्ते कृपणाया मे सखे दर्शय सन्निधिम्॥

(श्रीमद्भा. १०/३०/४०)

कहती-कहती मूर्छित हो गईं। इतनेमें पीछेसे आती हुई सखियोंने श्रीमती राधिकाजीको इस प्रकार विरहमें व्याकुल देखकर उन्हें सांत्वना दी और उन्हें अपने साथ लेकर यमुना पुलिनमें चली आईं।

श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु ब्रजमण्डलमें भ्रमण करते समय यमुना तटपर स्थित इस शृंगारवटके निकट ही कुछ दिन तक ठहरे थे। यहाँ रहते समय वे सदैव श्रीबलदेवजीके भावोंमें आविष्ट रहते थे। कभी-कभी अवधूत जैसे आविष्ट होकर गऊओंका गला पकड़कर रोते और उनसे पूछते—'कन्हैयाको देखा है? वह कहाँ है?' कभी गऊओंके चरवाहोंको पकड़ लेते और रोते-रोते 'कन्हैया कहाँ है?' पूछते। यहींपर एक दिन उनको

---

[१] केशप्रसाधनं त्वत्र कामिन्याः कामिना कृतम्।
तानि चूडयता कान्तामुपविष्टमिह ध्रुवम्॥
(श्रीमद्भा. १०/३०/३४)

आकाशवाणी सुनाई दी कि तेरा कन्हैया अभी नदियामें शचीनन्दन गौहरिके रूपमें तुम्हारी बाट जोह रहा है। नित्यानन्दके निवासके कारण इसको नित्यानन्द वट भी कहते हैं।

यहाँ निताई-गौर और राधाकृष्णके विग्रह दर्शनीय हैं। मन्दिरके पास ही प्राचीनवटके नीचे श्रीमती राधिकाका शृंगार करते हुए श्रीकृष्णकी एक निराली छवि दर्शनीय है।

चीर घाट—यमुनाके तटपर एक प्राचीन कदम्ब वृक्ष है। यहींपर श्रीकृष्णने कात्यायनीव्रत पालन हेतु यमुनामें स्नान करती हुईं गोप-रमणियोंके वस्त्र हरण किये थे।

ये ब्रज कुमारियाँ प्रतिदिन ब्राह्ममुहूर्त्तमें श्रीयमुनाजीमें स्नान करतीं और तटपर बालूसे कात्यायनी (योगमाया) की मूर्ति बनाकर आराधना करती हुई यह मंत्र उच्चारण करती थीं—

कात्यायनि महामाये महायोगिन्यधीश्वरी ।
नन्दगोपसुतं देवि पतिं मे कुरु ते नमः ।।

(श्रीमद्भा. १०/२२/४)

व्रतके अन्तमें कृष्णने स्वयं वहाँ पधारकर वस्त्रहरणके बहाने उनको मनोभिलषित वर प्रदान किया—'अगली शरदपूर्णिमाकी रातमें तुम्हारी मनोभिलाषा पूर्ण होगी।'

शेरगढ़के पास एक और चीरघाट तथा कदम्बवृक्ष प्रसिद्ध है। कल्पभेदके अनुसार दोनों स्थान चीरघाट हो सकते हैं। इसमें कोई सन्देहकी बात नहीं।

केशी घाट—यमुनाके किनारे चीरघाटसे कुछ पूर्व दिशामें केशी घाट अवस्थित है। श्रीकृष्णने यहाँ केशी दैत्यका वध किया था।

प्रसङ्ग—एक समय सखाओंके साथ कृष्ण यहाँ गोचारण कर रहे थे। सखा मधुमङ्गलने हँसते हुए श्रीकृष्णसे कहा—प्यारे सखा! यदि तुम अपना मोरमुकुट, मधुर मुरलिया और पीतवस्त्र मुझे दे दो तो सभी गोप-गोपियाँ मुझे ही प्यार करेंगी तथा रसीले लड्डू मुझे ही खिलाएँगी। तुम्हें कोई पूछेगा भी नहीं। कृष्णने हँसकर अपना मोरपंख, पीताम्बर, मुरली और लकुटी मधुमङ्गलको देकर उसे सजा दिया तथा उसके वस्त्र स्वयं पहन लिये। फिर तो मधुमङ्गल इठलाता हुआ इधर-उधर घूमने लगा। इतनेमें ही महापराक्रमी केशी दैत्य विशाल घोड़ेका रूप धारणकर कृष्णका बध करनेके लिए हिनहिनाता हुआ वहाँ उपस्थित हुआ। उसने महाराज कंससे सुन रखा था—जिसके सिरपर

चित्र सं.– 45

श्रीकेशीघाट

मयूरपिच्छ, हाथोंमें मुरली, अङ्गोंपर पीतवसन देखो, उसे कृष्ण समझकर अवश्य मार डालना। उसने कृष्ण सजे हुए मधुमङ्गलको देखकर अपने दोनों पिछले पैरोंसे आक्रमण किया। कृष्णने झपटकर पहले मधुमङ्गलको बचा लिया। पश्चात् केशी दैत्यका बध किया। मधुमङ्गलको केशी दैत्यके पिछले पैरोंकी चोट तो नहीं लगी, किन्तु उसकी हवासे ही उसके होश उड़ गये। केशी बधके पश्चात् वह सहमा हुआ तथा लज्जित होता हुआ कृष्णके पास गया तथा उनकी मुरली, मयूरमुकुट, पीताम्बर लौटाते हुए बोला—मुझे लड्डू नहीं चाहिए। प्राण बचे तो लाखों पाये। ग्वाल-बाल हँसने लगे। आज भी केशीघाट इस लीलाको अपने हृदयमें संजोये हुए विराजमान है।

निधुवन—निधु शब्दका अर्थ सुरत क्रीड़ासे है। गोविन्दलीलामृत आदि ग्रन्थोंमें निधुवनमें सरत क्रीड़ाका सरस वर्णन है। उन ग्रन्थोंके अनुसार केलि विलासके कारण निशांतकालमें निधुवनके केलिकुञ्जमें ही युगलका शयन विलास होता है। प्रभात निकट देखकर वृन्दादेवी घबड़ाकर शुक-सारी, मयूर, कोकिल, भृङ्ग आदिको आदेश देती हैं कि वे अपने कलरवके गुञ्जारसे युगल किशोर-किशोरीको जगावें। इस निशान्त लीलाका रागानुगी भक्त विशेषकर रूपानुगी रसिक महानुभाव नाम सङ्कीर्तनके माध्यमसे अपने हृदयमें रसास्वादन करते हैं।

श्रीपाद विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरने स्वरचित स्वप्नविलास नामक छोटे-से ग्रन्थमें इसका बड़ा ही सरस वर्णन किया है।

प्रसङ्ग—किसी एक रातके अन्तिम भागमें श्रीराधाकृष्ण युगल निधुवनके केलिकुञ्जमें शयन कर रहे थे। श्रीवृषभानु नन्दिनीने अकस्मात् एक अद्भुत मनोहर स्वप्न देखा। जगनेपर प्राण वल्लभको जगाकर कहने लगीं—प्रियतम मैंने अभी-अभी एक अद्भुत स्वप्न देखा। उस स्वप्नमें मैंने यमुनाकी भाँति एक अनुपम नदी देखी। उस नदीके तटपर यमुना पुलिनकी भाँति एक परम मनोहर पुलिन देखा। उस पुलिनमें (उपवनमें) वृन्दावनकी भाँति अद्भुत नृत्य-गीत पूर्ण विनोद करते हुए एक अद्भुत गौरकान्ति विशिष्ट किशोर युवकको देखा। वह भावावेशमें मृदङ्ग और करतालके स्वरपर नृत्यमें विभोर हो रहा था। वह भावाविष्ट गौर किशोर हा कृष्ण! हा कृष्ण! और कभी हा राधे! हा राधे! तुम कहाँ हो? रोदनपूर्वक ऐसा उच्चारण करता हुआ कभी भूमिपर लोट रहा था, कभी मूर्छित हो रहा था तथा तृणसे ब्रह्मा

तक सारे जगत्में अपने भावोंको सञ्चारित करा रहा था।

प्रियतम! मैं उसे देखकर सोचने लगी, यह गौरवर्णका किशोर कौन है? क्या सदा–सर्वदा हा कृष्ण! हा कृष्ण! कहकर रोनेवाली मैं ही वह गौर किशोर हूँ? अथवा हा राधे! हा राधे! तुम कहाँ हो? इस प्रकार उच्च स्वरसे रोदन करनेवाले मेरे प्राण प्रियतम आप श्रीकृष्ण ही वह गौर किशोर हैं। श्रीकृष्ण बोले—हे प्रियतमे! मैंने तुम्हे समय–समयपर नारायण आदि विविध स्वरूपोंका दर्शन कराया है। किन्तु उन्हें दर्शनकर तुम्हें कोई आश्चर्य नहीं हुआ। किन्तु तुम्हारी बुद्धिमें भ्रम उत्पन्न करानेवाला वह गौरवर्ण वाला किशोर कौन है? मैं नहीं कह सकता। ऐसा कहकर वे मुस्कराने लगे।

राधिकाजी कहने लगीं—प्राणवल्लभ! अब मैं समझ गई कि वह गौर स्वरूप आप स्वयं ही हैं। अन्यथा मुझे इस प्रकार कोई भी मोहित नहीं कर सकता। अनन्तर कृष्ण अपनी कौस्तुभ मणिमें श्रीराधिकाजीको स्वप्न दृष्ट सभी दृश्योंको साक्षात्की भाँति दिखलाने लगे। श्रीमती राधिकाजी दृश्योंको देखकर कहने लगीं कि आपके बाल्य कालमें नन्दबाबाके सामने सर्वज्ञ गर्गऋषिने कहा था कि आने वाले कलियुगकी प्रथम सन्ध्यामें आपका यह पुत्र पीतवर्ण गौराङ्गके रूपमें प्रकटित होगा। गर्गऋषिकी भविष्य वाणी कभी भी मिथ्या नहीं हो सकती। अतः मेरा स्वप्न सत्य है और वह स्वप्न–दृष्ट गौरकिशोर आप ही हैं। यह सुनकर श्रीकृष्णने कहा प्राणेश्वरी! मैं तुम्हारे भावोंका आस्वादन करनेके लिए तुम्हारी गौर अङ्गकान्ति तथा हृदयगत भावोंको ग्रहणकर गौराङ्ग स्वरूपमें अवतीर्ण होऊँगा। तुम्हारे इन सरस भावोंका स्वयं आस्वादन करूँगा तथा साथ ही हरिनाम सङ्कीर्तनके माध्यमसे रागमार्ग भक्तिका प्रचार करूँगा। यथार्थमें अपने दुर्लभ प्रेमको वितरण करनेके लिए ही मैं महावदान्य गौराङ्गके रूपमें अवतीर्ण होऊँगा। तुम सभी मेरे परिकरोंके रूपमें मेरे साथ ही भूतलमें अवतीर्ण होओगी।

निधुवनमें श्रीमती राधिका राजवेशमें सुसज्जित होकर राज सिंहासनपर बैठीं। श्रीकृष्ण कोतवाल वेश धारणकर कुञ्जके द्वारपर देशकी रक्षा करने लगे। इसको राई–राजलीला कहते हैं। गौड़ीय पदकर्ताओंने इस लीलाका बड़ा ही मनोरम चित्रण किया है। इसके द्वारा श्रीराधाकृष्ण युगलने श्रीगौर–अवतारकी सूचना दी।

जिस प्रकार सेवाकुञ्जमें ललिता कुण्ड है, उसी प्रकारसे निधुवनमें विशाखा

कुण्ड है। यहाँ भी प्रियसखी विशाखाकी प्यास बुझानेके लिए श्रीराधाविहारीजीने अपने वेणुसे कुण्ड प्रकाशकर उसके मीठे, सुस्वादु जलसे विशाखा और सखियोंकी प्यास बुझाई थी। कालान्तरमें प्रसिद्ध भक्ति संगीतज्ञ स्वामी हरिदासजीने इस निधुवनके विशाखा–कुण्डसे श्रीबाँकेबिहारी ठाकुरजीको प्राप्त किया था।

स्वामी हरिदासजी श्रीबिहारीजीको अपने स्वरचित पदोंके द्वारा वीणा यंत्रपर मधुर गायनकर प्रसन्न करते थे तथा गायन करते हुए ऐसे तन्मय हो जाते कि उन्हें तन–मनकी सुध नहीं रहती। प्रसिद्ध बैजुबावरा और तानसेन इन्हींके शिष्य थे। अपने सभारत्न तानसेनके मुखसे स्वामी हरिदासजीकी प्रशंसा सुनकर सम्राट अकबर इनकी संगीतकलाका रसास्वादन करना चाहता था। किन्तु, स्वामी हरिदासजीका यह दृढ़ निश्चय था कि अपने ठाकुरजीके अतिरिक्त वे किसीका भी मनोरञ्जन नहीं करेंगे।

एक समय सम्राट अकबर वेश बदलकर साधारण व्यक्तिकी भाँति तानसेनके साथ निधुवनमें स्वामी हरिदासकी कुटीमें उपस्थित हुआ। संगीतज्ञ तानसेनने जानबूझकर अपनी वीणा लेकर एक मधुर पदका गायन किया। अकबर तानसेनका गायन सुनकर मुग्ध हो गया। इतनेमें स्वामी हरिदासजी तानसेनके हाथसे वीणा लेकर स्वयं उस पदका गायन करते हुए तानसेनकी त्रुटियोंकी ओर इंगित करने लगे। उनका गायन इतना मधुर और आकर्षक था कि वनकी हिरणियाँ और पशु–पक्षी भी वहाँ उपस्थित होकर मौन भावसे श्रवण करने लगे। सम्राट अकबरके विस्मयका ठिकाना नहीं रहा। वे प्रसन्न होकर स्वामी हरिदासको कुछ भेंट करना चाहते थे, किन्तु बुद्धिमान तानसेनने इशारेसे इसके लिए सम्राटको निषेध कर दिया। अन्यथा हरिदासजीका रूप ही कुछ बदल गया होता। इन महापुरुषकी समाधि निधुवनमें अभी भी वर्तमान है।

धीर–समीर—श्रीयमुनाजीके तटपर रासलीला स्थली वंशीवटके समीप ही यह स्थान वर्तमान है। यह श्रीराधाकृष्ण युगलके नित्य निकुञ्ज केलिविलासका स्थान है। युगल केलिविलासका दर्शनकर समीर भी धीर–स्थिर हो जाता था। वह एक कदम भी आगे बढ़नेमें असमर्थ हो जाता था। इसलिए इस स्थानका नाम धीर–समीर पड़ा है।

धीर–समीरका कुञ्ज और देवालय नित्यानन्द प्रभुके ससुर, जाह्नवा एवं वसुधाके पिता सूर्यदास सरखेलके छोटे भ्राता श्रीगौरीदास पण्डितके द्वारा

स्थापित हैं। श्रीगौरीदास पण्डित श्रीमन् महाप्रभुजीके प्रधान परिकरोंमेंसे एक हैं। उन्होंने अपने जीवनके अंतिम समयमें वृन्दावन आकर धीर–समीर कुञ्जकी स्थापना की और वहीं पर अपने आराध्यदेव श्रीश्यामरायकी सेवा–पूजा आरंभकी। यहींपर उनकी भजन एवं समाधिस्थली भी विद्यमान है। प्रसिद्ध वैष्णव पदकर्ता श्रीजयदेव गोस्वामीने अपने प्रसिद्ध पदमें—

धीरसमीरे यमुनातीरे वसति वने वनमाली ।
गोपीपीन पयोधरमर्दन चञ्चलकरयुगशाली ।।

(श्रीगीतगोविन्द)

जिस कुञ्जका उल्लेख किया है, वह यही केलिवट धीर–समीर कुञ्ज है।

श्रीवक्रेश्वर पण्डित श्रीमन् महाप्रभुजीके प्रसिद्ध परिकरोंमेंसे एक हैं। वे अपने अंतिम समयमें कृष्णविरहमें इतने व्याकुल हो गये कि लौकिक लोगोंके लिए उनका पार्थिव शरीर छूट गया। कुछ दिनोंके पश्चात् उनके प्रिय शिष्य श्रीगोपालगुरु भी अप्रकट लीलामें प्रविष्ट हो गये। गोपालगुरुके प्रियशिष्य ध्यानचन्द गोस्वामी भी परम रसिक एवं विद्वान भक्त हुए हैं। उनके समयमें राजकर्मचारी राधाकान्त मठ तथा उसके अन्तर्गत हरिदास ठाकुरकी भजन कुटीमें कुछ अत्याचार करने लगे। इससे वे बड़े मर्माहत हुए। उसी समय उन्हें वृन्दावनके किसी वैष्णवने यह समाचार दिया कि अरे! तुम इतने चिन्तित क्यों हो रहे हो? तुम्हारे परमगुरु श्रीवक्रेश्वर गोस्वामीको हमने धीर–समीरमें भजन करते हुए देखा है। तुम उनके पास चले जाओ। वे सारी व्यवस्था ठीक कर देंगे। ऐसा सुनकर वे बड़े आह्लादित हुए और उन्होंने तत्क्षणात् पैदल ही वृन्दावनके लिए यात्रा की। कुछ दिनोंमें वे श्रीवृन्दावनमें पहुँचे। धीर–समीरमें प्रवेश करते ही वे आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने देखा कि श्रीवक्रेश्वर पण्डित हाथमें नामकी माला लिये हुए भाव विभोर होकर नाम–सङ्कीर्तन कर रहे थे। लीला स्मृतिके कारण उनके नेत्रोंसे निरन्तर अश्रुप्रवाह विगलित हो रहा था। श्रीध्यानचन्दजी लकुटिकी भाँति उनके चरणोंमें गिरकर रोने लगे और उनसे पुरी धाममें लौट चलनेका आग्रह करने लगे। वक्रेश्वर पण्डितने साक्षात् रूपसे जानेके लिए मना तो किया, किन्तु बोले—तुम निश्चिन्त मनसे पुरी लौट जाओ। राजकर्मचारियोंका उपद्रव सदाके लिए बंद हो जायेगा। उनके आदेशसे ध्यानचन्द गोस्वामी पुरीमें राधाकान्त मठमें लौटे। राजकर्मचारियोंने अपने कृत्यके लिए

उनसे पुनः-पुनः क्षमा मांगी। यह वही धीर-समीर है, जहाँ श्रीध्यानचन्द गोस्वामीने अप्रकट हुए श्रीवक्रेश्वर पण्डितका साक्षात् दर्शन किया था। इन सब लीलाओंको अपने हृदयमें संजोये हुए भक्तोंको आनन्दित करने वाला धीर-समीर आज भी विराजमान है।

मानभञ्जन स्थल—धीर-समीरके अन्तर्गत ही मानभञ्जन स्थल है। ब्रज परिक्रमा नामक ग्रन्थमें ऐसा वर्णन प्राप्त होता है कि श्रीजयदेव गोस्वामीने अपने प्रसिद्ध पद, 'स्मर गरल खण्डनं मम शिरसि मण्डनं देहि पद पल्लवमुदारम्', जिस मधुर लीलाका गीतगोविन्दमें वर्णन किया है, वह मानभञ्जन लीला यहींपर हुई थी।

वंशीवट—अमल प्रमाण श्रीमद्भागवतमें वर्णित प्रसिद्ध राधाकृष्णयुगलकी सखियोंके साथ रासलीलाकी प्रसिद्ध स्थली यही वंशीवट है। गोपकुमारियोंकी कात्यायनी-पूजाका फल प्रदान करनेके लिए रसिक बिहारी श्रीकृष्णने जो वरदान दिया था, उसे पूर्ण करनेके लिए उन्होंने अपनी मधुर वेणुपर मधुर तान छेड़ दी। जिसे सुनकर गोपियाँ प्रेमोन्मत्त होकर राका रजनीमें यहाँ उपस्थित हुईं।[१] रसिकेन्द्रशेखर श्रीकृष्णने अपने प्रति समर्पित गोपियोंको धर्मव्यतिक्रमके बहानेसे अपने पतियोंकी सेवाके लिए उनके घरोंमें लौटनेकी बहुत-सी युक्तियाँ दीं। किन्तु विदग्ध गोपियोंने उनकी सारी युक्तियोंका सहज रूपमें ही खण्डन कर दिया। शतकोटि गोपियोंके साथ यहींपर शारदीय रास आरम्भ हुआ। दो-दो गोपियोंके बीचमें एक कृष्ण अथवा दो कृष्णके बीचमें एक गोपी। इस प्रकार विचित्र नृत्य और गीतयुक्त रास हो ही रहा था कि अन्यान्य गोपियोंको सौभाग्यमद और श्रीमती राधिकाजीको मान हो गया। इसे देखकर रसिकशेखर श्रीकृष्ण श्रीमती राधिकाजीका मान प्रसाधन तथा अन्यान्य गोपियोंके सौभाग्यमदको दूर करनेके लिए यहींसे अन्तर्धान हो गये। पुनः विरहिणी गोपियोंने 'जयतितेऽधिकम्...' विरह गीतको रोते-रोते उच्च स्वरसे गायन किया, जिसे सुनकर कृष्ण यहींपर प्रकट हुए। यहींपर इन्होंने मधुर शब्दोंसे गोपियोंके प्रति कृतज्ञता प्रकट की थी कि मेरे लिए अपना सर्वस्व त्याग करनेका तुम्हारा अवदान है। मैं इसके लिए तुम्हारा चिरऋणी

---

(१) निशम्य गीतं तदनङ्गवर्धनं व्रजस्त्रियः कृष्णगृहीतमानसाः ।
आजग्मुरन्योन्यमलक्षितोद्यमाः स यत्र कान्तो जवलोल कुण्डलाः ।।
(श्रीमद्भा. १०/२९/४)

हूँ, जिसे मैं कभी भी नहीं चुका सकता।[१] यह रासलीला स्थली सब लीलाओंकी चूड़ामणि स्थली स्वरूप है।

श्रीवज्रनाभ महाराजने इस रासस्थलीमें स्मृतिके लिए जिस वृक्षका रोपण किया था, कालान्तरमें वह स्थान यमुनाजीमें आप्लावित हो गया। साढ़े पांच सौ वर्ष पूर्व श्रीगदाधर पण्डितके शिष्य श्रीमधुपण्डितने उसकी एक शाखा लेकर इस स्थानमें गाढ़ दी थी। जिससे वह शाखा प्रकाण्ड वृक्षके रूपमें परिणत हो गई। यहींपर भजन करते हुए श्रीमधुपण्डितने ठाकुर श्रीगोपीनाथजीको प्राप्त किया था। इस समय वंशीवटके चतुष्कोण परकोटेके चारों कोनोंमें चार छोटे–छोटे मन्दिर हैं। उनमें क्रमशः श्रीरामानुजाचार्य, श्रीमध्वाचार्य, श्रीविष्णुस्वामी एवं श्रीनिम्बार्काचार्यकी मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। आजकल इन मूर्तियोंके बदले कुछ दूसरी मूर्तियाँ भी यहाँ प्रविष्ट हो गई हैं। पहले इस स्थानमें गौड़ीय वैष्णव सेवा करते थे। बादमें ग्वालियर राजाके गुरु ब्रह्मचारीजीने इस स्थानको क्रय कर लिया। अतः तबसे यह स्थान निम्बार्क सम्प्रदायके अन्तर्गत हो गया है।

गोपीश्वर महादेव—देव–देव महादेव शङ्करको श्रीमद्भागवतमें एक प्रधान वैष्णव बतलाया गया है। वे सदैव भगवती पार्वतीके साथ कृष्णकी अष्टकालीय लीलाओंके चिन्तनमें विभोर रहते हैं। श्रीकृष्णकी प्रकट लीलामें एक समय अपने नेत्रोंसे कृष्णकी मनमोहक रासलीलाके दर्शनोंकी अभिलाषासे वे कैलाशसे सीधे वृन्दावनमें बड़े उत्कण्ठित होकर पधारे। किन्तु वृन्दावनके बाहरी द्वारपर ही गोप–परिचारिकाओंने उन्हें रोक दिया। क्योंकि इसमें श्रीकृष्णके सिवा अन्य किसी पुरुषका प्रवेश निषेध है। किन्तु शङ्करजी कब मानने वाले थे। वे परिचारिका गोपियोंसे प्रवेशका उपाय पूछने लगे। गोपियोंने भगवती योगमाया पौर्णमासीजीकी आराधना करनेके लिए कहा। तत्पश्चात् योगमाया पौर्णमासीजीकी कठोर आराधनासे शङ्करजीको योगमायाजीके दर्शन हुए। उन्होंने शङ्करजीकी अभिलाषा जानकर उनके हाथोंको पकड़कर पास ही ब्रह्मकुण्डमें डुबो दिया। उस कुण्डसे निकलते ही शङ्करजी एक परम सुन्दरी किशोरी गोपीके रूपमें परिवर्तित हो गये।

---

(१) न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां स्वासधुकृत्यं विबुधायुषमि वः ।
या माभजन् दुर्जरग्रहश्रृंखलाः संवृश्च्य तद् वः प्रतियातु साधुरा ।।
(श्रीमद्भा. १०/३२/२२)

पौर्णमासीजीने गोपी बने शङ्करको रासस्थलीके निकट ईशान कोणमें एक कुञ्जके भीतर बैठा दिया और वहींसे रासलीला दर्शनके लिए कहकर स्वयं अन्तर्धान हो गईं। कुछ देर बाद ही रासलीला आरम्भ हुई। गोपियोंने सोचा न जाने क्यों आज नृत्य, गीतमें उल्लास नहीं हो रहा है। वे समझ गई कि किसी विजातीय व्यक्तिका यहाँ प्रवेश हुआ है।

सभी गोपियाँ उस विजातीय व्यक्तिको ढूँढने लगीं। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते जब वे इस स्थानपर पहुँचीं तो उन्होंने एक नवेली अपरिचित गोपीको बैठी हुई देखा। फिर तो उन्होंने उस नवेली गोपीको पकड़ लिया और पूछने लगीं—तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हारा गाँव कौन-सा है? तुम्हारा पति कौन है? तुम्हारा ससुर कौन है? किन्तु नवेली गोपी रोनेके अतिरिक्त कोई उत्तर नहीं दे सकी। क्योंकि योगमायाने इसे गोपी गर्भसे न तो जन्म ही दिलवाया था, न इसे कोई नाम दिया था, न इसका विवाह किसी गोपसे हुआ था। इसलिए क्या उत्तर देती? कोई उत्तर न पाकर गोपियोंने इसके गालोंमें गुल्चे मार-मारकर गाल फुला दिये। पौर्णमासीजी महादेवकी दुर्दशा देखकर द्रवित हो गईं। उन्होंने वहाँ पहुँचकर गोपियोंसे अनुरोध किया कि ये मेरी कृपापात्री गोपी है। आप लोग श्रीकृष्णके साथ इसपर कृपा करें। पौर्णमासीजीकी आन्तरिक अभिलाषा जानकर कृष्णने उसका गोपीश्वर नामकरण किया तथा यह वरदान दिया कि बिना तुम्हारी कृपाके कोई भी साधक इस वृन्दावनमें विशेषकर मेरी मधुर लीलाओंमें प्रवेश नहीं कर सकेगा।

गोस्वामी ग्रन्थोंमें भी ऐसा वर्णन पाया जाता है कि प्रकट कृष्णलीलाके समय कृष्णसेवा प्राप्तिकी कामनासे गोपियाँ भी इनकी आराधना करती थीं।[१] इनके प्रणाम मंत्रसे भी यह स्पष्ट है कि ये विशुद्ध कृष्णप्रेम देने वाले

---

(१) मुदा गोपेन्द्रस्यात्मज-भुज-परिष्वंग-निधये
स्फुरद-गोपी-वृन्दैर्यमइह भगवन्तं प्रणयिभिः ।
भजद्भिस तैर् भक्त्या स्वम भिलष्तिं प्राप्तुम चिराद्
यमी-तीरे गोपीश्वरमनुदिनं तं किल भजे ।।
(श्रीब्रजविलास स्तव—८७)

गोपीश्वर महादेव हैं।[२]

ज्ञान–गुदड़ी—गुरुकुलसे मथुरा लौटकर श्रीकृष्णने माता–पिता और गोपियोंको सांत्वना देनेके लिए अपने प्रिय उद्धवको नन्दगोकुलमें भेजा था। यथार्थतः भक्त उद्धव विरहतापसे दग्धहृदय वाले नन्दबाबा, यशोदा मैया एवं गोपियोंको सांत्वना दे ही क्या सकते थे? यह कृष्णका बहानामात्र था। रहस्यकी बात तो यह थी कि मथुरामें कोई भी एक ऐसा व्यक्ति नहीं था, जो गोपियोंके विरहमें झुलसते हुए कृष्णको सांत्वना दे सके। सांत्वनाकी तो बात ही क्या, कृष्णके भावोंको समझ सके। इसलिए कृष्णने प्रिय उद्धवको इस विषयके लिए योग्य छात्र समझकर ब्रजकी उसी पाठशालामें भेजा, जहाँ उन्होंने स्वयं प्रेमका पाठ पढ़ा था और जिस पाठशालामें प्रधान अध्यापिका महाभाव–स्वरूपा राधारानी और ललिता, विशाखा आदि सखियाँ अध्यापिकाएँ थीं। करुणावरुणालय गोपियोंने कृष्णके भेजे हुए इस छात्रको अपने विद्यालयमें प्रवेश प्रदान किया। वहाँ गोपियोंने उद्धव द्वारा तत्त्व–ज्ञानसे परिपूर्ण सन्देशको हस्तगत किया और उसे गुदड़ीकी भाँति चीर–फाड़कर यमुनाके जलमें प्रवाहित कर दिया। वह ज्ञानगुदड़ी बहती–बहती प्रयागमें गङ्गाकी धारामें जा गिरी और फिर वहाँसे बहते–बहते लवण समुद्रमें मिलकर अपना रहा–सहा अस्तित्व भी खो बैठी। जहाँ गोपियोंने उद्धवके द्वारा लाये हुए तत्त्व–ज्ञानको फटी हुई गुदड़ीकी भाँति यमुनामें बहा डाला था, वही स्थान आज ज्ञान–गुदड़ीके नामसे प्रसिद्ध हुआ है।

ब्रह्म कुण्ड—ज्ञान–गुदड़ीसे कुछ दक्षिण–पश्चिमकी ओर ब्रह्मकुण्ड है। श्रीयोगमाया पौर्णमासीजीने महादेव शङ्करको इसी कुण्डमें डुबोकर गोपी रूप प्रदान किया था। यहींपर श्रीवृन्दादेवीने भी नारदजीको स्नान कराकर नारदी गोपीका रूप प्रदान किया था तथा नारदजीकी अभिलाषा पूर्ण की थी। वे दुर्लभ महारासका दर्शन करना चाहते थे।

इसी ब्रह्म कुण्डकी उत्तर दिशामें एक अशोकवृक्ष है। वैशाख शुक्ला

---

(२) वृन्दावनावनिपते! जय सोम! सोममौले
सनक–सनन्दन–सनातन–नारदेड्य ।
गोपीश्वर! व्रजविलासी–युगांघ्रि–पद्मे
प्रेम प्रयच्छ निरुपाधि नमो नमस्ते ।।
(संकल्प कल्पद्रुम—१०३)

द्वादशीके दिन ठीक दोपहरके समय उसमें फूल खिलते हैं, किन्तु परम भाग्यवान् रसिकभक्त ही उन पुष्पोंका दर्शनकर सकते हैं, दूसरे नहीं। वाराह पुराणमें ऐसा उल्लेख पाया जाता है।[१]

वेणुकूप—वृन्दावनमें बिहार करते समय प्रियाओंको प्यासी जानकर श्रीकृष्णने अपने वेणुको पृथ्वीसे लगाकर उसमें फूँक दी। कृष्णके उस वेणुतानसे वहींपर पातालको भेदकर एक जलधारा फूट निकली। उसका जल बड़ा ही सुशीतल और सुगन्धित था। गोपियाँ, कृष्ण और उनके वेणुकी प्रशंसा करती हुई जलपान करने लगीं। गोपियोंने इस कूपका नाम वेणुकूप रख दिया।

दावानल कुण्ड—कालीयनाग दमनके दिन गोप, गोपी एवं कृष्ण-बलराम अपने निवास स्थल छट्टीकरामें रात हो जानेके कारण न जा सके। उन्होंने विष मिश्रित कालीयदहसे कुछ दूर हटकर पूर्व दिशामें एक स्वच्छ मीठे सरोवरके पास जाकर जलपान किया और वहींपर रातमें विश्राम किया। दुष्ट कंसके अनुचरोंने सुयोग देखकर इस वनके चारों तरफ आग लगा दी। थोड़ी ही देरमें भीषण आग सारे वनमें प्रज्वलित हो उठी। कृष्णने यहाँ भी सबको अपने नेत्र बन्द करनेके लिए कहा। नेत्र बन्द करते ही उस भीषण दावानलको सुशीतल जलकी भाँति पान कर लिया। जहाँ यह लीला हुई थी उस सरोवरको दावानल कुण्ड कहते हैं।

---

(१) तस्य तत्रोत्तरे पार्श्वेऽशोकवृक्षः सितप्रभः ।
वैशाखस्य तु मासस्य शुक्लपक्षस्य द्वादश्याम् ।।
स पुष्पति च मध्यान्हे मम भक्तसुखावहः ।
न कश्चिदपि जानाति बिना भागवतं शुचिम् ।।

श्रीवृन्दावनके मन्दिर

इस समय वृन्दावनमें हजारों मन्दिर हैं। इसलिए वृन्दावनको मन्दिरोंका नगर भी कहते हैं। घर–घरमें मन्दिर हैं। उनमेंसे प्राचीन ये कुछ मन्दिर हैं—श्रीगोविन्द मन्दिर, श्रीसाक्षीगोपाल, श्रीगोपीनाथजी, श्रीमदनमोहनजी, श्रीराधारमणजी, श्रीराधाविनोदजी, श्रीराधामाधवजी, श्रीराधादामोदरजी, श्रीराधाश्यामसुन्दरजी, श्रीराधागोकुलानन्दजी, श्रृंगारवटमें श्रीगौरनिताईजी, श्रीसीतानाथ मन्दिर, श्रीराधावल्लभ और श्रीबाँके बिहारीजी। आधुनिक मन्दिरोंमें शाहजीका मन्दिर, लाला बाबूका मन्दिर, श्रीरङ्गजीका मन्दिर, तड़ास मन्दिर, जयपुर मन्दिर, हाड़ाबाड़ी कुञ्ज, श्रीजीका मन्दिर, वर्द्धमान राजमन्दिर, ब्रह्मचारीजीका मन्दिर, गिरिधारीजीका मन्दिर, टीकारी रानीका मन्दिर, शाहाजापुर मन्दिर, महारानी स्वर्णमयी मन्दिर, कालाबाबू कुञ्ज, श्रीरूपसनातन मन्दिर, श्रीकृष्ण–बलराम मन्दिर तथा इसके अतिरिक्त और भी मन्दिर हैं, जिनका उल्लेख ग्रन्थ–विस्तार हेतु नहीं किया जा रहा है।

नीचे संक्षेपमें प्रधान–प्रधान प्राचीन मन्दिरोंका उल्लेख कर रहे हैं।

श्रीगोविन्दस्वामी तीर्थ—इसका वर्तमान नाम श्रीगोविन्दजीका मन्दिर है। प्राचीन नाम गोमाटीला है।

प्रसङ्ग—श्रीरूप गोस्वामी सेवा कुञ्जके अन्तर्गत श्रीराधादामोदर मन्दिरके पीछे छोटी–सी भजनकुटीमें साधन–भजन करते थे। वहींपर रहकर श्रीमन् महाप्रभुके आदेशसे वे भक्तिरसामृतसिन्धु, उज्ज्वलनीलमणि आदि जैसे भक्ति–ग्रन्थोंका प्रणयन करते थे। वे महाप्रभुके आदेशसे श्रीवज्रनाभके द्वारा प्रतिष्ठित श्रीगोविन्द विग्रहको प्रकटित करना चाहते थे। वे प्रतिदिन पञ्चकोसी वृन्दावनकी परिक्रमा भी करते थे। एक दिन परिक्रमा करते समय श्रीगोविन्द विग्रहकी चिन्ता करते–करते बड़े अधीर हो गये तथा यमुनातटपर एक वृक्षके नीचे बैठकर श्रीगोविन्द दर्शनके लिए अनुतप्त होकर रोदन करने लगे। उसी समय एक सुन्दर ब्रजवासी बालक भी परिक्रमा करते–करते उधरसे निकला। उसने श्रीरूप गोस्वामीको पेड़के नीचे रोदन करते हुए देखा तो रोनेका कारण पूछा। पहले तो श्रीरूप गोस्वामीने कुछ नहीं कहा। किन्तु, बालकके बार–बार अनुरोध करनेपर उन्होंने अपने हृदयकी व्यथा कह सुनाई। ब्रजवासी बालक श्रीरूप गोस्वामीको साथ लेकर गोमा टीलाके निकट कहने लगा—देखो! इस टीलेपर इसी स्थानमें प्रतिदिन पूर्वाह्नके समय एक गैया

आती है। यहीं खड़ी होकर अपने थनोंके दूधसे इस स्थानको सींच जाती है। मैं समझता हूँ कि यहींपर तुम्हारी अभिलाषा पूर्ण होगी—ऐसा कहकर देखते-देखते वह बालक अन्तर्धान हो गया।

श्रीरूप गोस्वामी बालकके रूप और मधुर बोलीका स्मरणकर मूर्च्छित हो गये। चेतना होनेपर आस पासके ब्रजवासियोंको बुलाकर बड़ी सावधानीसे उस स्थानको खुदवाया।

कुछ नीचे तक खोदनेपर ही वहाँ कोटि मन्मथ-मन्मथ सुन्दर श्रीगोविन्दजी प्राप्त हुए। बड़े समारोहके साथ श्रीगोविन्दजीका अभिषेक किया गया। यह संवाद बहुत ही शीघ्र सर्वत्र फैल गया। अब श्रीगोविन्ददेवके दर्शनोंके लिए लोगोंकी भीड़ उमड़ने लग गई।

श्रीगोविन्द देव ही श्रीवृन्दावनके ईश्वर 'वृन्दावनेश्वर' हैं। स्कन्द, पद्म एवं वाराह आदि पुराणोंमें उनको वृन्दावनका राजराजेश्वर कहा गया है। वृन्दावनमें श्रीगोविन्ददेव ही आराध्य देवता हैं। चैतन्यचरितामृतमें इस प्रकारका उल्लेख है—

वृन्दावने कल्पवृक्ष सुवर्ण-सदन
महायोगपीठ ताहां रत्नसिंहासन ।
ताते बसि आछेन साक्षात् ब्रजेन्द्रनन्दन
श्रीगोविन्द नाम-साक्षात्मन्मथमदन ।।

और भी—

श्रीमद्वृन्दारण्यकल्पद्रुमाधः, श्रीमद्रत्नागारसिंहासनस्थौ ।
श्रीमद्राधा-श्रीलगोविन्ददेवौ प्रेष्ठालिभिः सेव्यमानौ स्मरामि ।।

श्रीमद्भागवतम् (६/८/२०)—"माँ केशवो गदया प्रातरव्याद् गोविन्द आसङ्गवमात्तवेणुः" टीका च "तौ हि मथुरावृन्दावनयोः सुप्रसिद्ध-महायोगपीठयोस्तत्तन्नाम्नैव सहितो प्रसिद्धौ आत्तवेणुरिति विशेषेणा गोविन्दः श्रीवृन्दावनदेव एव; तत्सहपाठात् केशवोऽपि मथुरानाथ एव।" गोपालपूर्वतापन्याम्—"तमेकं गाविन्दं सच्चिदानन्दविग्रहम्" इत्यादि।

उद्ध्र्वाम्नाये—

गोपाल एव गोविन्दः प्रकटाप्रकटः सदा
वृन्दावने योगपीठे स एव सततं स्थितः ।।
असौ युगचतुष्केऽपि श्रीमद्वृन्दावनाधिपः ।
पूजितो नन्दगोपाद्यैः कृष्णेनापि सुपूजितः ।।

अथर्ववेदे–"गोकुलारण्ये मथुरामण्डले वृन्दावनमध्ये सहस्त्रदलमध्येऽष्टदलकेशरे गोविन्दोऽपि श्यामः द्विभुजो" इत्यादि।

स्कन्दे–

गोविन्दस्वामि नामात्र वसत्यर्च्चयत्मिकोऽच्युतः ।
गंधर्वैरप्सरोभिश्च क्रीड मानः स मोदते ।।

इत्यादि बहुग्रंथेषु प्रसिद्धानि वचनानि सन्ति

ब्रजभक्तिविलासमें भी कहा गया है–

वृंदादेवीसमेताय गोविन्दाय नमे नमः ।
लोककल्मषनाशाय परमात्मस्वरूपिणे ।।

(ब्र.भ.वि.)

श्रीरूप गोस्वामीसे पूर्व श्रीधाम वृन्दावनमें श्रीकृष्णविग्रहके साथ श्रीराधिकाके विग्रहकी स्थिति नहीं सुनी जाती। श्रीरूप गोस्वामीके द्वारा श्रीगोविन्द देवके विग्रहकी पुनः प्रतिष्ठा हुई। सुयोगसे उसी समय पुरीधाममें जगन्नाथजीके मन्दिरमें चक्रबेड़ नामक स्थानपर श्रीराधिकाजीका एक विग्रह विराजमान था। सभी लोग उस श्रीराधाविग्रहकी लक्ष्मीजीके रूपमें पूजा करते थे। महाराज प्रतापरुद्रके पुत्र पुरुषोत्तम जानाको श्रीमती राधिकाने स्वप्नादेशमें कहा–मैं लक्ष्मी नहीं हूँ, मैं ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णकी प्रियतमा राधा हूँ। मैं वृन्दावनमें श्रीगोविन्ददेवके प्रकट होनेकी प्रतीक्षा कर रही थी। अब वे प्रकट हो गये हैं। तुम सावधानीके साथ मुझे वृन्दावनमें श्रीगोविन्ददेवके निकट भेज दो। उन्होंने वैसा ही किया। इसलिए तत्कालीन गोस्वामियोंने इस श्रीराधाविग्रहको श्रीगोविन्ददेवके वाम भागमें पधराया। अनन्तर श्रीगोविन्दजी श्रीमती राधिकाको पाकर श्रीराधागोविन्दके नामसे विख्यात हुए।

स्वयं श्रीचैतन्य महाप्रभुने काशीश्वर ब्रह्मचारी नामक अपने परिकरके द्वारा श्रीगौरगोविन्द नामक अपना स्वरूप विग्रह वृन्दावनमें भेजा था। वही मूर्त्ति अब गोविन्द मन्दिरके दक्षिणमें पास ही विराजमान है।

१५९० ई.में श्रीरघुनाथभट्ट गोस्वामीके शिष्य जयपुरके महाराजा मानसिंहने अपने गुरुदेवकी प्रेरणासे लाल पत्थरोंके द्वारा सात मंजिलका एक बृहत् मन्दिर बनाया। १६७० ई.में अत्याचारी मुगल सम्राटके द्वारा इस मन्दिरका ध्वंस हुआ। उसके ऊपर वाले चार मंजिल तोड़ दिये गये। नीचेका भाग तोड़ते समय दिल्लीमें अकस्मात् अशुभ समाचार सुनकर वह लौट गया।

मन्दिरका निचला भाग बच गया। मन्दिर ध्वंस होनेसे पूर्व ही श्रीगोविन्दजी तथा गौड़ीयोंके उपास्य दूसरे विग्रह जयपुर पधार गये थे। १७४८ ई.में उक्त विशाल मन्दिरके पास ही श्रीगोविन्द देवके प्रतिभू विग्रहकी स्थापना हुई। १८१९ ई.में श्रीनन्दकुमार वसुके द्वारा वर्तमान मन्दिरका निर्माण किया गया। इस मन्दिरमें श्रीगोविन्द देव और उनके वाम भागमें श्रीराधिकाजी विराजमान हैं। इस समय प्राचीन गोविन्ददेव प्रिया राधिकाके साथ जयपुरके राजभवनके निकट विराजमान हैं।

श्रील रूप गोस्वामी व्यंग्योक्तिके द्वारा श्रीगोविन्ददेवका दर्शन करनेके लिए निषेध करते हुए कह रहे हैं—यदि तुम्हें स्त्री, पुत्र और बन्धु-बान्धवोंके साथ अपने जीवनमें रङ्गरेलियाँ मनानेकी तनिक भी इच्छा हो तो मेरी बातोंको मानो। कभी भी वृन्दावनमें केशी घाटके समीप भूलसे भी मत जाना। वहाँ त्रिभङ्ग ललित मुद्रामें कुछ मुस्कराते हुए, भृकुटी ताने, कुछ तिरछी नजरोंसे देखते हुए श्रीहरि गोविन्द विग्रहके रूपमें खड़े हैं। उनके अङ्गोंपर पीताम्बर झिलमिला रहा है, वनफूलोंकी मनोहारिणी माला तथा नवपल्लवोंका गुच्छ सुशोभित हो रहा है। अहो! समस्त अनर्थोंकी मूलाधार वंशी उनके अधर पल्लवोंपर विराजित है, सिरपर मयूरपिच्छ उनकी शोभामें और भी चार चाँद लगा रहा है। जो एकबार भी अपने नेत्रोंसे इस गोविन्द विग्रहका दर्शन कर लेता है, वह कभी भी अपने घर नहीं लौटता। उस संसारी गृहीका सर्वनाश हो जाता है। इसलिए हे संसारी जीव! खबरदार, केशी घाटकी ओर कभी भी मत जाना। अन्यथा कोई अनहोनी विपदकी संभावना है।[१]

श्रीमदनमोहन—महाराज वज्रनाभने श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ एवं श्रीमदनमोहन—इन तीन विग्रहोंकी श्रीधाम वृन्दावनमें स्थापना की थी। कालान्तरमें म्लेच्छोंके अत्याचारसे पुजारी लोग इन विग्रहोंको इधर-उधर छिपाकर वहाँसे चले गये। वृन्दावन घोर जंगलके रूपमें परिणत हो गया। बहुत वर्षोंके पश्चात् किस

---

(१) स्मेरां भङ्गीत्रय परिपचितां साचिविस्तीर्ण दृष्टिं
वंशीन्यस्ताधर-किसलयामुज्ज्वलां चन्द्रकेण।
गोविन्दाख्यां हरितनुमितः केशितीर्थोपकण्ठे
मा प्रेक्षिष्ठास्तव यदि सखे! बन्धुसङ्गेऽस्ति रङ्गः।।
(भक्तिरसामृतसिन्धु)

प्रकार श्रीरूप गोस्वामीद्वारा श्रीगोविन्ददेव पुनः प्रकटित हुए, पहले इसका उल्लेख कर चुके हैं। अब सनातन गोस्वामीने किस प्रकार श्रीमदनमोहनजीको प्रकाश किया, यहाँ संक्षेपमें उसका उल्लेख किया जा रहा है।

श्रीसनातन गोस्वामी कभी–कभी प्रातःकाल वृन्दावनसे सोलह मील चलकर चौदह मील गोवर्धनकी परिक्रमा करते थे। वहाँसे सोलह मील पैदल चलकर मथुरामें माधुकरी करते और पुनः वृन्दावनमें अपनी भजन–कुटीमें पहुँच जाते। एक दिन मथुराके एक चौबेके घरमें माधुकरी माँगने पहुँचे। वहाँ देखा क्या? चौबेजीके घरमें दो सुन्दर बालक गुल्ली–डण्डा खेल रहे हैं। श्यामकान्ति वाले मदन नामक चञ्चल बालकने चौबाइनके बालकको पराजित कर दिया। मदनने पराजित चौबे बालकके कन्धेपर बैठकर, घोड़ेपर चढ़नेका आनन्द लिया। किन्तु दूसरी बार पराजित होनेपर जब मदनके कन्धेपर चौबे बालकको चढ़नेकी बारी आई, तो मदन भागकर मन्दिरमें प्रवेश कर गया। ऐसा देखकर चौबेका बालक क्रोधसे गाली देता हुआ उसके पीछे दौड़ा। वह मन्दिरमें प्रवेश करना ही चाहता था। किन्तु पुजारीजीने उसे डाँट–डपटकर भगा दिया। अतः विग्रह बने मदनको दूरसे ही तर्जनी अंगुली दिखाते हुए चौबे बालकने कहा—अच्छा, कल तुझे देख लूँगा।

श्रीसनातन गोस्वामी इस दृश्यको देखकर आश्चर्यचकित रह गये। दूसरे दिन वे कुछ पहले ही दर्शनोंकी पिपासा लेकर पहुँचे। कलेवेका समय था। अतः चौबाईन दोनों बालकोंके कलेवेके लिए खिचड़ी पका रही थी। अभी उसने स्नान आदि भी नहीं किया था। दोनों बालक कलेवेकी प्रतीक्षामें बैठे थे। मैया दातुन करती जा रही थी तथा उसके दूसरे सिरेसे खिचड़ीको भी चलाती जा रही थी। खिचड़ी पक जानेपर कटोरीमें गरम–गरम खिचड़ी बालकोंके सामने रखकर मुखकी फूँकसे उसे ठण्डा भी करने लगी तथा दोनों बालक बड़े प्रेमसे खिचड़ीका रसास्वादन करने लगे।

सनातन गोस्वामीसे चौबाईनका यह अनाचार सहन नहीं हुआ। उन्होंने कहा—मैया! इन बालकोंको बिना स्नान किये दातुनसे खिचड़ी चलाकर अपवित्र कलेवा देना उचित नहीं। चौबाईनको अपनी भूल समझमें आ गई, बोली—बाबा! कलसे शुद्धरूपमें बनाकर इन्हें कलेवा कराऊँगी।

श्रीसनातन गोस्वामी श्रीमदनमोहन विग्रहकी कुछ और भी लीलाएँ देखनेके लिए तीसरे दिन पुनः पधारे। आज मैयाके स्नान पूजनमें विलम्बके कारण दोनों बालक भूख लगनेके कारण कलेवाके लिए मचल रहे थे। मैया

उन्हें सांत्वना देती हुई स्नान आदिसे निवृत होकर बर्तनोंको धोकर खिचड़ी पका रही थी। दोनों बालक उसके वस्त्र पकड़कर मचल रहे थे। सनातन गोस्वामी यह भी सहन नहीं कर सके। वे मैयाके पास जाकर बोले—मैया! तुम्हें स्नान आदिके द्वारा पवित्र होनेकी कोई भी आवश्यकता नहीं है। यदि यह मदन तुम्हारे अपवित्र और झूठे कलेवासे ही प्रसन्न है, तो वैसा ही करना उचित है। मैंने तुम्हारे चरणोंमें अपराध किया है। कलसे तुम अपनी समझसे इनको सन्तुष्ट करनेके लिए जैसा भी उचित समझो वैसा ही करना।

जब सनातन गोस्वामी वहाँसे चलने लगे तो बालक मदन मन्दिर गृहसे निकलकर बोला—बाबा! मैं तुम्हारे साथ चलूँगा। किन्तु श्रीसनातन गोस्वामीने कहा—मैं बिलकुल निष्किञ्चन व्यक्ति हूँ। न मेरे रहनेका स्थान है, न स्वादिष्ट भोजनकी व्यवस्था। जब यशोदा मैया भी तुम्हें सम्पूर्णरूपसे संतुष्ट नहीं कर सकीं, तो मैं तुम्हारा पालन-पोषण कैसे कर सकता हूँ? फिर भी बालक मदन उनके साथ चलनेकी जिद करने लगा। सनातन गोस्वामीजीने कहा—यदि चलनेकी इच्छा है तो मैं तुम्हें कंधेपर बिठाकर नहीं चल सकता। तुम मेरे पीछे-पीछे चले आओ। बालकने कहा—मैं तुम्हारे पीछे-पीछे चल रहा हूँ, परन्तु रास्तेमें मुड़कर पीछे मत देखना। अपनी भजन कुटीपर ही देखना।

जब सनातन गोस्वामी अपने इस भजन-कुटीपर पहुँचे, तो मुड़कर देखा कि बालक मदन कुछ मुस्कराकर विग्रहके रूपमें परिवर्तित हो गया। सनातन गोस्वामीने दो चार पत्थरोंको खड़ाकर ऊपरसे कुछ पट्टियाँ डाल दीं और उसीमें इनको पधरा दिया। प्रतिदिन नमक रहित आटेके द्वारा अङ्गा अर्थात् बाटी सेककर उन्हें भोग लगाते। एक दिन मदनमोहनजीने गोस्वामीजीसे वैसा नैवेद्य खाते समय नमक माँगा। किन्तु नमक रहे तो दें? कुटीमें नमक भी नहीं था। मदनमोहनजीने कहा यह सूखी बाटी मेरे गलेसे नीचे नहीं उतर रही है। सनातन गोस्वामी ऐसा जानकर बड़ा ही अनुताप करने लगे।

इसी समय मुलतान देशीय कृष्णदास कपूर नामक एक धनी व्यवसायी बड़ी-बड़ी नौकाओंमें मूल्यवान द्रव्य रखकर व्यवसाय करनेके लिए जा रहा था। परन्तु सनातन गोस्वामीकी भजन-कुटीके सामने ही यमुना नदीमें नावें रेतीमें अटक गईं। लाख चेष्टा करनेपर भी वे निकल नहीं सकीं।

व्यवसायीने उतरकर कुटीके सामने अपूर्व सुन्दर श्रीमदनमोहन विग्रहको देखा तथा सनातन गोस्वामीके इंगित करनेसे उनके सामने बैठकर रोने और गिड़गिड़ाने लगा। उसने मन–ही–मन संकल्प किया कि मेरी नाव निकल जानेपर व्यवसायमें जो कुछ लाभ होगा, उसके द्वारा ठाकुरजीके लिए एक सुन्दर मन्दिरका निर्माणकर इनकी सेवापूजा और भोगरागका उचित प्रबन्ध करूँगा। संकल्प लेनेके साथ ही नौकाएँ अपने आप चलने लगीं। उस व्यवसायमें उसे प्रचुर धन मिला। उसने श्रीसनातन गोस्वामीकी प्रेरणासे श्रीमदनमोहनका विशाल मन्दिर बनवाया। परन्तु सनातन गोस्वामी भोगराग, सेवा–पूजा आदिकी समुचित व्यवस्थाका सब भार पुजारियोंपर छोड़कर पुनः ब्रजमें माधुकरी द्वारा किसी प्रकार जीवन निर्वाह करते हुए एक–एक पेड़के नीचे रहते हुए कठोर साधन–भजन करने लगे।

श्रीसनातन गोस्वामीके अप्रकट लीलामें प्रवेश करनेके बाद १६७० ई. में हिन्दू विरोधी औरंगजेबने इस मन्दिरके शिखर आदि तोड़कर इसे अपवित्र कर किया। उसके पहले ही मदनमोहनजी अन्य विग्रहोंके साथ जयपुर चले गये थे। इस समय वे करौलीमें विराजमान हैं। १७४८ ई.में मदनमोहनका प्रतिभू विग्रह प्रतिष्ठित हुआ तथा १८१९ ई.में श्रीनन्दलाल वसुके द्वारा वर्तमान मन्दिरका निर्माण हुआ।

सेवा प्राकट्य और इष्टलाभ नामक प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थमें लिखा गया है कि सनातन गोस्वामीजीने सम्वत् १५९० में महावनके परशुराम चौबेके निकटसे श्रीमदनगोपालजीको प्राप्तकर उसी सम्वत्सरमें माघ शुक्ला द्वितीया तिथिमें पुनः प्रतिष्ठित किया तथा कृष्णदास ब्रह्मचारीजीके ऊपर सेवापूजाका भार न्यौछावर कर दिया। उस समय श्रीमदनमोहनजीके साथ श्रीराधिका विग्रह नहीं था। श्रीमदनमोहनजीके प्रकट होनेकी बात सुनकर उड़ीसाके राजा प्रतापरुद्रके पुत्र श्रीपुरुषोत्तमजानाने बड़ी श्रद्धाके साथ पुनः दो राधा विग्रहोंको पुरी धामसे वृन्दावनमें भेजा। श्रीमदनमोहनजीने अपने पुजारीको स्वप्नादेश दिया कि पुरीसे जो दो विग्रह आई हैं, उनमेंसे एक बड़ी ललिताजी हैं और छोटी राधिकाजी हैं। तुम छोटी राधिका विग्रहको मेरे वाम भागमें तथा बड़ी ललिताको मेरे दक्षिण भागमें विराजमान कराओ। भक्तिरत्नाकरमें यह उल्लेख पाया जाता है कि इस मन्दिरके दक्षिण भागमें श्रीसनातन गोस्वामीने श्रीचैतन्य महाप्रभुजीके लिए श्रीमन्दिरका निर्माण किया था। किन्तु श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वितीय बार वृन्दावनमें नहीं पधारे। नये मन्दिरके

चित्र सं.- 46

श्रीराधामदनमोहनजी

भीतर श्रीमदनमोहनजी, दक्षिणमें ललिता, वाम भागमें राधिकाजी, शालग्राम शिला, एक पृथक्-पृथक् प्रकोष्ठमें श्रीजगन्नाथजी विराजमान हैं। पुराने मन्दिरके निकट ही पश्चिमकी ओर श्रीसनातन गोस्वामीकी भजन कुटी, समाधि एवं ग्रन्थसमाधि दर्शनीय हैं।

श्रीगोपीनाथजी—प्रसिद्ध वंशीवटके निकट यमुना तटपर श्रीपरमानन्द भट्टाचार्य और मधुपण्डित तीव्र वैराग्यपूर्वक श्रीराधाकृष्ण युगलकी आराधना

करते थे। एक समय यमुनाकी धारासे तट कट जानेसे उसके भीतरसे बहुत सुन्दर श्रीगोपीनाथ विग्रह प्रकट हुए। प्रातःकाल भक्त परमानन्दने यमुना स्नानके लिए जाते समय कटे हुए तटसे इस परम मनोहर श्रीवग्रहको प्राप्त किया। उन्होंने श्रीमधुपण्डितको श्रीगोपीनाथजीकी सेवाका भार अर्पण किया। पहले गोपीनाथजी वंशीवटके पास ही विराजमान थे, किन्तु भव्य मन्दिर बन जानेपर इस मन्दिरमें ही उनकी सेवा–पूजा होती।

जिस समय नित्यानन्द प्रभुकी पत्नी जाह्नवा ठाकुरानी वृन्दावनमें आईं, उस समय, जब वे राधागोपीनाथजीका दर्शनकर रही थीं तो उनके मनमें यह विचार आया कि राधिका विग्रह बहुत छोटी है। यह कुछ और ऊँची होती तो युगल जोड़ी अत्यन्त सुन्दर जँचती। वे शयन आरती दर्शनकर अपने वासस्थान पर लौट आईं। रातमें श्रीगोपीनाथजीने स्वप्नमें जाह्नवाजीको अपनी जैसी ऊँची राधिका विग्रहकी व्यवस्था करनेको कहा। श्रीमती राधिकाजीका भी ऐसा ही आदेश पाकर जाह्नवा ठाकुरानीने गोपीनाथ ठाकुरके अनुरूप श्रीराधिका स्वरूपका निर्माण कराया। भक्तमाल ग्रन्थमें ऐसा कहा गया है कि श्रीजाह्नवा ठाकुरानीने अपने अप्रकट होनेके समय अपने आप अपना विग्रह प्रकाशितकर उसमें स्वयं प्रतिष्ठित होकर आदेश दिया कि 'मेरे इस विग्रहको श्रीगोपीनाथजीके प्रकोष्ठमें पधराओ।' जब उस विग्रहको वृन्दावनमें गोपीनाथ मन्दिरमें पहुँचाया गया तो पुजारी उस विग्रहको गोपीनाथके साथ पधरानेमें संकुचित हुए। उस समय गोपीनाथजीने स्वयं पुजारियोंको आदेश दिया, "यह मेरी प्रिय अनङ्ग मञ्जरी है। इनको मेरे वाम भागमें तथा राधिकाजीको मेरे दक्षिण भागमें निसंकोच होकर पधराओ।" ऐसा ही हुआ। श्रीगोपीनाथजीके वाम भागमें जाह्नवा तथा दक्षिणमें राधिकाजी विराजमान हुईं।

औरगंजेबके उपद्रवके समय अन्यान्य विग्रहोंके साथ मूल गोपीनाथजी तथा राधिका, जाह्नवा विग्रह भी जयपुरमें पधारे। अब नन्दकुमार वसुके द्वारा प्रतिष्ठित नये मन्दिरमें प्रतिभू विग्रह विराजमान हैं। गोपीनाथजीके बाईं ओर जाह्नवा ठाकुरानी, दक्षिण भागमें छोटी मूर्ति राधिका तथा ललिता सखीजी विराजमान हैं। पृथक् प्रकोष्ठमें महाप्रभु श्रीगौरसुन्दरका विग्रह है। १६३२ ई.में राठौर वंश उद्भुत बीकानेरके महाराज कल्याणमलके पुत्र रायसिंहके द्वारा प्राचीन मन्दिरका निर्माण हुआ था। औरंगजेबने इस मन्दिरको ध्वंस कर दिया। प्रतिभू विग्रहकी प्रतिष्ठा १७४८ ई.में तथा नये मन्दिरका निर्माण

चित्र सं.– 47

श्रीराधागोपीनाथजी

चित्र सं.– 48

श्रीराधादामोदरजी और श्रीगिरिराज शिला

चित्र सं.– 49

श्रीराधारमणजी

१८१९ ई.में हुआ है। नये मन्दिरके पास ही पूर्व दिशामें मधुपण्डितजीकी समाधि विराजमान है।

श्रीराधादामोदर—श्रीरूपगोस्वामीजी सेवाकुञ्जके अन्तर्गत यहीं भजन कुटीमें वास करते थे। यहींपर तत्कालीन गोस्वामीगण एवं भक्तजन सम्मिलित होकर इष्टगोष्ठी करते थे तथा श्रीरघुनाथभट्टजी अपने मधुर कंठसे उस वैष्णव सभामें श्रीमद्भागवतकी व्याख्या करते। यहींपर श्रीरूप गोस्वामीने श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु, उज्ज्वलनीलमणि एवं अन्यान्य भक्ति ग्रन्थोंका संकलन किया। युवक श्रीजीवगोस्वामी श्रीरूपगोस्वामीकी सब प्रकारसे सेवामें नियुक्त थे। श्रील रूपगोस्वामीने स्वयं अपने हाथोंसे श्रीराधादामोदर विग्रहको प्रकाशकर श्रीजीवको सेवापूजाके लिए अर्पण किया था। सेवाप्राकट्य ग्रन्थके अनुसार १५९९ सम्वत्में माघ शुक्ला दशमी तिथिमें श्रीराधादामोदरकी प्रतिष्ठा हुई। मूल श्रीराधादामोदर विग्रह जयपुरमें विराजमान हैं। उनका प्रतिभू विग्रह स्वरूप वृन्दावनमें विराजमान है। इनके साथ सिंहासनमें श्रीवृन्दावनचन्द्र, श्रीछैलचिकनिया, श्रीराधाविनोद और श्रीराधामाधव आदि विग्रह विराजमान हैं। मन्दिरके पीछे श्रीजीवगोस्वामी तथा श्रीकृष्णदासगोस्वामीकी समाधियाँ प्रतिष्ठित हैं। मन्दिरके उत्तर भागमें श्रीपाद रूपगोस्वामीकी भजन–कुटी और समाधि मन्दिर स्थित हैं। पास ही श्रीभूगर्भ गोस्वामीकी समाधि है।

सनातन गोस्वामी नित्य गोवर्धनकी परिक्रमा करते थे। वृद्धावस्थामें जब परिक्रमा करनेमें असमर्थ होगये, तब कृष्णने बालक रूपमें दर्शन दिया तथा लगभग डेढ़ हाथ परिमाण लम्बी वटपत्रके आकारकी गोवर्धनशिला उन्हें प्रदानकर उसीकी परिक्रमा करनेका आदेश दिया। उस शिलामें कृष्णका चरणचिह्न, गायके खुरका चिह्न तथा वंशीका चिह्न वर्तमान हैं। सनातन गोस्वामी उस शिलाको वृन्दावन ले आये और नित्यप्रति उसकी प्रदक्षिणा करते थे। उनके अप्रकट होनेके पश्चात् श्रीजीवगोस्वामी उस शिलाको अपने श्रीराधादामोदर मन्दिरमें पधराकर उसकी पूजा करने लगे। विशेष तिथियोंमें उस शिलाका दर्शन कराया जाता है।

श्रीराधारमण—यह श्रीमन् महाप्रभुके कृपापात्र श्रीगोपालभट्टजीके द्वारा सेवित विग्रह है। श्रीभट्टगोस्वामी पहले एक शालग्रामशिलाकी सेवा करते थे। एक समय उनकी यह प्रबल अभिलाषा हुई कि यदि शालग्राम ठाकुरजीके हस्त–पद होते तो मैं उनकी विविध प्रकारसे अलंकृतकर सेवा करता, उन्हें झूले पर झुलाता। भक्तवत्सल प्रभु अपने भक्तकी मनोकामना पूर्ण करनेके

लिए उसी रातमें ही ललितत्रिभङ्ग श्रीराधारमण रूपमें परिवर्तित हो गये। भक्तकी इच्छा पूर्ण हुई। भट्ट गोस्वामीने नानाविध अलंकारोंसे भूषितकर उन्हें झूलेमें झुलाया तथा बड़े लाड़–प्यारसे उन्हें भोगराग अर्पित किया। श्रीराधारमण विग्रहकी पीठ शालग्राम शिला जैसी दीखती है। अर्थात् पीछेसे दर्शन करनेमें शालग्राम शिला जैसे ही लगते हैं। द्वादश अंगुलका श्रीविग्रह होनेपर भी बड़ा ही मनोहर दर्शन है। श्रीराधारमण विग्रहका श्रीमुखारविन्द गोविन्दजीके समान, वक्षस्थल श्रीगोपीनाथके समान तथा चरणकमल मदनमोहनजीके समान हैं। इनके दर्शनोंसे तीनों विग्रहोंके दर्शनका फल प्राप्त होता है।

सेवाप्राकट्य ग्रन्थके अनुसार सम्वत् १५९९ में शालग्राम शिलासे राधारमणजी प्रकट हुए। उसी वर्ष वैशाखकी पूर्णिमा तिथिमें उनका अभिषेक हुआ था। राधारमणजीके साथ श्रीराधाजीका विग्रह नहीं है। परन्तु उनके वाम भागमें सिंहासनपर गोमतीचक्रकी पूजा होती है। श्रीहरिभक्तिविलासमें गोमतीचक्रके साथ ही शालग्राम शिलाके पूजनकी विधि दी गई है।

श्रीराधारमण मन्दिरके पास ही दक्षिणमें श्रीगोपालभट्टगोस्वामीकी समाधि तथा राधारमणके प्रकट होनेका स्थान दर्शनीय है। अन्य विग्रहोंकी भाँति श्रीराधारमणजी वृन्दावनसे कहीं बाहर नहीं गये।

श्रीराधाविनोद एवं श्रीराधागोकुलानन्दजी—श्रीचैतन्य महाप्रभुके वृन्दावन आगमनसे पूर्व श्रीलोकनाथ गोस्वामी एवं भूगर्भगोस्वामी वृन्दावनमें आये थे। वे ब्रजमण्डलकी विभिन्न लीलास्थलियोंमें दीन, हीन, अकिञ्चन होकर भजन करते थे। श्रीलोकनाथ गोस्वामीको छत्रवनके पास उमराव गाँवमें किशोरी कुण्डसे श्रीराधाविनोदजीका विग्रह प्राप्त हुआ था और वहीं उनकी सेवा करते थे। बादमें रूप सनातन आदि गोस्वामियोंके अनुरोधसे अपने आराध्य श्रीराधाविनोदजीको वृन्दावनमें श्रीराधारमण मन्दिरके पास ही पधराकर सेवा करने लगे। वर्तमान समयमें श्रीलोकनाथ गोस्वामी द्वारा पूजित मूलविग्रह जयपुरमें विराजमान है। उनके स्थान पर उनका प्रतिभू विग्रह वृन्दावनके इस मन्दिरमें पूजित होता है। श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरके द्वारा श्रीराधाकुण्डमें प्रकटित श्रीगोकुलानन्दजी भी बादमें इस मन्दिरमें पधारे। श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रीरघुनाथ दास गोस्वामीको दी हुई गोवर्धन शिला भी यहाँ विराजमान थी। प्राचीन श्रीगोकुलानन्दका विग्रह भी राधाविनोदजीके साथ जयपुरमें ही विराजमान है। मन्दिर प्राङ्गणमें श्रीलोकनाथ गोस्वामी, श्रीनरोत्तम ठाकुर तथा विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरकी समाधियाँ दर्शनीय हैं।

चित्र सं.- 50

श्रीराधागोकुलानन्दजी

चित्र सं.- 51

श्रीराधाश्यामसुन्दरजी

श्रीसाक्षीगोपाल—श्रीगोविन्द मन्दिरके पश्चिममें साक्षीगोपाल मन्दिरका भग्नावशेष अवशिष्ट है। प्राचीन गोपालजी साक्षी देनेके लिए विद्यानगर चले गये थे। श्रीचैतन्यचरितामृतमें छोटे-बड़े विप्रके प्रसङ्गमें भक्तवत्सल श्रीगोपालजीका अद्भुत चरित्र वर्णन है। वहाँपर पधारकर श्रीगोपालजीने जनसमाजमें यह साक्षी दी थी कि 'बड़े विप्रने छोटे विप्रकी सेवासे प्रसन्न होकर उससे अपनी बेटीका विवाह करनेका वचन दिया था। मैं इसका साक्षी हूँ।' कालान्तरमें यह विग्रह श्रीजगन्नाथपुरीमें पधारे तथा वहाँसे बारह मील दूर सत्यवादीपुरमें अब विराजमान हैं। अब सत्यवादीपुरका नाम साक्षीगोपाल ही प्रसिद्ध है। तभीसे वृन्दावनमें साक्षीगोपालका मन्दिर सूनी अवस्थामें पड़ा है तथा अब उसका भग्नावशेष ही अवशिष्ट है।

श्रीमदनमोहन (द्वितीय)—वाणीकार श्रीगदाधर भट्टजीके द्वारा सेवित विग्रह यहाँ विराजमान है। यह मन्दिर श्रीराधावल्लभ मन्दिरके सामने भट्ट मोहल्लेमें स्थित है। यहाँ समारोहके साथ समाज (लीलागान) होता रहता है। ये श्रीविग्रह अत्यन्त सुन्दर हैं।

श्रीश्यामसुन्दर—श्रीराधादामोदर मन्दिरके पास ही श्रीश्यामसुन्दरजीका मन्दिर स्थित है। गौड़ीय वेदान्ताचार्य श्रील बलदेव विद्याभूषण द्वारा प्रतिष्ठित एवं सेवित श्रीराधा श्यामसुन्दर विग्रहके दर्शन अत्यन्त सुन्दर हैं। मन्दिरके प्रवेश द्वारके सामने श्रीश्यामानन्द प्रभुकी समाधिका दर्शन है।

श्रीबलदेव विद्याभूषण प्रभु उड़ीसाके अन्तर्गत प्रसिद्ध रेमुनाके निकटवर्ती किसी गाँवमें जन्मे थे। चिलका ह्रदके तटपर किसी विद्वत् गाँवमें इन्होंने व्याकरण, अलंकार और न्याय शास्त्रका अध्ययन किया। तत्पश्चात् वेद अध्ययनके लिए मैसूर गये। उसी समय उड्डुपीमें उन्होंने वेदान्तके मध्व-भाष्यके साथ-साथ शंकर-भाष्य, श्री-भाष्य, पारिजात-भाष्य एवं अन्यान्य वेदान्तके भाष्योंका गहन अध्ययन किया। कुछ दिन पश्चात् श्रीधाम जगन्नाथपुरीमें श्रीरसिकानन्द प्रभुके शिष्य श्रीराधादामोदरके समीप षट्सन्दर्भका अध्ययन किया। अध्ययन करते समय श्रीराधादामोदरका अगाध पाण्डित्य तथा साथ ही भक्तिमय जीवनका दर्शनकर उनके शिष्य हो गये। तत्पश्चात् वृन्दावनमें प्रसिद्ध गौड़ीय रसिकाचार्य श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरके निकट श्रीमद्भागवत एवं अन्यान्य गोस्वामी-ग्रन्थोंका अध्ययन किया तथा श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरके निर्देशसे जयपुरमें पधारे। वहाँ 'गलता' नामक प्रसिद्ध स्थानमें श्री-सम्प्रदाय तथा अन्यान्य विपक्षके विद्वानोंको पराजितकर श्रीविजयगोपाल

विग्रहकी स्थापना की। साथ ही उन्होंने अत्रस्थ विद्वानोंकी प्रतीतिके लिए ब्रह्मसूत्रके श्रीगोविन्दभाष्यकी रचना की तथा जयपुरके प्रसिद्ध गोविन्द-मन्दिरमें श्रीगोविन्ददेवके साथ श्रीराधाजीकी भी पुनः प्रतिष्ठा की। उनके द्वारा रचित गोविन्दभाष्य, षट्सन्दर्भकी टीका, सिद्धान्तरत्नम्, वेदान्तस्यामन्तक, प्रमेयरत्नावली, सिद्धान्तदर्पण आदि ग्रन्थावलीने श्रीगौड़ीय-वैष्णव-साहित्यके भण्डारकी श्रीवृद्धि की है।

श्रीराधामाधव—श्रीगोकुलानन्द मन्दिरके उत्तरमें भ्रमरघाटके ऊपर प्राचीन यमुना तटपर एक प्राचीन मन्दिरमें श्रीजयदेव गोस्वामीके द्वारा सेवित श्रीराधामाधवजी विराजमान थे। अब वे जयपुरमें घाटी नामक पर्वतीय स्थानमें एक बृहद् मन्दिरमें सेवित हो रहे हैं जो जयपुरका प्रमुख दर्शनीय मन्दिर है। श्रीराधामाधव मन्दिरके ईशान-कोणमें श्रीयुगलकिशोरका विशाल मन्दिर शिखर-रहित अवस्थामें पड़ा हुआ है (जिसे कनक वृन्दावन कहते हैं)।

श्रीबाँकेबिहारी—स्वामी हरिदासजीके द्वारा निधुवन स्थित विशाखा कुण्डसे श्रीबाँकेबिहारीजी प्रकटित हुए थे। इस मन्दिरमें कृष्णके साथ श्रीराधिका विग्रह की स्थापना नहीं हुई। वैशाख मासकी अक्षय तृतीयाके दिन श्रीबाँकेबिहारीके श्रीचरणोंका दर्शन होता है। पहले ये निधुवनमें ही विराजमान थे। बादमें वर्तमान मन्दिरमें पधारे हैं। यवनोंके उपद्रवके समय श्रीबाँकेबिहारीजी गुप्त रूपसे वृन्दावनमें ही रहे, बाहर नहीं गये। श्रीबाँकेबिहारीजीका झाँकी दर्शन विशेष रूपमें होता है। यहाँ झाँकी दर्शनका कारण उनका भक्तवात्सल्य एवं रसिकता है।

एक समय उनके दर्शनके लिए एक भक्तमहानुभाव उपस्थित हुए। वे बहुत देर तक एकटकसे इन्हें निहारते रहे। रसिक बाँकेबिहारीजी उनपर रीझ गये और उनके साथ ही उनके गाँवमें चले गये। बादमें बिहारीजीके गोस्वामियोंको पता लगनेपर उनका पीछा किया और बहुत अनुनय-विनयकर ठाकुरजीको लौटाकर श्रीमन्दिरमें पधराया। इसीलिए बिहारीजीके झाँकी दर्शनकी व्यवस्था की गई ताकि कोई उनसे नजर न लड़ा सके।

यहाँ एक विलक्षण बात यह है कि यहाँ मङ्गल आरती नहीं होती। यहाँके गोसाईयोंका कहना है कि ठाकुरजी नित्य रात्रिमें रासमें थककर भोरमें शयन करते हैं। उस समय इन्हें जगाना उचित नहीं है।

श्रीराधावल्लभ—ये स्वामी श्रीहितहरिवंशजी महाराजके द्वारा सेवित विग्रह हैं। इन्होंने विवाहके समय दहेजके रूपमें श्रीराधावल्लभ विग्रहको प्राप्त किया

था। श्रीराधावल्लभजीके साथ राधिकाजीकी मूर्ति नहीं है। सिंहासनके ऊपर मुकुटकी स्थापनाकर श्रीराधिकाके उद्देश्यसे उसीकी सेवा होती है। श्रीविग्रह अत्यन्त मनोहर एवं चारु दर्शनीय है।

श्रीयुगलकिशोरजी (प्रथम)—श्रीसेवाकुञ्जके निकट किशोरीवन या व्यास घेरामें ये श्रीयुगलकिशोरजी विराजमान हैं। श्रीमाधवेन्द्रपुरीके शिष्य माधवदासजी एक प्रसिद्ध भक्त आचार्य हुए हैं। श्रीनाभादासजीने भक्तमालमें उनका चरित्र वर्णन किया है। उन्हींके शिष्य ओरछा निवासी अभिराम व्यासजीने हरिराम व्यासजीके द्वारा ये विग्रह प्रकटित किये। पास ही बगीचीमें श्रीव्यासजी और उनकी समाधि भी वर्तमान है।

द्वितीय श्रीयुगलकिशोरजीका मन्दिर—केशीघाटके पास एक टीलेके ऊपर विराजमान हैं। यह मन्दिर झान्ना–पन्ना राजाके द्वारा प्रतिष्ठित है।

तृतीय श्रीयुगलकिशोरजीका मन्दिर—जयपुरके अन्तर्गत 'नीमकाथाना' गाँव निवासी तोमर वंशीय हरिदास ठाकुर और गोविन्ददास ठाकुर दो राजपूत भ्राताओंके द्वारा मुगल सम्राट अकबरके राजत्वकालमें निर्मित हुआ था।

श्रीलालाबाबूका मन्दिर—श्रीलालाबाबू पूर्वी बंगालके एक प्रसिद्ध वैभव सम्पन्न जमींदार थे। ये अपने राजभवनसे कुछ दूर एक नदीके दूसरे सुरम्य तटपर टहलनेके लिए जाते थे। एक दिन सन्ध्याके समय जब वे नदीके दूसरे तटपर टहल रहे थे तो उन्हें एक माँझी(मल्लाह)की उक्ति सुनाई पड़ी, "अरे भाई! दिन गेलो पार चल।" अर्थात् दिन पार हो गया उस पार चलो। माँझीकी बात सुनते ही ये विचारमें मग्न हो गये। नौकासे नदी पारकर घर लौटे। दूसरे दिन वहीं टहलते समय एक धोबीने अपनी पत्नीको सम्बोधित करते हुए कहा, "दिन गेलो वासनाय आगुन दाऊ।" (धोबी लोग कपड़े धोनेके लिए केलेके वृक्षादि जलाकर एक प्रकारका क्षार–सा बनाया करते थे, जिसे बंगला भाषामें वासना कहा जाता है) लालाबाबूने उसके इस वाक्यका अर्थ यह ग्रहण किया कि दिन बीत गया, जीवनके दिन निकल गये। अपनी काम वासनामें शीघ्र आग लगा दो। श्रीलालाबाबूके जीवनपर उपरोक्त माँझी और धोबीके वाक्योंका गहरा प्रभाव पड़ा। वे अपना सारा वैभव, परिवार इत्यादि सबकुछ परित्यागकर वृन्दावनमें चले आये तथा यहाँ भजन करने लगे। इन भक्त लालाबाबूने ही १८१० ई.में श्रीकृष्णचन्द्र नामक इस विग्रहकी स्थापना की थी। पत्थरका यह मन्दिर बहुत ही भव्य और दर्शन योग्य है।

शाहजीका मन्दिर—लखनऊ निवासी सेठ कुन्दनलाल शाहने १८३५ ई.में सफेद मकराना पत्थरोंके द्वारा बहुत धन लगाकर इस भव्य मन्दिरका निर्माण कराया था। ये श्रीचैतन्य महाप्रभुके अनन्य भक्त थे। यह मन्दिर वर्तमान समयमें वृन्दावनके अतुल वैभवकी साक्षी देता है।

श्रीरङ्गजीका मन्दिर—१८५१ ई.में श्रीलक्ष्मीचन्द सेठने ४५ लाख रुपया लगाकर इस मन्दिरका निर्माण किया है। दक्षिण भारतके प्रसिद्ध श्रीरङ्गम मन्दिरकी शैलीसे बहुतसे परकोटोंके भीतर मूल मन्दिरमें श्रीरङ्गजी विराजमान हैं। लक्ष्मीजी उनके पैरोंको पलोट रही हैं। श्रीमन्दिरके पूर्वी द्वारपर विशाल गरुड़-स्तंभ है जो ऊपरसे नीचे तक सोनेके पातोंसे जड़ा हुआ है। साधारण लोग इसे सोनेका ताल वृक्ष कहते हैं। पास ही उत्तरकी ओर प्रधानद्वारके पास एक सरोवर है, जिसमें गज-ग्राहका युद्ध और श्रीहरिके द्वारा शरणागत गजकी रक्षाकी लीलाका निदर्शन होता है। पश्चिम प्रधानद्वारके निकट एक विशाल रथ है, जिसपर विशेष तिथियोंमें श्रीरङ्गजी भ्रमण करते हैं।

श्रीजीका मन्दिर—सन १८२६ ई.में जयपुर नरेश जयसिंहकी महारानी आनन्दकुमारी देवीने इस मन्दिरका निर्माण करवाया था। इसमें श्रीआनन्दमनोहर और श्रीवृन्दावनचन्द्र दो युगल विग्रह प्रतिष्ठित हैं।

वर्द्धमान महाराज कुञ्ज—श्रीजीके मन्दिरके सामने मार्गके दूसरी ओर यह कुञ्ज है। वर्द्धमान (बंगाल) के महाराज श्रीकीर्तिचांद बहादुरकी भक्त रानी राजराजेश्वरी देवीने इस मन्दिरका निर्माण करवाया था। इन्होंने ही नन्दगाँवमें पावन सरोवरके घाटोंको भी पत्थरोंसे बँधवाया था।

ब्रह्मचारी ठाकुर-बाड़ी—ग्वालियरके महाराज जियाजी सिंधियाने १८६० ई.में इस भव्य मन्दिरका निर्माण किया था। उन्होंने अपने गुरु श्रीगिरिधारीदास ब्रह्मचारीजीको सेवाका भार अर्पण कर दिया था। इस मन्दिरमें श्रीराधागोपाल, हंसगोपाल तथा नित्यगोपाल—तीन विग्रह पृथक्-पृथक् प्रकोष्ठोंमें विराजमान हैं। पत्थरोंसे निर्मित यह भव्य मन्दिर दर्शन योग्य है। यह मन्दिर लालाबाबू मन्दिरके पास ही है।

श्रीटीकारीरानीकी ठाकुर बाड़ी—यह मन्दिर वृन्दावनकी उत्तर दिशामें यमुनातटपर स्थित है। बिहारके (गया जिला) अन्तर्गत टीकरी नामक राज्यके राजा हितकाम ठाकुरकी रानी इन्द्रजीतकुमारीने सन् १८७१ ई.में इस मन्दिरका निर्माण किया था। इसमें राधाकृष्ण, श्रीराधागोपाल और श्रीलड्डूगोपाल—ये तीन विग्रह विराजमान हैं। यह मन्दिर अतिथि-सेवाके लिए प्रसिद्ध था।

शाहजापुरका मन्दिर—यह मन्दिर रेतिया बाजारमें स्थित है। शाहजापुर राज्यके दीवान लाला ब्रजकिशोरजीने सन् १८७३ ई.में इस मन्दिरका निर्माण किया था। इसमें श्रीराधागोपाल विग्रह विराजमान है। इस मन्दिरके दर्शन अत्यन्त सुन्दर एवं भव्य हैं।

महारानी स्वर्णमयीका मन्दिर—यमुना पुलिनके पासमें ही यह मंदिर स्थित है। कासीम बाजारके सुप्रसिद्ध कान्त बाबूके प्रपौत्र कुमार कृष्णनाथकी पत्नी महारानी स्वर्णमयीने इस मन्दिरका निर्माण किया। इसमें पहले श्रीश्यामसुन्दर विग्रह पूजित होते थे। अब महारानीके द्वारा प्रतिष्ठित श्रीगोपीनाथजी विराजमान हैं।

जयपुरवाला मन्दिर—जयपुरके महाराजा श्रीमाधोसिंहजीने बहुत रुपये व्ययकर लगभग तीस वर्षोंमें इस भव्य मन्दिरका निर्माण किया था। मूलमन्दिरमें तीन द्वार हैं। उत्तरी प्रकोष्ठमें श्रीआनन्दबिहारीजी, बीचके प्रकोष्ठमें श्रीराधामाधवजी तथा दक्षिणी प्रकोष्ठमें श्रीनित्य गोपालजी, श्रीगिरीधारीजी, श्रीसनक–सनातन–सनन्दन–सनत कुमार और श्रीनारदजीकी मूर्तियाँ विराजमान हैं। सन् १९१६ ई.में इस मन्दिरमें विग्रहोंकी प्रतिष्ठा हुई थी।

सवामन शालग्राम—लोई बाजारके मोड़पर श्रीश्यामसुन्दरके सामने दो मजिंले मन्दिरमें सवामनके विशाल शालग्राम विराजमान हैं। यहाँ श्रीसीतारामजीके विग्रह भी दर्शनीय हैं। श्रीगोविन्दजीके पुराने मन्दिरमें भी सवामनके शालग्राम विराजमान हैं।

बनखण्डी महादेव—प्रसिद्ध बाँकेबिहारी मन्दिरसे निकलकर अठखम्बा पारकर तिराहेपर बनखण्डी महादेवजी विराजमान हैं।

प्रसङ्ग—श्रीसनातन गोस्वामी वृन्दावनमें निवास करते समय पुराने श्रीमदनमोहन मन्दिरके पास स्थित अपनी भजन–कुटीसे प्रतिदिन श्रीगोपीश्वर महादेवका दर्शन करने अवश्य ही जाते। वृद्ध हो जानेपर श्रीगोपीश्वर महादेवने श्रीसनातन गोस्वामीको स्वप्नादेशमें कहा कि इस वृद्धावस्थामें आप इतना कष्ट कर मेरे दर्शनोंके लिए न आएँ। मैं स्वयं ही आपकी भजन–कुटीके निकट ही बनखण्डीमें प्रकट होऊँगा। सचमुच दूसरे दिन बनखण्डीमें महादेवजी प्रकट हो गये। सनातन गोस्वामी यह देखकर बड़े भावाविष्ट हो गये। तबसे वे प्रतिदिन बनखण्डी महादेवके दर्शनकर अपनी भजन–कुटीमें लौट जाते। श्रीगोपीश्वर महादेवके इस बनखण्डीमें प्रकट होनेके कारण इस स्थानका नाम बनखण्डी महादेव प्रसिद्ध हुआ।

अष्टसखी कुञ्ज—श्रीमदनमोहनजीके पुराने मन्दिरके पासमें अष्टसखीका कुञ्ज स्थित है। हेतमपुरके महाराजने इसका निर्माण किया था। बीचमें श्रीराधाकृष्ण युगलस्वरूप तथा इनकी दोनों ओर चार-चार सखियोंके विग्रह हैं। सन् १२९६ ई.में हेतमपुरके महाराजा रामरञ्जन चक्रवर्ती तथा उनकी पत्नी पद्मासुन्दरीने इस मन्दिरका निर्माणकर श्रीराधारासबिहारी विग्रहको पधराया था।
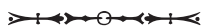
श्रीराधाविनोद जमाई ठाकुर या तड़ास वाला मन्दिर—इसे राजर्षि राय वनमालीदास बहादुरकी ठाकुर बाड़ी भी कहते हैं। वृन्दावनसे मथुरा वाले राजमार्गपर बाईं ओर कुछ हटकर कच्चे रास्तेपर यह मन्दिर विराजमान है। बंगालस्थित तड़ास स्टेटके अधिकारी परम कृष्णभक्त थे। उनका नाम श्रीवाञ्छारामजी था। वे नित्य पासमें ही प्रवाहित नदीमें स्नान करते थे। एक समय प्रातःकाल स्नान करते समय उन्हें नदीके गर्भसे एक मधुर वाणी सुनाई दी, 'मुझे जलसे निकालो तथा घर ले चलो।' परन्तु उन्हें आस-पास कुछ भी दिखाई नहीं दिया। दूसरे दिन भी ऐसा ही हुआ। तीसरे दिन स्नान करते समय उस मधुर वाणीके साथ उन्हें ऐसा लगा कि नदीमें जलके भीतर किसी वस्तुका स्पर्श हो रहा हो। जब उन्होंने हाथसे उसे उठाया तो अद्भुत सुन्दर श्रीकृष्ण विग्रह दीख पड़े। वे कृष्ण-विग्रह ही श्रीविनोदठाकुरके नामसे प्रसिद्ध हुए।

श्रीठाकुरजी स्वेच्छासे परम भक्त श्रीवनमाली रायजीके घर पधारे। उनकी सेवा वहाँपर विधिवत् होने लगी। श्रीवनमाली रायजीकी इकलौती कन्या, सर्वगुणसम्पन्ना, परम सुन्दरी, विशेतः भक्तिमती थी। इस राजकुमारीने जब श्रीविनोद ठाकुरका दर्शन किया तब उनकी मधुर मुस्कानसे मुग्ध हो गई। श्रीविनोद-ठाकुरजी भी उस राधानामकी बालिकाके साथ प्रत्यक्ष रूपसे खेलने लगे। एक दिन उस राजकुमारीका अञ्चल पकड़ कर बोले, 'तू मुझसे विवाह कर ले।' इधर कुछ ही दिनोंमें राजकुमारी बीमार पड़ गई। ठाकुर विनोदजीने राधाकी माँसे स्वप्नमें कहा, 'राधा अब नहीं बचेगी। तुम्हारे बगीचेमें जो देवदारका सूखा वृक्ष है, उसकी लकड़ीसे ठीक राधा जैसी एक मूर्ति बनाकर मेरे साथ विवाह कर दो।' ऐसा ही हुआ। जैसे ही राधाकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा हुई, राजकुमारी राधाका परलोक गमन हो गया। एक ओर राजकुमारी राधाका दाहसंस्कार हुआ तथा दूसरी ओर ठाकुर विनोदजीके साथ राधाकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा हुई। श्रीविनोद ठाकुर अब श्रीराधाविनोद बिहारी ठाकुर हो

गये। कुछ दिनोंके बाद श्रीवनमाली रायबहादुर श्रीराधाविनोदबिहारी ठाकुरजीको साथ लेकर वृन्दावनमें चले आये तथा इसी जगह मन्दिर निर्माणकर ठाकुरजीको पधराया। राजर्षि राय वनमालीदास श्रीगौड़ीय वैष्णव सम्प्रदायके एक महान धर्मात्मा महापुरुष थे। इन्होंने देवनागरी अक्षरमें श्रीमद्भागवतकी आठ टीकाओंवाला एक संस्करण प्रकाशित कराया था। परमाराध्य ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशवगोस्वामी महाराजने भी सन् १९५४ ई.के लगभग तड़ासमन्दिरसे अष्ट–टीका युक्त श्रीमद्भागवतका संग्रह किया था, जो आज भी श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुराके ग्रन्थागारमें सुरक्षित है।

इन प्राचीन, नवीन मन्दिरों और कुञ्जोंके अतिरिक्त भी वृन्दावनमें आधुनिक बड़े–बड़े मन्दिर विराजमान हैं, जिनका उल्लेख ग्रन्थ विस्तार हेतु नहीं किया जा रहा है। इन आधुनिक मन्दिरोंमें श्रीरूपसनातन गौड़ीय मठ तथा श्रीभक्तिवेदान्त स्वामी महाराज द्वारा प्रतिष्ठित श्रीकृष्णबलराम मन्दिर बड़े भव्य और दर्शनीय हैं। श्रीरूपसनातन गौड़ीय मठ दान, मान, सेवाकुञ्ज गलीमें सेवाकुञ्जके निकट ही स्थित है। यहाँ श्रीश्रीगौराङ्ग महाप्रभु, श्रीराधाविनोदबिहारी, श्रीवृन्दादेवी तथा श्रीलभक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामीके दिव्य विग्रह हैं। श्रीवृन्दावनमें केवल इसी मन्दिरमें श्रीवृन्दादेवीका दर्शन है। ऊपरी तलपर सेवाकुञ्जकी परम अद्भुत सुन्दर झाँकी है।

श्रीकृष्णबलराम मन्दिर वृन्दावनसे छटीकरा राजमार्गपर अवस्थित है।

श्रीवृन्दावनके बारह वन

पञ्चकोसी वृन्दावनके अन्तर्गत बारह वन हैं। उनका संक्षेपमें उल्लेख किया जा रहा है—

(१) श्रीअटलवन—वृन्दावनके दक्षिणमें अटलवन है। अटलवनमें अटलतीर्थ और अटलबिहारीजी विराजमान हैं। भातरोलमें द्विज-पत्नियोंके अन्न-व्यञ्जनोंका रसास्वादनकर श्रीकृष्ण सखाओंके साथ जब छटीकरा नन्दगोकुलमें लौट रहे थे तो इस स्थानपर सखाओंने आजके षडरस भोजनके सम्बन्धमें यह पूछा, 'हे सखे! आजका भोजन कैसा रहा?' कृष्णने बड़े आनन्दके साथ कहा, 'आज तो भोजनके पश्चात् अटल हो गया हूँ।' अर्थात् चलने-फिरनेमें भी असमर्थ हो गया हूँ। तबसे इस वनका नाम अटलवन प्रसिद्ध हो गया। वृन्दावन-मथुरा राजमार्गपर जहाँ वृन्दावनकी पञ्चकोसी परिक्रमा मार्ग मिलता है, उसीके आस-पासमें यह वन स्थित है।

(२) केवारिवन—अटलवनके उत्तर-पश्चिम दिशामें यह वन अवस्थित है। इस केवारिवनमें ही दावानल कुण्ड है। दावानल कुण्डके वर्णनमें हमने इस प्रसङ्गका उल्लेख किया है। कृष्णके द्वारा दावानलका पान करनेके पश्चात् गोप-गोपियोंने बड़े आश्चर्यके साथ इधर-उधर देखते हुए कहा, 'के निवारि'। इस मृत्युके हाथसे किसने हमारी रक्षा की? इसलिए इस वनका नाम केवारिवन प्रसिद्ध हुआ।

(३) बिहारवन—केवारिवनके दक्षिण-पश्चिममें यह वन अवस्थित है। इसमें राधाकूप विराजमान है। परिक्रमा करनेवाले यात्री इस कूपमें झाँक कर 'राधे-राधे' जोरसे उच्चारण करते हैं, जिसकी प्रतिध्वनि भी जोरोंसे सुनाई देती है। पास ही रमणरेतीमें विरक्त महात्माओंके आश्रम हैं। यहीं श्रीभागवत निवासमें श्रीदासगोस्वामी द्वारा सेवित श्रीगिरिधारी एवं गुञ्जामालाके भी दर्शन कराये जाते हैं। यहीं पर जगद्गुरु श्रीलभक्तिसिद्धान्त सरस्वती प्रभुपादके शिष्य पूज्यपाद श्रीभक्तिहृदय वन महाराजने एक पारमार्थिक 'विश्व वैष्णव विद्यालयकी' स्थापना की है।

(४) गोचारणवन—विहारवनकी पश्चिम दिशामें प्राचीन यमुनाके तटपर यह वन अवस्थित है। यहाँ श्रीवराह देवका मन्दिर तथा गौतम मुनिका आश्रम है।

(५) श्रीकालीयदमन वन—गोचारण वनके उत्तरमें यह वन अवस्थित है। यहाँ बहुतसे प्राचीन कदम्बके वृक्ष हैं। इनमेंसे एक केलिकदम्ब नामक वृक्षपर चढ़कर, उसकी एक ऊँची डालसे कालीयनागका दमन करनेके लिए श्रीकृष्ण अपनी कमरमें पीताम्बरका फेंटा बाँधकर कूदे थे। उस वृक्षका नाम तबसे केलि–कदम्ब भी है। यहीं पासमें श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतीकी भजन कुटी और उनकी समाधि भी है। वहीं पास ही कालीयदहके तटपर श्रील बिल्वमङ्गलजीकी भजन–स्थली भी है।

श्रीबिल्वमङ्गलजी दक्षिण भारतमें कृष्णबेन्वा नदीके तटपर स्थित किसी ग्रामके निवासी थे। युवावस्थामें चिन्तामणि नामक सुन्दरी वेश्याके प्रति इतने आसक्त हो गये कि पिताके श्राद्धके दिन भी एक सड़े–गले मुर्देके सहारे भीषण बाढ़से पूर्ण नदीको पारकर वेश्याके परकोटेपर एक काले साँपको पकड़कर उसके घर पहुँचे। उस वेश्याके मुखसे यह भर्त्सना वाक्य सुनकर कि 'मेरे हाड़, चाम और दुर्गन्ध पूर्ण मैलेसे आच्छादित शरीरके प्रति तुम्हारी जैसी आसक्ति है, यदि ऐसी आसक्ति तुम्हें श्रीकृष्णके चरणोंमें हो जाती तो तुम्हारा कल्याण हो जाता' यह सुनकर इनको संसारसे वैराग्य हो गया। वे वृन्दावनके लिए निकल पड़े। बीचमें एक किशोरीको देखकर उसके प्रति मोह उत्पन्न होनेपर उन्होंने अपनी आँखोंमें काँटे घुसाकर आँखें फोड़ दीं। कौतुकी रसिक कृष्ण कृपाकर उन्हें वृन्दावन ले आये। वे कुछ दिनों तक गोवर्धनमें रहे तथा वहीं उन्हें अपने इष्टदेव श्रीकृष्ण और इष्टदेवी श्रीराधिकाका झाँकी–दर्शन मिला। कुछ दिनोंके बाद ये वृन्दावनमें कालीयदहके पास रहकर भजन करते रहे। ऐसा कहा जाता है कि लगभग ७०० वर्षोंके पश्चात् इन्होंने श्रीवल्लभाचार्यजीमें अपनी शक्तिका सञ्चारकर तथा उनको साम्प्रदायिक तत्त्व प्रदानकर यहींपर अपनी अन्तर्धान लीला की थी।

(६) श्रीगोपालवन—कालीयदमनके उत्तरमें यह वन अवस्थित है। यहाँ श्रीमन्दिरमें श्रीनन्द–यशोदाजीके विग्रह विराजमान हैं। कालीयदमनके पश्चात् श्रीनन्दबाबाने कृष्णकी मङ्गल कामनाके लिए ब्राह्मणोंको यहाँ अनेक गायोंका दान दिया था।

(७) निकुञ्जवन—इसका नाम सेवाकुञ्ज भी है। पास ही में दानगली, मानगली, गुमानगली और कुञ्ज गली, ये चार गलियाँ हैं। यह राधाकृष्णका नित्य विहारस्थल है। यहाँ परम रसिक श्रीकृष्ण राधाजीके क्लान्त होनेपर उनके पैरोंको पलोटते हैं। इसी वनके भीतर ललिताकुण्ड आदि हैं, जिनका

वर्णन हम पहले कर चुके हैं।

(८) निधुवन—निकुञ्ज वनके उत्तरमें प्रसिद्ध निधुवन है। जहाँ विशाखा कुण्ड है। इसी कुण्डसे श्रीबाँकेबिहारीजी प्रकटित हुए थे। इसका भी हमने पूर्वमें उल्लेख किया है।

(९) राधावन या राधाबाग—वृन्दावनके उत्तर-पूर्व दिशामें यमुनाके तटपर यह वन अवस्थित है। कहा जाता है कि श्रीमती राधिकाके स्नान करनेके पश्चात् ललिता आदि सखियाँ यहींपर उनका केश संस्कार और शृंगार करती थीं। राधाबागमें ही स्वामी हरिदासका भजन स्थान तथा टटीया स्थान है। टटीया स्थान एक मनोरम स्थान है। यहाँ विभिन्न प्रकारके सघन वृक्षोंका सुन्दर बगीचा है। यह स्थान साधु सन्तोंकी सेवाके लिए बहुत ही प्रसिद्ध है।

(१०) झूलनवन—श्रीराधाबागके दक्षिण दिशामें यह वन अवस्थित है। यह सखियोंके द्वारा राधाकृष्ण युगलको झूलेमें झुलानेका स्थान है। यहाँ रङ्गीले कृष्ण भी झूलेपर बिठलाकर बारी-बारीसे श्रीमती राधिका, ललिता, विशाखा आदिको इस प्रकार ढङ्गसे झुलाते हैं कि वे अपने वस्त्रोंको संभाल नहीं पातीं तथा डरसे श्रीकृष्णके अङ्गसे चिपट जाती हैं। राधाकृष्णकी झूलालीलाका वर्णन गौड़ीय गोस्वामियोंने अपने ग्रन्थोंमें किया है।

(११) श्रीगह्वरवन—झूलनवनके दक्षिणमें यह वन अवस्थित है। इसमें प्रसिद्ध पानीघाट है। यहींसे गोपियाँ कृष्णके परामर्शसे भरी हुई यमुनाको पारकर महर्षि दुर्वासाके आश्रममें गयी थीं और उन्हें छप्पन प्रकारके अन्न-व्यञ्जनोंका भोग लगाया था। हम इसका भी पहले ही वर्णन कर चुके हैं।

(१२) श्रीपपड़वन—गह्वरवनके दक्षिणमें यह वन अवस्थित है। यहाँ भी आदिबद्रीवन और आदिबद्रीघाट विराजमान हैं। श्रीकृष्णने गोपियोंको यहींपर आदिबद्रीनाथका दर्शन कराया था। कहते हैं कि श्रीकृष्णद्वैपायन व्यासदेवको इसी आदिबद्रीवन या पपड़वनमें ही श्रीमद्भागवत प्रकाश करनेकी प्रेरणा मिली थी। हिमालय प्रान्तके रूखे-सूखे बद्रिकाश्रममें ऐसे कृष्णकी मधुर लीलाओंसे परिपूर्ण रसग्रन्थका प्रकाश होना असंभव है। अभी भी इस अञ्चलमें बेर या बद्रीके वृक्षोंका विस्तृत वन देखा जाता है। हो सकता है कि श्रीव्यासदेवने यहींपर शुकदेव गोस्वामीको इस रसग्रन्थ 'श्रीमद्भागवतका' अध्ययन भी कराया हो।

श्रीवृन्दावनके प्रसिद्ध घाट

वृन्दावनमें श्रीयमुनाके तटपर अनेक घाट हैं। उनमेंसे प्रसिद्ध–प्रसिद्ध घाटोंका उल्लेख किया जा रहा है—

(१) श्रीवराहघाट—वृन्दावनके दक्षिण–पश्चिम दिशामें प्राचीन यमुनाजीके तटपर श्रीवराहघाट अवस्थित है। तटके ऊपर भी श्रीवराहदेव विराजमान हैं। पास ही श्रीगौतम मुनिका आश्रम है।

(२) कालीयदमनघाट—इसका नामान्तर कालीयदह है। यह वराहघाटसे लगभग आधे मील उत्तरमें प्राचीन यमुनाके तटपर अवस्थित है। यहाँके प्रसङ्गके सम्बन्धमें पहले उल्लेख किया जा चुका है। कालीयको दमनकर तट भूमिमें पहुँचनेपर श्रीकृष्णको ब्रजराज नन्द और ब्रजेश्वरी श्रीयशोदाने अपने आसुँओंसे तर–बतरकर दिया तथा उनके सारे अङ्गोंमें इस प्रकार देखने लगे कि 'मेरे लालाको कहीं कोई चोट तो नहीं पहुँची है।' महाराज नन्दने कृष्णकी मङ्गल कामनासे ब्राह्मणोंको अनेकानेक गायोंका यहींपर दान किया था।

(३) सूर्यघाट—इसका नामान्तर आदित्यघाट भी है। गोपालघाटके उत्तरमें यह घाट अवस्थित है। घाटके ऊपरवाले टीलेको आदित्य टीला कहते हैं। इसी टीलेके ऊपर श्रीसनातन गोस्वामीके प्राणदेवता श्रीमदनमोहनजीका मन्दिर है। उसके सम्बन्धमें हम पहले ही वर्णन कर चुके हैं। यहींपर प्रस्कन्दन तीर्थ भी है।

(४) युगलघाट—सूर्य घाटके उत्तरमें युगलघाट अवस्थित है। इस घाटके ऊपर श्रीयुगलबिहारीका प्राचीन मन्दिर शिखरविहीन अवस्थामें पड़ा हुआ है। केशी घाटके निकट एक और भी युगलकिशोरका मन्दिर है। वह भी इसी प्रकार शिखरविहीन अवस्थामें पड़ा हुआ है।

(५) श्रीबिहारघाट—युगलघाटके उत्तरमें श्रीबिहारघाट अवस्थित है। इस घाटपर श्रीराधाकृष्ण युगल स्नान, जल विहार आदि क्रीड़ाएँ करते थे।

(६) श्रीआंधेरघाट—युगलघाटके उत्तरमें यह घाट अवस्थित है। इस घाटके उपवनमें कृष्ण और गोपियाँ आँखमुदौवलकी लीला करते थे। अर्थात् गोपियोंके अपने करपल्लवोंसे अपने नेत्रोंको ढक लेनेपर श्रीकृष्ण आस–पास कहीं छिप जाते और गोपियाँ उन्हें ढूँढ़ती थीं। कभी श्रीकिशोरीजी इसी प्रकार छिप जातीं और सभी उनको ढूँढ़ते थे।

(७) इमलीतलाघाट—आंधेरघाटके उत्तरमें इमलीघाट अवस्थित है। यहींपर श्रीकृष्णके समसामयिक इमली वृक्षके नीचे महाप्रभु श्रीचैतन्यदेव अपने वृन्दावनवास कालमें प्रेमाविष्ट होकर हरिनाम करते थे। इसलिए इसको गौराङ्गघाट भी कहते हैं। इस लीला स्थानके सम्बन्धमें भी हम पहले उल्लेख कर चुके हैं।

(८) शृंगारघाट—इमलीतला घाटसे कुछ पूर्व दिशामें यमुना तटपर शृंगारघाट अवस्थित है। यहीं बैठकर श्रीकृष्णने मानिनी श्रीराधिकाका शृंगार किया था। वृन्दावन भ्रमणके समय श्रीनित्यानन्द प्रभुने इस घाटमें स्नान किया था तथा कुछ दिनों तक इसी घाटके ऊपर शृंगारवटपर निवास किया था।

(९) श्रीगोविन्दघाट—शृंगारघाटके पास ही उत्तरमें यह घाट अवस्थित है। श्रीरासमण्डलसे अन्तर्धान होनेपर श्रीकृष्ण पुनः यहींपर गोपियोंके सामने आविर्भूत हुये थे।

(१०) चीरघाट—कौतुकी श्रीकृष्ण स्नान करती हुईं गोपिकुमारियोंके वस्त्रोंको लेकर यहीं कदम्ब वृक्षके ऊपर चढ़ गये थे। चीरका तात्पर्य वस्त्रसे है। पास ही कृष्णने केशी दैत्यका वध करनेके पश्चात् यहींपर बैठकर विश्राम किया था। इसलिए इस घाटका दूसरा नाम चैन या चयनघाट भी है। इसके निकट ही झाडूमण्डल दर्शनीय है।

(११) श्रीभ्रमरघाट—चीरघाटके उत्तरमें यह घाट स्थित है। जब किशोर-किशोरी यहाँ क्रीड़ा विलास करते थे, उस समय दोनोंके अङ्ग सौरभसे भँवरे उन्मत्त होकर गुञ्जार करने लगते थे। भ्रमरोंके कारण इस घाटका नाम भ्रमरघाट है।

(१२) श्रीकेशीघाट—श्रीवृन्दावनके उत्तर-पश्चिम दिशामें तथा भ्रमरघाटके उत्तरमें यह प्रसिद्ध घाट विराजमान है। इसका हम पहले ही वर्णन कर चुके हैं।

(१३) धीरसमीरघाट—श्रीवृन्दावनकी उत्तर-दिशामें केशीघाटसे पूर्व दिशामें पास ही धीरसमीरघाट है। श्रीराधाकृष्ण युगलका विहार देखकर उनकी सेवाके लिए समीर भी सुशीतल होकर धीरे-धीरे प्रवाहित होने लगा था। पहले ही इसका उल्लेख किया जा चुका है।

(१४) श्रीराधाबागघाट—वृन्दावनके पूर्वमें यह घाट अवस्थित है। इसका भी वर्णन पहले किया जा चुका है।

(१५) श्रीपानीघाट—इसी घाटसे गोपियोंने यमुनाको पैदल पारकर महर्षि दुर्वासाको सुस्वादु अन्न भोजन कराया था। इसका वर्णन पहले किया जा चुका है।

(१६) आदिबद्रीघाट—पानीघाटसे कुछ दक्षिणमें यह घाट अवस्थित है। यहाँ श्रीकृष्णने गोपियोंको आदिबद्री नारायणका दर्शन कराया था।

(१७) श्रीराजघाट—आदि–बद्रीघाटके दक्षिणमें तथा वृन्दावनकी दक्षिण–पूर्व दिशामें प्राचीन यमुनाके तटपर राजघाट है। यहाँ कृष्ण नाविक बनकर सखियोंके साथ श्रीमती राधिकाको यमुना पार कराते थे। यमुनाके बीचमें कौतुकी कृष्ण नाना प्रकारके बहाने बनाकर जब विलम्ब करने लगते, उस समय गोपियाँ महाराजा कंसका भय दिखलाकर उन्हें शीघ्र यमुना पार करनेके लिए कहती थीं। इसलिए इसका नाम राजघाट प्रसिद्ध है।

इन घाटोंके अतिरिक्त वृन्दावन–कथा नामक पुस्तकमें और भी १४ घाटोंका उल्लेख है—

(१) महान्तजी घाट, (२) नामाओवाला घाट, (३) प्रस्कन्दन घाट, (४) कडिया घाट, (५) धूसर घाट, (६) नया घाट, (७) श्रीजी घाट, (८) विहारीजी घाट, (९) धरोयार घाट, (१०) नागरी घाट, (११) भीम घाट, (१२) हिम्मत बहादुर घाट, (१३) चीर या चैन घाट, (१४) हनुमान घाट।

वृन्दावनके मोहल्लोंके नाम

(१) ज्ञानगुदड़ी, (२) गोपीश्वर, (३) बंशीवट, (४) गोपीनाथबाग, (५) गोपीनाथ बाजार, (६) ब्रह्मकुण्ड, (७) राधानिवास, (८) केशीघाट, (९) राधारमणघेरा, (१०) निधुवन, (११) पाथरपुरा, (१२) नागरगोपीनाथ, (१३) गोपीनाथघेरा, (१४) नागरगोपाल, (१५) चीरघाट, (१६) मण्डी दरवाजा, (१७) नागरगोविन्दजी, (१८) टकशाल गली, (१९) रामजीद्वार, (२०) कण्ठीवाला बाजार, (२१) सेवाकुञ्ज, (२२) कुञ्जगली, (२३) व्यासघेरा, (२४) शृंगारवट, (२५) रासमण्डल, (२६) किशोरपुरा, (२७)धोबीवालीगली, (२८) रङ्गीलाल गली, (२९) सुखनखाता गली, (३०) पुराना शहर, (३१) लारिवाली गली, (३२) गावधूप गली, (३३) गोवर्धन

दरवाजा, (३४) अहीरपाड़ा, (३५) दुमाईत पाड़ा, (३६) वरओयार मोहल्ला, (३७) मदनमोहनजीका घेरा, (३८) बिहारीपुरा, (३९) पुरोहितवाली गली, (४०) मनीपाड़ा, (४१) गौतमपाड़ा, (४२) अठखम्बा, (४३) गोविन्दबाग, (४४) लोईबाजार, (४५) रेतियाबाजार, (४६) बनखण्डी महादेव, (४७) छीपी गली, (४८) रायगली, (४९) बुन्देलबाग, (५०) मथुरा दरवाजा, (५१) सवाई जयसिंहघेरा, (५२) धीरसमीर, (५३) टट्टीया स्थान, (५४) गहवरवन, (५५) गोविन्द कुण्ड और (५६) राधाबाग।

वृन्दावनमें प्रसिद्ध समाज–समाधियाँ

(१) आदित्य टीलाके निकट श्रीमदनमोहनजीके प्राचीन मन्दिरके दक्षिण भागमें सनातन गोस्वामीकी समाधि है। यहाँ गोस्वामी ग्रन्थोंकी भी समाधि है।

(२) श्रीराधादामोदर मन्दिरके पास ही बाईं ओर श्रीरूप गोस्वामीकी समाधि है। मन्दिरके पीछे श्रीजीव गोस्वामी और कृष्णदास कविराजकी समाधि–मन्दिर हैं।

(३) श्रीराधारमण मन्दिरके पास श्रीगोपालभट्ट गोस्वामीकी समाधि अवस्थित है।

(४) श्रीगोकुलानन्द मन्दिरके निकटमें लोकनाथ प्रभुकी समाधि है। उसके बगलमें श्रीनरोत्तम ठाकुर और श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरकी भी समाधियाँ हैं।

(५) श्रीगोपीनाथ मन्दिरके पास श्रीमधुपण्डित गोस्वामीकी समाधि है।

(६) श्रीगोविन्द मन्दिरके सामने चौंसठ गौड़ीय महन्तोंकी पुष्प समाधियोंके बीचमें श्रीरघुनाथभट्ट गोस्वामीकी समाधि है। वहीं छह चक्रवर्ती और अष्ट कविराजोंकी समाधियाँ हैं।

(७) धीरसमीरमें श्रीनिवासाचार्य और श्रीरामचन्द्र कविराजकी समाधियाँ हैं।

(८) श्रीश्यामसुन्दर मन्दिरके पास श्रीश्यामानन्द प्रभुकी समाजबाड़ी है।

(९) केशीघाटमें गदाधरपण्डित गोस्वामीका दन्तसमाज (समाधि) है।

(१०) कालीयदहके निकट श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतीकी समाधि है।

(११) निधुवनमें स्वामी हरिदासजीकी समाधि है।

(१२) श्रीराधावल्लभ मन्दिरके पास श्रीहितहरिवंश गोस्वामीका स्थान है।
(१३) श्रीमदनमोहन मन्दिरके पास सूरदास मदनमोहनजीका स्थान है।

चित्र सं.– 52

श्रीसनातन गोस्वामी पादकी समाधि

चित्र सं.– 53

श्रीरूप गोस्वामी पादकी समाधि

चित्र सं.– 54

श्रीजीव गोस्वामी प्रभु एवं श्रीलकविराज गोस्वामीकी समाधि

चित्र सं.– 55

श्रील प्रभुपादकी पुष्प समाधि

चित्र सं.– 56

श्रीगोकुलानन्द मन्दिरके प्राङ्गणमें श्रील लोकनाथदास गोस्वामी, श्रील नरोत्तम ठाकुर और श्रील विश्वनाथ चक्रवर्त्ती ठाकुरकी समाधियाँ

वृन्दावनके प्रसिद्ध कुण्ड

(१) दावानल कुण्ड—केवारिवनमें
(२) श्रीविशाखा कुण्ड—निधुवनमें
(३) श्रीगजराज कुण्ड—श्रीरङ्गजी मन्दिरमें
(४) श्रीललिता कुण्ड—निकुञ्जवन (सेवाकुञ्ज) में
(५) श्रीब्रह्म कुण्ड—रङ्गजी मन्दिरके उत्तरमें
(६) श्रीगोविन्द कुण्ड—वृन्दावनके पूर्वमें श्रीरङ्गजी मन्दिरके निकट

वृन्दावनके प्रसिद्ध कूप

(१) वेणुकूप—श्रीरङ्गजी मन्दिरके निकट
(२) सप्त-सामुद्रिककूप—गोपीश्वर महादेवके निकट
(३) श्रीगोपकूप—ज्ञानगुदड़ीमें
(४) श्रीराधाकूप—विहारवनमें

वृन्दावनमें देवियाँ

(१) पातालदेवी या योगमाया—प्राचीन गोविन्द मन्दिरके दक्षिण-पश्चिमी दिशामें।
(२) अन्नपूर्णादेवी—सेवाकुञ्जके पास।
(३) पौर्णमासीदेवी—सेवाकुञ्जके निकट पूर्व दिशामें।

वृन्दावनमें महादेव

श्रीगोपीश्वर महादेव—वंशीवटके निकट ईशान कोणमें।
बनखण्डी महादेव—लोईबाजार और अठखम्बा बाजारके तिराहेपर।

वृन्दावनके वट

(१) अद्वैतवट—प्राचीन मदनमोहन मन्दिरके पास।
(२) श्रृंगारवट—श्रीराधादामोदर मन्दिरके निकट यमुना तटपर।
(३) वंशीवट—रासस्थलीमें।

वृन्दावनके कदम्ब

(१) केलिकदम्ब—कालीय दहके तट पर।
(२) चीरकदम्ब—धीरसमीरके पास यमुना तटपर।
(३) दोलाकदम्ब—राधाबाग झूलन वनमें।

ब्रजमण्डलके सोलह वट

(१,२) वंशीवट—एक वृन्दावनमें, दूसरा भाण्डीरवनमें
(३) संकेतवट
(४) भाण्डीरवट
(५) जावट
(६) श्रीवट
(७) जटाजुटवट
(८) कामवट
(९) मनोरमवट
(१०) आशावट
(११) अशोकवट
(१२) केलिवट
(१३) ब्रह्मवट
(१४) रुद्रवट
(१५) श्रीधरवट
(१६) सावित्रिवट

ब्रजमण्डलके पर्वत

गिरिराज गोवर्धन—श्रीगोवर्धनमें
सेतुकन्दरा पर्वत—आदिबद्री नारायण

साङ्गराशिखर पर्वत—झूलन स्थान
नील पर्वत—
आनन्दाद्री पर्वत—
उद्यान पर्वत
शंखकूट पर्वत
आदि केदारनाथ पर्वत
चरण पहाड़ी
इन्द्रसेन पर्वत (फिसलनी शिला)
व्योमासुर गुफा
भोजन थाली
विष्णुचिह्नपाद पर्वत
लुकलुकी कन्दरा
बाजन शिला
सुवर्णाञ्चल—सुनहरा ग्राममें

— काम्यवनके अन्तर्गत

चरण पहाड़ी—नन्दगाँवमें
अटोरा पर्वत
सखीगिरि पर्वत—ऊँचा गाँव
विष्णु पर्वत—बरसानामें
ब्रह्म पर्वत—बरसानामें
नन्दीश्वर या रुद्र पर्वत—नन्दगाँव
छोटी चरणपहाड़ी—बैठनके पास

these 2 pages have photos from parikrama